जै गौर

भूमिका

श्री वेदव्यास के अवतार श्री वृन्दावन दास ठाकुर द्वारा रचित श्री चैतन्य-भागवत बंग भाषा का आदि काव्य है। श्री चैतन्य चरितामृत के रचयिता श्री कृष्णदास कविराज ने इस ग्रन्थ के विषय में श्री चैतन्य चरितामृत में लिखा है कि श्री चैतन्य लीला में वेदव्यास के अवतार श्री वृन्दावन दास जी ने गौरलीला का वर्णन किया है। जिसके सुनने से सब अमंगल नाश हो जाता है। इसके पढ़ने से श्री चैतन्य तथा श्री नित्यानन्द की महिमा तथा कृष्ण भक्ति का ज्ञान होता है। श्री मदभागवत के भक्ति सिद्धान्त का सार इस ग्रन्थ रत्न में ठाकुर महाशय ने सरल भाषा में लिखा है। पाषंडी यवन भी इस ग्रन्थ को सुनकर वैष्णव बन जाता है। मनुष्य द्वारा यह ग्रन्थ नहीं रचा गया है। श्री गौरांग ने स्वयं वृन्दावनदास द्वारा यह ग्रंथ लिखवाया है।

कलियुग में श्री वेदव्यास के अवतार श्रीवृन्दावनदास ठाकुर थे। उनके द्वारा रचित श्री चैतन्यभागवत हमलोगों के लिए श्रीमद्भागवत के समान है। किसी प्रकार कम नहीं है। कलियुग पावनावतार श्री श्री गौरांग की मधुर लीला को सरल मधुर भाषा में वर्णन कर व्यासावतार श्रीवृन्दावनदास ने अमरत्व प्राप्त किया है। श्रीगौरांग तथा उनके पारषद लोगों का पूरा चरित्र स्थान स्थान पर दिया है। इस महाग्रन्थ के प्रत्येक पंक्ति में अलौकिक शक्ति वर्तमान है। जिन्होंने इस ग्रन्थ का अध्ययन किया है उनको इसका पूरा अनुभव है। प्रेमावतार श्री चैतन्यदेव की प्रेममयी लीला बड़ी मधुर भाषा में वर्णित है।

वस्तुत: प्रेम की निगूढ़ महिमा और भक्ति तत्व का समग्र सत्सिद्धान्त इस ग्रन्थ में बड़े सरल और सुन्दर भाव से कहा गया है। पहिले इस ग्रन्थ का नाम ठाकुर महाशय ने चैतन्य-मंगल रखा था। श्रीलोचनदास जी के चैतन्य मंगल ग्रन्थ बनने के पश्चात् वृन्दावन के वैष्णव लोगों ने इस महाग्रन्थ का श्रीचैतन्य-भागवत नाम रख दिया।

वंगभाषा का यह एक अपूर्व ऐतिहासिक ग्रन्थ है। साढे चार सौ वर्ष पूर्व भारतीय समाज का अपूर्व चित्र इसमें अंकित है। श्रीचैतन्यभागवत ग्रंथ पूरा नहीं हुआ। परन्तु यह ठीक है कि इसके कुछ अन्तिम अंश अप्राप्य हैं। प्रारम्भ में ठाकुर महाशय ने संक्षेप में पूरा चरित्र वर्णन कर दिया है। परन्तु कुछ कारणों से अन्त में नहीं [illegible] मिलती। विशेषत: कवि लोग भगवान के अन्तर्ध्यान की लीला कम लिखते हैं। ठाकुर महाशय ने बाद [illegible] लिखा है —"आविर्भाव तिरोभाव मात्र कहे वेद।" जन्म और अप्रकट होना लोग कहते हैं। किन्तु फिर लिखते हैं "अद्यापिउ सेई लीला करे गोराराय। केहू केहू भाग्यवान देखिते पाय। श्री गौर अभी भी लीला करते हैं और कोई कोई भाग्यवान लोग उसका दर्शन करते हैं। भगवान की लीला नित्य है। उसका अन्त नहीं। परिशिष्ट में हमने कुछ लीलायें लिख दी हैं। शरीर अस्वस्थ होने से विशेष न लिख सके।

श्री चैतन्य-भागवत का हिन्दी-अनुवाद श्री गौरांग-पत्रिका के द्वितीय वर्ष सं० २०१७ के प्रथम अंक से प्रारम्भ हुआ। क्रमश: आदिखंड पूरा हुआ। श्री गौरांग छ वर्ष निकलकर सं० २०२२ में शरीर अस्वस्थ होने से बंद हो गई। तब तक मध्यखंड की सत्रह अध्याय छप चुकी थी। श्री गौर की कृपा से धीरे-धीरे शेष आठ अध्यायों का अनुवाद पूरा हो गया। अर्थात् आदि तथा मध्यखंड दोहा चौपाई में पूरा हुआ। आगे वह क्रम न चल सका। अत: अन्त खंड को संक्षेप में भाषा में ही प्रभु ने पूरा कराया। अब जो कुछ है प्रेमी पाठकों के सन्मुख है। श्री श्री गौरांग की अपार कृपा है जो किसी प्रकार ग्रन्थ पूरा करा दिया। त्रुटियों के लिए क्षमा कर भक्त लोग इसे पढ़ें तो बड़ी कृपा होगी।

श्री चैतन्याब्द ४८३

फागुन सु० १५
सं० २०२५

वैष्णवदासानुदास
बृजभूषणदास

श्री श्रीं कृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः

श्री चैतन्यभागवत

सूची पत्र

आदि खण्ड

मध्य-खण्ड

अन्त्यखंड

छठवाँ अध्याय (च)

कुलिया आदि देश में नाम प्रचार, श्री वृन्दावनदास का जन्म।

सप्तम अध्याय (च)

श्री निताइ को अलंकार पहिनने देख ब्राह्मण को शङ्का, श्री गौर से प्रश्न, श्री गौर का समाधान।

अष्टम अध्याय (च)

नित्यानन्द का नीलाचल आना, कथावार्ता, श्री गदाधर प्रभू को चावल और वस्त्र अर्पण, प्रसाद भक्षण।

नवम अध्याय (छ)

गौड़ीय भक्तों का नीलाचल रथयात्रा पर आना।

दशम अध्याय (छ–झ)

आचार्य के घर गौर का प्रसाद ग्रहण, गौर का नियम, ज्ञान से भक्ति बड़ी, श्री अद्वैताचार्य द्वारा भक्तों सहित गौर संकीर्तन, श्रीवास से गौर का प्रश्न, छिपाने में असमर्थ, श्री रामनाम मिलन तथा स्तुति, श्री सनातन को मथुरा भेजना।

एकादश अध्याय (झ-ञ)

आचार्य से परिक्रमा पर विचार, भावावेश में कूएं में गिरना, भक्तों का निकालना, पुण्डरीक विद्यानिधि, माझी के कपड़े पर शंका, दंड और अनुग्रह।

समाप्त अन्तखण्ड

परिशिष्ट

संक्षिप्त लीला, दक्षिण यात्रा, रंग जी में श्री बालक श्री गोपालभट्टस्वामी को उपदेश, वृन्दावन यात्रा, काशी आगमन, प्रयाग, वृन्दावन पधारे, भावावेश लुप्त तीर्थ उद्धार, प्रयाग में श्रीरूप को शिक्षा, काशी में श्री सनातन को शिक्षा, संन्यासी उद्धार, प्रकाशानन्द चैतन्यवत भक्ति ग्रन्थ।

समाप्त

स्फुट सूची

चित्र सूची

श्री श्री कृष्ण चैतन्यचन्द्रो जयति

श्री चैतन्य भागवत ।

Vrindavan Das
Govind Kund, Vrindavan
Nityananda Baba Ashram

आदिखंड

प्रथम अध्याय

मङ्गलाचरण

आजानुलंबितभुजौ कनकावदातौ
संकीर्तनैकपितरौ कमलायताक्षौ ।
विश्वम्भरौ द्विजवरौ युगधर्मपालौ
वंदे जगत् प्रियकरौ करुणावतारौ ॥१॥

नमस्त्रिकाल सत्याय जगन्नाथसुताय च ।
सभृत्याय सपुत्राय सकलत्रायते नमः ॥२॥

अवतीर्णौ स्वकारुण्यौ परिच्छिन्नौ सदीश्वरौ ।
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्दौ द्वौ भ्रातरौ भजे ॥३॥
(श्री मुरारि गुप्त)

जयति जयति देव कृष्ण चैतन्यचन्द्रो
जयति जयति कीर्तिस्तस्य नित्या पवित्रा ।
जयति जयति भृत्यस्तस्य विश्वेश मूर्त्तं
जयति जयति नृत्य तस्य सर्वप्रियानाम् ॥४॥

अनुवाद

आजानुलम्बित हाथ (घुटने तक लम्बे दोनों हाथ), सोने के समान शरीर की कान्ति, संकीर्तन के एकमात्र पिता (जन्मदाता, प्रचारक), कमल के समान नेत्र वाले, विश्व अर्थात् संसार के पालनकर्ता, द्विज श्रेष्ठ, युगधर्म अर्थात् हरिनाम के पालन कर्ता ऐसे जगत् के प्रिय करने वाले और करुणा के अवतार श्री गौराङ्ग की हम वन्दना करते हैं ॥१॥

हे प्रभो ! आप भूत (जो समय बीत गया), भविष्य (आनेवाला) और वर्तमान, तीनों काल में सत्य हैं । श्री जगन्नाथ मिश्र के आप पुत्र हैं । आपके भृत्य अर्थात् परिकर, पुत्र अर्थात् नाम संकीर्तन और कलत्र अर्थात् आपके भक्तों समेत हम आपकी वंदना करते हैं ॥२॥

गुप्त रूप से अर्थात् मनुष्य का रूप धारणकर सहज करुणा की मूर्ति ईश्वर ने पृथ्वी पर अवतार लिया है । हम उन्हीं श्री कृष्णचैतन्य और श्री नित्यानन्द दोनों भ्राताओं का भजन करते हैं ॥३॥

श्री कृष्णचैतन्य-चन्द्र की जय हो । उनके नित्य पवित्र कीर्ति की जय हो । प्रभु के पार्षदों और भक्तों की जय हो । सबको प्रिय लगने वाले श्री गौराङ्ग के नृत्य की जय हो, जय हो ॥४॥

श्री चैतन्य भक्त जे अहहीं । तासु चरण हम वन्दन करहीं ॥
पुनि वन्दौं चैतन्य के चरणा । नदिया प्रकटे भवभय हरणा ॥
हम तें अधिक भक्त कर पूजन । कह्यो भागवत महँ जदुनंदन ॥[1]
प्रथम भक्त कर वन्दन कीना । काज सिद्धि जाके आधीना ॥
नित्यानन्द इष्ट मम देवा । गौर पाव जग जाकी सेवा ॥
शेष रूप वन्दौं बलरामा । मुख सहस्र गावत गुणग्रामा ॥
प्रभु गुणगण संपुट माणिक को । शेष बदन प्रभु गुण सो पूरो ॥
प्रथमहिं शेष चरण शिर नावौं । जासु कृपा प्रभु सुयश सुनावौं ॥
शेष सहस मुख प्रभु बलरामा । प्रभु चरित्र गावत अभिरामा ॥
अति विशाल तनु श्रीहलधर को । गौर प्रेम रसमत्त सदा सो ॥
इन सम नहिं कोउ प्रभुको प्यारो । एक प्रान द्वै देह निहारो ॥

गावैं जब इनको चरित, हरपैं श्री चैतन्य ।
कृपा करैं शिव देव गण, कहैं सबै धनि धन्य ॥ १ ॥

पारवती शिव सँग सुरनारी । पूजहिं सब सेवक अनुहारी ॥
श्री भागवत माँझ लिखि राखा । सबहिं बंश बलराम की गाथा ॥
रास कथा प्रभु की अति पावन । वृन्दावन गोपिन मन भावन ।
माधव मधु बसन्त के मासा । हलधर रास कियो द्वै मासा ।
स्त्री-सँग मुनिगण निन्दा करहीं । राम रास की सब स्तुति करहीं ॥
पुष्प वृष्टि देवन तहँ कीन्हा । राम कृपा एकहि हैं चीन्हा ॥
वेदन माँझ गुप्त करि राखा । प्रगट पुराण माँझ सो भाखा ॥
अल्प बुद्धि जे नहिं यह जानहिं । बलदाऊ को रास न मानहिं ॥
एक समय दोउ कुञ्जन माहीं । कियो रास क्रीड़ा वन माहीं ॥
भागवत महँ सो वर्णित अहही । श्री शुक कहैं परिक्षित सुनहीं ॥

सुनिकै श्री भागवत को, करै न राम सो प्रीति ।
वैष्ण नहिं सो यवन सम, यम सों करै सो रीति ॥ २ ॥

एतेहु पर कोउ संशय करहीं । राम रास किन ग्रंथन अहहीं ॥
शास्त्रन देखि तबहु नहिं मानहिं । अर्थ अनर्थ अनेक बखानहिं ॥
प्रभु प्रिय श्री बलराम गुसाईं । जपत जगत जेहि प्रभु की नाईं ॥
लीला हित प्रभु बहु वपु धारत । दास सखा आसन सब साजत ॥[2]
धरि बहु रूप स्वयं प्रभु सेवहिं । जेहि पर कृपा होइ सो पावहिं ॥
राम अंश सों गरुड़ गोसाईं । सेवत [illegible] महा हरषाईं ॥
ब्रह्मा शिव सनकादि कुमारा । शुक नारद सब भक्त अपारा ॥

---

१. मद्भक्तपूजाभ्यधिकम् – भाग० ११।१९।२१ हमारी पूजा से बढ़कर हमारे भक्त की पूजा है ।
२. तथाहि श्रीयामुन मुनि-विरचित स्तोत्ररत्ने (४०)—निवास शय्यासन पादुकांशुकोपधान-वर्षातप वारणादिभिः । शरीर भेदैस्तव शेषतां गतैर्यथोचितं शेष इतीरिते जनैः ॥

सब पूजत श्री शेष उदारा। सहस बदन प्रभु भक्ति अगारा॥
आदि देव प्रभु योगी वैष्णव। बसि पाताल कहत प्रभु गुण सब॥
ब्रह्म सभा नारद एक बारा। गायो प्रभु यश विशद अपारा॥

प्रभु चरित्र गावत सदा, मुख सहस्र सों शेष।[१]
जानि सकै को प्रभु सुयश, बन्दन इनहिं अशेष॥ ३॥

जग स्रष्टा पालक संहर्ता। सत रज तम सब गुण के कर्ता॥
भृकुटि विलास जासु लय होई। सोइ अनन्त जग कह सब कोई॥
लीला हित सोइ नर बपुधारी। भक्तन हित लीला बिस्तारी॥
भजत जिनहिं पापी अघराशी। होत विमल मति सब दुख नाशी॥
शेष बिना गति दूसर नाहीं। याही तें बुध छाँड़त नाहीं॥
कंदुक इव धारत जो धरनी। गावत प्रभु यश अद्भुत करनी॥
इनकर गुन नारद एक बारा। ब्रह्मा ढिग गायेहु विस्तारा॥
कछु अनन्त महिमा हम गायो। नित्यानन्द इष्ट मन भायो॥
भवसागर उतरन जो चहहू। नित्यानन्द आस करि रहहू॥
वैष्णव जन सों विनती मोरी। नित्यानन्द चरन मति भोरी॥

द्विज ब्राह्मन अरु विप्र महँ, जिमि नहिं कछू अभेद।
नित्यानन्द, अनन्त, अज, बल्देवहूं नहिं भेद॥ ४॥

नित्यानँन्द प्रभु आज्ञा दयऊ। गौर चरित बरनन कछु करऊ॥
शेष कृपा सों हृदय मँझारा। स्फुरेहु चरित्र अगाध अपारा॥
याही तें प्रथमहिं हम गायो। शेष सुयश अतिही मन भायो॥
भक्त प्रसाद सुलभ सब पाहीं। दृढ़ विश्वास अहै उर माहीं॥
सुनेउँ भक्त ढिग चरित सोहावा। लिखेहुँ यथामति मो मन भावा॥
प्रभु चरित्र अति अगम अपारा। आदि अन्त नहिं जाननहारा॥
प्रभु प्रेरित निज मति अनुसारा। लिखेहुँ मूक जिमि मन्द गँवारा॥
वैष्णव पद बन्दौं दुखनाशी। सब अपराध क्षमहु सुख राशी॥
सुनहु कथा सब मन चित लाई। श्री चैतन्य चरित हरखाई॥
भक्तन सँग प्रभु लीला कीन्हा। त्रिविध ताप जगकर हरि लीन्हा॥

✓ बरनहुँ अब त्रयखंड में, लीला ललित अपार।
✓ आदि मध्य अरु अन्त महँ, सब शास्त्रन को सार॥ ५॥

✓ प्रथम माँहि विद्या परचारा। दूजे महँ हरिनाम उदारा॥
✓ अन्त खण्ड नीलाचल बासा। कृष्ण विरह लीला परकासा॥
संन्यासी सुन्दर तनु धारे। नित्यानन्द गौड़ महँ राखे॥
आदि मध्य सब कथा सुबानी। थोरे महँ अब कहौं बखानी॥

---

१. शेष भगवान शैया, आसन, पादुका, वस्त्र, छत्र प्रभृति सब प्रकार से नाना रूप धारण कर प्रभु की प्रसन्नता के निमित्त निष्काम सेवा करते हैं, इसी हेतु आपका नाम शेष पड़ा॥

जगन्नाथ पण्डित द्विजराजा। बसुदेवहिं सम सब सुख साजा ॥
शची तासु पत्नी शुभ शीला। जगत मातु सोइ कर नर लीला ॥
जासु गर्भ प्रगटे नारायन। श्री चैतन्य नाम अघपावन ॥
पूनो तिथि फागुन शुभ मासा। ग्रहण काल प्रगटे द्विजराजा ॥
पर्वसमय सब हरि कहि धाए। हरि रव बिच हरि भुइँ पै आए ॥
शिशु लीला अनेक प्रभु कीन्हा। मातु पिताहिं मोद बहु दीन्हा ॥

श्री जगदीश हिरण्य ढिग, हरिवासर को माँग।
लै मँगाइ प्रभु खायेहु, मेटेहु सब भव रोग ॥ ६ ॥

बज्रांकुश अरु ध्वजा पताका। आँगन माँझ दीख पितु-माता ॥
एक बार दस्यु लै भाग्यो। मति भ्रम भयहु बहुरि लै आयो ॥
शिशु लीला करि क्रन्दन करहीं। हरि हरि सुनत मौन ह्वै रहहीं ॥
अशुचि स्थान प्रभु जाइ विराजें। माता सों शुभ बचन उचारें ॥
बाल चरित करि गुरु ढिग जाई। अल्प काल विद्या सब पाई ॥
अध्यापक होइ विद्या दीन्हा। सुरपुर मिश्र गमन तब कीन्हा ॥
विश्वरूप संन्यासी भयऊ। शची दुखित सब सुख चलि गयऊ ॥
सब शिष्यन लीन्हे निज संगा। गङ्गतीर बिचरहिं अतिरंगा ॥
सब लखि डरपत गुरू निमाई। सन्मुख होइ सकै को आई ॥
पूर्व बंग जात्रा प्रभु कीन्हा। देश पवित्र सकल सो कीन्हा ॥

गौर विरह निज देह, लक्ष्मी तजि सुरपुर गई।
दुहिता सब गुण गेह, मिश्री सनातन पुनि दई ॥ ७ ॥

वायु व्याधि मिस प्रभु सुख राशी। प्रेम भक्ति लक्षण परकाशी ॥
नगर भ्रमत सब शिष्यन लीन्हें। सकल भक्त कहँ अति सुख दीन्हें ॥
दिव्य बसन भूषण सब राजत। शची देखि प्रभु अति सुख पावत ॥
दिग्विजयी कहँ प्रभु जय कीन्हा। भक्ति बिमल बर तेहि कहँ दीन्हा ॥
सकल भक्त मिलि करहिं बिचारा। प्रभु चरित्र लखि मोह अपारा ॥
गया जाइ हरिपद प्रभु निरखेउ। ईश्वर पुरि मिलि अति सुख लहेउ ॥
आदि खंड महँ अमित बिलासा। पुनि बरनब सोई मुनि व्यासा ॥
बाल चरित सब अति सुखदाई। गया लागि यहि महँ सुनु भाई ॥
मध्य खण्ड महँ परगट भयऊ। भक्त सकल अति आनन्द लहेऊ ॥
श्री वासादि भक्त घर आई। बैठे प्रभु सिंहासन जाई ॥

नित्यानन्द शुभागमन, कीर्तन विविध विलास।
षडभुज रूप देखायहू, भक्तन परम हुलास ॥ ८ ॥

विश्वरूप अद्वैत देखायेहु। शेष व्यास पूजा करवायहु ॥
गौर लीन्ह हलधर को वेषा। हल मूसल दीन्हेउ प्रभु शेषा ॥
ब्रह्मजात दुइ दस्यु अपारा। प्रभु सहजहिं दोउ भ्रात उबारा ॥
यहि महँ प्रभु मातहिं देखराई। कृष्ण राम सोइ गौर निताई ॥

महा प्रकाश भाव देखरायेहु। सात प्रहर ऐश्वर्य प्रकाशेहु॥
सोइ दिन प्रभु भाखेहु सब ठोंई। भक्त सकल जन्मे जहँ जाई॥
मध्य खण्ड प्रभु कीर्तन कीन्हा। सकल नगर भ्रमि अति सुख दीन्हा॥
काजी को घर द्वार नसाव। निज महिमा कछु ताहि दिखावा॥
रूप बराह धरत प्रभु भयऊ। श्री मुरारि सों अस प्रभु कहेऊ॥

श्री मुरारि के पीठ पर, आपु भए असवार।
होइ चतुर्भुज रूप प्रभु, राजत भे सुरराज॥ ९॥

शुक्लाम्बर कर तंडुल खावा। विविध रूप भक्तहिं दिखरावा॥
नाचे धरि रुक्मिनी को वेशा। कीन्ह पान स्तन भक्त मुनीशा॥
दण्ड मकुन्दहि तब प्रभु दीन्हा। कृपा अनुग्रह पुनि प्रभु कीन्हा॥
रात्रि माँहि प्रभु कीर्त्तन कीन्हा। वत्सर एक भक्त सुख दीन्हा॥
श्री अद्वैत निताई संगा। रस परिहास होत अति रंगा॥
वैष्णव कर अपराध जो करई। राम रोष पावक सो जरई॥
सब भक्तन स्तुति कीन्ह विशाला। इच्छित बर पायेउ तत्काला॥
प्रभु प्रसाद हरिदासहिं दीन्हा। जल पी श्रीधर को धन कीन्हा॥
सकल भक्त सँग गङ्ग मँझारी। क्रीड़ा करत भक्त भय हारी॥
नित्यानन्द संग प्रभु लयउ। श्री अद्वैत भवन तब गयऊ॥

कीन्हेउ कोप अपार प्रभु, दण्ड दीन्ह द्विजराज।
कृपा कीन्ह पुनि ताहि पर, आए सहित समाज॥ १०॥

जानेउ मरम मुरारि गुसाईं। राम कृष्ण सोइ गौर निताई॥
श्रीवास आँगन में दोउ भाई। नाचत भे प्रभु गौर निताई॥
नारद को दुख सकल नसाए। मृतक पुत्र सों बचन कहाए।
पुत्र शोक तिन कर सब नाशा। भए सुखी श्रीवास उदासा॥
गङ्गहि झाप क्रोध करि दीन्हा। कूदि निताइ पकरि कर लीन्हा॥
प्रभु अवशेष नरायनि पावा। तासु सुयश सबही मिलि गावा॥
सब जीवन हित गौर उदारा। संन्यासाश्रम में पगु धारा॥
मध्यखंड कीर्तन परचारा। संन्यासी होइ जगत उबारा॥
औरौ जो प्रभु की सब लीला। व्यास कहब सो सब सुखशीला॥
श्री चैतन्य नाम प्रभु धरेऊ। शेष खण्ड महँ वरनन भयऊ॥

शिखा सूत्र सब त्याग करि, भक्तन कहँ दुख दीन्ह।
आचारज आश्रम तबहिं, गमन तुरत प्रभु कीन्ह॥ ११॥

शची शोक व्याकुल दिन राती। समुझायहु प्रभु तेहि बहु भाँती॥
भक्तन सँग नीलाचल आए। दण्ड निताई तोड़ि बहाए॥
नीलाचल महँ रहे लुकाई। सार्वभौम देखे सुखदाई॥
षडभुज रूप तिनहिं देखरावा। पुनि प्रतापरुद्रहि अपनावा॥
काशी मिश्र आइ सुख दीन्हा। वास तिनहि के घर प्रभु कीन्हा॥

दामोदर स्वरूप मुनि ज्ञानी। परमानन्द पुरी सुख खानो ॥
प्रभु सेवा में रहत निरन्तर। देखि लोग उर आनन्द अन्तर ॥
पुनि प्रभु गौड़ देश कहँ आए। मथुरा जाव इहै मन लाए ॥
विद्या वाचस्पति घर रहेउ। कुलिया नगर बहुरि प्रभु गयउ ॥
दरस लागि आए पुरवासी। हरि हरि कहत भए सुखरासी ॥

नीलाचल आए बहुरि, कीर्तन विविध विलास।
नित्यानन्द स्वरूप कहँ, तठयेउ दीनदयाल ॥ १२ ॥

रथ आगे भक्तन सँग लीन्हे। नृत्य कियौ सबहों सुख दीन्हे ॥
सेतु बन्ध लगि तव प्रभु गयऊ। पुनि मथुरा प्रभु गमनत भयऊ ॥
रामानन्द मिले पुनि आई। रूप सनातन दोऊ भाई ॥
वाराणसि जबहीं प्रभु आए। संन्यासी नहिं देखन पाए ॥
नीलाचल पुनि आई पधारे। हरि कोर्तन महँ मनचित धारे।
कछुक काल श्री नित्यानन्दा। यात्रा बहुत कोन्ह सुख कन्दा ॥
बूझि सकै को चरित अपारा। कर कंकण उर हार सँवारा ॥
भक्ति प्रचार कीन्ह प्रभु जाई। पानी हाट ग्राम में जाई ॥
वणिक उधार कीन्ह प्रभु जाई। सुन्दर गौर किशोर नितई ॥
शेष खंड आष्टादश वर्षा। नीलाचल प्रभु रहे सहर्षा ॥

लीला अमित अनन्त अति, नहिं कोउ पावै पार।
व्यास आदि वर्नब सोई, मैं मतिमंद गँवार ॥ १३ ॥

श्री चैतन्य चरित हम गावा। नित्यानन्द चरन मन भावा ॥
देहु हमहिं प्रभु यह बरदाना। गौर चरित्र गावहुँ अभिरामा।
सूत्ररूप प्रभु चरिच सुहावा। तीनखंड महँ गाइ सुनावा ॥
आदिखंड की कथा सुहाई। सुनहु एक मनह्वै सब भाई ॥
जेहि बिधि प्रभु प्रगटे महि आई। जन रंजन भक्तन सुखदाई ॥
श्री चैतन्य चरण चितधारी। कहौं कथा निज मति अनुसारी ॥
दास वृंदावन गाइ सुनावा। चैतन्य मंगल नाम सुहावा ॥
भाषा माहिं ताहि सोइ कीन्हा। व्रज भूषण मतिमन्द मलीना ॥

इति श्री चैतन्य भागवते आदि खंडे लीला सूत्र
वर्णनं नाम प्रथमोध्यायः ॥१॥

द्वितीय अध्याय

जय जय जय श्री गौर, जगन्नाथ सुत विप्रवर।
कीर्त्तन प्रिय हरि गौर, करुनानिधि दुष्टन दलन ॥ १ ॥

नित्यानन्द गदाधर जीवन। श्री अद्वैत भक्त सर्वस धन ॥
भक्त सहित प्रभु चरण नमामी। कृपा करहु प्रभु अन्तर्यामी ॥

वार बार भक्तन सिर नाऊँ। जासु कृपा हरि चरित सुनाऊँ॥
भक्त सहित प्रभु बन्दन करहूं। गौर कथा अब वर्णन चहहूं॥
करुना सिंधु गौर भगवाना। सेवा विग्रह श्री बलरामा॥[1]
प्रभु अरु भक्त तत्व को पावै। करैं कृपा तबही उर आवै॥
प्रभु जस चहैं करै सब कोई। श्री भागवत कहत है सोई॥
ब्रह्मा कमल माँझ जब प्रगटेउ। को मैं कहाँ कछुहु नहिं समुझेउ॥
तब सब भाँति शरन प्रभु लीह्ना। प्रभु करि कृपा दरस तब दीन्हा॥
प्रभु की कृपा ज्ञान तब पावा। तत्व सकल हिरदय महँ आवा॥

ब्रह्मा सों भागवत महँ, कही सकल समुझाय।
प्रभु लीला को पार कोउ, कहहु कवन विधि पाय॥ २॥[2]

कारन कवन कृष्ण अवतारा। को जग बीच जो जानन हारा॥
तदपि पुरान बीच लिखि राखा। श्री गीता महँ है सो भाखा॥[3]

---

१. तथाहि (भा० २।४।२२)

प्रचोदिता येन पुरा सरस्वती
वितन्वताऽजस्य सतीं स्मृतिं हृदि।
स्वलक्षणा प्रादुर्भूत किलास्यतः
स मे ऋषीणामृषभः प्रसीदताम्॥

अनुवाद

जिसने कल्पारंभ काल में ब्रह्मा को सृष्टि रचना करने की शक्ति दी और जिसकी प्रेरणा से ब्रह्मा के मुख से वेद वाणी प्रादुर्भूत हुई वही ऋषियों में श्रेष्ठ भगवान हमारे ऊपर प्रसन्न हों।

२. तथाहि (भा० १०।१४।२१)—

को वेत्ति भूमन्! भगवान! परात्मन!
योगेश्वरोतीर्भव तस्त्रिलोक्याम्।
क्व हं कथं वा कति वा कदेति
विस्तारयन् क्रीड़सि योगमायाम्॥

हे अपरिछिन्न! हे भगवन्! हे परमात्मा। हे योगेश्वर! आप अपनी स्वरूप शक्ति योगमाया को नाना रूप से फैलाकर लीला विस्तार करते हैं। अपनी लीलाएँ कब और कहाँ होती हैं तथा उसका कारण कोई नहीं समझ सकता। आपकी लीलाओं का पार कोई नहीं पा सकता है।

३. तथाहि गीता (४।७।८) अर्जुन के प्रति भगवद्वाक्य—

यदा यदाहि धर्मस्यग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

परित्राणाय साधूनां विनाशायचदुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगेयुगे॥

हे भरत कुल भूषण! जब जब धर्म के प्रति लोगों के मन में ग्लानि हो जाती है और अधर्म बढ़ता है, तब हम इस पृथ्वी पर आते हैं। साधु लोगों की रक्षा करने, पापियों का नाश करने तथा धर्म संस्थापन करने के निमित्त हम प्रत्येक युग में अवतार लेते हैं॥

जब जब होइ धर्म कै ह्रासा। पावहिं भक्त जबहिं अति त्रासा॥
ब्रह्मा प्रभु ढिग जाय सुनावहिं। साधुहिं रक्षि दुष्ट को नाशहिं॥
थापन हित युग धर्म कृपाला। अंश सहित आवहिं तत्काला॥
✓कलियुग धर्म अहै हरि कीर्तन। एतदर्थ भे श्री शचिनन्दन॥
✓कीर्तन हित लीन्हेउ अवतारा। कहत भागवत तत्व विचारा॥[1]
✓कलियुग केवल नाम अधारा। श्री चैतन्य ताहिं बिस्तारा॥
✓संकीर्तन पालन हित भाई। परिकर युत प्रगटे प्रभु आई॥
परिकर सब प्रभु आज्ञा पाई। पृथ्वी पर प्रगटे सो आई॥

शिव विरंचि आदिक सकल, शेष सकल गुणधाम।
लीला हित सब अवतरे, गावत प्रभु गुणग्राम॥ ३॥

भक्त रूप प्रगटे सब आई। प्रभु जानहिं तिन कहँ सब भाई।
कोउ नदिया महँ प्रगटे जाई। चाटिग्राम प्रगटे कोउ आई॥
उढ़ हट्ट कोउ पश्चिम देशा। राढ़ माँझ प्रगटे अहि ईशा॥
नदिया महँ प्रभु प्रगटे आई। यहि सम धन्य न कोउ जग भाई॥
मिले भक्त नदिया महँ आई। प्रगटे जे सब इत उत जाई॥
श्रीवासऽरु श्रीराम उदारा। चँद्रशेखर गुण ज्ञान अगारा॥
श्री मुरारि भव-वैद्य कहाई। श्री हट् महँ प्रगटे सब आई॥
पुंडरीक विद्यानिधि साँई। चैतन्य वल्लभ दत्त गोसाँई॥
चाटिग्राम सब भक्त सुजाना। बूढ़न महँ हरिदास महाना॥
राढ़ माँझ एक चाका ग्रामहिं। नित्यानन्द प्रगट भे तामहिं।

धन्य पिता पण्डित प्रवर, हाड़ाई द्विजराज।
लीला हित प्रभु तनु धरेउ, कृपासिंधु नट राज॥ ४॥

---

१. तथाहि भागवते (भा० ११।५।३१,३२)—

इति द्वापरे उर्वीश स्तुवन्ति जगदीश्वरम्।
नाना तंत्र विधानेन कलावपि तथा शृणु॥
कृष्णवर्णंत्विषाऽकृष्णं सांगोपांगास्त्र पार्षदम्।
यज्ञैः संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः॥

अनुवाद

(महाराज निमि के प्रश्न का उत्तर देते हुए योगेश्वर करभाजन ऋषि ने सब युगों के अवतार का वर्णन कर कलियुग के विषय में कहा) द्वापर युग में इस प्रकार लोग स्तुति करते हैं। कलियुग में नाना तंत्रों में कही गई विधि के अनुसार लोग स्तुति करेंगे।

जो कृष्ण स्वरूप हैं, गौरवर्ण (त्विषा कान्त्या अकृष्णं गौर कांतिकं) हैं और अपने अङ्ग (श्री नित्यानन्द और श्री अद्वैताचार्य), उपाङ्ग (श्री वासादि पंडित प्रभृति), अस्त्र (अविद्यानाशक भगवन्नाम) तथा पार्षद (श्री गदाधर आदि) सहित अवतार लेंगे और सुमेधा (बुद्धिमान) लोग संकीर्तन रूपी यज्ञ से उनकी पूजा करेंगे।

पुष्प वृष्टि देवन तब कीन्हा। जय जय कहि निज प्रभु कहँ चीन्हा।
परमानँद तिरहुत महँ राजे। नीलाचल प्रभु संग विराजे॥
पुण्य भूमि त्यागेहु सब आई। अशुचि देश जन्मे सब जाई॥
प्रगटे आपु गंग के तीरा। किमि जन्मे इतउत सब बीरा॥
जहाँ न गंगा की बह धारा। जहाँ न हरि को नाम प्रचारा॥
पाण्डव हू जहँ गमन न कीन्हा। सो सब अशुचि देश जग चीन्हा॥
ऐसे अशुचि देश महँ जाई। जन्म लीन्ह हरिभक्त सुहाई॥
जग तारन हित मम अवतारा। निज मुख प्रभु कह बारम्बारा॥
अशुचि देश भक्तन जन्माई। कीन्ह पवित्र देश सब जाई॥
जन्मे हरी भक्त जहँ जाई। भए पुनीत जगत यश छाई॥

वैष्णव जन जहँ अवतरहिं, तीरथ होत महान।
प्रभु यासों इन देश महँ, प्रगटेउ सकल सुजान॥ ५॥

जन्मे अमित स्थान सब जाई। मिले आइ प्रभु ढिग सब धाई।
जानि बिरञ्चि गौर अवतारा। नदिया कर वैभव विस्तारा॥
लक्ष लक्ष जन गंग नहाहीं। पण्डित कर गिनती कछु नाहीं॥
अध्यापक-गण अमित अपारा। शिष्यन कहँ को बरणै पारा॥
सबै सुखी धनवान उदारा। विद्या बल गर्वित संसारा॥
विद्या पढ़न हेतु सब आवहिं। विद्या पढ़ि मन दर्प बढ़ावहिं॥
कृष्ण-भक्ति को मर्म न जानहिं। गर्व करहिं उपधर्म बखानहिं॥
मंगल चण्डी विषहरि आदी। पूजहिं सब जन आतमवादी॥
धन अपार सब देहिं लुटाई। सुत कन्या विवाह महँ जाई॥
भट्टाचार्य्य मिश्र सब लोगा। तेहु बखानहिं यहि सब योगा॥

भक्ति शून्य सब लोग भे, नहिं प्रभु पद पर प्रीति।
माया मोहित सकल जग, भई जगत यहि रीति॥ ६॥

वैष्णव जन यह देखि अचारा। मन महँ करहिं बिचार अपारा।
केहि विधि होय जीव निस्तारा। पचि-पचि मरत सकल संसारा॥
कहेउ ते कोऊ नाम न लेहीं। विद्याबल गर्वित जेहि तेहीं॥
भक्त सकल हरि अर्चन करहीं। गंगा स्नान भजन नित करहीं॥
जग मंगल हित बचन उचारहिं। प्रभु कृपालु जग रक्षा करिहहिं॥
वैष्णव गुरु अद्वैत अचारा। कृष्ण भक्त द्विज परम उदारा॥
ज्ञान-भक्ति-वैराग्य मुख्यतर। कृष्ण भक्ति बरणहि जिमि शंकर॥
सकल शास्त्र को मर्म सुनावहिं। कृष्ण चरण रति यहै बखानहिं॥
तुलसीदल गंगा जल अरपहिं। प्रेम सहित प्रभु कहँ नित पूजहिं॥
कृष्ण सुरति महँ करैं हुँकारा। ब्रम्ह भेदि स्वर स्वर्ग सिधारा॥

सुनिकै प्रेम पुकार हरि, आए श्री चैतन्य।
जगत लहेउ यहि प्रेमफो, धन्य अचारज धन्य॥ ७॥

आचारज नदिया महँ बसहीं। लोग बिमुख लखि अति दुख सहहीं॥
लगे सबहि गृह कारज माहीं। कृष्णभक्ति कोउ जानत नाहीं॥
पूजहिं बासुलि अति मन लाई। यक्षहिं पूजत भेंट चढ़ाई॥
नृत्य गीत करि बिबिध प्रकारा। कृष्ण नाम नहिं लेहिं गँवारा॥
श्री अद्वैत मन करहिं विचारा। कृष्ण बिना किमि जैहैं पारा॥
अति दयालु कोमल चित संता। जनहित लागि करहिं अति चिंता॥
"जब अवतार लेहिं प्रभु आई। तब उद्धार होइ सब भाई॥
जब प्रभु कहँ महि आनि देखावौं। तब अद्वैत नाम कहवावौं॥
प्रभुहिं आनि जग सनमुख राखौं। नाचि गाइ सब जीव उधारौं॥"
यहि बिधि करि संकल्प उदारा। सेवहिं प्रभुहिं कृपा आगारा॥

बार-बार निज मुख कह्यौ, करिकै कृपा कृपालु।
आचारज हित अवतरेउ, श्री चैतन्य दयालु॥८॥

बसहिं बास पंडित तेहि ठाँई। कीर्तन कीन्ह जहाँ प्रभु जाई॥
गावहिं कृष्ण सदा सब भाई। कृष्णहिं पूजहिं गंग नहाई॥
हरि इच्छा हरि भक्त अपारा। जन्मे बहु यहि नगर मँझारा॥
श्री शेखर, जगदीश, मुरारी। गंगा दास मान सुखकारी॥
अमित भक्त को बरनै पारा। सबहि भक्त गुणज्ञान उदारा॥
कृष्ण भक्ति बिनु और न मानहिं। प्रेम भाव सबही मँह राखहिं।
निज अवतार कोउ नहिं जानहिं। भक्ति हीन नर लखि दुख पावहिं॥
कृष्ण कथा कतहूँ नहिं होई। अति दुर्लभ जग सुनै न कोई॥
श्री अद्वैत सभा सब जाहीं। कृष्ण कथा जँह होत सदाहीं॥
सीतल करहिं प्रान तँह जाई। मन मँह तर्क करहिं घर आई॥

भक्ति हीन सब लोग जे, किमि जैहैं भवपार।
कृष्ण कथा कीर्तन भजन, कोउ नहिं जाननहार॥९॥

फँसे जीव पावहिं अति त्रासा। भक्तहिं देखि करहिं उपहासा॥
श्रीवासादि भक्त जे अहहीं। रात्रि भाँझ हरि कीर्तन करहीं॥
सो सुनि पाखंडी दुख पावैं। पागल भे यों बचन सुनावैं॥
ग्राम उजाड़ होब अब भाई। परम प्रचंड यवनपति साँई॥
इनके घर कहँ तोरि बहावहु। इनहिं ग्राम सों मारि भगावहु॥
ऐसे अटपट बचन उचारत। भक्त दुखी मन माहिं बिचारत॥
कृष्ण कृष्ण कहि रोवन लागे। श्री अद्वैत क्रोध मह पागे॥
होइ दिगंबर बचन सुनाए। "सुन श्रीवास भक्त मन लाए॥
कृष्णहिं आनि देखाउब सबहीं। आपु उधार करब सब जनहीं॥
कृष्ण भक्ति सब कहँ सो दैहैं। हरि हरि कहि सबही सुख पैहैं॥

नातरु याहि शरीर सों, प्रगटब हम भुज चार।
चक्र लेइ निज हाथ सों, करब दुष्ट संहार॥१०॥

तब जानेहु हम हैं हरिदासा। कृष्ण मोर हम उन कर दासा॥"
ऐसे कहि अद्वैत उदारा। पूजहिं कृष्ण सकल परिवारा॥
भक्त सकल मिलि क्रंदन करहीं। पूजहिं कृष्ण चरण गहि रहहीं॥
कृष्ण-कृष्ण कहि चहुँ दिशि धावहिं। दिन नहिं भूख नींद नहिं रातहिं॥
भक्त सकल दुख देखि कृपाला। कोमल चित प्रभु दीनदयाला॥
पहिलेहि श्री अनन्त गुणधामा। राढ़ माँझ प्रगटे अभिरामा॥
माघ सुदी तेरस दिन भाई। नित्यानन्द प्रगट भये आई॥
पद्मावती गर्भ प्रभु जाए। एक चाका महँ परम सुहाए॥
हाड़ाई पंडित द्विज राजा। जगत् पिता जेहि पितु करि साजा॥
कृपासिंधु बलराम गोसाईं। नित्यानन्द नाम कहवाई॥

जै जै कहि कै देव सब, वर्षन लागे फूल।
भयउ देश तेहि समय तें, सकल सुमंगल मूल॥११॥

पतित उधारन हित प्रभु आये। इतउत जग महँ सब सुख छाये॥
शेष प्रकाश भयो भुवि आई। सुनहु कृष्ण प्रगटे जहँ जाई॥
नदिया महँ एक मिश्र सुजाना। जगन्नाथ पंडित जग जाना॥
बसुदेवहि सम चरित उदारा। कोउ इन सम नहिं प्रभु कर प्यारा॥
शची तासु पत्नी गुणशीला। जासु अजिर प्रभु कर नर लीला॥
बहु कन्या अरु पुत्र गँवाए। विश्वरूप इकले मन भाए॥
विश्वरूप सुन्दर सब लायक। कोटि मनोज रूप सुखदायक॥
बालपनहिं विद्या सब जानी। अतिविरक्त पंडित अरु ज्ञानी॥
भक्ति रहित सब भा संसारा। कली धर्म व्यापेउ दिशि सारा॥
धर्म हानि लखि प्रभु अवतरहीं। भक्त दुखित प्रभु देख न सकहीं॥

तबहिं शची के गर्भ महँ, आए श्री भगवान।
गौरचन्द्र प्रभु गौर हरि, मरम न काहू जान॥१२॥

जय जय ध्वनि तब देवन कीन्हा। हर्ष सहित निज प्रभु कहँ चीन्हा॥
ब्रह्माशिव सनकादि मुनीशा। स्तुती करन आए सुर ईशा॥
सुनहु भक्ति सह स्तुति अतिपावन। कृष्ण चरण रति रहु मनभावन॥
"जय जय महाप्रभु जनक सभार। जय जय संकीर्तन हेतु अवतार॥
जय जय वेद धर्म साधु विप्रपाल। जय जय अभक्त-दमन जय महाकाल॥
जय जय सर्व सत्य मय कलेवर। जय जय इच्छामय महामहेश्वर॥
प्रभु अनन्त कोउ पार न पावा। सोइ प्रभु शची गर्भ महँ आवा॥
प्रभु इच्छा को बूझनहारा। सृष्टिहिं रचि लीला विस्तारा॥
प्रलय जासु इच्छा सों होई। कंसहिं मारन आयउ सोई॥
सोइ प्रभु लीन्ह मनुज अवतारा। प्रभु लीला को जाननहारा॥

प्रभु आज्ञा सो एकजन, करै जगत् उद्धार।
निज इच्छा प्रभु अवतरेउ, करन भक्ति परचार॥ १३॥

श्वेत रूप धरि सत युग माहीं। तप करि शिक्षा दिय सब पाहीं॥
दण्ड कमण्डल चर्महिं धारे। ब्रह्मचारि ह्वै धर्महिं थापे॥
रक्त वर्ण त्रेता युग माहीं। यज्ञ पुरुष होइ यज्ञ कराहीं॥
स्रुक् स्रुव लेइ यज्ञ प्रभु कीन्हा। याज्ञिक होइ सब कहँ सुख दीन्हा॥
श्याम वर्ण त्रेता युग लीन्हा। पूजा धर्म सिखावन दीन्हा॥
पीत वर्ण धरि कलि महँ आए। हरि कीर्तन परचार कराए॥
है अनन्त प्रभु तव अवतारा। को समर्थ तेहि वर्णनहारा॥
मत्स्य रूप धरि कियेउ बिहारा। प्रलय काल के सिंधु मँझारा॥
कूर्म रूप तुम जगत अधारा। हयग्रीव होइ वेद उबारा॥
आदि दैत्य मधु कैटभ मारेउ। श्री वराह होइ जगत उबारेउ॥

श्री नृसिंह को रूप धरि, कियेहु कशिपु संहार।
वामन होइ बलि को छल्यो, कियो भक्त उद्धार॥ १४॥

परशुराम को रूप सँभारेउ। क्षत्री सब जग के संहारेउ॥
रामरूप होइ रावन मारा। हलधर होइ लीला बिस्तारा॥
बुद्ध रूप होइ दया प्रचारेउ। कल्कि होइ सब म्लेच्छ बिनासेउ॥
धनवन्तरि होइ अमृत दीन्हेउ। हंस रूप होइ ज्ञान सिखायेउ॥
नारद होइ बीना लै गावत। व्यास होइ सब तत्व बतावत॥
लीला हित नटवर बपु धारेउ। गोकुल महँ लीला बिस्तारेउ॥
भक्त रूप धारेउ यहि बारा। कीर्तन कीन्ह भक्ति परिचारा।
संकीर्तन सों पृथ्वी भरिहैं। प्रेम प्रचार घरहिं घर करिहैं॥
को कहि सक जस होब अनन्दा। भक्त सहित नाचब सुख कन्दा॥
प्रभु पद कमल ध्यान जो धरहीं। तिनकी कृपा अमंगल नसहीं॥

नृत्य करत पद परन सो, भूमि शुद्ध ह्वै जात।
दृष्टि मात्र सों दिगन को, सकल अमंगल जात॥ १५॥

भुज उठाइ नाचत जबै, स्वर्ग स्वर्ग ह्वै जात।
कृष्ण भक्त के नृत्य की, महिमा नहिं कहि जात[1]॥ १६॥

कृष्ण स्वयं प्रगटे भुइ आई। करत कीर्तन अति हरषाई॥
कहि को सक महिमा प्रभु केरी। गुप्त प्रेम बितरत जग हेरी॥
मुक्ति देहिं पर भक्ति न देहीं। जन जाँचत जेहि मिलत न तेहीं॥
सोइ धन तुम प्रभु जग कहँ बाँटेउ। प्रभु की कृपा इहै हम मानेउ॥
सकल यज्ञ पूरन प्रभु नामा। नदिया प्रगटे प्रभु गुणधामा॥

---

१. तथाहि पद्मपुराणे—पद्भ्यां भूमेर्दिशोदृग्भ्यां दोर्भ्यां वा मङ्गलं दिवः।
बहुधोत्सार्यते राजन् कृष्ण भक्तस्य नृत्यतः॥

अनुवाद

राजन्! कृष्ण-भक्त जब प्रेम से नृत्य करते हैं, तब नाना प्रकार के जगत के अमङ्गलों का नाश हो जाता है। दोनों चरणों से पृथ्वी का, नेत्रों से सब दिशाओं का और दोनों हाथों से स्वर्ग का अमङ्गल दूर हो जाता है।

कृपा करहु प्रभु दीनदयाला। देखहिं प्रभु भरि नयन कृपाला॥
पूरेहु गंग मनोरथ आई। प्रभु जल केलि परम सुखदाई॥
देखहिं जेहि योगी धरि ध्याना। सोइ प्रभु नदिया प्रगट बखाना॥
प्रणवौं नवद्वीप बहु बारा। शची अजिर जहँ प्रभु अवतारा"॥
यहि प्रकार देवन स्तुति करेऊ। गुप्त भाव कोउ लखि नहिं परेऊ॥

शची गर्भ राजत भए, पूनो फाल्गुन मास।
सकल सुमंगल योग सब, आइ जुरे चहुँ पास॥ १७॥

संकीर्तन सह प्रभु अवतारा। ग्रहण काल सब नाम उचारा॥
प्रभु को चरित को जाननहारा। चन्द्र ग्रस्यो राहू सोइ बारा॥
ग्रहण काल सब जन उठि धाए। मंगल ध्वनि हरिनाम सुनाए॥
सकल जाइ कै गंग नहावहिं। हरि हरि कहि सब चहुँदिसि धावहिं॥
हरि ध्वनि सकल नगर महँ छाई। गगन भेदि दसदिसि सुखदाई॥
सकल भक्त सुनि अतिसुख पावहिं। सदा पर्व रह यहै मनावहिं॥
सकल कहहिं मन मोद अपारा। जनु जन्मेउ प्रभु जगत अधारा॥
भक्त सकल मिलि गंग नहावहिं। निरवधि चहुँदिग हरि गुण गावहिं॥
उत्तम मध्यम सब पुरवासी। हरि हरि कहि सब भे सुख रासी॥
हरिबोल हरिबोल इहै सुनाई। सकल भुवन हरि ध्वनि रहि छाई॥

पुष्प बृष्टि करि देव गन, चले बजाइ निसान।
प्रगटे जन रंजन स्वयं, श्री गौराङ्ग सुजान॥ १८॥

कवित्त

राहु के ग्रसत ही प्रगट्यो यह नाम सिंधु कलि के विजय हेतु सुभग पताका है॥
चहूँ ओर भुवन प्रकाश सों सुपूरि रह्यो मधुर हरिनाम को सुयश जग बाँका है॥
धाए सब देखन कों गौर को मुखारबिंद 'भूषण' निहारत ही रह्यो मद छाका है॥
बेणु अरु शंख को सोर चहुँ ओर भयो आजु सों चल्यो है श्री गौर ही को शाका है॥

राग धनाश्री

प्रगटे श्री गौरांग छबीले हो प्यारे।
सुभग अङ्ग लोचन रतनारे भक्त करत मधुपान॥टेक॥
अवनी पर प्रभु गौर बिराजे चहुँ दिशि भक्त करत गुणगान।
हरि ध्वनि पूरि रही जग भीतर उदित भए भगवान॥१॥
चंपक सम उज्ज्वल तनु शोभा दोलय तहँ बनमाला।
पूर्ण इन्दु सम श्री मुख सुन्दर आजानुबाहु विशाला॥२॥
देखि रूप सुन्दर नरनारी कहि जय जय सब देत कर ताली।
कोउ नाचत कोउ गावत मुख सों कलि मन हर्ष बिषाद उताली॥३॥
चारि वेद शिर भूषण चैतन्य मूढ़ पामर नहिं जानत।
श्री चैतन्य निताई यशको दास गोसाईं बखानत॥४॥

प्रेम धन रतन प्रसारन हित प्रभु गौर चन्द्र अवनी पर आए।
गहन काल हरि हरि कहि गंगहि न्हान चले सबही उठि धाए॥
जन्म हुँ ते जे हरि नहिं बोले जपत आजु हरि नाम सुनाए।
'भूषण' प्रभु हरि नाम कहायो हरि हरि कहि सब चले सुहाए॥

चौपाई—निरखि पुत्र मुख हर्ष अपारा। श्री गण मंगल शब्द उचारा॥
आए धाइ सकल पुरबासी। भयउ अनन्द प्रगटे सुखरासी॥
चक्रवर्ति नीलांबर आए। करहिं विचार लगन सचुपाए॥
अद्भुत योग देखि अनुमाना। चक्रवर्ति लक्षण सब जाना॥
विप्र गौड़ को राजा होई। गुरुजन अस भाखत रह सोई॥
विप्र कह्यो सो देखब आगे। लग्न देखि गुण वर्णन लागे॥
अति अपार महिमा कहँ भाखौं। महाराजहू अल्प बखानौं॥
अल्प काल विद्या सब पैहैं। गुरु सम बालक पण्डित ह्वै है॥
एक बिप्र तबहीं चलि आयो। लगन बिचारि कहन सो लाग्यो॥
यह शिशु स्वयं प्रगट भगवाना। स्थापनहित सब धर्म पुराना॥

आयो धर्म प्रचार हित, करन जगत उद्धार।
ब्रह्मा शिव जाँचत जोई, प्रेम भक्ति परचार॥१६॥

पैहैं प्रेम धर्म गुणराशी। करिकै दरस जीव सुखराशी॥
करिहैं प्रीति जगत के प्रानी। यवन आदि सब खलगण मानी॥
सकल विश्व गुण कीरति गैहैं। ब्रह्मा शिव सब बन्दन करिहैं॥
भगवद्धर्म रूप यह बालक। गो द्विज भक्त सकल प्रतिपालक॥
विष्णु समान कर्म सब करिहै। छायामत सोई अनुसरिहै॥
इनके गुण को बरनै पारा। धन्य मातुपितु सुयश तुम्हारा॥
करौं प्रणाम जोरि जुग पानी। मोहिं सम धन्य आज को प्रानी॥
"श्री विश्वम्भर" नाम सुजाना। "नदियाचन्द्र" जगत सब जाना॥
परमानन्द रूप जग धारेउ। अस कहि विप्र मौन ह्वै रहेउ॥
कहेउ न संन्यासाश्रम को बाता। दुख पैहैं सब जन पितु माता॥

सुनि कै गुण निज पुत्र को, मुदित भए पितुमात।
लगे देन सो लीन्ह नहिं, हमभे पूरन तात॥२०॥

मिश्र चरन धरि रोवन लागे। पग धरि सोऊ सुख महँ पागे॥
शुभ गुण सुनि सब हर्ष मनावहिं। हरि हरि कहि अतिही सुख पावहिं॥
जय जय कहि आनन्द मनावहिं। वंशी शंख मृदंग बजावहिं॥
सुरतिय नरतिय सकल समाना। सुरनर मिलि गावहिं सब गाना॥
दूब अक्षत सब प्रभु शिर देही। 'चिरजीवो' कहि कै सुख लेहीं॥
जो चिरायु नित करहिं प्रकाशा। कहैं चिरायु यहै उपहासा॥
शची देवि सब सुन्दरि लखहीं। काहू सन कछु कहि नहिं सकहीं॥
चरन धूलि सब शचि कर लेहीं। माता मुदित मगन बर देहीं॥
मिश्र भवन जस आनँद भयऊ। शेषहु बरणि सकै नहिं कोऊ॥
सकल नगर महँ आनन्द भारी। हरि हरि हरि बोलहिं नरनारी॥

जन्म तिथी प्रभु की बिमल, पूनो फागुन मास।
आराधहिं शिव देव सब, पूरहिं सब अभिलास ॥२१॥

लीन्हेउ प्रभु अवतार सुहावन। जन रंजन भक्तन सुख कारन ॥
माघ सुदी तेरस शुभ वासर। नित्यानँद प्रगटे गुण आगर ॥
ये दोउ पुण्य तिथी अति पावन। मुक्ति स्वरूपिनि सहज सुहावन ॥
दोऊ तिथि जे सेवन करहीं। कृष्ण भक्ति पावहिं सुख लहहीं ॥
जिमि ईश्वर तिथि जन मन भावन। तिमि वैष्णव तिथिहू अति पावन ॥
जनम कथा प्रभु की जे सुनहीं। होहिं सुखी मन दुख नहिं गनहीं ॥
भक्ति होइ प्रभु पद जलजाता। प्रभु संग जन्म लेहिं सुखदाता ॥
आदि खण्ड की कथा सुहाई। गौर महोत्सव जेहि महँ गाई ॥
प्रभुकी लीला कर नहिं अन्ता। आविरतिरोभाव कह संता ॥
आदि अन्त कछु बूझ न परही। हृदय जो प्रेरहिं सोइ हम लिखही ॥

भक्त सहित श्री गौरपद, बन्दौं बारम्बार।
कृपा करहु प्रभु दीन पर, गुनहु न दोष अपार ॥ २२ ॥
गौर निताई की ललित, लीला कही सुनाय।
बृन्दावन गायो सोई, भाषा ललित बनाय ॥ २३ ॥

॥ इति श्री चैतन्य-भागवते आदिखण्डे बृजभूषणदास कृत भाषा अनुवाद श्री गौरचन्द्रस्य कोष्ठी गणनादि वर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीय अध्याय

जयति भक्तगण जयति जय, गौर चन्द्र भगवान।
भजौं सदा तव पद कमल, देहु इहै वरदान ॥ १ ॥

एहि बिधि प्रगट भए सुखराशी। दिन दिन बढ़न लगे कलिनाशी ॥
देखि पुत्र मुख पितु अरु माता। परमानन्द मगन दिन राता ॥
विश्वरूप लखि कै लघु-भ्राता। लेहिं गोद अति पुलकित गाता ॥
सब परिकर परिजन पुर लोगा। घेरे रहहिं सकल अति योगा।
कवच बाँधि कोउ मन्त्र सुनावैं। देवि देवता आदि मनावैं ॥
तब लगि रोवहिं दीनदयाला। जब लौं सुनहिं न नाम रसाला।
यह संकेत सकल जन जानैं। रोवत ही हरि हरि मुख आनैं ॥
सेवा करहिं सकल पुरबासी। देखहु आइ लखहिं गुण रासी ॥
छाया लखि सब लोग पुकारहिं। देखहु चोर घुस्यो घर माँझहिं ॥
नरसिंह कहि कहि रक्षा करहीं। अपराजिता स्तोत्र कोउ पढ़हीं ॥

दशौ दिशा पढ़ि मंत्र सो, बाँधहिं गुनिजन आय।
दर्शन करि जब जायँ सुर, कहहिं डाकिनी जाय ॥ २ ॥

धरहु चोर यह जात पराई । कहहिं लोग सब अति सुख पाई ॥
नरसिंह महिमा लखहु सुजाना । सकल अमङ्गल मूल नसाना ॥
देव सकल मुनि मन हरखाहीं । एक मास बीत्यो यहिपाहीं ॥
बाल उत्थान पर्व जब आयो । शची संग सब गंग सिधायो ॥
गावहिं गीत बजाइ निसाना । गंगा पूजहिं अति सन्माना ॥
पुनि षष्ठी पूजन सब कीना । आए गृह नर नारि नवीना ॥
कदलि, तैल, सिंदुर अरु पाना । दीन्हें सब कहँ करि सन्माना ॥
आसिष देइँ सकल नर नारी । गमनत भे उर अनँद भारी ॥
एहि विधि प्रभुकर चरित सुहाई । जानै सोइ जेहि देहिं जनाई ॥
जब कीर्तन प्रभु चहैं करावन । रुदन करन लागहिं मन भावन ॥

सुनत रुदन नर नारि सब, शान्त करन हित बाल ।
जब हरि हरि बोलन लगैं, होइँ शान्त तत्काल ॥ ३ ॥

प्रभु इङ्गित सुनि हरि हरि गावैं । नाम लेइँ करताल बजावैं ॥
आनन्द सों हरि कीर्तन करहीं । प्रेम मगन ह्वै सुख सब लहहीं ॥
मिश्र भवन लीला इमि ठानैं । नन्द भवन की सुधि मन आनैं ॥
जबही घर सूनो प्रभु पावैं । सकल वस्तु इत उत ढरकावैं ॥
दूध दही भाजन ढरकाई । चहूँ ओर सब देहिं बहाई ॥
जननी कहँ आवत जब जानैं । शयन करैं अरु रोदन ठानैं ॥
हरि हरि कहि माता दुलरावै । भवन देखि अति अचरज पावै ॥
कौन कियो यह दशा भवन को । डारि बहायो दधि ओदन को ॥
केवल गृह शिशु चारि मासको । कियो कौन नहिं जानि परत सो ।
परिजन मिलि सब यहै विचारैं । मानुष चिन्ह नहिं कोऊ पावैं ॥

दानव आयो सब कहैं, बालक करिबे घात ॥
रक्षायुत लखि बाल कों, कियो इहै उत्पात ॥ ४ ॥

मिश्र देखि घर को यह हाला । दैव जानि कछु कहि नहिं आवा ॥
अति अपचय लखि मन महँ सोचहिं । बालक मुख लखि दुःख विमोचहिं ॥
शिशु लीला करि मोद बढ़ावा । नाम करन कर शुभ दिन आवा ॥
नीलाम्बर आदिक विद्वाना । आइ जुटे सब लोग सुजाना ॥
पतिव्रता युवती सब आईं । लक्ष्मी सम सब सहज सुहाईं ॥
नाम करन हित सम्मति करहीं । एक कोऊ कोउ दूसर कहहीं ॥
बहु कन्या सुत मातु गँवाई । यातें पायो नाम निमाई ॥
सब पंडित मिलि करहिं विचारा । इनके नाम अनेक अपारा ॥
जबतें शिशु प्रगटेउ भुवि आई । सकल अमंगल मूल नसाई ।
भई वृष्टि सब कृषक सुखारी । गे सब रोग शोक दुख कारी ॥

विश्वभरण पोषण करन, विदित सकल संसार ।
"श्री विश्वम्भर" राखेऊ, सुन्दर नाम उदार ॥ ५ ॥

स्त्रीगण नाम निमाई राखा। कहिहैं सब जन अति अभिलाखा॥
मंगल गान करहिं सब नारी। वेद पुरान पढ़हिं द्विजझारी॥
सकल वस्तु प्रभु आगे आना। स्वर्ण, रजत, पुस्तक, दधि, पाना॥
हरखि मिश्र तब बचन सुनावा। लेहु उठाय तुमहिं जो भावा॥
सब तजि प्रभु भागवत उठावा। कहहिं सकल द्विज सगुन सोहावा॥
बड़ पंडित ह्वैहै यह बालक। शुचि वैष्णव होइहै सब लायक॥
जिनहिं देखि कै प्रभु मुसकाहीं। मगन होइ सो तन पुलकाहीं॥
लेहिं गोद नहिं चहत उतारी। सुर दुर्लभ सुख आनन्द भारी॥
रोदन सुनि हरि कीर्त्तन करहीं। गोद माँझ प्रभु नाचत तबहीं॥
ताली दै गावहिं सब बामा। निरवधि सकल कहहिं हरिनामा॥

रोदन मिस प्रभु सबहि सन, कहवावत हरिनाम।
प्रभु की इच्छा के बिना, सरै न एकौ काम॥ ६॥

वेद शास्त्र यह तत्व विचारत। एहि विधि सब हरिनाम उचारत॥
दिन-दिन बढ़न लगे हरि राई। घुटरुन चलन लगे सुर सांई॥
सो शोभा कछु कहि नहिं जाई। कटि किंकिनि बाजत सुखदाई॥
अति निर्भय आँगन महँ जाई। धरहिं सर्प आदिक सब धाई॥
एक दिवस एक सर्प निहारेउ। धाइ धरेउ सो अति मन भायेउ॥
कुंडलि मारि सर्प तब बैठेउ। तेहि पर शयन करत प्रभु भयउ॥
हाय-हाय करि सब जन धाए। हँसन लगे प्रभु अति मन भाए॥
गरुड़-गरुड़ सब बोलन लागे। मातुपिता तहँ रोवन लागे॥
सुनत सर्प तब दूरि पलायो। धरन ताहि प्रभु पाछे धायो॥
धाइ धरे प्रभु पुनि सब जाई। "चिरजीवी होउ" कहहिं सोहाई॥

पढ़हिं स्वस्ति कोउ और कोउ, रच्छा बाँधहिं आनि।
चरणामृत सो सींची कोउ, बोलत मधुरी बानि॥७॥

पुनर्जन्म यहि बालक केरा। जात सर्प तासों नहिं घेरा॥
हँसत गौर प्रभु सब कहँ हेरी। पुनि-पुनि गोद लेहिं जन फेरी॥
भक्ति सहित यह रहस जे सुनहीं। माया सर्प ताहिं नहिं ग्रसहीं॥
एहि विधि नित श्रीशची दुलाला। खेलहिं आँगन गौर कृपाला॥
कोटि काम सम अंग मनोहर। चन्द्र विनिन्दक मुख अति सुन्दर॥
मस्तक पर अलकावलि राजत। कमल नयन सुन्दर अति छाजत॥
बाहु विशाल अधर अरुनारे। परिसर वक्ष लगत अति प्यारे॥
सहज अरुण प्रभु गौर किशोरा। चरन अँगुलि कर सब चित चोरा॥
प्रभु सहजहिं जब इत उत चलहीं। रक्त पड़त भुवि अस जन गुनहीं॥
देखि शची मन विसमय भारी। मातु पिता मिलि करहिं विचारी॥

महापुरुष कोउ आइ कै, जन्मेउ मम गृह माँहि।
गयउ दुःख अरु शोक सब, यहै कहत सब पाहिं॥८॥

अस शिशु रीति कतहुँ नहिं सुनेऊ। हरि-हरि सुनि को नाचत भयऊ॥
तब तक रोदन करहिं सुजाना। हरि-हरि जब लौं सुनैं न काना॥
प्रातकाल सों सब नरनारी। हरि हरि कहत देत करतारी॥
नाचहिं गौर किशोर निमाई। उठत गिरत पुनि-पुनि हरखाई॥
हँसि कै मातु गोद महँ जाहीं। हरि-हरि सुनिकै अति हरखाहीं॥
गौर नृत्य लखि कै नरनारी। होत मगन उर आनँद भारी॥
कीर्तन लंपट अति प्रियशीला। नहिं बूझत कोउ यह शिशु लीला॥
अति चंचल प्रभु इत उत धावहिं। घर बाहर कोउ पकरि न पावहिं॥
प्रभु इकले घर बाहर जाई। खइ केला चाहत सब ठाँई॥
सुन्दर रूप देखि प्रभु केरा। तुरत देहिं मन हर्ष बड़ेरा॥

आनि देहिं तिन स्त्रियन कहँ, जो गावैं हरिनाम।
प्रेम मुदित सो लेहिं सब, ऊँचे कहि गुणग्राम॥ ६॥

स्त्रीगण जे नित कीर्तन करहीं। पाइ प्रसाद मोद अति लहहीं॥
बालक बुद्धि देखि सब हर्षहिं। ताली दै सुख आनँद वर्षहिं॥
घर बाहर नित उठि प्रभु जावैं। दिन संध्या मध्यान्ह गवावैं॥
पास पड़ोसिन के घर धाई। चोरी करन लगे प्रभु जाई॥
दूध पियत कोउ के घर जाई। भात खायँ जहँ जो मन भाई।
तोरैं बासन कछु नहिं पावैं। लरिकन कइँ पुनि जाइ रोआवैं।
देखै कोउ तब चलैं पराई। पकरै कोउ तब देइँ दोहाई।
नहिं ऐहैं अब हम तुमरे घर। छाँड़ो कृपा करहु तुम हम पर॥
देखि बुद्धि सब मन अति विस्मित। प्रेम करैं सबही अति हर्षित॥
प्रेम करैं सुत तें अधिकाई। मन फिर जाय देखि लरिकाई॥

एहि बिधि लीला करत प्रभु, सुन्दर गौर कुमार।
एक ठाँव थिर नहिं रहत, डोलत सबके द्वार॥ १०॥

एक दिना दुइ दस्यू आए। फिरत अकेल तहाँ प्रभु पाए॥
स्वर्ण अभूषण पहिरे पायो। देखत तिन कर मन ललचायो॥
लाल-लाल कहि लीन उठाई। कहाँ रह्यो अब लौं तुम भाई॥
"चलहु लाल घर" अस मृदु बोलैं। "घरहि चलहु" कहि प्रभु हँसि बोलैं।
गोद उठाइ चले तत्काला। समुझहिं लोक यहै प्रतिपाला॥
स्वर्ण अभूषण लखि ललचाने। मन मोदक गुनि मन हरखाने॥
लेब हमहिं यह कान को बाला। जात बिचारत दुहुँ तेहि काला॥
दस्युन प्रभु कहँ केला देहीं। हर्ष समेत ताहि प्रभु लेहीं॥
एहि बिधि हरखि चले गृह जाहीं। हरि-माया बस सूझत नाहीं॥
यहाँ स्वजन सब प्रभु कहँ हेरहिं। गौर निमाई कहि कहि टेरहिं॥

प्रभु माया बस दस्यु दोउ, पंथहि रहे भुलाय।
मिश्रद्वार आए बहुरि, इत उत लखि सकुचाय॥ ११॥

दिए उतारि प्रभुहिं कहँ तबहीं । भीड़ माँझ मिलिगे ते तँहहीं ॥
पिता गोद पहुँचे प्रभु धाई । सब हरि हरि बोले हरखाई ॥
भयहु हर्ष सबके मन माहीं । बहुरेउ प्रान मनहुँ तन माहीं ॥
अति अद्भुत दोउ दस्यु विचारहिं । चण्डी राखेहु अस मन सोचहिं ॥
परम भागवत ये दोउ चोरा । जाके पीठ चढ़े प्रभु गोरा ॥
खोजहिं सब को लायो बालक । माथे वस्त्र देउँ सब लायक ॥
कहहि कोउ हम दुइ जन देखे । मिश्र पौरि पर बालक पेखे ॥
पूछहिं प्रभु सन तब सब बाता । कहाँ गए, को आनेहु ताता ॥
गंगा तीर गए हम भाई । रहे तहाँ हम पंथ भुलई ॥
तब दुइ जन मोंहि गोद उठाई । पहुँचायो मो कहँ एहिं ठाई ॥

शास्त्र कहत सो झूठ नहिं, राखत हैं प्रभु आप ।
शिशु, अनाथ अरु वृद्ध कर, हरत शोक संताप ॥ १२ ॥

एहि बिधि मिलि सब करहिं बिचारा । हरि माया मोहित संसारा ॥
एहि प्रकार प्रभु लीला करहीं । जानि कोसक यदि आपु न कहहीं ॥
सुनै जो वेद बिहित सब बाता । होइ भक्ति दृढ़ पद जलजाता ॥
पितु घर एहि बिधि करहिं बिलासा । गुप्त रूप ऐश्वर्य प्रकाशा ॥
मिश्र एक दिन प्रभु सन कहेऊ । पुस्तक मोर आनि तुम देऊ ॥
सुनत बचन पितु भीतर धाए । रुन झुन नूपुर बचत सुहाए ।
मिश्र कहैं नूपुर कहँ बाचत । अचरज भरि इत उत दोउ देखत ॥
मम शिशु पाँयन नूपुर नाहीं । कहाँ बजै सोचत उर माहीं ॥
अति अद्भुत कहि दोउ मन माहीं । बचन न आव मनहिं हरषाहीं ॥
पुस्तक दोन्ह पितहिं लै आई । पुनि खेलन हित गए निमाई ।

मिश्र गए जब घरहिं महँ, देखेउ सब गृह माहिं ॥
अद्भुत पद कर चिन्ह सब, जेहि निरखत दुख जाहिं ॥ १३ ॥

ध्वजा पताका आदिक जेते । सकल चिन्ह देखे तहँ तेते ॥
चरण अपूर्व देखि मन भायउ । सजल नयन उर आनंद छायउ ॥
चरण कमल कर बंदन करहीं । धन्य भाग आपन सब कहहीं ॥
कहेउ मिश्र तब शची मातु सन । करहु पाक तुम अति हर्षित मन ॥
शालिग्राम शिला घर माहीं । पञ्च गव्य सन पूजब ताहीं ।
डोलत सो गृह महँ हम जानी । सोइ नूपुर धुनि हम अनुमानी ॥
अस बिचारि मन हर्ष बढ़ाई । पूजहिं शालिग्राम सुहाई ॥
हँसहि गौर प्रभु तब मन माहीं । भक्त अधीन सदा प्रभु आहीं ॥
औरो एक कथा सुनि भाई । करी गौर प्रभु निज मन भाई ॥
एक सुकृति तैर्थिक द्विज आयो । कृष्ण चरण मन परम सुहायो ॥

कृष्णादरस हित विप्रवर, भ्रमत तीर्थ सब जाइ ।
जपत षड़ाक्षर मन्त्र सो, इहै आस उर लाइ ॥ १४ ॥

प्रभुहि समर्पि भोग सो पावै। अनिवेदित भोजन नहिं खावै ॥
भ्रमत-भ्रमत सोइ बिप्र उदारा। एक दिना आयेउ प्रभु द्वारा ॥
गले बिराजत बाल गोपाला। शालिग्राम शिला अरु माला ॥
ब्रह्म तेज युत बिप्र सुजाना। कृष्ण-कृष्ण मुख रटहि सयाना ॥
देखि बिप्र अति तेजनिधाना। बंदि तासु पद अति सन्माना ॥
मिश्र ताहि तब गृह में लाए। पद पखारि आसन बैठाए ॥
कहाँ वास तव विप्र सुजाना। पूछेहु मिश्र अतिहि सन्माना ॥
कहेउ विप्र हम परम उदासी। तीरथ भ्रमहिं सदा बनबासी ॥
मिश्र कहेउ तब करि परनामा। जग हित लागि भ्रमहु सब धामा ॥
बड़े भाग्य तव दरसन पावा। लेहु प्रसाद यहै मन भावा।

कहेउ बिप्र तब मिश्र सन, जोइ इच्छा तव तात।
आनि धरे सब वस्तु तहँ, परम प्रफुल्लित गात ॥ १५ ॥

विप्र पाक तब सकल बनावा। आँख मूँदि कै भोग लगावा ॥
अन्तरयामी शाची-कुमारा। दरस देन हित मन्त्र बिचारा ॥
धूलि धूसरित मूर्ति दिगम्बर। अरुण नयन कर चरन मनोहर ॥
तुरत आय हँसि भोग लगायो। हाँ, हाँ करि तब बिप्र पुकार्‌यो ॥
अन्न जुठारि दियो यह बालक। विप्र न जानत यह जगनायक ॥
मिश्र आइ देखे तेहि ठाँई। भात खात प्रभु अति हरखाई ॥
रिस भरि सो मारन को धाए। हाथ पकरि द्विज तब समुझाए ॥
कहेउ विप्र तुम पंडित ज्ञाता। कहा दोष बालक सुनु भ्राता ॥
भलो बुरो कछु जानै नाहीं। शपथ हमार जो मारेहु ताहीं ॥
अति चिंतित भे मिश्र सुजाना। माथे हाथ देइ दुख माना ॥

विप्र कहेउ तब मिश्र सन, जनि दुख मानहु तात।
जेहि दिन विधना जो लिख्यो, सोइ होइहै सब बात ॥१६॥

कन्द, मूल आदिक गृह माँही। जो होवै लावहु हम खाहीं ॥
मिश्र कहेहु जो हम पर नेहू। सेवक जानि करहु तुम छोहू ॥
एक बार पुनि करहु रसोई। सब मिलि कहत करौ प्रभु सोई ॥
विप्र कह्यो जो तुम सब कहहू। करब पाक तुमरे संतोषू ॥
विप्र बचन सुनि सब हरखाने। धोइ धाइ सब व्यञ्जन आने ॥
पाक करन लागे द्विज तबहीं। कहन लगे लोगन तब सबहीं ॥
अति चञ्चल शिशु देखेहु भाई। जब तक विप्र न भोग लगाई ॥
आन घरहिं लै जाहु कुमारा। चली शची लै पुत्र उदारा ॥
प्रभु सन पूछहिं तियगन आई। काहे भोग जुठार्‌यो जाई ॥

हँसि बोले तब गौर प्रभु, दोष मोर कछु नाहिं।
विप्र बोलायो मोहिं जब, गयउँ तबै तेहि पाहिं ॥१७॥

सबै कहैं बड़ चतुर कुमारा। गई तुम्हारि जाति यहि बारा॥
कौन बिप्र केहि ग्राम कहाँ को। तुम खायो है भात ताहि को॥
हँसि बोले तब गौर कृपाला। हम तो गोप जाति सुनु बाला॥
अन्न सदा बिप्रन कर खायो। जाति हीन कबहूँ न कहायो॥
हँसिकै अस कहि सब दिसि देखहिं। छल करि आपन तत्व बखानहिं॥
माया बस नहिं बूझहिं सोई। हँसहि बचन सुनिकै सब कोई॥
हँसिकै गोद जाहिं प्रभु जाके। उर आनन्द होत अति ताके॥
नहीं उतारन चहैं कृपाला। भक्त बछल प्रभु दीनदयाला॥
विप्र पाक करि पुनि ततकाला। भोग लगायो बाल गोपाला॥
जानेहु प्रभु श्री गौर गुसाँई। मोहित कीन्ह्यों लोग लुगाई॥

अति हर्षित आए तहाँ, जहाँ विप्र मुनिराज।
एक ग्रास लै खाय करि, भाजि चले द्विजराज॥१८॥

बोलि उठे तब बिप्र सुजाना। मिश्र देखि अति सै दुख माना॥
प्रभु कहँ मारन हित सो धाए। भाजि चले श्री गौर सुहाए॥
मिश्र कहैं अति रिस भरि बाता। महा चोर यह शिशु दुखदाता॥
कहाँ भाजि तुम हम सों जैहौ। आजु खबर सब दिन को लैहौं॥
अस कहि सो मारन हित धाए। पकरि लोग सब घर पर लाए॥
मिश्र कहैं मारब ओहि आजू। लोग कहहिं यह नहिं भल काजू॥
बालक निपट अबोध अज्ञानू। तुम पंडित अति परम सुजानू॥
मारन सों कछु सीख न सोई। चंचल मति शिशु कह सब कोई॥
हाथ पकरि कह विप्र सुजाना। बालक दोष करिय नहिं काना॥
जो कछु भाग्य लिख्यो सो होही। आजु अन्न विधि लिख्यो न मोहीं॥

अति दुःखित भे मिश्रवर, हेठ माथ करि आप।
बैठे अतिसै खिन्न मन, हृदय अधिक संताप॥१६॥

विश्वरूप तेहि अवसर आए। तेज पुंज अति परम सुहाए॥
अंग अनंगहु कर मन मोहै। रूप अपार कहै कवि को है॥
यज्ञ सूत्र काँधे पर सोहै। ब्रह्म तेज युत सब मन मोहै॥
सर्व शास्त्र ज्ञाता सब जानहिं। कृष्ण-भक्ति मुख सदा बखानहिं॥
मूर्ति भेद करि नित्यानन्दा। मानहुँ जन्म लीन्ह सुखकन्दा॥
विप्र निरखि प्रभु अति हर्षाना। मुग्ध होइ देखत सुख माना॥
मगन होइ पूछत सब जन सों। केहिके पुत्र कहहु तुम हम सों॥
कहत सबहि यह मिश्र कुमारा। सुनि आलिंगन कीन्ह उदारा॥
धन्य पिता माता जिन्ह जाए। नमस्कार करि प्रभु सुख पाए॥
द्विज सों मीठे बचन उचारे। कहा कहौं बड़ भाग्य हमारे॥

तुम सम अतिथी पाइकै, धन्य भए हम आज।
जगत उधारन हेतु तब, तीर्थाटन द्विजराज॥२०॥

उर आनँद अति तीरथ भ्रमहू। जीवन सफल सबहि कर करहू॥
बड़े भाग्य अतिथी गृह आए। करत उपास देखि दुख पाए॥
तुम उपवास करब गृह जाके। होइहैं सकल अमंगल ताके॥
पाइ दरस तव हर्ष अपारा। दुख पायउँ सुनि सब व्यवहारा॥
विप्र कहहिं दुख काहु न भ्राता। बनबासी हम सुनु सुखदाता॥
फल मूलादिक भोग्य हमारा। सोइ खाउब हम सुनहु उदारा॥
अन्न कहाँ हम बन में पावैं। कोउ दिन मिलै तो भोग लगावैं॥
तव दर्शन करि अति सुख पायो। कहत बचन मन महँ हर्षायो॥
फल आदिक जो गृह में होई। आनि देहु पाउब हम सोई॥
मिश्र दुखित अति उतर न देही। विश्वरूप द्विज सन तब कहहीं॥

सहजहि करुणासिंधु तुम, दया रूप सम भाव।
पर दुख कातर होतु हैं, साधुन यहै स्वभाव॥२१॥

पर हित रत ते रहत सदाहीं। कृपा करौ तुम हम सब पाहीं॥
आलस तजि तुम करहु रसोई। बाल गोपालहिं अरपहु सोई।
तबै मिटै दुख अरु संतापा। पावैं हरख पिता अरु माता॥
विप्र कहेहु हम करहिं रसोई। करम न लिखा न पाउब सोई॥
कृष्ण लिख्यो जो भाग्य हमारे। पाउब हम सोइ साँझ सकारे॥
बहुत यतन करि करि पचि हारे। आजु अन्न नहिं लिखा हमारे॥
बहु पकवान रहै घर माहीं। हरि आज्ञा बिनु पावत नाहीं॥
रात बहुत बीती अति काला। पाक करन को नहिं यह काला॥
बृथा सोच केहि कारन कीजै। जो कछु होइ सो मो कहँ दीजै॥
विश्वरूप बोले तत्काला। दोष नाहिं कछु सुनहु कृपाला॥

विश्वरूप तव चरन गहि, बोले मधुरी बानि॥
पाक करहु सब लोग हित, शरण आपनी जानि॥ २२॥

सबहि कहन लागे द्विज पाहीं। बिश्वरूप लखि द्विज सकुचाहीं॥
बिप्र कहेहु तब करब रसोई। हरि हरि कहन लगे सब कोई॥
स्थान शुद्ध करिके तेहि काला। सकल बस्तु राखेहु तत्काला॥
रंधन करन लगे द्विज तबहीं। बालक घेरि रहै सब जन हीं॥
जेहि घर बालक गयउ पराई। बैठे मिश्र द्वार सोइ जाई॥
द्वार बन्द करि बैठहु भाई। बालक जिमि बाहर नहिं आई॥
मिश्र कहैं भल उक्ति बिचारेहु। घर बाहर सब जन बैठारेहु॥
भीतर सों स्त्री गण तब कहहीं। बालक सोइ गयौ है अबहीं॥
अब कछु चिन्ता करहु न कोई। बिप्र बनायो तुरत रसोई॥
आँख मूँदि कै ध्यान लगायो। अन्तर्यामी प्रभु सब जान्यो॥

निद्रा बस तब ही भए, हरि इच्छा सों लोग।
गाढ़ नीद महँ सोइगे, भलो बनो संयोग॥ २३॥



तैर्थिक ब्राह्मण को अष्टभुज श्री गौरांग का दर्शन

अस कहिं अद्भुत दर्शन दीना। अष्ट भुजा युत रूप नवीना ॥
शंख चक्र द्वै कर मँह राजत। गदा पद्म दुई माहँ विराजत ॥
द्वै हाथन सों मुरलि बजावत। द्वै सों माखन भोग लगावत ॥
हृदय माँझ कौस्तुभ मणिछाजत। श्री वत्स युत उर हार विराजत ॥

आइ तबहिं प्रभु भोग लगावा। हा हा करि द्विज लोग बुलावा॥
निद्रायुत कोउ सुनै न काना। हँसि बोले तब कृपानिधाना॥
मन्त्रहि जपि तुम हमहिं बुलाये। हम सोइ कारण तुम पहँ आये॥
मम दर्शन चाहहु मन माहीं। सोइ लगि हम आये तोहि पाहीं॥
अस कहि अद्भुत दर्शन दीना। अष्ट भुजा युत रूप नवीना॥
शंख चक्र द्वै कर महँ राजत। गदा पद्म दुइ माहँ बिराजत॥
द्वै हाथन सों मुरलि बजावत। द्वै सों माखन भोग लगावत॥
हृदय माँझ कौस्तुभ मणि छाजत। श्री वत्स युत उर हार बिराजत॥
मोर पंख शिर पर अति सोहै। गुञ्जमाल देखत मन मोहै॥
अरुण अधर कुण्डल मणि झलकत। उर बैजन्ती माल बिराजत॥

चरण कमल महँ रतन कर, नूपुर शोभा देत।
तिमिर दूर करि हृदय कर, भक्तन मन हरि लेत॥ २४॥

कदम वृक्ष देखेहु द्विज तबहीं। वृन्दावन गौअन तहँ चरहीं॥
गो गोपी अरु गोप बिराजैं। सुर मुनि आदिक चँवर डुरावैं॥
ध्यान धरत नित द्विज जो रूपा। देखत भे सोइ रूप अनूपा॥
प्रेम मगन मन अति सुख लहेऊ। अति आनँद सों मूर्छित भयऊ॥
करुणासागर गौर कृपाला। निज कर परसेउ दीनदयाला॥
कर परसत द्विज चेतन पायो। आनँद मगन न कछु कहि आयो॥
पुनि पुनि मूर्छित होत बिप्रवर। उठत गिरत पुनि पुनि सो भुवि पर॥
कम्प स्वेद पुलकावलि राजै। नयनन जल अति ही छबि छाजै॥
चरण कमल प्रभु कर गहि राख्यो। दीन बचन कहि रोवन लाग्यो॥
दीन बचन सुनि प्रभु मन भायो। अति कृपालु प्रभु बचन सुनायो॥

सुनहु सुनहु तुम विप्रवर, जन्म जन्म मम दास।
सदा दरस की लालसा, राखेहु एकै आस॥२५॥

तव हित लागि दरस हम दीन्हा। भूलि गये तुम मोहिं नहिं चीन्हा॥
दरसन कीन्ह्यो नन्द-भवन महँ। प्रगट भए जब हम गोकुल महँ॥
तीरथ करि आये तुम जबहीं। एहि बिधि लीला कीन्हेउ तबहीं॥
भक्त बिना कोउ दरस न पावा। कहेउँ गुप्त यह चरित सुहावा॥
कहेउ न कोऊ सन यह बाता। तुम पण्डित परमारथ ज्ञाता॥
संकीर्तन हित यह अवतारा। घर घर कीर्तन करब प्रचारा॥
ब्रह्मादिक चाहत मोहि पाहीं। प्रेम भक्ति दुर्लभ जग माँहीं॥
यहि अवतार सो पाउब सबही। नाम प्रताप बिदित सब जगही॥
कछु दिन रहि लीला सब देखेहु। काहू सन तुम जनि कछु कहेहु॥
यहि बिधि करि द्विज कर सत्कारा। गए गौर निज भवन उदारा॥

सोइ गए प्रभु जाइ तहँ, जिमि शिशु अति अज्ञान।
माया मोहित लोग सब, कछु काहू नहिं जान॥२६॥

अति आनँद सों विप्र सुजाना। लै प्रसाद मन अति सुख माना॥
बन्दि प्रसाद सिरहि पर राखा। हाथ जोड़ि बहु अस्तुति भाखा॥
प्रेम मगन नाचन सो लागे। कीर्तन सुनत लोग सब जागे॥
भोजन कीन्ह विप्र सब जाना। अति आदर करि द्विज सन्माना॥
बिप्र मनहि मन करहि बिचारा। कहौं कथा तब जन निस्तारा॥
ब्रह्मा शिव जाँचत जेहि रहहीं। प्रगट्यो विप्र धरहि सो अवहीं॥
शिशु करि कै सब जानत अहहीं। कहौं कथा सब बूझैं तबहीं॥
प्रभु आज्ञा नहिं अस जिय जानी। कहेउ न कोउ सन मन अनुमानी॥
प्रभु पहिचानि रहेउ सोइ देशा। गुप्त वेश कोउ लखै न वेशा॥
नित प्रभु कर दर्शन सो करई। महा मोद मन आनँद लहई॥

वेद गोप्य यह सब कथा, सुनै जौ दृढ़ मन लाय।
कृष्ण मिलैं तेहि सहजहीं, महामोह तम जाय॥२७॥

आदि खण्ड कथा सब अमृत समान जानौ
जामैं शिशु रूप लीला गौर सब कीनो है।
सर्व लोक चूड़ामणि विष्णु श्री लक्ष्मीकान्त
नित्यानन्द गौर प्रभु चरित रँग भीनो है॥
त्रेतायुग सोई रामचन्द्र को स्वरूप धारि
रावण को मारि सब भक्तन सुख दीनो है।
द्वापर में सोई कृष्ण-बलराम रूप धरि
'भूषण' भनत भूभार हरि लीनो है॥

इति श्री आदि खण्डे नामकरण चापल्य-विलासादि वर्णनं नाम तृतीयोऽध्यायः॥

चतुर्थ अध्याय

यहि विधि क्रीड़ा करत प्रभु, श्री गौराङ्ग गोपाल।
लिखन पढ़न को समय तब, आइ गयो तत्काल॥१॥

मिश्र देखि शुभ दिवस विचारा। खड़ी हाथ महँ दीन्ह कुमारा॥
कछुक दिवस पाछे सब परिजन। कर्णवेध कीन्हेउ हर्षित मन॥
मुण्डन करि बहु भोग लगावा। विविध प्रसाद लोग सब पावा॥
देखत ही सब अक्षर लिखहीं। निरखि लोग सब अचरज करहीं॥
दिवस चार महँ सब कुछ सीखे। लिखन लगे बुद्धी अति तीखे॥
लिखहिं कृष्ण के नाम अनेका। पढ़हिं 'कृष्ण हरि' सहित विवेका॥
शिशु सँग पढ़न लगे हरि जाई। परम सुकृति देखहिं सब आई॥
अतिहि मधुर वाणी प्रभु बोलहिं। क, ख, ग, सुनि सब अति हर्षहिं॥
अति अद्भुत क्रीड़ा प्रभु करहीं। इच्छा करहि सो तत्क्षण चहहीं॥

पत्नी उड़त अकाश महँ, ताही कहँ प्रभु चाहि ।
नहीं मिलै तब रोवहीं, लोटैं धरणी माहिं ॥२॥

कबहुँ चन्द्र तारागण चाहैं । हाथ पटकि रोदन विस्तारैं ॥
गोद लेइ सब अति दुलरावैं । तदपि न कछु प्रभु के मन भावैं ॥
एकमात्र प्रभु कर मनभावन । केवल हरि कर नाम उचारन ॥
करतारी दै हरि हरि बोलैं । सुनतहि हँसि प्रभु इत उत डोलैं ॥
बालक हित सब कह हरिनामा । भयउ मिश्र गृह हरिको धामा ॥
एक दिवस प्रभु रोअन लागे । काहू बिधि कछु मन नहिं भाये ॥
सबहिं कहहिं नाचहु तुम भाई । गावत हम हरिनाम सुहाई ॥
सुनहिं न कोउ कर बचन कृपाला । पूछत भे सब दीनदयाला ॥
केहि कारण तुम रोवहु भाई । का चाहौ मोहिं कहहु बुझाई ॥
आनि देहु हम कों तत्काला । बोले तब प्रभु दीन दयाला ॥

हित हमार चाहहु करन, जाहु अबै द्विज पाहिं ।
आजु एकादशि के दिना, भोग लगावन चाहिं ॥३॥

पण्डित श्री जगदीश जो अहहीं । निकट हमारे गृह जो रहहीं ॥
हिरण्य भागवत भ्राता जासू । हरि पद भक्ति करै बिश्वासू ॥
करै एकादशि कर उपवासा । भोग बनायो परम हुलासा ॥
सोइ सब भोग आनि मोहिं देहू । स्वस्थ होंहिं तब नहिं सन्देहू ॥
सुनि प्रभु बचन सोच सब करहीं । मातु असम्भव कहि मन गुनहीं ॥
हँसत लोग सब सुनि शिशु बानी । शांत होहु हम लाउब आनी ॥
परम वैष्णव विप्र सयाना । जगन्नाथ कर मित्र सुजाना ॥
सुनि सब कथा हृदय हर्षाने । अद्भुत बालक मन अनुमाने ॥
बचन तासु सुनि विस्मय मानेउ । हरिवासर शिशु केहि बिधि जानेउ ॥
अतिसै रूपवान यह बालक । परम मनोहर जन सुखदायक ॥

तासों याके देह महँ, नारायण किय वास ।
बचन कहावत ताहि सों, मेरे जिय विश्वास ॥४॥

एहि विधि मन करिके अनुमाना । लायो द्विज सब अति सन्माना ॥
राखेउ सकल भोग प्रभु आगे । वचन कहहिं सब अति अनुरागे ॥
भोग लगावहु तुम हर्षाई । कृष्ण तृप्त होइहैं सुनु भाई ॥
कृष्ण कृपा उपजै अस ज्ञाना । भक्त विना को प्रभु पहिचाना ॥
जाके रोम कूप महँ राजै । कोटि कोटि ब्रह्माण्ड बिराजै ॥
विप्र सुअन होइ सोइ प्रभु खेलहिं । भक्त सकल निज नयनन देखहिं ॥
भोग पाइ प्रभु हर्षित भयऊ । कछु कछु सकल वस्तु प्रभु खायेउ ॥
भक्त प्रभू कहँ भोग लगावैं । अति हर्षित प्रभु सो सब खावैं ॥
शान्त होइ प्रभु खेलन लागे । हरि हरि कहि सब जन अनुरागे ॥
एहि बिधि लीला कर जग त्राता । वेद पुरान भनत यह बाता ॥

शची मातु के अजिर महँ, खेलत सोइ प्रभु आय।
अति चञ्चल इत उत फिरैं, भक्तन के घर जाय ॥५॥

बालक सकल संग प्रभु लीने। डोलत फिरैं रंग रस भीने।
भिरैं सकल लरिकन सँग जाई। मारि भगावहिं सब कहँ धाई ॥
धूलि धूसरित सब अँग सोहै। मसि कर विन्दु सकल मन मोहै ॥
पढ़ लिखकर प्रभु सब शिशु संगा। गंगा स्नान चले अति रंगा ॥
स्नान करहिं लरिकन सँग खेलहिं। जल उछालि चहुँदिशि प्रभु फेंकहि ॥
नदिया नगरी परम मनोहर। बास करहिं जहँ बहु नारी नर ॥
सन्यासी पण्डित सब पुरजन। स्नान करहिं तहँ अति पुलकित मन ॥
जल क्रीड़ा करि माटी फेंकहिं। बार बार सब कहँ नहवावहिं ॥
मना करहिं प्रभु एक न मानहिं। प्रभु चरणोदक सब जन पावहिं ॥
काहू पर प्रभु कुल्ला करहीं। पकरन हित धावै सो तबहीं ॥

पकरि सकैं नहिं लोग सब, गए मिश्र के वास।
देन उरहनो तुमहिं कह, हम आए तुव पास ॥६॥

सुनहु मिश्र तुम बन्धु हमारे। तुव सुत तें हम सबही हारे ॥
गंगा स्नान करन नहिं पावत। कहत हमहिं अतिसय दुख लागत ॥
एक कहत जल मम मुख मारै। ध्यान भंग ह्वै जात हमारे ॥
कहत तबहिं कत हम कहँ ध्यावहु। प्रत्यक्षहि हम मन भरमावहु ॥
कोऊ कहै सिव कों लै भागत। काहू कर उत्तारी उड़ावत ॥
कहत कोऊ पूजाहित आनी। सकल वस्तु राखी सन्मानी।
स्नान करन लागे हम जाई। खाइ पहिरि सो गयेउ पराई ॥
औरो कहै कि दुख जनि करो। जा हित धरयो सो सब लै गयो ॥
जल महँ संध्या जे जन करहीं। टाँग पकरि लै जाय सो तिनहीं ॥
काहू की धोती लै भाजत। काहू की गीता लै धावत ॥

कोउ कहै मम पुत्र के, कर्ण माँझ जल देत।
ताहि रोआवै बहुत ही, भोग सबै हरि लेत ॥७॥

काहू के काँधे चढ़ि कूदत। हम महेश इमि बचन उचारत ॥
एक कहेउ आसन पर जाई। विष्णुहि पूजि भोग सब खाई।
जल बाहर जब हम सब आवत। माटी फेंकत हम दुख पावत ॥
स्त्री के वस्त्र धरै उत जाई। पुरुष वस्त्र राखै तहँ लाई ॥
पहिरन समै मरैं सब लाजा। और बिगाड़ै सब कर काजा ॥
परम बन्धु तुम मिश्र सुजाना। ऐसेहि नित्य करत सब जाना।
न्हावै पहर दोई नित जाई। देह रहै कैसे कहु भाई ॥
ताही समय बालिका आई। शची मातु पहँ गइँ सब धाई ॥
सुनहु मातु निज सुत की करनी। सो मो पहँ नहिं जात है बरनी ॥

व्रत हित लायो फूल फल, गंगहि देय बहाय ॥
जल बाहर जब होत हैं, माटी फेंकत आय ॥८॥

सकल चपल शिशु लीन्हें संगा। न्हावै इत उत गंग तरंगा ॥
औचक आइ कहै कछु बाता। केश मौंफ राखत फल पाता ॥
हमहिं विवाहन चाहै सोई। ऐसे बचन कहत नहिं कोई।
नित प्रति ऐसे कर व्यवहारा। मनहु निमाई राजकुमारा ॥
नन्द सुअन जिमि कीन्हीं लोला। सोइ सब करत सुनहु गुणशीला ॥
मातु-पिता सुनिहै जब बाता। रार होहि तुम सन सुनु माता ॥
करहु निवारण निज सुत अबहीं। ऐसो कर्म करै जनि कबहीं ॥
शची मातु सुनि अति हर्षानी। गोद लेइ बोलीं मृदु बानी ॥
आवन देहु निमाई अबहीं। भल प्रकार हम देखब तबहीं ॥
करै उपद्रव अब नहिं जाई। करि दण्डवत चलीं हर्षाई ॥

स्नान करन को सब चलीं, उर आनन्द अपार ॥
कोतुक ही आवत सबै, केवल द्विज के द्वार ॥९॥

सुनत मिश्र करि कोप अपारा। तर्जि गर्जि इमि बचन उचारा ॥
करै निरन्तर अस व्यवहारा। स्नान करन नहिं देत दुलारा ॥
अबहिं जाइ हम देखब सोई। करैं निवारण मिलि सब कोई ॥
तदपि न मान्यो कोउ कर बाता। चले क्रोध करि कम्पित गाता।
अन्तर्यामी प्रभु सब जानो। भक्तन संग खेलत मन मानी ॥
कहत बालिका प्रभु सन जाई। आवत मिश्र सुनहु तुम भाई ॥
मारन हित आवत हैं सोई। भागहु तुरत न देखै कोई ॥
मारन कहँ धाये प्रभु सबहीं। भागि चलीं सब निज घर तबहीं ॥
सब सन कहत मिश्र सन कहेऊ। स्नान करन इत सो नहिं आयेउ ॥
पढ़ लिखकर सो निज गृह गयऊ। अस कहि प्रभु घर गमनत भयऊ ॥

अन्य मार्ग सों गौर हरि, गए आपुने धाम।
पहुँचे मिश्र जू तीर पर, खोजत प्रभु गुणग्राम ॥१०॥

शिशुन संग नहिं देख्यो तहई। पूछ्यो सब सन कहँ प्रभु अहई ॥
कह्यो सबन सो तीर न आए। पढ़ लिखकर निज भवन सिधाए ॥
रहे बैठि हम तेहि हित लागी। आवत होइहैं सुत बड़भागी ॥
कुपित भए सुनि सब शिशु बानी। ढूँढत फिरत दण्ड गहि पानी।
देन उरहनो जे द्विज आए। कहन लगे सो अति दुख पाए ॥
पुनि यदि दुख देइअ हम सबहीं। धरि आनब हम तेहि कहँ तबहीं ॥
भय सों विश्वम्भर घर गयेऊ। तेहि समुझाय बात तुम कहेऊ ॥
कह्यो कौतुकहि हम सब बाता। तुम सम भाग्यवान नहिं ताता ॥
ऐसो सुत जेहि के घर होई। सब सुख ताके दुख नहिं कोई ॥
भक्ति सहित तुम प्रभु मन लाये। तेहि ते ऐसो सुत तुम पाये।

करै कोटि अपराध यदि, विश्वम्भर गुणखान।
तबहुँ हृदय महँ राखिए, सुनहु धीर मतिमान ॥११॥

यह सब जन्म-जन्म प्रभु दासा। तेहि ते उत्तम मति विश्वासा ॥
प्रभु निज जन सह क्रीड़ा करहीं। समुझि न सकहिं मनहिं मन गुनहीं ॥

मिश्र कहहिं वह पुत्र तुम्हारो। दोष न गुनहु सुन शपथ हमारो ॥
करि परितोष मिश्र सब केरा। करत तर्क गवने निज डेरा ॥
अन्य मार्ग प्रभु निज गृह आए। सकल अंग मसि बिंदु सुहाए ॥
जननी कहि प्रभु मातुहिं टेर्यो। वचन सुनत जननी उठि भेंट्यो ॥
मसी विन्दु सब अँग पर सोहै। देखत ही सब को मन मोहै ॥
तेल देउ मोहि कहेउ मातु सन। उठी देन हित सो हर्षित मन ॥
स्नान चिह्न कछु अङ्ग न देख्यो। तेल देइ तब मन महँ सोच्यो ॥
कहेउ बालिकन अरु सब विप्रहु। राजत मसी विन्दु सब अङ्गहु ॥

सोइ वस्त्र सब अङ्ग पर, कर में पुस्तक सोइ।
गयउ स्नान कहँ अबहिं नहिं, मन महँ अचरज होइ ॥१२॥

ताही समय मिश्र गृह आए। पुत्र उठाय हृदय सों लाए ॥
सो आनन्द को बरनै पारा। पुत्र देखि सब दुःख बिसारा ॥
माटी भरे अङ्ग सब देखे। स्नान चिह्न कछु हू नहिं पेखे ॥
कहेउ मिश्र सुनु बालक बाता। देहु दुःख सब कहँ क्यों ताता ॥
पूजा कर सामग्री हरहू। भगवानहु कहँ तुम नहिं डरहू ॥
प्रभू कहत हम गये न स्नानहिं। आगे सब शिशु गये नहानहिं ॥
सोइ सब बालक कर उतराता। झूठहिं दोष देत मोंहि ताता ॥
झूठहिं दोष मोहिं जब देहीं। तब हम सत्य देब दुख तेहीं ॥
अस कहि स्नान करन प्रभु गवनेउ। पुनि सोइ सब बालक सन मिलेउ ॥
अति आनँद सब प्रभु कहँ भेंटहिं। बुद्धि सराहि सबहि अति हर्षहिं ॥

सबहि प्रशंसा करि कहैं, बड़े चतुर तुम तात।
मार खान सों तुम बचे, आज बनी सब बात ॥१३॥

सब मिलि स्नान करहिं अति हर्षित। इहाँ मातु पितु सब अति चिंतित ॥
करहिं बिचार परस्पर दोऊ। बात सत्य सब जन कह सोऊ ॥
स्नान चिह्न नहिं देत दिखाई। धूलि भरे सब अङ्ग सोहाई ॥
सोइ वेश पुस्तक कर राजत। तैसोइ केश अरु वस्त्र विराजत ॥
नहीं मनुष यह श्री बिश्वम्भर। प्रगटे कृष्ण मनहुँ हमरे घर ॥
नहिं कछु समुझि परत है मोहीं। बहुत बुझाय कहौं का तोहीं ॥
एहि बिधि करत बात पितु माता। आइ गए प्रभु जन सुखदाता ॥
निरखि पुत्र मुख सबहि भुलाने। उर आनन्द न जात बखाने ॥
पहर दोइ जो गुरु ढिग रहहीं। सो दुइ जुग सम ते दोउ गिनहीं ॥
अहो भाग्य इनके सुनु भाई। शेष सहस मुख सकहिं न गाई ॥

जगन्नाथ अरु शची के, पद बन्दौ बहु बार।
पुत्र रूप धरि जगतपति, खेलत जिनके द्वार ॥
प्रभु माया बस लोग सब, बूझत हैं कछु नाहिं।
"वृन्दावन" गावत सोई, गौर चरण रज चाहि ॥

॥ श्री आदि खण्डे शैशव-क्रीड़ा वर्णनं नाम चतुर्थोऽध्यायः वृजभूषणदास कृत भाषा मह अनुवाद समाप्त ॥

पञ्चम अध्याय

जय जय महामहेश्वर गौरचन्द्र।
जय जय विश्वम्भर प्रिय भक्त वृन्द ।।
जय जगन्नाथ-शचीपुत्र सर्व प्राण।
कृपादृष्टि करहु प्रभु सर्व जीव-त्राण ॥

एहि प्रकार नदिया पुर माहीं। तत्व प्रकाश करत सब पाहीं ॥
करत चपलता सब सों जाई। बरजत गुरुजन मानत नाहीं ।।
सिखवन सों अरु करत अचगरी। करत नाश अरु फोरत गगरी ॥
भय सों कोउ कछु बोलत नाहीं। आनँद सों खेलहिं सब पाहीं ॥
आदि खंड की कथा सोहाई। बाल रूप खेलत हरि राई ॥
मातु पिता सन कछु नहिं डरहीं। विश्वरूप देखत कछु लजहीं ॥
बड़ो भाइ विश्वम्भर केरो। सब विषयन सों जिन मुख फेरो ॥
सर्व शास्त्र महँ भक्ति बखाने। विष्णु भक्ति बिनु और न जाने ॥
सुनि व्याख्या सब अचरज करहीं। तिन सन कछुक बोल नहिं सकहीं ॥
मन बच कर्म कृष्ण को जानैं। केवल कृष्ण भक्ति उर आनैं ॥

अतिहि विलक्षण रीति सब, देखत भ्राता माँहि।
विश्वरूप मन महँ गुनै, कहत न काहू पाँहि ॥१॥

प्राकृत शिशु सम नहिं यह बालक। रूप तेज जनु यदुकुल पालक ॥
कर्म अमानुष करत सदाहीं। खेलत कृष्ण मनहुँ तन माँहीं ॥
यहि विधि सोचत रहत सदाहीं। रहत सदा वैष्णव के पाहीं ॥
कहहिं कृष्ण की कथा सुहाई। सुनहिं भक्त जन अति हर्षाई।
पूजहिं कृष्ण सदा मन लाई। जपहिं कृष्ण सब मिलि सुखदाई ॥
माया वश सब जीव भुलाने। धन वैभव मद सब लपटाने ॥
वैष्णव देखि करहिं उपहासा। बोलहिं अटपट करि परिहासा ॥
"यती तपस्वी सब मिलि मरहू। का फल मिलै जो तुम दुख सहहू ॥
सदा दरिद्र रहहु तुम लोगा। हरि हरि कहत मिलत नहिं भोगा ॥
सुकृती वे जे सब सुख करहीं। हाथी घोड़ा पर जे चढ़हीं ॥

हरि हरि कहि बोलहु सदा, नाम जपहु सुख मान।
क्रुद्ध होइ हरि तुमहिं सब, संहारब जिय जान" ॥२॥

पाषंडी सब एहि विधि कहहीं। भक्त सकल सुनि अति दुख लहहीं ॥
कृष्ण नाम कहुँ सुनिय न काना। मरत सदा सब जीव भुलाना ॥
कृष्ण कथा कतहूँ नहिं कोई। भक्त दुखित अतिसै सब कोई ॥
कथा भागवत कोऊ बखानै। शुद्ध अर्थ सोऊ नहिं जानै ॥

अर्थ अनर्थ अनेक सुनावैं। भक्ति भाव कछु कोउ न बतावैं॥
कृष्ण भक्ति बरनैं नहिं सोई। नाम भक्ति कर जान न कोई॥
आचारज अद्वैत भक्तगन। जीव कुमति लखि रहैं दुखिन मन॥
विश्वरूप प्रभु हृदय विचारहिं। जग जंजाल अबै हम त्यागहिं॥
जाउँ बनतिं सब मिटै कलेशा। एहि प्रकार सोचत अहिं ईशा॥
गंगा प्रात करहिं असनाना। भक्ति शास्त्र कर करहिं बखाना॥

श्री अद्वैत सभा महँ, करहिं भक्ति गुण गान।
सुनहिं भक्त सब मुदित मन, करहिं प्रेम रस पान॥३॥

सुनि अद्वैत करहिं हुँकारा। हृदय लगावहिं धाइ कुमारा॥
हरि हरि हरि वैष्णवगण कहहीं। आनँद मगन नृत्य सब करहीं॥
विश्वरूप कर संग न छाँड़हिं। अपने घर कोऊ नहिं गमनहिं॥
विश्वरूप कीर्तन रस माहीं। मगन सदा निज घर नहिं जाहीं।
भोजन प्रस्तुत करिकै माता। कहत विश्वम्भर सन सुनु ताता॥
झट बुलाय लावहु तुम भ्राता। कहेउ बुलावत हैं तोहिं माता॥
मातु वचन सुनिकै प्रभु धाए। तुरत अचारज के गृह आए॥
भाइ बुलावन मिस प्रभु आए। देखि भक्तगण अति हरषाए॥
करहिं कृष्ण कीर्तन सब कोई। कीर्तन सुनि प्रभु कहँ सुख होई॥
कृपादृष्टि करि सबहिं बिलोकेउ। सुन्दर छबि सब कर मन मोहेउ॥

अंग अंग लावण्य निधि, को कवि बरनै पार॥
केवल नखपै कीजिए, कोटि चन्द्र बलिहार॥४॥

हँसिकै प्रभु अग्रज सन कह्यो। भोजन हित है मातु बोलायो॥
पकरि वसन अग्रह कर चले। देखि रूप भक्तन मन मोहे।
थकित होइ सब इकटक देखहिं। कोउ काहू सन कछु नहिं बोलहिं॥
लगी समाधि मनहूँ सब काहू। लहेउ आज जग जीवन लाहू॥
सहज स्वभाव भक्त कर अहही। प्रभुहिं निरखि मोहत हैं सबही॥
प्रभुहू भक्तन कर चित हरहीं। कोउ यह बात न जानत अहहीँ॥
यह रहस्य भक्तन सब भाषा। श्री भागवत माँझ लिखि राखा॥
श्री शुकदेव कही मन लाई। सुनेउ परीक्षित अति हर्षाई॥
सुनहु भागवत कर अख्याना। हरि चरित्र शुक कहेउ बखाना॥
श्री गौरांग पूर्ण युग माहीं। गोकुल महँ खेलत शिशु पाहीं॥

जन्महि ते सब गोपिजन, करी सदा यह रीति।
निज सुतहू ते अधिक सब, करैं कृष्ण सों प्रीति॥५॥

ईश्वर सम जानहिं नहिं कोऊ। करहिं प्रेम तद्यपि अति सोऊ॥
सुनत परीक्षित विस्मित भयऊ। शुक सन कहत कहा प्रभु कहऊ॥
अद्भुत कथा सुनेयेहु साईं। त्रिभुवन मों नहिं एहि की नाईं॥
निज सुत ते बढ़ि आन तनय को। कहहु कवन विधि करत प्रेम सो॥

श्री शुक कहेउ सुनहु तुम राजा। परमात्मा सब देह विराजा॥
जीवहीन निज सुत वा भाई। घर बाहर सब करत सदाई॥
परमात्मा सबही कर जीवन। सोइ ब्रज प्रगट्यो श्रीनंदनन्दन।
सहज स्वभाव ईश कर होई। करहिं प्रेम तेहि ते सब कोई।
भक्तन कर यह सहज स्वभाऊ। अन्य जीव करि सकै न काऊ॥
कंस आदि निशिचरगन सोऊ। कारण कवन बैर कर कोऊ॥

पूर्व जन्म अपराध बहु, करत भए जे जीव॥
तेहि कारण हिंसा करत, मानत नहिं सुख सींव॥६॥

चीनी को मीठो सब जानत। व्याधि हेतु कोउ तीतो भाषत॥
सोइ दोष जिह्वा कर अहई। दोष शर्करा कर को कहई॥
यहि प्रकार सबही सुखदाई। श्री चैतन्य प्रभू सुनु भाई॥
नवद्वीप महँ एहि सब लोगा। देखहु प्रभुहिं न त्यागेहु भोगा॥
भक्तन ही केवल कछु चीन्हा। प्रभु भक्तन चित निज बस कीन्हा॥
विहरत नवद्वीप जगदीशा। हरत सदा भक्तन मन खीसा॥
मोहितकरि एहिविधि मनसबकर। चले लिवाय अग्रजहिं निज घर॥
मनहीं मन अद्वैत विचारहिं। प्राकृत शिशु सम यह कबहूँ नहिं॥
सब वैष्णव सन तब इमि बोलेउ। यह बालक कछु है हम जानेउ॥
सकल प्रशंसा प्रभु कर करहीं। परम मनोहर शिशु लखि परही॥

विश्वरूप प्रभु घरहिं महँ, नाम मात्र को जाहिं।
भोजन करि पुनि जात चलि, आचारज गृह माँहि॥७॥

सांसारिक सुख कछु नहिं भावत। सदा कृष्ण कीर्तन मन लावत॥
गृह हू में कोउ काम न करहीं। ध्यान करत ठाकुर मन रहहीं॥
व्याह करन माता पितु चाहत। विश्वरूप सुनि अति दुख पावत॥
त्यागहुँ एहि ससार विचारत। जाउँ बनहिं मोकहँ यह भावत॥
ईश्वर की इच्छा को जानै। त्यागि चले जो मन महँ ठानै॥
संन्यासी होइ भरमत भयऊ। शंकरारराय नाम प्रभु लयऊ॥ शंकरारण्य
विवश्रूप त्यागेहु घर जबहीं। माता पिता दुखित भे तबहीं॥
क्रन्दन करहिं सकल मिलि लोगा। विश्वरूप छाँड़ेउ सब भोगा॥
विश्वम्भर अति दुःखित भयेऊ। मूर्छित ह्वै पृथ्वी पर गिरेऊ॥
शोक विरह नहिं बरनै पारा। रोवहिं मातु पिता परिवारा॥

विश्वरूप को त्याग सुनि, भक्त दुखित मन माहिं।
अद्वैतादिक सकल मिलि, क्रन्दन करि घर जाहिं॥८॥

मातु पिता सब करहिं पुकारा। 'विश्वरूप' कहि बारम्बारा
पुत्र शोक व्याकुल अति भयऊ। तब समुझाय सकल जन कहेऊ॥
"धीर धरहु तुम शोक न करहू। कुल उद्धारयो अस मन गुनहू।
संन्यासी जा कुल महँ होई। वंश उधार करै जन सोई॥

ऐसो कर्म कीन्ह तव बालक। विद्या सफल भयो कुल तारक॥
आनँद सों अब सब मिलि रहहू। बहुत कहौं का तुम सब सुनहू॥
विश्वम्भर है पुत्र तुम्हारो। वह कुल भूषण जग उजियारो॥
इनते सब दुख मिट्यौ तिहारौ। कोटि पुत्र सम एक विचारौ॥"
यहि बिधि तिन सबकहँ समुभावहिं। मातु पिता पै कछु नहिं मानहिं॥
जेहि तेहि बिधि तव धीरज धरेऊ। मिश्र सकल लोगन सन कहेऊ॥

"रहिहै यह सुत घरहि महँ, याको कहा प्रमान।
कृष्ण दीन्ह सोइ पुत्र कहँ, लीन्ह आपुनो जान॥६॥

कृष्ण करैं होइहै जग सोई। हम चाहैं सो कछु नहिं होई॥
हम अपनो शरीर अरु कर्मा। कृष्ण समर्पौ निज सब धर्मा॥"
विश्वरूप गमनेउ एहि भाँती। नित्यानन्द अभेद संघाती॥
यह संन्यास चरित जे सुनहीं। कृष्ण भक्ति निशचै सो लहहीं॥
विश्वरूप छाँड़ेउ हम सबहीं। भक्त सकल मिलि अस मन गुनहीं॥
कृष्ण कथा सो कहत सोहाई। हरेउ कृष्ण दीन्हेउ दुख भाई॥
चलहु सकल मिलि अब बन माहीं। पापिन कर मुख देखब नाहीं॥
इनके बचन सहब किमि भाई। पाप करहिं सब अति हर्षाई॥
कृष्ण नाम कहुँ सुनिय न काना। फिरहिं यथा मति लोग भुलाना॥
समभाएहु पै कृष्ण न मानहिं। उलटि सकल दुर्वचन सुनावहिं॥

"मिल्यो कवन सुख तुमहिं सब, रटौ सदा हरिनाम।
भीख माँगि खावहु सदा, यहै तुम्हारो काम"॥१०॥

अस पापिन सँग करब न वासा। 'जाउँ बनहिं' कहि लेहिं उसासा॥
सुनि अद्वैत परम दुख पावा। कहत कहा तुम मोहिं न भावा॥
सबहिं लहब सुख जीवन लाहू। आज हृदय मम अधिक उछाहू॥
कृष्णचन्द्र कीन्हेउ परकासा। अस मोरे मन दृढ़ विश्वासा॥
हर्ष सहित गावहु हरिनामा। देखब कृष्ण सबहिं एहि ग्रामा॥
कछुक समय धीरज धरु भाई। कृष्ण करब कीर्तन यहि ठाँई॥
तब जानेहु मोहिं प्रभु कर दासा। हरि कीर्तन प्रभु करब प्रकासा॥
शुक आदिक जो कबहुँक पावहिं। तोर भृत्य पाउब सो सहजहिं॥
सुनि अमृत सम गुरु की बानी। हरि हरि कहन लगे सब प्रानी॥

लरिकन सँग खेलत रहे, श्री गौरांग कृपाल।
हरि कीर्तन गृह महँ सुनत, आय गए तत्काल॥११॥

भक्त कहहिं केहि कारण आयउ। कह्यो तुरत "तुम मोहिं बुलायउ"॥
अस कहि शिशु सँग खेलहिं जाई। प्रभु माया कोउ जान न पाई॥
विश्वरूप जब सों चलि गयऊ। तबसों प्रभु कछु सुस्थिर भयऊ॥
निरवधि मातु पिता संग रहहीं। जासों सोइ कछु दुःख न करहीं॥

खेल कूद प्रभु सब तजि दीना। रहत सदा पुस्तक लवलीना॥
पढ़तहिं पाठ स्मरण करि लेहीं। देख लोग सब अचरज करहीं॥
धन्य पिता माता जिन जाए। सबहि प्रशंसहि अति हर्षाए॥
जगन्नाथ सन सो सब कहहीं। तुम सम धन्य जगत को अहहीं॥
त्रिभुवन महँ ऐसो कोउ नाहीं। पाठ पढ़त समुझै छिन माहीं॥
गुरू बृहस्पति सम यह बालक। बड़ पण्डित होइहै जगनायक॥

तर्क करन महँ अति निपुण, कहा कहौं तोहि पाहिं।
वाको उत्तर नाहिं कोउ, देय सकै जग माँहि॥१२॥

हर्षित मातु सुनत सब पाहीं। मिश्रहिं सोच होत मन माँहीं॥
शची मातु सन तब इमि कहई। 'यह सुतहू नहिं घर महँ रहई'॥
सर्व शास्त्र पढ़ि बालक सोई। जगत तुच्छ गुनि रुक्यो न ओई॥
जानेहु तिलभरहू जग माहीं। अंश सत्य को कछु है नाहीं॥
जानि अनित्य इहै संसारा। गृह बाहर होइ बनहि सिधारा॥
इहौ पुत्र यदि विद्या पढ़िहै। ताही सम घर बाहर ह्वैहै॥
हम तुम कहँ एक इहै अधारा। कौन भाँति हम पाउब पारा॥
पढ़न न देब याहि हम अब तो। मूरख है घर महँ रहिहै तो"॥
शची कह्यो, "यदि मूरख होइहै। कवन भाँति जग महँ सो रहिहै॥
काहू कन्या देब न ओही। बिप्र सुअन किमि मूरख होही"॥

मिश्र कहेउ, "तुम अति अबुध, ज्ञान कछुक तोहि नाहिं।
कृष्ण सबहिं पालन करत, समुझो यह मन माहिं॥१३॥

मूर्ख होहि वा पंडित कोई। कर्म लिखा सो निश्चय होई॥
कुल पालैं केवल पंडित जन। तुमहि सुन्यो यह बात कौन सन॥
विधि ने जो कन्या लिखि राखा। सो मिलिहै अस बुध जन भाखा॥
मूर्खा द्वार तुम देखहु जाई। बहु पंडित तहँ रहत सदाई॥
विद्यादिक पोषण नहिं करई। कृष्ण जगत पालैं सब कहई॥
बिना कष्ट सोई जन मरहीं। जगत सुखी सोई जन रहहीं॥
श्री कृष्णहिं जो सेवत रहहीं। कृष्ण कृपा तिनके दुख टरहीं[1]॥
सकल संपदा घर महँ रहई। भाग्य बिना सो भोग न सकई॥
रोग एक विधिना सो देई। मरत दुःख सों सुख नहिं तेई॥
करहु न चिंता तुम मन माहीं। कृष्ण कृपा करिहैं सब पाहीं॥

विश्वम्भर की करब सोइ, रक्षा निश्चय जान।
कौनो दुख तुम कहँ नहीं, हमरो जब तक प्रान॥१४॥

---

१. अनायासेन मरणं विना दैन्येन जीवनं।
अनाराधित गोविन्द-चरणस्य कथं भवेत्॥

अर्थ—श्री गोविन्द का भजन करने से जीव बिना कष्ट के मरता है और बिना दीनता के संसार में सुख से रहता है॥

वाहू कहँ कछु दुःख न होई। कृष्ण चरण ध्यावहु सब कोई॥
माता पतिबरता जेहि होई। कौनो दुःख न व्यापै सोई॥
अब हमार मानहु तुम बाता। मूर्ख होइ सुत गृह मन राता॥"
अस कहि पुत्रहिं निकट बुलाई। कहेउ ताहिं सन "सुनहु निमाई॥
विद्या पढ़न जाहु जनि भाई। खेलहु तुम लरिकन सँग जाई।
तुम जो चाहहु सो सब दैहौं। गृह महँ रहि सबही सुख पैहौ" ॥
शपथ दिवाइ कह्यो तब जाना। विश्वम्भर मन महँ दुख माना॥
नित्य सनातन गौर गोपाला। पितु आज्ञा मानत सब काला॥
करन उपद्रव पुनि प्रभु लागे। सब शिशु संग रहत अनुरागे॥
निज घर किंवा पर घर जाई। तोड़ फोड़ सब देत बहाई॥

निशा होइ तबहूँ नहीं, आवत है गृह माहिं।
खेलत ही बाहर रहैं, जायँ जहाँ सब जाहिं ॥१५॥

एक संग मिलि सब शिशु चलहीं। कंबल ढाँकि बैल सम बनहीं॥
दिन महँ कदली फल जहँ देखत। रात्रि मॉंझ तेहि उपवन पैठत॥
फल तोड़हिं तब लोग पुकारहिं। समुझैं गाय घुस्यो वन माँझहिं॥
उठैं गृहस्थ तबै सब भागैं। हाय हाय सब बोलन लागैं॥
द्वार बन्द बाहर सों करहीं। बाहर कोउ निकसि नहिं परहीं॥
भीतर सों सब करहिं पुकारा। भागि चलहिं पावै को पारा॥
यहि प्रकार सब जग को नाथा। खेलत फिरत सकल शिशु साथा॥
करहिं उपद्रव जहँ तहँ जाई। तदपि मिश्र नहिं बोलत आई॥
मिश्र एक दिन कारज लागी। गयउ अनत अतिशय बड़भागी॥
विद्या पढ़न देत नहि हमहीं। भये कुपित उर अन्तर तबहीं॥

विष्णु भोग कर हाँड़ि सब, बाहर गृह धरि जाय।
सोइ हाँडिन को स्तूप करि, बैठे प्रभु हर्षाय ॥१६॥

बड़िहि निगूढ़ कथा यह भाई। सुनहु एक मन ह्वै चितलाई।
गौर चरित अतिही सुखदाई। मिलहि कृष्ण की भक्ति सुहाई॥
कालिख सब लागी प्रभु अङ्गा। मनहुँ रूप धरि बैठ अनङ्गा॥
माता सन सब शिशु गण कहई। जूठ हाँड़ि पर तव शिशु बसई॥
जूठ हाँड़ि पर करि कमलासन। बैठोहै तहँ परम मुदित मन॥
माता निरखि बहुत दुख पावा। "हाय हाय" कहि सुतहि बुलावा॥
"ऐसो स्थल नहिं बैठन जोगा। कहहिं कहा तुम कहँ सब लोगा॥
बुद्धिहीन तुम कहँ नहि ज्ञाना। बड़ो भयो कछुहू नहिं जाना" ॥
कहत प्रभू "मोहिं पढ़न न देहू। भद्र अभद्र बुझब किमि कहहू॥
भलो बुरो मूरख नहिं जानत। सकल वस्तु हम नीको मानत" ॥

अस कहि हँसन लगे प्रभु, देखत सब जन आइ।
दत्तात्रय के भाव सों, बैठि रहे तेहि ठाँइ ॥१७॥

मातु कहै 'छिः छिः तुम जाई। बैठे अस निकृष्ट थल भाई ॥
होब पवित्र कौन बिधि ताता। कहहु बुझाय मोहिं सब बाता" ॥
बोले प्रभू "मातु तुम सुनहू। शिशु समान तुम का यह कहहू ॥
अशुचि स्थान नहिं मोर निवासा। जहाँ रहौं तहँ तीरथ बासा ॥
गंगा आदि तीर्थ तहँ रहहीं। शुचि अशुची सब भ्रम बस कहहीं ॥
स्रष्टा को कछु दोष न अहई। मति अनुसार सकल जन कहई ॥
लोक वेद जेहि शुद्ध न कहहीं। हमरे परस सकल शुचि बनहीं ॥
इन हाँड़िन महँ दोष न होई। विष्णु लागि तुम कीन्ह रसोई ।
प्रभु हित पात्र सकल शुचि रहई। वाके छुअत सबहि शुचि बनई ॥
मन्द स्थान नहिं मोर निवासा। जगत पवित्र होइ मम पासा" ॥

बाल भाव सब तत्व प्रभु, कहेउ मातु हर्षाय।
तदपि न बूझत है कोऊ, माया बस दुख पाय ॥१८॥

सबहि हँसत सुनि शिशु की बानी। कहेउ मातु तब अति सन्मानी ॥
स्नान करनहित आवहु अबहीं। नहिं आवैं माता पुनि कहहीं ॥
आवत होइहैं पिता तुम्हारे। देखैं नहिं सो करहु दुलारे ॥
प्रभु कह मोहिं पढ़न नहिं देही। आवब नहि हम तुम सन कहहीं ॥
सबहि रिसाय उठे तत्काला। किमि नहिं पढ़न देहिं गोपाला ॥
बहुत यत्न करि बाल पढ़ावैं। तब बालक कों विद्या भावै ॥
बड़ो भाग्य जननी तव अहहीं। कौन शत्रु दीन्हेउ सिख तुमहीं ॥
मूर्ख बनाइ सुतहिं घर रखहू। यामें दोष शिशुहि नहिं कुछहू ॥
कहत सबहि बेटा तुम आवहु। पढ़न अबौं यदि तुम नहि पावहु ॥
तब तुम करेहु बहुत उत्पाता। मनिहैं तब यह तुम्हरी बाता ॥

नहिं आवत सोइ स्थान सों, देखत सब मन लाय।
हाथ पकरिकै मातु तब, लै आई बरियाय ॥१९॥

कालिख अँग प्रभु अतिही सोहत। सकल भक्तगन कर मन मोहत ॥
दत्तात्रय सम तत्व बखाने। हरिमाया बस कोउ नहिं माने ॥
शची मातु तब स्नान कराये। ताही समय मिश्र गृह आये ॥
शची मातु तब सुत की करनी। पति सों सकल सुनायो बरनी ॥
पढ़न न पावत सुत मन त्रासा। करत तुम्हारो सब परिहासा ॥
सब मिलि कहत मिश्र सुनु बाता। काहे पढ़न देत नहिं ताता ॥
कौन मन्त्र दीन्हे अस तुम ही। होइहै वहै कृष्ण जो रचहीं ॥
चिंता तजि तुम सुतहिं पढ़ावहु। बड़े भाग्य तुम अस सुत पायेहु ॥
पढ़न चहत तुम्हरो सुत भाई। करहु जनेऊ तुम हर्षाई ॥
मिश्र कहत हम मानत बाता। सुतहिं पढ़ाउब सुन अब भ्राता ॥

सकल अलौकिक कर्म लखि, अति विस्मय मन माहिं।
जानत नहिं कछु मर्म कोउ हृदय विचारत जाहिं ॥२०॥

पूरबही कोउ पण्डित ज्ञाता। कहि राखी पितु सन यह बाता॥
यह बालक प्राकृत शिशु नाहीं। राखेहु तुम यहि अति सम्मानी॥
गुप्त भाव प्रभु लीला करहीं। माता पिता मोद मन भरहीं॥
पढ़न लगे पितु आज्ञा पाई। अति हर्षित सब खेल भुलाई॥
गौर-निताई पद करि आसा। गायो सोइ वृन्दावन दासा॥
भक्त चरण रज करि विश्वासा। भाषा किय बृजभूषण दासा॥

॥इति श्री आदि खंडे श्री विश्वरूप संन्यासादि वर्णनं नाम पञ्चमोऽध्यायः॥

षष्ठ अध्याय

जय कीर्तन प्रिय प्रेममय, कृपा सिंधु प्रभु गौर।
नित्यानन्द-स्वरूप प्रिय, भक्तन के सिरमौर॥१॥

श्री चैतन्य कथा सुनु भाई। मिलै भक्ति संतत सुखदाई॥
यहि विधि रहत शची गृह माहीं। गुप्त भाव कोउ जानत नाहीं॥
सकल बाल क्रीड़ा प्रभु कीन्हीं। भक्तन कहँ अति आनंद दीन्हीं॥
यज्ञ सूत्र कर समय सोहावा। परम पवित्र पर्व सोइ आवा॥
मिश्र सकल निज लोग बुलावा। शची द्वार पर बजत बधावा॥
आनँद मगन काज सब करहीं। स्त्री सब मंगल गीत उचरहीं॥
नट गण नृत्य करहिं मन लाई। वेद पढ़हिं ब्राह्मण समुदाई॥
सब शुभ योग दिवस अरु मासा। मिले आइ सब सहित हुलासा॥
मिश्र भवन अति आनँद भयऊ। यज्ञ सूत्र विश्वम्भर धरेऊ॥
प्रभु शोभा को बरनै पारा। देखि लोग सब सुरति बिसारा॥

वामन रूप भए प्रभु, दण्ड कमण्डलु हाथ।
भिक्षा माँगत भक्तसन, लिए सखा सब साथ॥२॥

ब्रह्म तेज युत सब अँग सोहै। यज्ञ सूत्र सबकर मन मोहै॥
भिक्षा देत सबहि हर्षाई। हाथ जोड़ बहु विनय सुनाई॥
ब्रह्माणी आदिक सुरनारी। द्विज पत्नी सम सब तनु धारी॥
आइ देत भिक्षा सब काहू। प्रभुहिं निरखि उर अधिक उछाहू॥
वामन प्रभु सम लीला करहीं। निज भक्तन हित प्रभु तनु धरहीं॥
जय जय श्री वामन अवतारा। गौर रूप धार्यो एहि बारा॥
चरण शरण राखौ प्रभु मोहीं। बार बार बिनवौं हम तोहीं॥
यज्ञ सूत्र कर चरित जे सुनहीं। श्री चैतन्य चरण रत रहहीं॥
यहि प्रकार निज गृह सुरनायक। करत चरित भक्तन सुखदायक॥
घर महँ पढ़ लिखकर सुरसाँई। विद्या पढ़न चले हरषाई॥

नवद्वीप महँ विप्रवर, गंगादास सुजान।
पाठ पढ़ावन में निपुण, सान्दीपन सम जान॥३॥

सोइ व्याकरण शास्त्र सब जानैं। तासु सुयश सब लोग बखानैं॥
प्रभु इनही ढिग पढ़नो चहहीं। मिश्र लिवाय गयो सुत तहहीं॥
मिश्र देखि पण्डित सुख पावा। उठकर मिश्रहिं कंठ लगावा॥
* निज आसन बैठारयो तिनहीं। सुतहि दिखाइ मिश्र तब कहहीं॥
हम निज सुत प्रभु तुम कहँ दयऊ। पाठ पढ़ायेउ, निज सुत समुझेउ॥
यथा शक्ति हम त्रुटि नहिं करहीं। बड़ो भाग्य अस पंडित कहहीं॥
शिष्य देखि गुरु आनँद लहेऊ। निज सुत सम राखत सो भयऊ॥
व्याख्या जो कछु गुरु सन सुनहीं। तुरत स्मरण सो सब करि लेहीं॥
सब कर व्याख्या खंडन करहीं। स्थापहिं निज प्रभु पुनि कछु कहहीं॥
शत शत शिष्य पढ़त गुरु पाहीं। खंडन करि न सकत कोउ ताहीं॥

* बुद्धि विलक्षण देखिकै, गुरु अति हर्षित होइ।
सब शिष्यन महँ श्रेष्ठ करि, आदर दीन्ह्यो सोइ॥४॥

सकल शिष्य जे गुरु गृह पढ़हीं। सबसन तर्क सदा प्रभु करहीं॥
कमलाकान्तऽरु गुप्त मुरारी। कृष्णानन्द आदि सब भारी॥
ये सब बड़े शिष्य जे अहईं। तिनहूँ सन प्रभु बाजत रहईं॥
बालक समुझि सो कछु नहिं कहहीं। बुद्धि देखि अति आनँद लहहीं॥
यहि विधि पढ़ि लिखि शिष समुदाई। गंगा स्नान करहिं नित जाई॥
विद्यार्थिन कर भीड़ अपारा। यहि नगरी को बरनै पारा॥
गुरुसन पढ़ि दुपहर महँ जाई। गङ्गा स्नान करहिं हर्षाई॥
शत शत शिष्य पढ़हिं एक साथा। कलह करहिं सब धरि धरि हाथा॥
प्रथम वयस चञ्चल प्रभु भारी। भिरहिं जाइ सब सन करि रारी॥
कोउ सन कहहिं कि गुरु नहिं मानौं। मों सों तर्क करौ तब जानौं॥

यहि विधि तर्क करहिं सब, बात बढ़ै छिन माहिं।
वालू फेंकत सबहिं पै, जल छिरकैं सब पाहिं॥५॥

जो जेहि पावै सो तेहि मारै। माटि फेंकि कटु वचन उचारै॥
मारत कोउ तब देहिं दोहाई। गंगा पार भागि कोउ जाई॥
सब मिलि अतिहि उपद्रव करहीं। गंगा जल माटी सम करहीं॥
नारीगण जल भरन न पावत। स्नान करन महँ अति दुख लागत॥
अति चञ्चल विश्वम्भर राई। घाट घाट सब देत दोहाई॥
एक घाट पर स्थिर नहिं रहहीं। घाट घाट सब विचरण करहीं॥
विद्यार्थिन कर गिनती नाहीं। कलह करैं प्रभु जेहि तेहि पाहीं॥
बड़े बड़े जे शिष्य पुराने। पूछहिं प्रभु सन अति सन्माने॥
कलह करहु केहि कारण ताता। तर्क करहु केवल तुम भ्राता॥
हम पूछहिं सो देहु बताई। देखैं बुद्धि तुम्हारी भाई॥

सर्व शक्ति युत गौर प्रभु, व्याख्या कीनो सोइ।
सब प्रमाण युत शुद्ध अति, सुनि हर्षित सब कोइ॥६॥

पुनि खण्डन सोई कर कीन्हा। सकल दोष तेहि महँ कहि दीन्हा॥

कहत प्रभू अब तुम सब कहहू। शुद्ध करहु नहिं हम सन सुनहू॥
लागे करन प्रशंसा सबही। सबहिं बुझाय कह्यो प्रभु तबही॥
निज खंडन कर खंडन कीन्हा। अति सुन्दर सब भाँति नवीना॥
अति सन्तोष भयउ सब जनही। लीन्ह लगाय गले प्रभु सबही॥
कहहिं सबै अब निज घर जाहू। काल बुझाय कहब सब काहू॥
गंगा तीर करहिं नित लीला। देखहिं भक्त सकल गुणशीला॥
मनहु बृहस्पति जगहित लागी। नवद्वीप जन्मेउ बड़ भागी॥
जमुना महँ निज जनहित आई। कीन्ह बिहार कृष्ण मन लाई॥
देखि सकल लीला प्रभु केरी। गंग हृदय लालसा घनेरी॥

श्री गंगा नितही कहत, कब होइहै मम भाग।
हाथ जोरि विनती करत, हृदय अधिक अनुराग॥७॥

मम जल महँ बिहरब प्रभु इतहीं। सब वाञ्छा पूरै मम तबहीं॥
यद्यपि गंगा बड़ जग माहीं। जमुना पद सो पायो नाहीं॥
गंग मनोरथ सोइ सब पूरहिं। सदा भक्त कर मन प्रभु राखहिं॥
करि बहु बिधि क्रीड़ा जल माँझा। घर आवहिं प्रभु होतहि साँझा॥
विष्णु पूजि प्रभु भोग लगावहि। करि विनती जल तुलसि चढ़ावहि॥
भोजन करि प्रभु पुस्तक लेई। निज टिप्पनी लिखत मन देई॥
विद्यारस प्रभु जगत भुलाने। देखि मिश्र अतिसै सुख माने॥
रात दिना किछु ही नहिं जानहिं। निज सुत मुख लखि सबै भुलावहिं॥
परमानन्द मगन मन रहहीं। ब्रह्म सुखहिं निज अनुभव करहीं॥
सायुज्यादि तुच्छ जेहिं आगे। पावत मिश्र सबहि कहँ त्यागे॥

निरखि पुत्र मुख मिश्रवर, अति आनँद उर माहिं।
कामदेव सम रूप को, उपमा जग महँ नाहिं॥८॥

अंग अनंगहु कर मन मोहत। निरखि मिश्र मन महँ अति सोचत॥
भूत प्रेत कोउ सुतहिं न लागै। कहा करौं जेहि ते सब भागैं॥
कृष्णहिं मिश्र पुत्र कहँ अर्पहिं। द्वार खड़े प्रभु सो सब देखहिं॥
मिश्र कहहिं प्रभु तुमही रक्षक। सब अरिष्ट के तुम्ही भक्षक॥
कृपा दृष्टि प्रभु सुत पर राखौ। सकल विपति सों ताहि बचावौ॥
जो जन चरण कमल तव ध्यावैं। तासु निकट कोउ विपति न आवै॥
स्मरण करत नहिं जे अज्ञाना। तहाँ वास भूतादिक नाना*॥
हम तौ दास कृष्ण तव अहहीं। करहु कृपा राखौ निज जनहीं॥
सकल रोग आदिक जे अहहीं। प्रभु सुत कहँ व्यापैं नहि कबहीं॥
यहि विधि सदा मिश्र सुत लागी। हाथ जोड़ माँगत सब त्यागी॥

---

*तथाहि (भा० १०।६।३)--

न यत्र श्रवणादीनि रक्षोघ्नानि स्वकर्मसु।
कुर्वन्ति सात्वतां भर्तुर्यातुधानश्च तत्रहि॥

अर्थ—जिस स्थान पर श्री कृष्ण की नाम कीर्तन आदि से पूजा नहीं होती वहाँ राक्षस वास करते हैं॥

प्रभु इच्छा देखत भए, स्वप्न एक द्विजराज।
अति विस्मित होइ स्तुति करत, राखहु हमरी लाज ॥६॥

हे गोविन्द मम सुत गृह राखहु। हाथ जोरि कै यह बर माँगहुँ ॥
होइ गृहस्थ रहै गृह माहीं। नाथ, निमाई अनत न जाहीं ॥
शचो मातु विस्मित सुनि बानी। पूछत मिश्रहिं अति मृदुबानी ॥
कहा कहहु तुम कम्पित गाता। बूझेउँ नहिं कछु तुमरी बाता ॥
मिश्र कहत देखेउ हम सपना। तुमहिं सुनावत हौं सब घटना ॥
मानहुँ मुंडन कियो निमाई। शिषा सूत्र सब त्यागेहु जाई ॥
अति अद्भुत संन्यासी वेशा। कृष्ण कहत घूमत सब देशा ॥
छिनहिं हँसै रोवै छिन माँहीं। नृत्य करन लागै छिन माहीं ॥
"कृष्ण कृष्ण" कहि चहुँदिशि धावत। सकल भक्त कहँ गले लगावत ॥
अद्वैताचार्य आदि भक्तगन। घेरे रहत सदा हर्षित मन ॥

उच्च नाम कीर्तन करत, नृत्य करत सब कोइ।
मध्य बिराजत गौर हरि, का बरनौ हम सोइ ॥१०॥

कबहुँ सिंहासन ऊपर जाई। बैठत तेहि पर आपु निमाई ॥
चरण कमल सबके शिर राखै। ब्रह्मा शंकर सब स्तुति भाखैं ॥
"जय शचिनन्दन" सब जन कहहीं। हरि हरि हरि सब कोउ उच्चरहीं ॥
सबै देखि कछु कहि नहिं पावा। देख्यों पुनि बहु जन तहँ आवा ॥
नगर नगर डोलत लै साथा। गावत सब मिलि हरि गुण गाथा ॥
सबहिं निमाई की स्तुति करहीं। ता पाछें सबही जन चलहीं ॥
नीलाचल पुनि सब सँग गयऊ। देखि मोहिं अति अचरज भयऊ।
स्वप्न देखि चिंता उर आई। यह सुत हू घर बाहर जाई ॥
शची कहत सुनु मिश्र सुजाना। चिंता करहु न हम सब जाना ॥
घर बाहर तेहि मन नहिं भावै। पुस्तक छाँडि अनत नहिं जावै ॥

जो सुत विद्या रसहिं महँ, रहत सदा लवलीन।
सो किमि गृह कहँ छाँड़िहै, नहिं ऐसो मतिहीन ॥११॥

एहि विधि दोउ जन करत विचारा। कौन भाँति होइहै दुख पारा ॥
कछुक दिवस रहि मिश्र उदारा। नित्य धाम गोलोक सिधारा ॥
विरह दुखित अति गौर गोसाईं। जिमि दशरथ-वियोग रघुराई ॥
गौरचन्द्र मुख लखि कै माता। अति व्याकुल कछु कहि नहिं जाता ॥
विश्वम्भर कर प्रेम अपारा। धीरज धरेउ समय अनुसारा ॥
बरनत कथा दुःख मन माना। यातें अति संक्षेप बखाना ॥
गौरचन्द्र माता सँग रहहीं। जिमि माता कछु दुःख न लहहीं ॥
पितृहीन बालक लखि आई*। करत पुत्र सेवा मन लाई ॥
दण्ड एक यदि पुत्र न देखहि। विकल होहि अतिसै मन सोचहि ॥
मातहिं प्रभु आश्वासन देई। करहु न कछु चिन्ता हम कहई ॥

*शची माता।

हमहिं अछत तोहिं दुःख नहिं, समुझि देखु मन माहिं।
ब्रह्मा शिव जो नहिं लहत, तुम पाउब मोहि पाहिं ॥१२॥

पुत्र निरखि सब दुख बिसरावहिं। परम सुखी आपन पौ जानहिं ॥
जाको यश बेदादिक गावहिं। ऋषिमुनि सुमिरि सिद्धि कहँ पावहिं ॥
सोइ प्रभु पुत्र रूप कर वासा। तहाँ दुःख किमि करै निवासा ॥
आनँद रूप मातु कहँ कीना। द्विज सुत है भक्तन सुख दीना ॥
घर महँ कछुक सम्पदा नाहीं। जेहि तेहि बिधि सब मातु निबाहीं ॥
राजा सम प्रभु आज्ञा करहीं। जो माँगै सो तुरतहि चहहीं ॥
गृह महँ वस्तु रहै वा नाहीं। यह सब कछु प्रभु सोचत नाहीं ॥
माँगत ही यदि मिलै न तिनहीं। तोड़ फोड़ डालै सब तबहीं ॥
आपुन हानि कछू नहिं सोचत। शची यत्न करि सब धरि राखत ॥
मातृ-स्नेह वश जो प्रभु चाहत। तुरत मातु सन सो सब पावत ॥

तुरत देइ प्रभु हाथ महँ, अति हर्षित मन माँहिं।
लेइँ तुरत प्रभु ताहि सब, पढ़न हेतु तब जाहिं ॥१३॥

चले स्नान हित प्रभु गंगा तट। माता सों माँग्यो साहित झट ॥
गंगा स्नान करन प्रभु चले। माता सन तैलादिक माँगे ॥
माला चन्दन देहु मोहिं सब। हम श्रद्धा सों गंगा पूजब ॥
माता हँसि बोली सुनु लाला। ठहरहु हम लै आवत माला ॥
लै आवत सुनि प्रभु अति कोपे। क्रुद्ध होइ माता सन बोले ॥
अबही तुम माला कों जैहौ। हाट जाइ तुम सो लै गेहौ ॥
अस कहि प्रभु घर भीतर गए। गंगा जल घट सन्मुख पाए ॥
छिन महँ भाजन सगरे फोरे। लवण तेल घृत बासन तोरे ॥
जिन बरतन कछु धर्‌यो सजाई। डंडा लै फोड़े सब जाई ॥
गृह महँ कलसी एक न राखी। इच्छामय छोड़े सब पाँखी ॥
दूध दही घृत अन्न अरु पानी। घर महँ सब छीद्यो मन मानी ॥

छींका सारे तोरि कै, टूक टूक प्रभु कीन।
वस्त्र सकल दोउ हाथ सों, फाड़ि फाड़ि तजि दीन ॥१४॥

जब तोड़न को कछु नहिं पावा। तब प्रभु गृह महँ हाथ लगावा ॥
घर अरु द्वार तोड़ि सब दीना। वृक्षन तोड़न तब मन कीना ॥
डंडा पीटहिं तिन पर जाई। तदपि न प्रभु कर क्रोध समाई ॥
पृथ्वी पर डंडा पुनि पटकहिं। आड़ खड़ी माता सब निरखहिं ॥
धर्मसेतु प्रभु धर्मपरायन। माता सों कछु बोलत नाहिंन।
जननी पर नहिं हाथ उठाए। सकल तोड़ि आँगन महँ आए ॥
आँगन महँ प्रभु लोटन लागे। कनक अंग माटी महँ पागे ॥
धूलि भरे सब अंग सुहाए। स्थिर होइ शयन कीन्ह सचु पाए ॥
प्रभु निज माया सबहिं दिखावा। माता निरखि दुःख अति पावा ॥
शेष फनन पर शयन जे करहीं। लक्ष्मी नित सेवा महँ रहहीं ॥

६

चारि वेद नहिं खोजि सक, पार न पायो कोइ।
शची मातु के आँगने, सोवत हैं प्रभु सोइ ॥१५॥

जाके रोम रोम में राजै। कोटि कोटि ब्रह्मांड बिराजै ॥
सृष्टि प्रलय इच्छा सों होई। ब्रह्मा शिव गावत यश जोई ॥
शची मातु के आँगन माहीं। सोवत है सब लखि पछिताहीं ॥
शची मातु तब गृह महँ जाई। पूजा हित सामग्री लाई ॥
पुत्र निकट माता पुनि जाई। अङ्ग सकल झारत हर्षाई ॥
निज कर पकरि पुत्र बैठावा। स्नान करन हित गंग पठावा ॥
सकल वस्तु लै गङ्गा पूजहु। मन वांछित फल तुम सब पावहु ॥
भलो कियो सब तोरि बहायो। तोर बलाय लेइ सब गयो ॥
मातु बचन सुनि अति सकुचाने। चले स्नान हित मन मुरझाने ॥
शची मातु गृह स्वच्छ करावा। पूजा हित तब भोग बनावा ॥

जदपि हानि बहु करत प्रभु, माता दुख नहिं पाय।
कृष्ण चपलता जिमि सह्यो, सकल यशोमति माय ॥१६॥

यहि प्रकार चञ्चलता करहीं। माता निरखि मोद मन भरहीं ॥
बहुत बाल लीला प्रभु कीनी। अनुचित उचित मातु सहि लीनो ॥
शची मातु वसुधा को नाईं। मन वच कर्म सहत हर्षाई ॥
क्रीड़ा मय प्रभु गंग नहाई। आए घर संतन सुखदाई ॥
विष्णु पूजि जल तुलसि चढ़ावा। हर्षित तव प्रभु भोग लगावा ॥
पान देइ माता इमि कहेऊ। तात हानि काहे तुम करेऊ ॥
घर अरु द्वार सकल तव अहहीं। हानि तुम्हारि भई का कहहीं ॥
अबहीं पढ़न तात तुम जैहो। घर महँ कछु नहिं कल का खैहो ॥
मातु बचन सुनि प्रभु मुसुकाने। पै मन ही महँ अति सकुचाने ॥
कृष्ण जगत के पालनहारा। सोइ हम सब कहँ करिहैं पारा ॥

अस कहि पुस्तक लेइकै, गए पढ़न द्विजराज।
मायापति गुरु सन पढ़त, लोक सिखावन काज ॥१७॥

विद्या पढ़ि प्रभु गंग सिधारे। कछु क्षण रहि गृह माँझ पधारे।
माता कहँ प्रभु निकट बोलायो। दुइ तोला सोना दिखरायो ॥
दियो मातु कहँ गुप्त भाव सों। बोले तब अति नम्र भाव सो ॥
देखहु मातु कृष्ण यह दीन्हा। काज करहु तुम जो चह कीन्हा ॥
अस कहि शयन कीन्ह प्रभु जाई। माता सोचहि अति मन लाई ॥
स्वर्ण कहाँ से सुत मम पावै। बार बार मो कहँ दै जावै ॥
कछुक दुःख पाछे नहिं होई। रक्षा करहु कृष्ण प्रभु सोई ॥
जब जब अर्थ कष्ट गृह जानै। तब तब आनि देइ सुख मानै ॥
लेत उधार काहु सन जाई। जानत सिद्धि यहौ मन आई ॥
कौन रूप केहि भाँति कहाँ सों। सोना लै आवत केहि विधि सों ॥

यहै विचार करत मन, माता सरल सुभाय।
निज जन ताहि दिखायकैं, ताहि भुजावत माय ॥१८॥

सर्व सिद्धिदाता प्रभु जोई। गुप्त भाव नगरी रह सोई॥
छाँड़त कबहुँ न पुस्तक कर सों। विद्यार्थिन सँग पढ़ै सदा सों॥
मदन समान रूप मन मोहै। उर्ध तिलक मस्तक पर सोहै॥
घुँघराली अलकैं अति सुन्दर। ब्रह्म तेज राजत श्री मुख पर॥
गले जनेऊ अति ही सोहत। मुख प्रसन्न भक्तन मन मोहत॥
त्रिकच्छ वसन अति शोभा पावत। कमल नयन दोउ चित्त चोरावत॥
सुन्दरता नहिं वर्णन योगू। एक टक देखन हैं सब लोगू॥
"यह कोउ देव पुरुष लखि परहीं। धन्य धन्य" अस सब जन कहहीं॥
अति अद्भुत व्याख्या प्रभु करहीं। अति प्रसन्न गुरु इन सन रहहीं॥
सब शिष्यन महँ बड़ो बनायो। करि प्रधान इन कहँ बैठायो॥

गुरु कह्यो तुम ध्यान दै, पाठ पढ़हु मन लाय।
भट्टाचार्य होहुगे, कहौं तुम्हैं समुझाय ॥१६॥

कह्यो प्रभू तबहीं गुरु पाहीं। यह कोउ बड़ी बात है नाहीं॥
आशीर्वाद देव तुम जेही। आचारज पद पाउब तेही॥
विद्यार्थिन सन प्रश्न जो करहीं। काहू सन उत्तर नहिं बनहीं॥
पुनि उत्तर प्रभु निज कहि देहीं। पुनि ताही कर खंडन करहीं॥
यदि कोऊ उत्तर नहिं देहीं। प्रभु पुनि दोष निवारण करही॥
स्नान, भ्रमण, भोजन सब काला। विद्या रस महँ मत्त कृपाला॥
समय दोष सों दीनदयाला। नाम प्रचार न करहिं गोपाला॥
भक्ति शून्य भा सब संसारा। चलहिं कुपंथ न करहिं विचारा॥
नाना उत्सव महँ हर्षाई। धन अपार सब देइँ लुटाई॥
देह गेह महँ रहैं भुलाई। मिथ्या सुख कर करैं बड़ाई॥

यहि सब लखि वैष्णव सकल, दुखित होहिं मन माहिं।
कृष्ण कृष्ण कहि सब कहहिं, कृपा करहु सब पाहिं ॥२०॥

सुन्दर देह पाइ सब लोगा। भजत कृष्ण नहिं मिटत न रोगा॥
बहुत काल ये सब दुख पैहैं। इन कहँ सुख कबहूँ नहिं मिलिहै॥
नर सरीर जेहिं देवहु चाहत। सोइ शरीर लहि व्यर्थ गँवावत॥
कृष्ण महोत्सव कछु नहिं गनहीं। व्याह आदि में व्यय करि मरहीं॥
तुमरे ही सब जीव कृपाला। रक्षा करु प्रभु दीनदयाला॥
कहा कहहुँ प्रभु तुम सब जानहु। जगत पिता तुमही जग रक्षहु॥
भक्त जगत कर कुशल मनावहिं। कृष्ण कृष्ण रटि ध्यान लगावहिं॥
विद्याचर्चा महँ प्रभु रहहीं। नित्यानन्द चरित अब कहहीं॥
प्रथमहिं प्रभु आज्ञा उर धारी। जन्मे श्री निताइ सुखकारी॥
राढ़ माँझ एकचाका ग्रामहिं। नदी मोडेश्वर के तट पासहिं॥

निताई

हाडाई पण्डित प्रवर, पिता सकल गुणखान।
माता शील दयानिधि, पद्मावति जग जान ॥२१॥

शिशुपनही ते अतिगुण खाना। कोटि काम सम रूपनिधाना ॥
राढ देश महँ मंगल छावा। दुर्भिक्षादिक दोष नसावा ॥
नवद्वीप महँ गौर उदारा। प्रगटे जबहिं हरन महिभारा ॥
नित्यानन्द कीन्ह हुंकारा। व्यापेउ शब्द सकल संसारा ॥
सकल भुवन मूर्छागत भयऊ। वज्राघात सकल जन कहेऊ ॥
कहत सबै कोउ बड़ उत्पाता। भेद न पावत है कोउ बाता ॥
एक कहै हम सब कुछ चीन्हा। मोडेश्वर प्रभु गर्जन कीन्हा ॥
मति अनुरूप कहैं सब बाता। पहिचाने नहिं कोउ जनत्राता ॥
गुप्त रूप सों रहत निताई। लरिकन सँग खेलहिं हर्षाई ॥
हरि चरित्र करि तिन सँग खेलहिं। व्रज लीला सब तिनहिं सिखावहिं ॥

देव सभा सब शिशु करत, पृथ्वी बनि कोउ आय।
सुनत निवेदन सबहि मिलि, नदी तीर पर जाय ॥२२॥

हाथ उठाइ सबहि स्तुति करहीं। गुप्त भाव कोउ बालक कहहीं ॥
"जन्मे हम मथुरा महँ भाई।" ऊँचे कहि सो बोल सुनाई ॥
रात्रि समय सब शिशु मिलि जाई। श्री वसुदेव बने कोउ आई ॥
श्री देवकी बनि कै कोउ आवै। सब मिलि गाइ विवाह करावैं ॥
अर्ध रात्रि बन्दी घर माँही। कृष्ण जन्म करि अति हर्षाही ॥
गोकुल महँ कृष्णहिं रखि आवत। देविहि आनि कंस भरमावत ॥
कोउ पूतना रूप धरि आवै। ताहिं उपर चढ़ि कोउ थन पीवै ॥
कोउ दिन नरकट वन महँ जाई। शकट बनाइ तोरत लुड़काई ॥
ग्वालन के घर कोउ दिन जाई। करैं चोरि कोउ जान न पाई ॥
इनहिं छाँडि शिशु घर नहिं देखहिं। श्री निताइ सँग निसिदिन खेलहिं ॥
मात पिता सब कछु नहिं बोलैं। अति आदर कोरा लै डोलैं ॥

सबहि कहत अस खेल हम, देख्यो कबहूँ नाहिं।
कृष्ण चरित जान्यो किते, अति अचरज मनमाँहि ॥२३॥

पत्तिन कर एक नाग बनाई। नदी तीर सब शिशुगण जाई।
कूदि परैं जल होहि अचेता। जाइ कोऊ पुनि करै सचेता ॥
कोउ दिन शिशु सँग बन महँ जाहीं। राक्षस मारि ताल सब खाहीं ॥
वनहिं जाइ लीला बहु करहीं। बक, अघ, वत्स असुर सब हतहीं ॥
साँझ समय सब बन सों आवत। शिंगा वेणू आदि बजावत ॥
वृन्दावन कोउ दिन प्रभु रचहीं। गोवर्धन लीला प्रभु करहीं ॥
कोउ दिन गोपी बसन चुरावहिं। रिषिपत्नी ढिग कोउ दिन गमनहिं ॥
नारद बनि कोउ मथुरा जावै। कंसराज कों मन्त्र बतावै ॥
अक्रूरहिं कर वेश बनाई। मथुरा लै जावैं दोउ भाई ॥
गोपी बनि कोउ रोदन ठानै। लीला लखि सब अचरज मानै ॥

प्रभु माया मोहित सबै, समुझत है कोउ नाहिं।
श्री निताइ संग बाल सब, बिहरत हैं वन माहिं ॥२४॥

मथुरा रचि बिहरत सुख पावैं। माली बनि माला पहिरावैं॥
कुब्जा बनि कोउ गंध लगावैं। कुवलय बध लखि सब सुख पावैं॥
धनुष बनाइ ताहि कोउ तोरै। चाणुर मुष्टिक मल्ल सँहारै॥
कंस बनाइ धरत हैं केशा। ताहि पटकि मारत सुर ईशा॥
कंस मारि सब हर्ष मनावैं। निरखि लोग सब अति सुख पावैं॥
यहि बिधि प्रभु अवतार अनेका। सब अनुकरण करत सविवेका॥
श्री निताइ धरि वामन वेशा। बलि बनाइ तहँगे जगदीशा॥
छल करि तासु राज हरि लेहीं। बनि कोउ गुरू निवारण करहीं॥
दान लेइ तेहि शिर पर चढ़े। दीन वचन तेहि प्रभु सन कहे॥
कोउ दिन सेतु बन्ध की लीला। रच्यो निताई अति प्रिय शीला॥

शिशु सब बानर रूप धरि, रेंड काटि एक साथ।
डारैं सब जल भीतरहिं, बोलहिं जै रघुनाथ ॥२५॥

लक्ष्मण रूप निताई धरे। धनु धरि सुग्रीवहि पहँ चले॥
कुपित होइ प्रभु वचन सुनावा। रे शठ, मोर प्रभू दुख पावा॥
आवहु तुरत नाहिं तोहि हनिहौं। गिरि पर बसि कब लौं दुख सहिहौं॥
नारी गण सँग तुम सुख करहू। रे बानर, तुम मोहिं न गिनहू॥
कोउ दिन परशुराम सों कहहीं। मोर दोष कछुहू नहिं अहहीं॥
भाग जाहु द्विज तुरत यहाँ सों। क्रुद्ध होइ प्रभु कह्यो ताहिं सों॥
लक्ष्मण भाव होत सोइ रूपा। शुद्ध सत्वमय शान्त सरूपा॥
बानर कर धारैं कोउ वेशा। पूछहिं तिन सन प्रभु अहि ईशा॥
तुम बानर वन महँ का फिरहू। हम रघुनाथ भृत्य मोहिं कहहू॥
रहत इहाँ हम बालि के त्रासा। दरस करावहु प्रभु जगदीसा॥

गोद उठाइ लीन्ह सब, आए जहँ श्री राम।
चरण बंदि विनती करत, भे सब पूरण काम ॥२६॥

मेघनाद वध कोउ दिन करहीं। तेहि सन आप पराजित होहीं॥
धरैं विभीषण को प्रभु वेशा। राम निकट आवहिं प्रभु शेशा॥
लंकेश्वर कहि आदर करहीं। माथे तिलक काढ़ि प्रभु देहीं॥
कोउ शिशु कह आये हम रावण। मारत शक्ति सँभारहु लक्ष्मण॥
अस कहि पद्म पुष्प तेहि मारेउ। लछिमन भाव मुरछि प्रभु गिरेउ॥
मूर्छा लखि सब अति भय पायो। जागत नहिं बहुभाँति जगायो॥
रोदन करन लगे सब तबहीं। आए मातु पिता सब तहहीं॥
धातु हीन लखि पितु अरु माता। मुरछि गिरे अति कम्पित गाता॥
देखि लोग सब विस्मित भये। समाचार सब लरिकन कहे॥
कहत कोऊ हमहू अस सुने। दशरथ भाव प्राण कोउ दये॥

पूर्व समय महँ एक नट, वन प्रयाण के काल।
तज्यो देह पितु भाव महँ, छाँड़ि सकल जंजाल ॥२७॥

कोउ कहै बालक सन जाई। हनूमान बनि जावहु भाई ॥
औषध आनि देहु तुम अबहीं। स्वस्थ होब बालक हम कहहीं ॥
प्रथमहि प्रभु तिन सन कहि राखेउ। गिरत हमहिं तुम सब मिलि रोयेउ ॥
पुनि हनुमानहिं सकल पठाउब। औषध नाक देत हम जागब ॥
मूर्छित लखि सब रोअन लागे। भूलि गये सब दुख महँ पागे ॥
"उठहु भाइ" कहि केवल बोलहिं। हा हा कहि सब शिशु गण रोवहिं ॥
लोगन सन सुनि सब सुधि आई। बनि हनुमान चल्यो शिशु धाई ॥
तपसी बनि कोउ मग महँ जाई। हनूमान सों कहै बुझाई ॥
धन्य करहु आश्रमहि पधारहु। तब सतसंग परम सुख पावहुँ ॥
कह हनुमान काज बड़ अहई। हम विश्राम करन नहिं चहई ॥

रावण शक्ती शैल सों, लछिमन मूर्छित आज।
गँधमादन पर जात हौं, औषध लैवे काज ॥२८॥

तपसी कहै स्नान करि आवहु। कछु फल खाइ तुरत तुम जावहु ॥
श्री निताइ सब बात सिखावा। सुनत लोग सब अचरज पावा ॥
स्नान करन सर कपिपति गयऊ। चरन एक शिशु तहँ गहि रहेऊ ॥
ताहि मारि कपि बाहर आवा। दूसर निश्चर बचन सुनावा ॥
खाहुँ तुमहि तुम अब कहँ जैहौ। कैसे तुम लछिमनहि बचैहौ ॥
कह कपि तव रावन मतिहीना। तुम अति कुटिल पाप लवलीना ॥
अस कहि भिरे युगल दोउ बीरा। छण महँ मारेउ कपि रणधीरा ॥
गँधमादन पर्वत पर गयऊ। गंधर्वन कहँ मारत भयऊ ॥
पुनि पर्वत शिर पर धरि वीरा। आयो तुरत जहाँ रघुबीरा ॥
वैद्य रूप धरि एक कुमारा। राम सुमिरि कीन्हेउ उपचारा ॥

श्री निताइ तुरतहिं उठे, हर्षित भे सब कोउ।
पिता गोद महं लेइकै, चूमत है मुख दोउ ॥२६॥

श्री निताइ सन पूछहिं बाता। सीख्यो कहा कहहु तुम ताता ॥
हरि चरित्र सब अति गुण शीला। हँसि प्रभु कहै 'मोर यह लीला ॥
प्रथम वयस प्रभु अति सुकुमारा। गोद लेइ सब करहिं दुलारा ॥
निज सुत तें अति प्रभु कहँ चाहत। हरि माया वश नहिं पहिचानत ॥
बालपनहि ते नित्यानन्दा। कृष्ण चरित करि लेत अनन्दा ॥
सब शिशु गण निज गृह नहिं जाहीं। श्री निताइ सँग रहत सदाहीं ॥
शिशुगण पग बंदन हम करहीं। श्री निताइ सँग जे सब रहहीं ॥
श्री निताइ लीलहिं मन राखैं। कृष्ण चरित बिन और न भाखैं ॥
प्रभु लीला को वरणै पारा। हरि चरित्र अति अगम अपारा ॥
प्रभु की कृपा चरित उर आवा। लिख्यो यथातथ चरित सुहावा ॥

यहि विधि द्वादश वर्ष प्रभु, गृह रहि लीला कीन ।
तीर्थाटन कहँ पुनि चले, गौर-चरण लव लीन ॥३०॥

बीस वर्ष यात्रा प्रभु कीन्हा। गौर-चरण आश्रय तब लीन्हा ॥
श्री निताइ यात्रा सब सुनौ। आदि खण्ड महँ वर्णन करौं ॥
प्रभु की निन्दा जे जन करहीं। रौरव नरक सदा पचि मरहीं ॥
सर्व जगत प्रभु किय उद्धारा। करुणासागर परम उदारा ॥
श्री चैतन्य तत्व प्रभु कहेऊ। गौर सुयश सब जगहिं जनायेउ ॥
श्री चैतन्य परम प्रिय भ्राता। सुनहु तीर्थ यात्रा कर बाता ॥
प्रथम तीर्थ वक्रेश्वर गये। वैद्यनाथ पुनि दर्शन किए ॥
गया होइ काशी प्रभु आए। गंगा न्हाइ परम सुख पाए ॥
श्री प्रयाग भरि मकर नहाई। मथुरा गए परम हर्षाई ॥
लीला स्थल प्रभु अति मनभावा। श्री विश्राम घाट पर न्हावा ॥

गोवर्धन महँ भ्रमण करि, आए श्री व्रज धाम ।
द्वादश वन डोलत फिरे, गावत हरि गुण ग्राम ॥३१॥

गोकुल जाइ नन्द गृह गये। बहु प्रकार प्रभु रोदन किये ॥
मदनगोपाल को दर्शन किये। पाण्डवपुरो तबहिं प्रभु गये ॥
भक्त स्थान लखि रोदन कीन्हा। मायावश नहिं कोउ प्रभु चीन्हा ॥
राम कीर्ति तहँ प्रभु तब देखे। हस्तीनगर अतिहि मन भाये ॥
"त्राहिं हली" कहि करहिं प्रणामा। आए पुनि श्रीहरि के धामा।[१] ॥
स्नान कीन्ह सागर महँ जाई। कपिल स्थान पुनिगे हर्षाई ॥
मत्स्यतीर्थ उत्सव महँ गये। अन्नदान करि अति सुख लहे ॥
विष्णु काञ्ची कीन्ह पयाना। शिवकाञ्ची लखि अति सुखमाना ॥
कुरुक्षेत्र अरु विन्दुसरोवर। पुनि प्रभास पहुँचे सुतीर्थ वर ॥
त्रीतकूप सों गए विशाला। ब्रह्मतीर्थ अरु चक्र रसाला ॥

पुनि प्रतिस्रोता तीर्थ करि, आए नैमिष धाम ।
गए अयोध्या पुरी तब, जहँ प्रगटे श्री राम ॥३२॥

जन्मभूमि लखि अति सुखपावा। परमानन्द नयन जल छावा ॥
शृंगवेरपुर पुनि प्रभु गयऊ। गुहहिं स्मरण करि मूर्छित भयऊ ॥
प्रेम मगन प्रभु कछु नहिं जाना। तीन दिना तहँ रहे सुजाना ॥
जेहि जेहि वनहि रहे प्रभु रामा। गए निताई प्रभु सोइ धामा ॥
करहिं विलाप सुमिरि श्री रामा। सरयू न्हाई चले सुखधामा ॥
तीर गण्डकी तब प्रभु आए। सोन गोमती जाइ नहाए ॥
तब महेन्द्र गिरि ऊपर गयऊ। परशुराम कर अर्चन करेऊ ॥
हरद्वार महँ पुनि प्रभु आए। पम्पा भीमरथी महँ न्हाए ॥
सप्त गोदावरि वेन्वा न्हाये। व्यास नहान कार्तिकहिं भाये ॥
श्री पर्वत पर तब चलि गये। शिव गौरी कर दर्शन भये ॥

(१) द्वारिका पुरी ।

शिवगौरी यहि शैलपर, धरि ब्राह्मण को वेश।
रहत दोउ यहि तीर्थ महँ, मेटत जन के क्लेश ॥३३॥

श्री निताइ कहँ तुरतहिं चीह्ना। इष्टदेव कर आदर कीन्हा ॥
अतिथी लखि मन अति सुख पावा। देवी बहु विधि पाक बनावा ॥
बहु आदर करि प्रभुहिं जिवावा। श्री निताइ दोउ कहँ शिरनावा ॥
करि सतसंग तहाँ ते चले। द्रविड़ देश महँ तव प्रभु गये ॥
वेंकट प्रभु कर दर्शन कीना। काञ्ची महँ भक्तन सुखदीना ॥
रङ्गनाथ महँ तव प्रभु गयऊ। तहँ तें हरिक्षेत्र प्रभु आयेउ ॥
ऋषभ शैल पर तव प्रभु आए। दक्षिण मथुरा आइ नहाए ॥
कृतमाला बहु नदी सुहाई। स्नान कीन्ह प्रभु अति मनभाई ॥
ऋषि अगस्त्य के आश्रम आए। देखि महामुनि अति सुखपाए ॥
बहुत भाँति तव पूजा कीन्हीं। मन वाञ्छित आशिष सब लीन्हीं ॥

बद्री आश्रम कहँ चले, गावत हरिगुण ग्राम।
निरजन वन महँ कछुक दिन, बास कीन्ह तेहि ठाम ॥३४॥

व्यास भवन पुनि आइ पधारे। व्यास प्रगट होइ वचन उचारे ॥
कुशल प्रश्न करि बहु सनमाना। श्री निताइ अतिसै सुखमाना ॥
बौद्ध भवन पुनि गए गोसाईं। देखेउ बौद्ध बहुत तेहि ठाईं ॥
प्रभु पूछैं कोउ उतर न देई। क्रुद्ध होइ मारेउ प्रभु तेई ॥
भागे बौद्ध सकल भय मानी। निर्भय वनहिं भ्रमत सुखमानी ॥
प्रभु कन्या कुमारि तव गयऊ। सागर न्हाई परम सुख लहेऊ ॥
श्री अनन्तपुर प्रभु तव आए। पञ्च अप्सरा जाइ नहाए ॥
शिव पूजेउ गोकर्णहिं जाई। केरल महँ घूमे हर्षाई ॥
श्री निताइ द्वैपायनी आए। तापि पयोष्णी लखि सुख पाए ॥
रेवा महिष्मती प्रभु गए। हेरि सुपार्क प्रतीची आए ॥

यहि विधि नित्यानन्द प्रभु, कृष्ण भक्ति रस कूप।
भ्रमण करत तीरथ सकल, परमानंद स्वरूप ॥३५॥

क्षणहि हँसहिं रोवहिं क्षण माँही। प्रेम मगन मन कछु सुधि नाहीं ॥
भ्रमण करत यहि विधि चलि जाहीं। माधवपुरी मिले मग माँहीं ॥
परम प्रेममय पुरी कलेवर। प्रेम स्वरूप संग सब अनुचर ॥
कृष्ण कथा बिन और न जानहिं। पुरी हृदय श्री कृष्ण विराजहिं ॥
करहुँ कवन विधि तासु बड़ाई। शिष्य जासु अद्वैत गोसाईं ॥
देखत ही प्रभु पुरी गोसाईं। प्रेम मगन मूर्छा तव आई ॥
पुरी निरखि श्री नित्यानन्दा। मूर्छित भे अति प्रेम अनन्दा ॥

"भक्ति रस आदि माधवेन्द्र सूत्रधार।
गौरचन्द्र निज मुख कह्यो बार-बार ॥"

मूर्छित भे दोउ प्रेम अधीरा। शिष्य सकल उर धरत न धीरा ॥
ईश्वर पुरी आदि सब रोवहिं। हरि-हरि कहि सब प्रभु कहँ सुमिरहिं ॥
होइ सचेत लीन्ह उर लाई। प्रेम विकल कछु कहि नहिं जाई ॥

नयनन सों जल बहि चल्यो, भए मगन दोउ बीर ।
प्रेम नीर सींचत भए, पुलकित सकल शरीर ॥३६॥

पायो सकल तीर्थ फल आजू । कहेउ निताई सहित हुलासू ॥
माधव चरण दरश हम पावा । प्रेम निरखि निज हृदय जुड़ावा ॥
पुरी लीन्ह पुनि हृदय लगाई । कंठ रुद्ध कछु कहि नहिं जाई ॥
बार बार प्रभु हृदय लगावहिं । निरखि शिष्य सब अति सुख पावहिं ॥
ईश्वर पुरी शिष्य बड़ अहही । ब्रह्मानन्द आदि सब जनही ॥
प्रभु कहँ अति श्रद्धा सों देखहिं । आपन जन्म सफल करि लेखहिं ॥
लोक बहिर्मुख लखि दुःख पावहिं । कृष्ण प्रेम कतहूँ नहिं देखहिं ॥
दुष्ट संग कोउ सहि नहिं सकहीं । याहीं तें बन ही बन भ्रमहीं ॥
प्रभुहिं निरखि सब दुःख मिटाना । सब मिलि करत कृष्ण गुणगाना ॥
कछु दिन रहे दोउ एक संगा । परमानंद मगन सतसंगा ॥

अति अद्‌भुत माधव कथा, बरनि सकै नहिं कोइ ।
मेघ निरखि मूर्छित गिरें, प्रेम मगन अति होइ ॥३७॥

मद्यप सम नित करि व्यवहारा । नाचहिं गावहिं विविध प्रकारा ॥
गोविंद रस महँ मत्त निताई । पृथ्वी पर लोटहिं हर्षाई ॥
शिष्य सकल लखिकै सुख लहहीं । हरि हरि कहि सब कीर्तन करहीं ॥
रात दिना कोउ कछु नहिं जानहिं । प्रेमानंद मगन हरि ध्यानहिं ॥
कृष्ण कथा महँ दिन चलि जाहीं । संग छाँड़ि कोउ अनत न जाहीं ॥
पुरी कहत प्रभु सुनु मन लाई । कृष्ण प्रेम देखेहु नहिं भाई ॥
जहाँ प्रेम सोइ तीर्थ सुहावा । कृष्ण कृपा बिन नहिं कोउ पावा ॥
प्रभु अनुकूल मोहिं पर भयऊ । श्री निताइ दर्शन हम पायेउ ॥
जहाँ दरश मोहिं दीन्ह निताई । सो स्थल सर्व तीर्थ मय भाई ॥
नित्यानंद नाम जे सुनहीं । कृष्णचन्द्र पावत सो जनहीं ॥

श्री निताइ सों द्वेष जो, करै महा मतिहीन ।
कृष्ण तिन्हैं चाहैं नहीं, यद्यपि भक्त प्रवीन ॥३८॥

एहि बिधि पुरी कही बहु भाँती । कृष्ण कथा रत रह दिन राती ॥
श्री निताइ गुरुसम तेहिं मानहिं । और भाव कछु मन नहिं आनहिं ॥
कछुक दिना रहि प्रभु यहि रीती । सेतु बंध कहँ चले सप्रीती ॥
पुरी गए सरयू की ओरा । बिछुरत सबकर मति भइ भोरा ॥
चले जाहिं सब तन सुधि नाहीं । प्रेम पुलक हरि हरि कहि जाहीं ॥
प्रभु अरु पुरी मिलन जे सुनहीं । कृष्ण प्रेम पावत सो जनहीं ॥
यहि विधि प्रभू भ्रमण नित करहीं । सेतु बंध आए प्रभु तबहीं ॥
रामेश्वर देखेउ प्रभु जाई । विजय नगर आए हर्षाई ॥
मायापुरी अवन्ती आए । श्री नृसिंह लखि अति सुख पाए ॥
त्रिमल्ल देखि कूर्महि मन लाए । नीलाचल पुनि गे हर्षाए ॥

सो केवल स्तुति हित करत, नित्य सिद्ध सब कोइ।
तत्व प्रकाश करत सब, ज्ञानवंत सब सोइ ॥४२॥

कौतुक लागि प्रभू सन बोलहिं। आन-भाव कछु मन नहिं आनहिं ॥
तिनहिं देखि जे अटपट कहहीं। नरक यातना ते सब लहहीं ॥
नित्यानन्द चरण रति जिनहीं। गौर चरण रति पावत तुरतहिं ॥
कब हम देखब गौर निताई। संग सकल भक्तन सुखदाई ॥
सर्व भाव जे प्रभु कहँ भजहीं। गौर भजन हम तेहि सँग करहीं ॥
श्री भागवत पढ़ौं प्रभु पाहीं। जन्म-जन्म जाँचत मन माहीं ॥
जय जय श्री गौरांग सुहावा। दियेहु लियेहु प्रभु जो मनभावा ॥
कृपा करहु प्रभु दीनदयाला। चरन युगल प्रभु भजहुँ कृपाला ॥
तुमरे परम भक्त प्रभु अहहीं। तुमहिं देहु पावत सो जनहीं ॥
वृन्दावन महँ प्रभु नित भ्रमहीं। यावत गौर उदय नहिं होहीं ॥

सुनहिं तीर्थ लीला विमल, प्रभु की जे मतिमान।
प्रेम भक्ति पावत सोई, गावत प्रभु गुण गान ॥४३॥
श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
वृन्दावन दास कर कछु पद युगे गान ॥

॥ इति श्री आदि खण्डे महाप्रभो रूपनयन--पाठभ्यासादि-वर्णनं तथा श्री नित्यानन्द तीर्थ यात्रादि कथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥

सप्तम अध्याय

जय जय गौर चन्द्र महामहेश्वर।
जय नित्यानन्द प्रिय नित्य कलेवर ॥
जय जय जगन्नाथ सुत विप्रराज।
जय जय तव यत श्री भक्त समाज ॥
जय जय कृपासिन्धु कमल लोचन।
कृपा करौ पावौं हौं युगल चरन ॥

श्री चैतन्य कथा अब सुनहू। विद्या चर्चा प्रभु की गुनहू ॥
नवद्वीप महँ गौर किशोरा। रात दिवस विद्यारस भोरा ॥
प्रात काल संध्या करि आवहिं। शिष्य सकल प्रभु जाइ पढ़ावहिं ॥
गंगादास सभा महँ आई। शिष्यन सँग बैठहिं प्रभु जाई ॥
सदा पक्ष उत्तर प्रभु करहीं। निज निज गण सँग सब तहँ बसहीं ॥
पोथी लै जे शिष्य सुजाना। प्रभु सँग पढ़हिं न करहिं बखाना ॥
व्यंग्य बचन प्रभु तिन सन कहहीं। शिष्य सकल सुनि अति सुख लहहीं ॥
प्रभु सँग श्री मुरारि नहिं पढ़हीं। पोथी लै मन ही मन गुनहीं ॥

ध्वजा देखि मूर्छित भए, श्री अवधूत निताइ ।
चतुर्व्यूह को दरश करि, आनँद उर न समाइ ॥३६॥

जगन्नाथ लखि मूर्छित भये। अति आनन्द नयन जल छये ॥
कम्प स्वेद पुलकाश्रु अपारा। पुनि पुनि गिरत करत हुंकारा ॥
विविध भाँति जगदीश रिझाए। यहि विधि कछु दिन पुरी बिताए ॥
गंगा सागर पुनि प्रभु आए। तीरथ सकल करत मन भाए ॥
प्रभु यात्रा को बरनै पारा। तिनकी कृपा कछुक विस्तारा ॥
यहि विधि भ्रमण करत सुरराया। मथुरा मंडल प्रभु मन भाया ॥
वृन्दावन महँ प्रभु किय बासा। कृष्ण भजत पूजत कलिनासा ॥
खान पान की कछु सुधि नाहीं। जाँचत नहिं प्रभु कोउ जन पाहीं ॥
आपुहिं देइँ दूध प्रभु लेहीं। निज शरीर की सुधि नहिं तेहीं ॥
नवद्वीप श्री गौर किशोरा। गुप्त भाव विचरत चितचोरा ॥

इहाँ निताइ विचार करि, मन महँ यहै दृढ़ाय ।
प्रभु प्रकाश जब करहिंगे, सेवा करिहौं जाय ॥४०॥

यह विचार करि प्रभु मन माँहीं। मथुरा तजि कहुँ अनत न जाहीं ॥
कालिन्दी जल मँह प्रभु विचरहिं। लरिकन संग प्रभू नित खेलहिं ॥
सर्व शक्ति यद्यपि प्रभु धारत। तद्यपि कृष्ण-भक्ति नहिं बाँटत ॥
कब श्री गौर करब परकासा। बैठे भक्त सकल तेहि आशा ॥
नाम प्रचार करब प्रभु जबहीं। प्रभु आज्ञा होइहि तब सबहीं ॥
बिनु आज्ञा कोउ करै न काजा। यामें कछुक दोष नहिं लाजा ॥
ब्रह्म शिव आदिक सब कोई। बिनु आज्ञा कछु करत न सोई ॥
करहिं कुतर्क दुष्ट सब आई। मरत वृथा पापी सब जाई ॥
निज नयनन देखत सब कोई। भक्ति प्रचार कीन्ह प्रभु सोई ॥
गौर चन्द्र कर प्रिय बड़भ्राता। भक्ति प्रचार कीन्ह जन त्राता ॥

आदिभक्त चैतन्य के, श्री निताइ मति मान ।
जिह्वा सों यश गौर को, करत सदा गुण गान ॥४१॥

श्री निताइ कहँ जे जन भजहीं। गौर भक्ति पावत ते सबहीं ॥
श्री निताइ जब करुणा करहीं। तिनकी कृपा भक्ति सब लहहीं ॥
गौर कृपाहिं निताई चरणा। होत प्रेम अस मुनि जन बरणा ॥
नित्यानन्द जानि जे लेहीं। कछु आपद व्यापत नहिं तेहीं ॥
भवसागर उतरन जो चहहू। नित्यानन्द चरण गहि रहहू ॥
प्रभु कहँ कह कोऊ बलरामा। कहैं कोउ श्री हरि प्रियधामा ॥
जाकर जोइ इच्छा सोइ कहहीं। यती तपस्वी ज्ञानी अहहीं ॥
प्रभु कहँ जेहि तेहि विधि सब भजहीं। तासु चरण मम हिरदय बसहीं ॥
एतेहु पर जे निन्दा करहीं। लाठी सों मारब हम तेहीं ॥
श्री चैतन्य भक्त यदि कोऊ। मन्द कहत प्रभु कहँ यदि सोऊ ॥

योग पट्ट प्रभु कस करि बाँधहिं। वीरासन सों तब तहँ बैठहिं॥
ऊर्ध्व तिलक चन्दन शिर सोहै। दशनावलि भक्तन मन मोहै॥

मदनहु मन मोहित करैं, सुन्दर गौर किशोर।
तेज पुञ्ज लावण्य निधि, चहुँदिशि करत अँजोर॥१॥

सुरगुरु सम पाण्डित्य प्रकाशहिं। जे न पढ़हिं ताही सन बाजहिं॥
प्रभू कहहिं अस को जग माहीं। मम वाक्यहिं जो मानत नाहीं॥
संधि योजना जे नहिं जानहिं। स्वयं पढ़हि, निज मन अनुमानहिं॥
अहंकार करि मूरख बनहीं। जो जानत तेहि सन नहिं पढ़हीं॥
सुनहिं मुरारि वचन प्रभु केरे। पढ़ैं आपु आवैं नहिं नेरे॥
तद्यपि प्रभु तिन सँग नित बाजहिं। सेवक लखि बहु सुख द्विजराजहिं॥
श्री मुरारि सन तब प्रभु कहेहू। वैद्य होइ तुम यह का पढ़हू॥
लतापता लै, रोगी देखहु। कफ पित आदिक जाइ परेखहु॥
कठिन व्याकरण सुनहु सुजाना। विषय शास्त्र यह तुम का जाना॥
निज मन सों तुम कछु नहिं बूझहु। गवनहु गृह रोगी कहँ देखहु॥

रुद्र अंश श्री पवन-सुत, सोइ मुरारि गुणखान।
गौर निरखि बोलत नहीं, तदपि कही मृदु बानि॥२॥

"बड़ पण्डित तुम नदिया माहीं। अति गर्वित बाजहु सब पाहीं।
प्रश्न सकल जो हमसों कीन्ह्यो। उत्तर सबकर हम तोहि दीन्ह्यो॥
तब किमि कहहु कि तुम का जानहु। ब्राह्मण ठाकुर सों का बोलहुँ"
प्रभू प्रश्न कीन्ह्यो तत्काला। उत्तर दीन्ह्यो परम रसाला॥
प्रभु खण्डन ता कर तब कीन्हा। श्री मुरारि तब उत्तर दीन्हा।
प्रभू-भृत्य कोउ जीत न सकहीं। प्रभु की कृपा भक्त जय लहहीं॥
श्री मुरारि व्याख्या अति सुन्दर। सुनि हर्ष श्री गौर पुरन्दर॥
निज कर तासु अंग पर राखेउ। परमानन्द मगन सो भयउ॥
तब मुरारि सोचहिं मन ही मन। प्राकृत पुरुष कबहुँ नहिं यह जन॥
एहि सम पण्डित नहिं जग माहीं। करि विचार देखेउँ मन माहीं॥

कर परसत मम अंग कहँ, कहा भयो यह हाल।
तन पुलकित हर्षित भयउ, मिट्यो सकल जंजाल॥३॥

इन सँग पढ़िबे महँ नहिं लाजा। परम सुबुद्धि सकल गुण साजा॥
करि परितोष कहत तब आई। "पढ़व तुमहिं सन सुनहु गोसाईं॥"
ठाकुर सेवक करि यह लीला। गंगा स्नान चले गुण शीला॥
स्नानान्तर प्रभु गृह पर आए। यहि विधि विद्यारस मन भाए॥
श्री मुकुन्द कर भाग्य अपारा। जेहि के गृह विद्या विस्तारा॥
तासु तनय प्रभु आप पढ़ावहिं। भक्ति सहित सो प्रभु कहँ मानहिं॥
चण्डी मंडप परम विशाला। चहुँदिशि शिष्य रहहिं सब काला॥
गोष्ठी करि सब शिष्य पढ़ावहिं। सकल शास्त्र कर तत्व बतावहिं॥

बहु प्रकार व्याख्या प्रभु करहीं। तेहि कर खंडन करि, अस कहहीं॥
संधि कार्थ हू जे नहिं जानैं। कलियुग महँ आचार्य कहावैं॥

मम प्रश्नहि को देय जो, उत्तर हम पहँ आय।
तब जानौं आचार्य सो, सुनो सबै मन लाय॥४॥

विद्या चर्चा करत सदा हीं। भक्तन हू पहिचानत नाहीं॥
बड़ो देखि प्रभु हर्षित माता। व्याह करन हित सोचहिं बाता॥
नवद्वीप महँ विप्र सुजाना। आचारज बल्लभ जग जाना॥
परम मनोहर तेहि एक कन्या। लक्ष्मी अति सुन्दर बहु धन्या॥
चिन्ता करत विप्र दिन-राती। वर खोजत तेहि लगि बहु भाँती॥
गंगा स्नान करन हित लागी। लक्ष्मी इक दिन गइ बड़ भागी।
दैव योग सों गौर कुमारा। स्नान करन हित आपु पधारा॥
निरखि प्रिया निज अति हर्षाने। लक्ष्मी हू निज पति पहिचाने॥
चरण वन्दना करि मन माहीं। गई भवन मन अति हर्षाहीं॥
बूझि सकै को प्रभु की लीला। अति अगम्य सुन्दर सुख शीला॥

वनमाली एक विप्रवर, शची देवि ढिग आय।
प्रनमि तासु युग पद कमल, बोल्यो अति हर्षाय॥५॥

"पुत्र विवाह योग्य तब भयऊ। कहौ कहा हमसों तुम चहऊ॥
आचारज एक विप्र सुजाना। वल्लभ नाम ताहि सब जाना॥
कन्या तासु सकल गुण खानी। योग्य पात्र यह हम जिय जानी"
शची मातु बोली हर्षाई। "पितृहीन बालक सुन भाई॥
जीवै पढ़ै लिखै सुत अबहीं। देखब सुनब काज तब हमहीं"॥
उत्तर सुनि कन अति दुख मानी। व्याह करब नहिं अस अनुमानी॥
चल्यो विप्र मारग महँ आई। मिले गौर प्रभु अति हर्षाई॥
पूछ्यो गौर "कहाँ सों आवहु"। विप्र वचन अति दीन सुनायहु॥
शची मातु पहँ गयेउँ गोसाईं। तव विवाह हित बात चलाई॥
कछु उत्तर सो मोहिं न दीन्हा। सुनि हँसि गौर गमन गृह कीन्हा॥

शची मातु सों कहेउ तब, हँसिकै प्रभु सुख दैन॥
वनमाली आचार्य सों, क्यों न कह्यो मृदु बैन॥६॥

पुत्र विचार समुझि मन भावा। बनमाली कहँ बोलि पठावा॥
शची मातु तब तेहि सन कहेहू। कालिह कहेउ सो अब फुर करहू॥
चरन धूलि माता कर लेई। बल्लभ भवन गयउ तब तेई॥
बहु आदर तेहि कर सो कीन्हा। बैठन हित तेहि आसन दीन्हा।
बनमाली कह सुनु प्रिय भ्राता। तव कन्या विवाह कर बाता॥
मिश्र पुरन्दर पुत्र विश्वम्भर। नदिया महँ पंडित सु विप्रवर॥
कन्या योग्य विप्र गुणखाना। व्याह करहु यदि तुव मन माना।
हर्षित होइ बल्लभ तब कहेऊ। "बड़े भाग्य सों अस वर मिलेऊ॥

कृष्ण प्रसन्न मोहिं पर भयऊ। हर गौरी कन्या वर दयऊ ॥
तबहिं मिलेउ मोहिं अस जामाता। करहु सफल तुम अब निज बाता ॥

एक बात मोहिं कहत अति, लज्जा लागत भाइ।
हम निर्धन कछु पास नहिं, तुमहिं कहौं समुझाइ ॥७॥

कन्या मात्र देब हम भाई। पंच हरीतकि* संग गोसाईं ॥
यह आज्ञा तुम आवहु माँगी। तब सब काज करहु बड़भागी" ॥
तुरत विप्र आए शचि पासा। कहेउ कथा सब परम हुलासा ॥
हर्षित होइ आज्ञा सो दीन्हा। अति प्रसन्न निज जन कहँ कीन्हा ॥
सब मिलि करन लगे उद्योगा। मिले आइ शुभ ग्रह तिथि योगा ॥
अधिवास कर शुभ दिन आवा। नृत्य गीत अरु बजत बधावा ॥
बेद पढ़हिं सब द्विज समुदाई। मध्य बिराजत गौर गोसाईं ॥
विष्णु पूजि सब अति अनुरागा। करि अधिवास रात सब जागा ॥
माला चन्दन बीड़ा दीन्हा। ब्राह्मण गण कर पूजा कीन्हा ॥
आचारज आए तेहिं काला। करि शुभ रीति गए तत्काला ॥

प्रातकाल उठि स्नान करि, देव पितर सन्मानि।
बैठे परिजन सहित प्रभु, अति प्रसन्न सुखमानि ॥८॥

गावहिं मङ्गल गीत सुबानी। नृत्य वाद्य सुनि सब हर्षानी ॥
इष्ट मित्र ब्राह्मण सब गुरुजन। स्त्रीगण आईं परम मुदित मन ॥
बीड़ा, सेंदुर फल सब दीन्हा। शची मातु आदर अति कीन्हा ॥
भयउ कोलाहल मन्दिर माँहीं। आपन पर कोउ जानत नाहीं ॥
देव सकल धरि मनुज शरीरा। प्रभु विवाह आए मति धीरा ॥
यहि विधि आचारज गृह माँहीं। मंगल रीति कीन्ह हर्षाई ॥
तब प्रभु शुभ क्षण कीन्ह पयाना। गोधूली बेला शुभ जाना ॥
आचारज गृह पहुँचे आई। हर्षित विप्र मिले सब धाई ॥
पाँव पखारि दीन्ह शुभ आसन। अलंकार पहिरायो तेहि छन ॥
लक्ष्मी कहँ आन्यो तत्काला। हरि हरि कहि बोलीं सब बाला ॥

सप्तबार तब गौर प्रभु, दीन्ह प्रदक्षिण जाइ।
हाथ जोड़ि अस्तुति करत, चरण बंदि हर्षाइ ॥९॥

पुष्पमाल तब दोउजन फेंकहिं। परम कौतुकी लखि सब हर्षहिं ॥
पुष्पमाल लक्ष्मी कर लीन्हा। प्रभुचरनन पर अर्पण कीन्हा ॥
यहि विधि आत्म समर्पण कीन्हा। हरि हरि कहि आशिष सब दीन्हा ॥
अति आनन्द मगन सब लोगा। मुख चन्द्रिका कीन्ह शुभ योगा ॥
प्रथम वयस प्रभु सब मनभाए। बाम भाग लक्ष्मी बैठाए ॥
सो शोभा को बरनै पारा। आनँद मगन सकल परिवारा ॥
कन्या दान करन तब आई। आचारज बैठे हर्षाई ॥
जेहि चरनन योगी जन ध्यावैं। ब्रह्मा शिव वाञ्छित फल पावैं ॥

---

* हर्रे

सोइ चरनन कहँ आज मिश्रवर। पूजत अति हर्षित सु विप्रवर॥
वस्त्रादिक माला पहिराई। कन्यादान दीन्ह सुखदाई॥

अति हर्षित होइ नारि सब, गावहिं मंगल गान।
कुल व्यवहारादिक सकल, कीन्ह सबै शुभ जान॥१०॥

सोइ राति प्रभु तहँ किय बासा। आनन्दित सब परम हुलासा॥
पर दिन प्रभु आए निज वासा। दोला चढ़ि सब कीन्ह सुपासा॥
देखन हित प्रभु सब जन धाए। निरखि प्रभू सब अति हर्षाए॥
अलंकार आदिक सब सोहैं। दंपति लखि सब कर मन मोहैं॥
धन्य-धन्य अस सब जन कहहीं। आनँद मगम मोद मन भरहीं॥
स्त्री गण परम प्रेममय बानी। कहन लगी सब अति सुख मानी॥
धन्य वधू अतिसय बड़भागी। सेवेहु हर-गौरी पति लागी॥
भक्ति सहित गौरी आराधेउ। बड़ भाग्य ऐसो पति पायेउ॥
कोउ कहत हमरे मन आई। हर-गौरी सम ये दोउ भाई॥
इन्द्र शची, रति मदन समाना। कोउ कहैं हम तो यह जाना॥

लक्ष्मी नारायण कहत, कोउ कहत सिय राम।
दोला चढ़ि गृह जात हैं, शोभा अति सुख धाम॥११॥

यहि विधि नारी गण सब बोलहिं। प्रभु हँसि कै चहुँदिशि शुभ निरखहिं॥
बहु बिधि वाद्य बजत मन भाए। संध्याकाल प्रभू गृह आए॥
शची मातु हर्षित उठि धाई। पुत्र बधू गृह भीतर ल्याई॥
विप्र बजनिया नर सब काहू। दीन्ह सबहिं उर अधिक उछाहू॥
प्रभु विवाह लीला जे सुनहीं। माया-सर्प ताहि नहिं ग्रसहीं॥
लक्ष्मी सहित गौर प्रभु राजत। ज्योतिर्मय प्रभु गृह अति सोहत॥
निरवधि शची मातु अस देखहिं। अद्भुत ज्योति सकल गृह पेखहिं॥
ज्योति की ओर देख नहिं सकहीं। पुत्र समीप ज्योति लखि डरहीं॥
पुनि देखहिं कतहूँ कछु नाहीं। पद्म गंध पावत क्षण माँहीं॥
अति विस्मित होइ चिन्तन करहीं। हम बूझेउ सब कारण अबहीं॥

यहि कन्या के देह महँ, कमला को है बास॥
ज्योतिरूप भासत सोई, कबहुँ कमल को बास॥१२॥

अब दरिद्रता घर महँ नाहीं। जब ते बधू दीख गृह माहीं॥
यहि के आवत ही गृह माँहीं। सकल वस्तु आवत मोहिं पाहीं॥
करति विचार शची यहि भाँती। समुझत हूँ कछु समझ न पाती॥
प्रभु इच्छा को जाननिहारा। कौन भाँति लीला विस्तारा॥
प्रभु करि कृपा जनावहिं जबहीं। जानै सकल लोग सोइ तबहीं।
वेद पुराण शास्त्र सब भाषत। जेहि पर कृपा करत सोइ जानत॥
गुप्त भाव यहि बिधि प्रभु गोरा। पढ़न पढ़ावन महँ मन भोरा॥
कोटि काम सम रूप मनोहर। अंग अंग सब बिधि अति सुन्दर॥

श्री कृष्णहिं देखब तुम सबही। हरि कीर्तन करिहैं सब तबहीं" ॥
श्री अद्वैत बचन सुनि काना। दुख बिसारि सबही सुख माना ॥
कृष्णनाम ध्वनि सब करहिं, प्रेम मगन मन होइ।
दुःख शोक सब बिसरिगे, अति हर्षित सब कोइ ॥१६॥

अध्ययनहिं महँ प्रभु सुख पावत। जननी सुत लखि मोद बढ़ावत ॥
गुप्त रूप धरि पुरी सोहाए। ताही समय पुरी महँ आए ॥
ईश्वर पुरी प्रेम रस माते। कृष्ण भक्त भक्तहिं प्रिय ताते ॥
गुप्त रूप कोउ चीन्ह न पाए। श्री अद्वैत सभा महँ आए ॥
आचारज पूजा लवलीना। पुरी निकट बैठे होइ दीना ॥
वैष्णव तेज छिपत नहिं कबहीं। पुनि पुनि प्रभु देखतहैं तिनहीं ॥
श्री अद्वैत कहेहु सुन ताता। कहहु कहाँ सो आवहु भ्राता ॥
वैष्णव संन्यासी सम लागहु। सुनिकै सो प्रिय बचन उचारेहु ॥
हम अति अधम दरश तव लागी। आयेउँ इहाँ सुनहु बड़भागी ॥
श्री मुकुन्द तब समय बिचारी। गायो कृष्ण चरित सुखकारी ॥
पुरी सुनत ही गीत कहँ, भे अति प्रेम अधीर।
नयनन सों तब बहि चल्यो, गंग धारसम नीर ॥२०॥

प्रेम बिबस भुवि लोटन लागे। श्री अद्वैत प्रेम रस पागे ॥
भुजभरि अंक लीन्ह उर लाई। प्रेम वारि दोउ जन अन्हवाई ॥
प्रेम बढ़त छिन-छिन महँ जाई। श्री मुकुन्द गावत हर्षाई ॥
प्रेम सहित सो पुनि पुनि गावैं। सब वैष्णव अतिसै सुख पावैं ॥
पाछें तें सब तिनकों चीन्हा। तासु प्रेम लखि अति सुख लीन्हा ॥
नदिया महँ चहूँदिशि सो फिरहीं। गुप्त रूप कोउ चीन्ह न सकहीं ॥
एक दिवस श्री गौर किशोरा। जात रहे निज घर की ओरा ॥
मारग महँ प्रभु इन कहँ देखेउ। भृत्य जानि प्रभु अति सुख पाएउ ॥
स्वयं प्रणाम पुरी कहँ कीन्हा। पुरी मगन निज प्रभु कहँ चीन्हा ॥
एकटक चितय रहे प्रभु ओरा। रूप अपार मदन मन चोरा ॥
परम मनोहर रूप अति, सुन्दर सब गुणखान।
सर्व विलक्षण तेज युत, मनहिं करत गुण गान ॥२१॥

प्रभुहिं निरखि मुनि हृदय जुड़ाना। पूछेउ सविनय अति सन्माना ॥
"कहहु कहा तव नाम विप्रवर। कहा पढ़ावहु, कहहु कहाँ घर ॥"
शिष्य प्रभू कर नाम बतावा। श्री निमाइ अस सुनि सुख पावा ॥
"तुमहि वही" कहि हर्षित भयऊ। ताहि निमंत्रण प्रभु तब दयऊ ॥
आदर करि गृह पर लै आए। चरण धोइ आसन बैठाए ॥
भोग लगाइ ताहि प्रभु दीन्हा। पुरीराज कर आदर कीन्हा ॥
कहन लगे सो कथा प्रसंगा। कृष्ण चरित दुर्लभ सतसंगा ॥
नयन नीर लखि प्रभु संतोषू। करहिं प्रकाश न मन परितोषू ॥

गोपीनाथ परम हर्षाई। निज घर राखेहु पुरी गोसाँई॥
भक्त सकल तेहि लखि सुख पावहिं। गौर नित्य तेहि के ढिग आवहिं॥

पुरी कछुक दिन तहँ रहे, भक्तन संग लुभाय।
कहत कथा अति हो सरस, सुनहिं भक्त सब आय॥२२॥

भक्त गदाधर अतिहि सुजाना। नयन नीर सुनि हरि गुण गाना॥
वैष्णव प्रीति करहिं तेहि लागी। जन्महिं ते विरक्त सब त्यागी॥
पुरी निरखि तेहि अति सुख पवहिं। लीलामृत निज काव्य पढ़ावहिं॥
कृष्ण चरित अति अगम अपारा। अतिहि सरल करि मुनि बिस्तारा॥
संध्या समय गौर प्रभु आए। निरखि तिन्हैं मुनि प्रेम बढ़ाए॥
पुरी कह्यो श्री कृष्ण चरित पर। काव्य एक हम लिख्यो विप्रवर॥
तासु दोष तुम मोहिं बतावहु। हम संतोष लहब तुम जानहु॥
प्रभू कह्यो भक्तन जो कहहीं। तेहि महँ दोष साधु नहिं लखहीं॥
जेहि तेहि विधि सो वर्णन करहीं। निश्चय कृष्ण मान तेहि देहीं॥
मूरख विष्णाय उच्चरहीं। पण्डित विष्णवे अस कहहीं*॥

प्रभु मानै दोऊन कहँ, दोष करत नहिं कान।
भक्त कथा कृष्णहिं सुखद, भाव गहन भगवान॥२३॥

परम प्रेममय कविता तोरी। दोष न कहि सक कछु मति मोरी॥
सुनत वचन मुनि अति सुख माना। पुनि हँसि कह सुनु कृपा निधाना॥
"दोष तुम्हार याहि महँ नाहीं। कहहु दोष पूछौं तोहि पाहीं॥"
एहि विधि प्रभु प्रतिदिन तेहि संगा। करहि विचार समुझि सतसंगा॥
सुनत एक दिन कविता तिनकी। बोले लगत धातु नहिं नीकी॥
आत्मनेपदी नहीं यह होई। चले भवन अस कहि मति भोई॥
पुरी परम पंडित सब ज्ञाता। करत विचार बैठि सब बाता॥
आत्मनेपदि करिके तेहि साध्यो। प्रभु आए तब तेहि सन कह्यो॥
"जाहि परस्मैपदि तुम कहेऊ। हम आत्मनेपदी तेहि साधेऊ"॥
प्रभु व्याख्या सुनि हर्षित भये। सेवक जयहित नहिं कछु कहे॥

सेवक सदा जितावहीं, प्रभु की ऐसी रीति।
ताही सों कछु कहेउ नहिं, भक्तन पर अति प्रीति॥२४॥

एहि बिधि कछुक दिवस मुनिराया। रहे गौर सँग अति मनभाया॥
एक स्थान मुनि कबहु न रहहीं। भक्ति प्रचार करत जग भ्रमहीं॥
चले भ्रमण हित पुरी गोसाईं। कथा पवित्र कहेउ हम गाई॥
पुरी कथा जो सुनै सुजाना। कृष्ण चरण रति उपजै ज्ञाना॥

---

* मूर्खो वदति विष्णाय धीरो वदति विष्णवे।
उभयोस्तु समं पुण्यं भावग्राही जनार्दनः॥

अर्थ—श्री विष्णु को प्रणाम करते समय मूर्ख लोग विष्णाय नमः कहते हैं और पंडित लोग विष्णवे नमः कहते हैं। किन्तु दोनों को समान पुण्य होता है कारण कि भगवान भावग्राही हैं।

माधव पुरो प्रेम रस सागर। ईश्वर पुरिहीं दीन्ह करि आदर॥
सकल प्रेम माधव तेहि दयऊ। गुरु प्रसाद लहि हर्षित भयऊ॥
ईश्वर पुरी भ्रमहिं जगमाहीं। बाँटत फिरत प्रेम सब 'पाहीं'॥

श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द जान।
वृन्दावनदास किय कछु पद-गान॥

॥ श्री चैतन्य भागवते आदि खंडे ईश्वरपुरी मिलनं नाम सप्तमोध्यायः वृजभूषणदास द्वारा भाषामँह अनुवाद समाप्त॥

अष्टम अध्याय

जय जय महाप्रभु श्री गौर सुन्दर।
जय जय प्रभु पारषद अनुचर॥

एहि बिधि नवद्वीप सुरराया। कर पुस्तक खेलत मन भाया॥
अध्यापक गण कहँ प्रभु छेड़हिं। भय वश कोऊ कछु नहिं बोलहिं॥
शास्त्र व्याकरण बड़ सब कहहीं। आचारज कहँ प्रभु नहिं गिनहीं॥
आनन्द सों नगरी महँ फिरहीं। शिष्य सकल प्रभु के सँग रहहीं॥
श्रीमुकुन्द मारग महँ मिलेऊ। हाथ पकड़ि प्रभु तेहि सन कहेऊ॥
हमहिं देखि भागहु किमि धाई। आज बुझाइ कहहु मोहिं भाई॥
श्रीमुकुन्द सोचहिं मन माहीं। केहि विधि आज जितब प्रभु पाहीं॥
केवल व्याकरणहिं यह बूझब। अलंकार हम आज बखानब॥
हार मानि सो चुप ह्वै रहिहैं। हम सन गर्व कबहुँ नहिं कहिहैं॥
जो कछु अर्थ मुकुन्द बखानहिं। खंडन करि प्रभु सकल विचारहिं॥

वाल शास्त्र व्याकरण है, बालक करत बखान।
श्री मुकुन्द प्रभु सन कहेउ, सुनहु महा मतिमान॥१॥

अलंकार कर करहु विचारा। तुम सन अब हम किय निरधारा॥
प्रभू कहेउ सोइ करहु विचारा। हर्षित भे सुनि बचन उदारा॥
कठिन कठिन कविता सो कहही। अलंकार जिज्ञासा करही॥
सर्व शक्तिमय प्रभु अवतारा। दोष दिखाइ खंड करि डारा॥
कछु उत्तर ता कहँ नहिं सूझत। केवल प्रभु कर मुख सो निरखत॥
हँसिकै प्रभु तब तेहि सन कहेऊ। पुस्तक जाइ भलो बिधि पढ़ऊ॥
करन विचार तबहिं कल आवहु। मन वाञ्छित फल तुम तब पावहु॥
चरन धूलि लै सो गृह गवनेउ। मन महँ तर्क करत सो भयउ॥
अस पंडित जग महँ को अहहीं। सकल शास्त्र देखत जे रहहीं॥
सकल शास्त्र कर तत्व विचारत। धन्य निमाई तुम सब जानत॥

कृष्ण भक्त यदि होउ तुम, रहौं सदा तव पास।
धन्य बुद्धि तुम धन्य हौ, भजहु कृष्ण सुखरास ॥२॥

गौर मगन विद्यारस भ्रमहीं। मारग मिले गदाधर तबहीं॥
हाथ पकरि प्रभु बचन उचारेहु। न्याय पढ़त तुम हमहिं बतावहु॥
कहेउ गदाधर पूछहु ताता। मुक्ति रूप बर्णहु तुम भ्राता॥
शास्त्र अर्थ सो सब कहि दीन्हा। प्रभु तब कहेउ न तुम कछु चीन्हा॥
कहत गदाधर शास्त्र प्रकाशा। मुक्ति अर्थ दुःखन कर नाशा॥
बहुत भाँति प्रभु दोष दिखावा। उत्तर तेहि सन बनि नहिं आवा॥
भागन हित सो सोचन लागेहु। प्रभु तब कहेउ कि तुम गृह जावहु॥
तर्क करब तुम कल गृह आवहु। करि प्रणाम सो भवन सिधारेहु॥
प्रभु कहँ बड़ पंडित सब मानहिं। आदर मान करत सब आवहिं॥
संध्या समय शिष्य सब संगा। गंगा तीर जाहिं अति रंगा॥

मदन समान रूप अति, सुन्दर सब गुणखान।
चहुँदिशि राजत शिष्यगण, शास्त्रहिं करत बखान ॥३॥

बैठि तहाँ प्रभु शिष्य पढ़ावहिं। संध्या समय सकल जन आवहिं॥
वैष्णव सकल दूर तें सुनहीं। व्याख्या सुनि सब अचरज करहीं॥
हर्ष विषाद मनहिं मन गुनहीं। अति आश्चर्य सकल बुध करहीं॥
"ऐसो रूप शील गुण धामा। कृष्ण भजन बिनु नहिं कछु कामा"॥
कहत कोऊ देखत हम भाई। प्रश्न डरहि हम जात पराई॥
कहत कोउ जब सन्मुख पावत। मारग रोकि हाथ गहि राखत॥
शक्ति अमानुषि सकल बिराजत। पंडित बड़ो कोऊ अस भाषत॥
महापुरुष कोउ जन्मेउ आई। देखि रूप मोहैं सब भाई॥
अस पांडित्य कतहुँ नहिं देखे। कृष्ण भक्ति नहिं नामहिं भाखे॥
एहि विधि सकल विचारत रहहीं। कृष्ण भजैं ऐसे सब कहहीं॥

सकल भक्त मिलि एक ह्वै, गंगहिं करहिं प्रणाम॥
हाथ जोरि बिनती करैं, गौर भजैं हरिनाम ॥४॥

आशिर्वाद देहिं सब लोगा। कृष्ण भजैं तजि कै सब भोगा॥
ऐसो संग देहु प्रभु हमहीं। हम सब एक संग मिलि भजहीं॥
अन्तरयामी गौर कुमारा। भक्तन कर जानत व्यवहारा॥
श्रीवासादि भक्त कहँ देखो। करत मान अति प्रेम विशेषो॥
आशीर्वाद भक्त सब देहीं। प्रेम सहित सो सब प्रभु लेहीं॥
कृष्णभक्ति पावहु कह सबही। कोउ कोउ सन्मुख होइ अस कहहीं॥
"विद्या महँ भूलेउ तुम भाई। व्यर्थहिं काल गँवावहु जाई"॥
कोउ कहत "पंडित, तुम देखहु। कहा लाभ विद्या महँ पेखहु॥
भजहु कृष्ण सब तजि जंजाला। विद्याकर फल भक्ति कृपाला॥
कृष्ण भक्ति जानन हित पढ़हीं। भक्ति नहीं, बिरथा जग मरही"॥

प्रभु हँसिके तिनसन कही, "बड़ो भाग्य मम भाइ।
सबहि सिखावहु भक्ति मोहिं, प्रेम सहित समुझाइ ॥५॥

जेहि पर कृपा करत तुम सबहीं। जगिहै भाग्य ताहि कर तबहीं॥
पाठ पढ़ाइ कछुक दिन भाई। वैष्णव संग करब हम आई" ॥
अस कहि प्रभु सेवक सँग हँसही। प्रभु मायावश कोउ नहिं लखहीं॥
एहि विधि प्रभु भक्तन मन हरहीं। आदर सकल प्रभू कर करहीं॥
गंगा तीर कबहुँ प्रभु रहहीं। नगर नगर कबहूँ प्रभु भ्रमहीं।
प्रभु देखत ही सब पुरवासी। चरण बन्दि निरखहिं सुखरासी॥
स्त्री सब कहहिं मदन सम अहहीं। बड़े भाग्य कोउ अस पति लहहीं॥
गुरु सम बड़, पंडित अस कहहीं। वृद्ध चरण वंदन सब करहीं॥
सिद्ध पुरुष सम योगी देखहिं। काल समान दुष्ट अवलोकहिं॥
जेहि सन मधुर वचन प्रभु कहहीं। प्रभु के वश ह्वै जाय सो तबहीं॥

अहंकार यद्यपि करत, बोलत बढ़ि के बैन॥
तद्यपि प्रेम करत सब, निरखि रूप सुख दैन॥६॥

यवनहु प्रभु सँग प्रीती करहीं। प्रभू दया जीवन पर रखहीं॥
नवद्वीपपुर महँ सुर राया। श्रीमुकुन्द गृह प्रभु मनभाया॥
पाठ पढ़ावहिं सबहिं कृपाला। खंडन मंडन करहिं दयाला॥
भाग्यवान सञ्जय मतिमाना। मर्म न जानत है कछु आना॥
यहि विधि विद्या रस मन लाई। मगन रहत प्रभु अति हर्षाई॥
वायुरोग मिस करि सुरराया। प्रेम भक्ति लक्षण दरसाया॥
प्रभू अचानक बोलन लागे। शब्द अलौकिक सुनि सब भागे॥
लोटहिं भुवि पर करि हुंकारा। लात मारि तोड़हिं घर द्वारा॥
रोवहिं हँसहिं देह सब पीटहिं। जेहि देखहिं तेहि मारन धावहिं॥
स्तंभ भयउ जड़वत पड़ि रहेऊ। मूर्छा लखि सबही भय पायेउ॥

समाचार सुनि बन्धु सब, आए प्रभु के धाम।
करत उपाय सकल मिलि, कहत गौर गुणग्राम ॥७॥

बुद्धिमंत अरु सञ्जय आए। गौर निरखि सब अति दुख पाए॥
विष्णु तैल कोउ आतुर लावहिं। तैल नरायण कोउ लगावहिं॥
करत उपाय जाहि जो भावा। प्रभु इच्छा कर भेद को पावा॥
केहि विधि स्वस्थ होब किमि भाई। कंप स्वेद सब देइ दोहाई॥
शब्द सुनत सबही भय पावै। वचन अगोचर सबहिं सुनावै॥
"हमही ईश्वर सब जग कर्ता। विश्वंभर सब जग को भर्ता॥
हमहिं वही, चीन्हत कोउ नाहीं। अस कहि मारन हित प्रभु जाहीं॥
वायु रोगमिस स्वयं प्रकाशत। माया वश कोउ जान न पावत॥
भूत लग्यो कोऊ अस भाषत। कोउ डाकिनी दोष विचारत॥
कोउ कहत बोलत बड़ रहहीं। वायु रोग निश्चय हम कहहीं॥

एहि बिधि करत विचार सब, माया मोहित लोग।
तत्व न जानत है कोऊ, कहत बड़ो यह भोग ॥८॥

तैल द्रोन सब देहिं शरीरा। बैठि रहैं अति ह्वै गम्भीरा॥
खिलखिल हँसन लगे प्रभु तबहीं। महावायु व्याप्यो जनु अबहीं॥
लीला करिकै तब कछु काला। स्वस्थ भए प्रभु दीनदयाला॥
हरि हरि कहि सब अति हर्षाने। दान देइ सब कहँ सन्माने॥
'जिओ जिओ पंडित' सब कहहीं। आनँद मगन मोद मन भरहीं॥
यहि विधि रंग करत सुरसाईं। सोइ जानै जेहिं देहिं जनाई॥
वैष्णवगण सब प्रभु सन कहहीं। "कृष्ण चरण मन राखहु नितहीं॥
क्षणभंगुर यह अधम शरीरा। को सिखवैं तुम अति मति धीरा"॥
प्रभु हँसि सब कहँ वंदन कीन्हा। शिष्य पढ़ावन महँ मन दीन्हा॥
पुण्यवंत संजय गृह माहीं। चण्डीमण्डप महँ सब जाहीं॥

तहाँ पढ़ावहिं शिष्य सब, सुन्दर गौर गोपाल।
चहूँ ओर सब शिष्यगण, प्रभु अति दीनदयाल ॥ ९ ॥

सो शोभा बरनत नहिं बनई। अति अद्भुत कैसे को कहई॥
बद्रिकाश्रमहिं बैठि नारायन। चहूँ ओर राजैं सब रिषिगन॥
सब उपदेशहिं अति हर्षाई। सोइ लीला कर गौर गोसाईं॥
बद्रीवन महँ जे प्रभु रहहीं। निश्चय सोइ गौर प्रभु अहहीं॥
शिष्य संग सोइ लीला करहीं। विद्यारसहि मत्त प्रभु रहहीं॥
प्रहर दोइ सब शिष्य पढ़ावहिं। गंगास्नान तबहिं सब जावहिं॥
गंगाजल बिहरहिं कछु काला। पुन गृह आवहिं शची दुलाला॥
विष्णु पूजि तुलसी कहँ पूजहिं। गंगाजल प्रभु आनि चढ़ावहिं॥
परदक्षिणा देहिं तब जाई। भोजन हित तब बैठहिं आई॥
लक्ष्मी अन्न परोसन लागहि। हर्षित होइ प्रभु भोग लगावहिं॥

शची निरखि सोइ शोभा, अति हर्षित मन माहिं।
पुन्यवती तुम धन्य हो, तुम सम जग कोउ नाहिं ॥१०॥

भोजन करि तब बीड़ा पावहिं। शयन करहिं लक्ष्मी पद चापहिं॥
कछु निद्रा करि के क्षणमाहीं। पुनरपि पुस्तक लै कर जाहीं॥
नगर जाइ प्रभु इत उत डोलहिं। करि परिहास सबहिं सन बोलहिं॥
प्रभु कर तत्व न जानत कोऊ। आदर तदपि करत सब सोऊ॥
नगर भ्रमण हित जब प्रभु चलहीं। सुर दुर्लभ दर्शन सब करहीं॥
तंत्रवाय गृह गे इक बारा। हाथ जोड़ि सो वचन उचारा॥
आवहु प्रभु बैठो इत आई। कह्यो वचन तब प्रभु हर्षाई॥
भलो वस्त्र आनहु तुम भाई। सन्मुख आनि धरयो सो लाई॥
यहि कर कहा मूल्य प्रभु पूछेउ। जो तुम देहु उतर सो दयऊ॥
मोरे पास मूल्य नहिं भाई। ताँती कहेउ देब फिर आई॥

वस्त्र लेइ पहिरहु प्रभु, तुम प्रसन्न ह्वै तात।
मन भावै दीजै तबहिं, कही ताँति यह बात ॥११॥

हर्षित होइ आशिष तेहिं दीन्हा। ग्वालनपुरी गमन प्रभु कीन्हा ॥
गोप द्वार बैठे प्रभु जाई। अरु परिहास करत तेहि ठाईं ॥
प्रभु तब कहेउ "दूध दधि लावहु। माखन घृत आदिक सब आनहु ॥
आज दान हम तुम सन लैहैं"। कहत ग्वाल सब हम प्रभु दैहैं ॥
सुन्दर आसन प्रभु कहँ दयऊ। करि परिहास कहत सब भयऊ ॥
"मामा" कहि सब प्रभु सन बोलहिं। भात खाउ अस बचन उचारहिं ॥
काँधे करि कोउ गृह लै जाहीं। कोउ कहै तुम सुमिरहु नाहीं ॥
पूर्वहि खायउ मम गृह भाता। सुनत बचन विहँसे सुरत्राता ॥
सुरसति बचन सत्य सो कहई। यद्यपि सो जानत नहिं अहई ॥
माखन दूध दही घृत देहीं। आनन्द सों प्रभु सो सब लेहीं ॥

अति प्रसन्न ह्वै तिनहि सन, गे गंधी के धाम।
हाथ जोरि सो कहेहु तब, धन्य भयो मम ग्राम ॥१२॥

उत्तम गंध आनि तुम देहू। उचित मूल्य तुम हम सन लेहू ॥
उत्तम गंध आनि सो दयऊ। गंध बनिक तब प्रभु सन कहेऊ ॥
माँगन उचित नहीं प्रभु तुम सों। गंध लगाइ जाहु गृह सुख सों ॥
काल गंध यदि रहै शरीरहिं। धोवन हू सो गंध जाय नहिं ॥
तब मोहिं देहु मूल्य जो भावै। अस कहि गंध शरीर लगावै ॥
परम प्रीति सों सब अँग माहीं। गंध लेपि मन अति हर्षाहीं ॥
मोहित होहिं सबहिं प्रभु देखी। मगन होहिं प्रभु छवि अवरेखी ॥
गंध बनिक कहँ आशिष दीन्हा। माली भवन गमन तब कीन्हा ॥
अद्भुत रूप देखि सुख माना। हाथ जोरि आसन सो आना ॥
प्रभू कहेउ माला तुम लावहु। मूल्य कछुक नहिं हम सन माँगेहु ॥

सिद्ध पुरुषसम देखि सोइ, कह्यो मूल्य कछु नाहिं।
सुंदर माला आनिकै, पहिरायो गल माहिं ॥१३॥

सब शिष्यन सँग अति सुखमाना। आशिष दीन्ह सुनत हर्षाना ॥
पुनि प्रभु ताम्बूली गृह आवा। गौर हरो लखि सब सुख पावा ॥
चरणधूलि लेइ आसन दीन्हा। बड़ो भाग्य कहि आदर कीन्हा ॥
अस कहि बड़े प्रेम सों लाई। सुन्दर बीड़ा दीन्ह सोहाई ॥
बिना मूल्य किमि बीड़ा देहू। हँस करि प्रभु ताहि सन कहेहू ॥
कहेउ तमोली अस जिय आवा। तासु बचन प्रभु अति मन भावा ॥
प्रेम सहित प्रभु बीड़ा खायो। कर्पूरादि सकल सो लायो ॥
बिना मूल्य सो सब कछु दीन्हा। आशिष देइ गमन प्रभु कीन्हा ॥
एहि विधि सर्वनगर प्रभु विचरहिं। भाग्यवान सब नर प्रभु निरखहिं ॥
मथुरा सम नदियापुर अहई। अति विशाल नहिं कोउ कहि सकई ॥

प्रथम विधाना जानि कै, प्रभु विहार हित आइ ।
सुंदर नगरी करि दई, शोभा नहिं कहि जाइ ॥१४॥

पूर्वहि मथुरा जिमि प्रभु भ्रमेऊ । तिमि नदिया महँ घूमत भयऊ ॥
शंख वनिक गृह तब प्रभु गयऊ । हाथ जोरि सो चरनन परेऊ ॥
शङ्ख वनिक सन तव प्रभु कहेऊ । उत्तम शङ्ख आनि मोहिं देऊ ॥
शङ्ख कवन विधि लैहैं ताता । हमरे निकट द्रव्य नहिं भ्राता ॥
दिव्य शङ्ख आनेहु तत्काला । प्रभु अरप्यो उर हर्ष विशाला ॥
शङ्ख लेइ तुम प्रभु गृह जावहु । मूल्य कछुक नहिं तुम सन चाहहुँ ॥
बचन तासु सुनि प्रभु सुख माना । आशिष दै तब कीन्ह पयाना ॥
यहि विधि सबके गृह प्रभु जाई । नगर भ्रमहिं प्रभु अति हर्षाई ॥
सोई भाग्य सों नदिया बासी । अजहूँ पाव दरस सुख रासी ॥
तब इच्छामय गौर गोपाला । गे सर्वज्ञ गृहहिं तत्काला ।

प्रभु कर तेज देखि सो, हर्षित कीन्ह प्रणाम ।
परम प्रेममय वचन तब, बोले प्रभु सुखभाम ॥१५॥

प्रभू कहेउ तुम सब कछु जानहु । पूर्व जनम कर वात बतावहु ॥
भलो बचन कहि सुमिरन लाग्यो । सिद्ध मन्त्र गोपाल सोहायो ॥
मन्त्र जपत देख्यो सो तबहीं । श्याम चतुर्भुज प्रभु तत्क्षणहीं ॥
श्रीवत्सरुकौस्तुभ अँग सोहैं । ज्योतिर्मय प्रभु सब मन मोहैं ॥
बन्दी घर देखेउ द्विज तबहीं । पिता मातु ठाढ़े स्तुति करहीं ॥
पिता पुत्र गोदीं महँ लेई । गोकुल महँ राख्यो अति गोई ॥
बालरूप करि किंकिनी राजत । माखन को प्रभु भोग लगावत ॥
नित्य मूर्ति जो चिन्तन करहीं । इष्ट मूर्ति देख्यो द्विज तबहीं ॥
प्रभु त्रिभङ्ग मुरली कर राजत । गोपी गण चहुँ ओर विराजत ॥
अति अद्भुत लखि आँख उघारेउ । सन्मुख सो श्री गौर निहारेउ ॥

पुनः ध्यान धरि सो कहत, सुनहु बाल गोपाल ।
कौन अहै यह विप्रवर, मोहिं कहहु तत्काल ॥१६॥

तब देखेउ श्रीराम स्वरूपा । वीरासन बैठे नर भूपा ॥
दूर्वादल सम अंग मनोहर । धनुष हाथ सोहत अति सुन्दर ॥
पुनि देखेउ वराह को रूपा । पृथ्वी लीन्हें रूप अनूपा ॥
श्री नृसिंह को पुनि सो देखेउ । उग्र रूप भक्तन सुख दीन्हेउ ॥
पुनि देखेउ वामन भगवाना । दान देइ बलि अति सुख माना ॥
पुनि लखि मत्स्य रूप सुख पायेउ । जल क्रीड़ा अति ही मन भायेउ ॥
देखेउ पुनि बलराम स्वरूपा । जगन्नाथ कहँ पुनि सो देखा ॥
मध्य सुभद्रा दहिने हलधर । यहि विधि देखेउ पुरुष परात्पर ॥
तदपि न बूझत बिप्र सुजाना । प्रभु माया वश सो नहिं जाना ॥
करन विचार लगेउ द्विज तबहीं । यह ब्राह्मण कोउ तांत्रिक अहहीं ॥

अथवा छल करि देव कोउ, आयो हमरे पास।
लेत परीक्षा मोरि सो, करत मोर उपहास ॥१७॥

तब श्री गौर विप्र सन कहेउ। कहहु कहा तुम सों कहँ देखेउ॥
बिप्र कहेउ अबहीं गृह जावहु। काल्हि कृपा करि प्रभु पुनि आवहु॥
भलो भलो कहि प्रभु चलि दयऊ। श्रीधर के गृह पर पुनि आयेऊ॥
श्रीधर सो प्रसन्न प्रभु रहहीं। बार बार तेहिके गृह भ्रमहीं॥
कछु परिहास ताहि सन करहीं। निज कारज गवने प्रभु तबहीं॥
प्रभुहिं निरखि श्रीधर सुख माना। बैठन हित आसन सो आना॥
परम शांत श्रीधर आचारू। उद्धत सम प्रभु कर व्यवहारू॥
प्रभू कहेउ श्रीधर तुम जपहू। सदा हरी कर नाम सुमिरहू॥
लक्ष्मीपति कर पूजन करहू। तबहुं दुःख पावत तुम रहहू॥
हरि पूजत दुख बहु बिधि सहहू। कारण कवन मोहिं सन कहहू॥

श्रीधर कहेउ सुनहु प्रभु, करौं नही उपहास।
फटो पुरानो वस्त्र हम, पहिरत सहित हुलास ॥१८॥

प्रभू कह्यो हम सन्मुख देखत। दस गाँठी धोती महँ निरखत॥
मँडई पर खर पातहु नाहीं। रहत कवन विधि अस घर माँही॥
चण्डी विषहरि पूजत लोगा। आनँद सों भोगहिं सब भोगा॥
श्रीधर कहेउ ठीक तुम कहहू। काल समान जाय प्रभु सुनहू॥
काल समान जात है सबकर। राजा रंक पशू अरु वनचर॥
महल बीच राजा प्रभु रहहीं। भोग विलास तहाँ सो करहीं॥
पक्षीगण वृक्षन पर बसहीं। काल समान जात सब करहीं॥
निज कृत कर्म भोग सब भोगहिं। प्रभु इच्छा कर मर्म न जानहिं॥
प्रभू कहेउ "बहु धन तव पासा। छिप कर खावहु करहु बिलासा॥
कहब सबहिं सन अब हम जाई। ठगव कौन विधि तुम अब भाई" ॥

प्रभु सन श्रीधर अस कहेउ, पंडित तुम घर जाउ।
उचित नहीं झगड़ो करन, प्रभु तुम मोहिं पतियाउ॥१९॥

नहीं छाँड़िहौं तोहिं यहि रीती। देहु कहा मोहिं कहहु सप्रीती॥
साग बेंचि हम जीवन राखहिं। कहा देहिं प्रभु हम नहिं जानहिं॥
प्रभू कहेउ "बहु धन तुव पासा। यहि क्षण राखहु सहित हुलासा॥
पाछे हम लैहैं सो आई"। समुझेउ नहिं प्रभु गिरा सुहाई॥
'बिना मूल्य भाजी यदि देहौ। झगड़ा हौं तुम सों नहिं करिहौं'॥
मन महँ सोचन श्रीधर लागे। झगड़ो करै मोहिं सन आगे॥
उद्धत विप्र बड़ो यह अहई। द्विज सन रार नहीं जग कहई॥
केहि बिधि बिना मूल्य नित देहौं। बल करि द्विज लै जाय सो सहिहौं॥
बड़ो भाग्य मम जो द्विज लैहैं। बड़ो पुण्य जो हम नित देहैं॥
अस विचारि बोल्यो द्विज देहौं। बिना मूल्य भाजी तुम पैहौ॥

केला कदली मूल फल, सब देहौं प्रभु तोहिं ।
रार करहु जनि मोहिं सन, छाँड़ि देहु अब मोहिं ॥२०॥

प्रभू कहेउ यह सुन्दर बाता । पावहुँ नित उत्तम फल पाता ॥
प्रभू कहेउ तुम मोहिं न जानहु । देहु बताय तुरत गृह गवनहु ॥
श्रीधर कहेउ विप्र तुम ताता । विष्णु अंश सब कह तोहिं भ्राता ॥
गौर कहेउ हम गोप कुमारा । विप्र-सुअन तुम मोहिं बिचारा ॥
गोप वंश हम निज को जानत । सत्य सत्य हम तोहि सन भाषत ॥
श्रीधर बचन सुनत मुसकाने । माया वश प्रभु नहिं पहिचाने ॥
प्रभू कहेउ श्रीधर तुम सुनहू । आपन तत्व तोहि सन कहहूँ ॥
जेहि गंगा कर पूजन करऊ । सोइ गंगा हमहीं उपजायेउ ॥
श्रीधर बोलेउ सुनहु निमाई । गंगाहू कर तोहिं डर नाहीं ॥
बड़ो भए समुझत सब भाई । तोर चपलता बाढ़त जाई ॥

श्रीधर सों बहु रङ्ग करि, आए भये सनेह ।
विष्णु द्वार बैठत भए, शिष्य गए निज गेह ॥२१॥

पूरण चन्द्र देखि सुख पायेउ । वृन्दावन प्रभु के मन आयेउ ॥
मुरली ध्वनि प्रभु करन लगे तब । केवल आई सुन्यो सो ध्वनि सब ॥
मोहन मुरली ध्वनि सुनि माता । मूर्छित भइ अति पुलकित गाता ॥
क्षण महँ उठि बैठी हर्षाई । श्रवण सुने मुरली मन लाई ॥
बैठे गौर जहाँ गृह आई । ध्वनि सोइ दिशि ते पड़त सुनाई ॥
अद्भुत ध्वनि सुनि बाहर आई । विष्णु द्वार देख्यो प्रभु जाई ॥
बंशी ध्वनि सो अब नहिं सुनई । चन्द्रहिं गौर हृदय महँ निरखई ॥
चन्द्रमँडल हिरदय महँ देखहिं । बिस्मित होइ चहुँ ओर निहारहिं ॥
बैठि आइ सोचन तब लागी । बहु चिन्ता हिरदय महँ जागी ॥
यहि बिधि शची मातु सब देखहिं । बहुत प्रकाश अन्त नहिं पावहिं ॥

शची मातु कबहूँ सुनत, गीत मधुर भव गाय ।
वाद्य बजावत हैं सकल, बहुत लोग तहँ आय ॥२२॥

नृत्य वाद्य बहु विधि सो सुनहीं । महारास क्रीड़ा जनु अहहीं ॥
कोउ दिन घर बाहर सब देखहिं । महा ज्योतिमय सब दिशि पेखहिं ॥
देखहिं देवीगण कहँ कबहीं । हाथ कमल लक्ष्मी सम सबहीं ॥
ज्योतिर्मय देवन कहँ देखहिं । पुनि काहू कहँ नहिं अवलोकहिं ॥
यह सब कछु विचित्र नहिं बाता । भक्ति रूप आई जग माता ॥
शची कृपा जेहि पर करि देहीं । सोइ नर पाव भक्ति प्रभु तबहीं ॥
यहि बिधि श्री गौरांग उदारा । गुप्त भाव बिचरत संसारा ॥
यद्यपि प्रभु आपुहिं परकाशहिं । तदपि भक्त कोउ जानि न पावहिं ॥
अस चंचलता प्रभु नित करहीं । ऐसो चाल कोऊ नहिं चलहीं ॥
जेहि क्षण जोइ लीला प्रभु चहहीं । सर्व श्रेष्ठ सोइ लीला करहीं ॥

युद्ध करन प्रभु जब चहैं, महावीर बन जाहिं।
करन काम कौतुक चहत, स्त्री प्रगटै छिन माहिं ॥२३॥

जब प्रभु धन विलसन हित सोचहिं। प्रजा गृहन महँ बहु धन आवहिं॥
अबहीं उद्धत जो प्रभु अहहीं। कछु दिन पर विरक्त बड़ बनहीं॥
सर्व श्रेष्ठ लीला प्रभु करहीं। अन्य कोउ सन बन नहिं सकहीं॥
प्रभु कर धर्म सकल जग जानहिं। केवल सेवक सन् प्रभु हारहि॥
एक दिवस प्रभु मारग माहीं। विद्यार्थिन सँग प्रभु चलि जाहीं॥
सूक्ष्म वस्त्र श्रीअँग पर सोहै। पीताम्बर सब कर मन मोहै॥
बीड़ा अधरन महँ अति राजत। कोटि चन्द्र सम बदन विराजत॥
तिलक उर्ध्व मस्तक पर राजै। कर महँ पुस्तक अति छविछाजै॥
पद्म-नेत्र निरखत दुख भागै। मानहुँ मदन कहन सब लागै॥
चंचल चपल शिष्य सँग चलहीं। हाथ भुलावत प्रभु मग भ्रमहीं॥

दैवयोग श्रीवास सों, भेंट भई तेहि ठाम।
पंडित अति हर्षित भए, कीन्हेउ प्रभू प्रणाम ॥२४॥

चिरंजीव कहि आशिष दयऊ। हर्षित होइ प्रभु सन तब कहेऊ॥
"चंचल चपल कहाँ तुम जावहु। कृष्ण भजन बिन समय गँवावहु॥
रात दिना सब शिष्य पढ़ावहु। काहे पढ़हु सो मोहि बतावहु॥
पढ़त लोग प्रभु जानन काजा। कृष्ण भजन बिनु सो नहिं साजा॥
समय व्यर्थ तुम कहाँ गँवावहु। भजहु कृष्ण, कृष्णहि उर राखहु"॥
हँसि बोले प्रभु अति मृदुबानी। आशिष तब अमोघ हम जानी॥
अस कहि चले परम हर्षाई। गंगा तट बैठे प्रभु जाई।
चहुँ ओर सब शिष्य विराजैं। मध्य गौर सुन्दर तहँ राजैं॥
सो शोभा कछु वरणि न जाई। उपमा कोऊ मोहिं न भाई॥
चन्द्र समान कहत नहिं भावा। चन्द्र कलंकी अस जग गावा॥

सर्व काल परिपूर्ण हैं, घटत बढ़त है नाहि।
निष्कलंक श्रीगौर प्रभु, बसहिं भक्त उर माहिं ॥२५॥

केहि विधि गुरु सम कहौं बखानी। एक पक्ष राखत हम जानी॥
देवन ही कर सो हितकारी। समदर्शी प्रभु जग सुखकारी।
काम देव सम किमि कवि कहई। उर आवत मन क्षोभ सो करई॥
गौर हृदय आवत हैं जबहीं। मन निर्मल, दुख नाशै तबहीं॥
हृदय भक्ति उपजै तत्काला। कृपा करैं प्रभु दीनदयाला॥
यहि बिधि कोउ उपमा नहिं भावा। केवल एक मनहिं मोहि आवा॥
वृन्दाबन जिमि नन्दकुमारा। सखा संग लोला बिस्तारा॥
सोइ सखा सोइ कृष्ण उदारा। विप्र रूप धरि करत विहारा॥
गंगातीर करहिं नर लीला। देखहि सब जन अति प्रिय शीला॥
देखि प्रभुहिं सब अति सुख पावहिं। तेज विलक्षण लखि सब भाषहिं॥

चक्रवर्ति के चिन्ह सब, दीखत हैं द्विज पाहिं।
विष्णु अंश कोउ देवता, जन्मो द्विज कुल माहिं ॥२६॥

यह विधि सब जन करहिं विचारा। प्रभु कर तत्व को जानन हारा ॥
गंगातट प्रभु करहिं विचारा। व्याख्या करहिं अनेक प्रकारा ॥
एक विषय स्थापहिं एक बारा। खंडन करि पुनि ताहि बिचारा ॥
खंडन करि स्थापहिं पुनि सोई। अति विचित्र करि सकै न कोई ॥
प्रभू कहैं पंडित सोइ मानौं। व्याख्या मोसन कर तब जानौं ॥
मोसन तर्क करब को आई। कोउ महँ ऐसी शक्ति न भाई ॥
ऐसे उग्र वचन प्रभु कहहीं। तृण समान सब पंडित गिनहीं ॥
प्रभु के शिष्यन कर नहिं अंता। धन्य भाग इन कर कह संता ॥
नूतन शिष्य सदा चलि आवहिं। प्रभु पद पंकज शीश नवावहिं ॥
हाथ जोरि विनती सो करहीं। 'पंडित मोहि पढ़ावहु', कहहीं ॥

सबहिं पढ़ावहिं गौर प्रभु, ह्वै प्रसन्न मन माँहिं।
नित नित नूतन आवहीं, संख्या बढ़तहि जाँहिं ॥२७॥

जिन देखी प्रभु की यह लीला। धन्य धन्य कह सोइ गुण शीला ॥
तिन के भाग्य कहाँ लों कहिए। तिनके दर्शन ते सुख लहिए ॥
मेरो जन्म भयो नहिं तबहीं। पापी मो सम को जग अहही ॥
करहु कृपा श्रीगौर उदारा। गावहुँ तव लीला सुखसारा ॥
भक्त सहित जहँ लीला करहू। अनुचर होइ सेवा महँ रहहूँ ॥
श्रीचैतन्य निताई चरना। पावैं वृन्दावन अघ हरना ॥
ब्रजभूषण प्रभु पद करि आसा। भाषा महँ कीन्हेउ इतिहासा ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते आदि खंडे श्री गौरांग नगर भ्रमणादि वर्णन नाम अष्टमोऽध्यायः ॥

नवम अध्याय

जय जय द्विज कुल दीप गौरचन्द्र।
जय जय भक्त-गोष्ठी हृदय-आनन्द ॥
जय जय द्वारपाल गोविन्द के नाथ।
जीव प्रति कर प्रभु शुभ दृष्टि-पात ॥
जय जय अध्यापक शिरोरत्न विप्रराज।
जय जय चैतन्य को श्री भक्त समाज ॥

यहि विधि विद्यारस सुरराया। हरहिं गर्व सबकर सुखदाया ॥
नवद्वीप पण्डित बड़ नाना। मिश्र आचारज भट्ट महाना ॥
पढ़हिं पढ़ावहिं सबहि सुजाना। सब स्वतन्त्र विजई जग जाना ॥
ब्रह्माहू कहँ कोउ नहिं गिनहीं। करि विचार जीतहिं सब जनहीं ॥

तदपि गौर सन कोउ नहिं बोलहिं। आदर सों प्रभु कहँ सब देखहिं ॥
कोउ सन कबहुँ प्रभू यदि बोलहिं। बड़ो भाग्य अपनो सो जानहिं ॥
प्रभु कर तीव्र बुद्धि सब जानहिं। गङ्गातट पर नित सब देखहिं ॥
इनको जीति सकत नहिं कोई। यहै बात जानत है सोई ॥
प्रभु निरखत श्रद्धा उर जागे। सबहि होत वश प्रभु के आगे ॥
तदपि प्रबल माया प्रभु केरो। समुझै नहिं कोउ प्रभु छवि हेरी ॥

स्वयं प्रकाश करत नहिं, केहि विधि जाने कोय।
माया मोहित लोग सब, निरखत प्रभु सुख होय ॥१॥

तबहिं एक पण्डित अति भारो। दिग्विजई नदिया पगु धारो ॥
सरस्वती कर परम उपासक। मन्त्र सिद्ध कीन्हे द्विज-नायक ॥
विष्णु-प्रिया अरु भक्ति स्वरूपा। लक्ष्मी सरस्वती इक रूपा ॥
बड़े भाग्य द्विज सन्मुख आई। वर दीन्हे द्विज कहँ सुखदाई ॥
'त्रिभुवन दिग्विजई तुम होऊ'। वर सुनि अति प्रसन्न सो भयऊ ॥
जेहिं निरखत भक्ती उर जागे। दिग्विजई वर का तेहि आगे ॥
सरस्वती सों द्विज वर पाई। जीत्यो सकल देश सो जाई ॥
सर्व शास्त्र जिह्वा पर राजत। कोउ पण्डित नहिं सन्मुख आवत ॥
सब पण्डित कहँ जाइ हरायो। दिग्विजई पद तब सो पायो ॥
नवद्वीप महिमा बड़ सुनेऊ। तेहि जीतन हित सो तहँ आयेउ ॥

हाथी घोड़ा पालकी, सब लीन्हे निज संग।
आयो सो नदिया नगर, हिय महँ भरे उमंग ॥२॥

द्विज आगमन सकल जन सुने। सब पण्डित अति चिन्तित भये ॥
यह संवाद सकल पुर छावा। जीति सबै यह ह्याँ है आवा ॥
सरस्वती वर सुनि सब पावा। सब मिलि कै यह मंत्र दृढ़ावा ॥
"भारत महँ पण्डित जहँ रहहीं। नवद्वीप कर यह सब कहहीं ॥
दिग्विजई जीतिहि हम सबहीं। मानहानि होइहि जग अतिही ॥
कौन बिचार करब तेहि पाहीं। सरस्वती वर दीन्हेउ जाहीं ॥
सरस्वती ताके मुख बसई। जीत सकै अस को जग अहई ॥
एहि विधि सोचत सब आचारज। छाँड़ि सकल गृह के सब कारज ॥
परम कोलाहल सब जन करहीं। विद्या बल देखब सब करही ॥
यह संवाद शिष्य सब जाई। कहेउ गौर सन अति हर्षाई ॥

दिग्विजई एक सुनहु प्रभु, आयो नदिया माहिं।
सरस्वती वश ताहिके, विजय पत्र सो चाहि ॥३॥

बहुत लोक हयगज सब साजा। मानहुँ बहुत बड़ो कोउ राजा ॥
शास्त्र विचार करन सो चाहत। भय वश कोउ तेहि ढिग नहिं आवत ॥
विजय पत्र माँगत सब पाहीं। सुनत गौर विहँसे मन माहीं ॥
पुनि बोले प्रभु "सुनु मन लाई। सत्य बात हौं कहौं बुझाई ॥

अहंकार ईश्वर नहिं राखत। खंडन करत शास्त्र अस भाखत॥
फलयुत वृक्षऽरु पण्डित लोगा। नम्र होइ पावत सुख भोगा॥
हैहय, नहुप, वेणु अरु रावन। नरक आदि विजयी ये सब जन॥
केहि कर गर्व न प्रभु निरवारा। अहंकार सब कर संहारा॥
तेहि कहँ विद्या गर्व अपारा। प्रभु तेहि कर करिहैं संहारा"॥
अस कहि प्रभु गङ्गा तट आए। बैठ तहँ प्रभु सब मन भाए॥

चहूँ ओर सब शिष्य गण, बैठे शोभा देत।
कहत कथा श्रीगौर प्रभु, सबही कहँ सुख देत॥४॥

मनही मन प्रभु सोचन लागे। केहि विधि गर्व हरब हम आगे॥
भयउ गर्व एहिके मन माहीं। मोहिं समान पण्डित जग नाहीं॥
सभा मध्य करिहौं जय जाई। मृत्यु कष्ट पाइय तेहि ठाई॥
सब उपहास याहि कर करिहैं। दुखी होइ सो तनु परिहरिहैं॥
यासों करौं इकंत विचारा। दुःख न पावै विप्र बेचारा॥
गर्व दूर यहि विधि सब करिहौं। भक्ति विमल वर तेहि कहँ देहौं॥
एहि विधि सोचत गौर गोपाला। दिग्विजई आयो तेहि काला॥
पूर्ण चन्द्र निशि अति सुखदाई। गङ्गा तट अतिही छबि छाई॥
गङ्गातट शिष्यन सँग राजत। कोटि काम सम रूप विराजत॥
सदा प्रसन्न गौर प्रभु रहहीं। कमलनयन शोभा अति लहहीं॥

मुक्ता सम दशनावली, अति कोमल सब गात।
अरुण अधर छवि देत हैं, निरखत काम लजात॥५॥

घुँघराली अलकैं शिर सोहत। श्री मुख छवि सब कर मन मोहत॥
उर विशाल अरु दिव्य शरीरा। सिंह ग्रीव मानहुँ रणधीरा॥
उर्ध तिलक मस्तक पर राजै। यज्ञ सूत्र श्री कण्ठ विराजै॥
भुज विशाल भक्तन भयहारी। पीताम्बर पहिरे सुखकारी॥
एहि विधि बैठि पढ़ावत शिष्यहिं। व्याख्या सकल अपूर्व बखानहिं॥
जो व्याख्या कोउ कतहुँ न सुनही। सो व्याख्या प्रभु ढिग रहि गुनही॥
दिग्विजई यह छबि अवलोकी। रहेउ चकित एक टक पग रोकी॥
मन महँ समुझि गयो सो तबहीं। इहै निमाई पण्डित अहहीं॥
गुप्त रूप प्रभु निरखन लाग्यो। प्रेम विवश उर आनँद छायो॥
शिष्यन सन पूछेउ सो जबहीं। नाम बतायो शिष्यन तबहीं॥

तब द्विजवर अति प्रेम सों, गंगहिं कीन्ह प्रणाम।
सभा मध्य प्रभु के गए, जहँ बैठे सुखधाम॥६॥

विप्र निरखि प्रभु अति सुख पावा। अति आदर सों तेहि बैठावा॥
अति निशङ्क दिग्विजई अहई। तदपि गौर कर आदर करई॥
अमित तेज ईश्वर महँ होई। याही ते जग मानत सोई॥
इत उत की कछु बात चलाई। बहुरि कह्यो प्रभु ताहि बुझाई॥

"तुम महान पण्डित सब ज्ञाता। सन्मुख गङ्ग सबहि सुखदाता॥
तेहि कर महिमा तुम कछु कहऊ। मुनि प्रसन्न होइहैं सब कोऊ॥
सुनत वचन द्विज अति हर्षाना। लग्यो करन स्तुति तब मतिमाना॥
पवन वेग सम कविता करि करि। विविधि भाँति गङ्गा वर्णन करि॥
अति गँभीर घनलौं स्वर मों तब। पढ़न लग्यो सुनि भे हर्षित सब॥
सरस्वती जिह्वा पर राजत। सब प्रमाण जुत जो कछु भाषत॥

वृभिसकै अस कौन नर, वृपन की का बात।
चकित भए सब शिष्य गण, मनही मन हर्षात॥७॥

"राम, राम अद्भुत" सब कहहीं। मानव कबहुँ न अस कहि सकहीं॥
अलङ्कार आदिक जे अहहीं। मुनि सुन्दर कविता सब कहही॥
सर्व शास्त्र ज्ञाता जे लोगा। तेऊ बृभि न सक करि योगा॥
यहि विधि महिमा कहि दिग्विजई। शांत भये वर्णन करि सोई॥
तब बोले प्रभु अति हर्षाई। कहहु अर्थ अब मोहिं वुझाई॥
तुम बिनु और न कहि सक कोई। व्याख्या आपु सत्य सब होई॥
सुनत विनीत वचन द्विजराजा। व्याख्या करन लगे महाराजा॥
व्याख्या करतहिं प्रभु तत्काला। तीन दोष तब कहेउ कृपाला॥
आदि मध्य अरु अंत दिखावा। अलङ्कार कर दोष बतावा॥
शास्त्र कहत नहिं, तुम केहि लागो। किमि प्रयोग कहहु बड़भागो॥

एते बड़ द्विज होइकैं, दिग्विजई कहवाय।
मुख नहिं आवत उतरु कछु, मति ही गई नसाय॥८॥

इत उत कहि सो उत्तर देई। प्रभु खंडन ताकर तब करई॥
ताकी प्रतिभा सकल हिरानी। बूभत नहिं द्विज आपुन बानी॥
प्रभू कहेउ अब एहि कहँ छाँड़हु। नूतन कविता अपर सुनावहु॥
अब सो शक्ति न द्विज महँ अहई। प्रभु सन्मुख मोहित भा सोई॥
वेदहु जेहि सन्मुख है मोहत। ब्रह्मा शङ्कर सब मुख जोहत॥
महामहा ज्ञानी अरु योगी। मोहत सब पण्डित अरु भोगी॥
का आश्चर्य याहि महँ भाई। मोहेउ द्विज सन्मुख प्रभु आई।
लक्ष्मी सरस्वती सब माया। मोहत सब जग जाकी छाया॥
सो मोहैं प्रभु सन्मुख जबहीं। याही ते पाछे सो रहहीं॥
ऋषि महर्षि मोहित हैं सबही। दिग्विजई कहँ का कोउ कहही॥

जीव कबहुँ नहि करि सकत, ऐसो महतो कर्म।
ईश्वर जो कछु करत है, भक्तन हित सो धर्म॥९॥

दिग्विजई कहँ हारत देखी। शिष्यन भा आनन्द विशेषी॥
हँसत तिनहिं लखि गौर निवारेउ। द्विज सन प्रभु मृदु वचन उचारेउ॥
आज जाहु गृह तुम द्विजराजा। कालि्ह विचार करब महराजा॥
भयो विलम्ब बहुत अब भाई। रात्रि अधिक गइ सोवहु जाई।

प्रभु कर कोमल अतिहि सुभावा। हारन हू कोउ दुःख न पावा॥
नवद्वीप के पण्डित जबहीं। प्रभु सन हारहिं तिन सों तबहीं॥
प्रभू कहहिं तुम अब गृह जाहू। काल्हि विचार करब सब काहू॥
जय करि कै अपमान न करहीं। मधुर वचन तेहि सन प्रभु कहहीं॥
यहि ते सब प्रसन्न अति रहहीं। प्रभु कर सुयश सदा सो कहहीं॥
शिष्य सहित प्रभु तब गृह गये। दिग्विजई अति लज्जित भये॥

दुखी होइ कै विप्र तब, मन महँ करत विचार।
सरस्वती जो दीन्ह वर, विफल भयो यहि बार॥१०॥

न्याय, सांख्य, पातञ्जल भारी। मीमांसा दर्शन शुभकारी॥
वैशेषिक, वेदान्ती आदी। संन्यासी अरु आतमवादी॥
सकल लोग हम जग में जीत्यो। प्रतिद्वन्द्वी कतहूँ नहिं पायो॥
बालशास्त्र व्याकरण कहावै। तेहि कर पण्डित मोहिं हरावै॥
विधि कर लेख यहै जग कहहीं। मिथ्या भयो मोर वर अबहीं॥
यह संशय मोरे मन होई। भा अपराध देवि कर कोई॥
तेहि ते प्रतिभा मम सब हारी। आजु करब सब काज विचारी॥
अस कहि मन्त्र जपन सो लागा। परम भक्ति सों अति अनुरागा॥
जप पूरन करि द्विज वर तबहीं। शयन कियो दुःखित मन अतिहीं॥
सरस्वती तब सपने माहीं। दियो दरस द्विज, मन हर्षाहीं॥

कृपादृष्टि करि विप्र प्रति, बोली मधुरी बानि।
गुप्त बात तुमसों कहत, भक्त आपुनो जानि॥११॥

काहू सन यदि कहिहौ बाता। शीघ्रहिं प्राण गँवाउब ताता॥
तुमहिं पराजय जेहि जन कीन्हा। सबके प्रभु तुम तिनहिं न चीन्हा॥
परब्रह्म सब जग के स्वामी। दासी हम प्रभु की अनुगामी॥
लज्जावश सन्मुख नहिं जाहीं। मोर शक्ति तेहिं आगे नाहीं॥
शेष अनन्त देव भगवाना। सहस मुखहिं जो वेद बखाना॥
ब्रह्मा शिव जाकर यश गावैं। प्रभु सन्मुख सोई जब आवैं॥
मोहिं सोइ शेष भगवाना। प्रभु अखण्ड अव्यय जग जाना॥
सबके हृदय विराजत सोई। पूरण ब्रह्म कहत सब कोई॥
जग उत्पति पालन संहर्ता। वेद अगोचर सब जग कर्ता॥
निज नयनन देख्यो तुम तिनहीं। बड़ो भाग्य तव यहि जग अहहीं॥

जीव चराचर आदि सब, सुख-दुख जो कछु पाय।
प्रभु माया वश सो भ्रमत, यहि जग रहत भुलाय॥१२॥

मत्स्य कूर्म आदिक अवतारा। इहै विप्र धारयो बहु बारा॥
इहै एक दूसर नहिं कोई। धरयो बराह रूप द्विज सोई॥
नरसिंह होइ प्रह्लाद उबारयो। वामन होइ बलिद्वार पधारयो॥
यहि द्विज पद गङ्गा प्रगटानी। पतित उधारन हित जग जानी॥
विप्र रूप धरि यहि युग माहीं। शास्त्र बिचार करत सब पाहीं॥

वेदहु जान सकत नहिं कोई। जाहि जनावै जानै सोई॥
मन्त्र हमार जपेहु मन लाई। तेहिकर फल जय ही नहिं भाई॥
जपकर फल पाएहु तुम अबहीं। परब्रह्म देखेउ तुम जबहीं॥
जाहु शीघ्र तुम प्रभु के पासा। गहहु चरण तजि जगकी आसा॥

देह समर्पहु जाइ तुम, धरहु चरण पर माथ।
दीन जानि प्रभु तुरतही, करिहैं तुम्हें सनाथ॥१३॥

यह सब कथा गुप्त अति अहही। मन्त्राधीन कहेहु हम तुमही"॥
अस कहि देवि गई सुरलोका। जागेहु विप्र गयउ सब शोका॥
तुरत गयउ सो प्रभु के पासा। चरण परेउ मन भरे हुलासा॥
प्रभु उठाय तेहि हृदय लगावा। निरखि दीनता अति मन भावा॥
प्रभू कहेउ तुम यह का करहू। "कृपा दृष्टि चाहौं" सो कहेहू॥
प्रभु बोले "सुनु पण्डित बाता। दिग्विजई तुम जग विख्याता॥
कहु काहे मम चरनन परहू"। विप्र कह्यो, "प्रभु अब सो सुनहू॥
भजत तुमहिं सब सिद्धी आवत। नारायन सब तोहिं बतावत॥
तुमहिं चीन्ह सक अस नहिं कोई। प्रथमहिं शङ्का मम मन होई॥
तुम पूछेहु मोहिं उतरु न आवा। तब कारण नहिं बूझन पावा॥

गर्व रहित तुम स्वयं प्रभु, शास्त्र कहत यह बात।
सत्य बात मोहिं यहि लगत, और न कछू सोहात॥१४॥

तीन बार प्रभु मोहिं हरावा। तबहूँ गौरव मोर बढ़ावा॥
ईश्वर बिनु अस करै को कहहू। निश्चय तुम नारायन अहहू॥
तिरहुत दिल्ली काञ्ची काशी। विजय नगर आदिक पुर राशी॥
जहाँ जहाँ पण्डित सब रहहीं। जीतेउँ जाइ हमहि तिन सबहीं॥
सोई हम तुव सन्मुख आई। बुद्धि मोरि सब गई हेराई॥
प्रभु ढिग यहै बात बड़ नाहीं। देवो कह्यो सबै मोहिं पाहीं॥
सरस्वती पति प्रभु तुम अहहू। हमरो बड़ो भाग्य का कहहूँ॥
यहि नगरी शुभ लग्नहिं आयो। तव दर्शन अमोघ हम पायो॥
बँधे अविद्या बंधन माहीं। वृथा भ्रमे हम सब जग माहीं॥
बड़े पुण्य तुव दर्शन पायौ। कृपा करयो भव बन्धन नाश्यौ॥

पर उपकार स्वभाव तुव, सरन आपुनो लेहु।
करहु दया प्रभु दीन पर, शिक्षा प्रभु मोहिं देहु॥१५॥

यहि विधि द्विज बिनती बहु कीन्हा। प्रभु प्रसन्न होइ उत्तर दीन्हा॥
"सुनहु विप्र तुम अति बड़भागी। सरस्वती बोलत जेहि लागी॥
विजय हेतु विद्या नहिं ताता। कृष्ण भजहिं बुध पण्डित ज्ञाता॥
मनहिं विचार करहु तुम भाई। छाँड़ि शरीर जीव जब जाई॥
धन पौरुष कछु संग न जाई। यहि ते बुध सब तजि चतुराई॥
भजहिं कृष्ण सब दृढ़ मति होई। अस विचारि तुमहू करु सोई॥

सब जंजाल छाँड़ि तुम ताता। भजहु कृष्ण जो सब सुखदाता॥
जबलों जीवहु एहि संसारा। कृष्ण भजहु यह सबको सारा॥
विद्या कर फल यह सुनु भाई। कृष्ण चरण मन रहै लुभाई॥
यह उपदेश कहेउँ तोहि पाहीं। भक्ति सत्य केवल जग माहीं"॥

मधुर वचन सुनि विप्रवर, प्रभु कहँ कीन्ह प्रणाम।
लीन्ह लाइ उर ताहि प्रभु, भा परिपूरण काम ॥१६॥

प्रभु आलिंगन पायउ जबहीं। कटिगे सब भवबन्धन तबहीं॥
"दम्भ सकल परिहरि सुनु द्विजवर। भजहु कृष्ण तुम निज मन दृढ़कर॥
करेहु दया सबपर सुखदाई। मानहु मोर वचन मन लाई॥
देवी कहो जो तुम सन बाता। कहेहु काहु सन तुम नहिं ताता॥
वेद गुह्य यह बात प्रकटहीं। करत प्रकाश दुःख जन लहहीं॥
आयु क्षीण निश्चय ही होई। दुख पावै परलोकहु सोई"॥
प्रभु आज्ञा पायो द्विजराया। चरण वन्दि उर आनन्द छाया॥
बार बार प्रभु चरणन परेऊ। हर्षित भवन तबहिं द्विज गयऊ॥
भक्ति, विरक्ति, विज्ञान आदि सब। विप्र हृदय उपजे सबही तब॥
विजय दम्भ सब मन सों भागा। प्रभु चरणन महँ अब मन लागा॥

हाथी घोड़ा आदि सब, बाँटि दीन्ह हर्षाइ।
दीन होइ अति प्रेम सों, भजत गौर मन लाइ ॥१७॥

यहि विधि कृपा करहिं प्रभु जेहिपर। कृष्ण भजत जग छाँड़ि सोइ नर॥
राजपाट सब सुख कहँ छाँड़त। भिक्षुक कर्म करत सुख मानत॥
कलियुग महँ श्री रूप सनातन। राज छाँड़ि छाए वृन्दावन॥
सुख वैभव सब यहि जग चाहत। कृष्ण दास वैभव सब त्यागत।
तबहीं लौं सुख संपति माँगत। जब लौं भक्ति सुखहिं नहिं जानत॥
राजपाट सुख का तेहि आगे। मोक्ष सिद्धि कछु भक्त न माँगे॥
प्रभु की कृपा चहत हरिदासा। यहि ते शास्त्र भक्ति परकासा।
दिग्विजई यहि विधि उद्धारा। प्रभु कर यश छायहु संसारा॥
पण्डित यह सब सुनि संवादा। भे प्रसन्न सब तजे विषादा॥
सबहि बड़ाई प्रभु कर करहीं। जीतेउ दिग्विजई एक क्षणहीं॥

गर्व निमाई जो करत, सार्थक भो सो आज।
दिग्विजई कहँ विजय करि, राखेहु सब कर लाज ॥१८॥

एतो बड़ पण्डित जग नाहीं। रिणी भए हम सब एहि पाहीं॥
"न्याय पढ़ै यदि," कह कोउ बाता। भट्टाचार्य होब यह ताता॥
कोउ कहै हम सब मिलि भाई। "वादी सिंह," देब पद जाई॥
यह सब माया जानहु आही। सब देखत बूझत कोउ नाही॥
एहि बिधि नवद्वीप पुर माहीं। प्रभु कर यश गावत सब जाही॥
नवद्वीप वासी बड़ भागी। प्रभु लीला कीन्हेउ जेहि लागी॥

दिग्विजई लीला जे सुनहीं। कतहुँ पराजय सो नहिं लहहीं॥
विद्यारस प्रभु कर अति सुन्दर। सुनत सो होय गौर कर अनुचर॥
श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
श्री वृन्दावनदास किय कछु पद युग गान।
वृजभूषण भाषा किय ज्ञान॥

॥इति श्री चैतन्य भागवते आदि खण्डे दिग्विजई विमोचनं नाम नवमोऽध्यायः॥

दशम अध्याय

जय जय महा प्रभु श्री गौर सुन्दर।
जय नित्यानन्द प्रिय नित्य कलेवर॥
जय जय श्री प्रद्युम्न मिश्र को जीवन।
जय जय परमानन्द पुरी प्राणजन॥
जय जय सर्व वैष्णव धन प्राण॥
कृपा दृष्टि करि प्रभु देहु भक्ति दान॥

अब प्रभु कथा सुनहु मन लाई। विप्र रूप भक्तन सुखदाई॥
एहि विधि प्रभु शिष्यन सँग लीने। विहरत सदा रहहि रँग भीने॥
नगर लोग सब करत बखाना। बड़ा सबहि महँ गौर सुजाना॥
राजा आदि सकल प्रभु देखी। करहिं दण्डवत प्रीति विशेषी॥
प्रभुहिं देखि सब आदर करहीं। गौरचरित लख अति सुभ लहहीं॥
पुरजन देवादिक जौ पूजहिं। अन्न वस्त्र प्रभु गृह सब भेजहिं॥
परम व्यई प्रभु कछु नहिं राखहिं। दीनदुखी कहँ सो सब बाँटहिं॥
दीन देखि प्रभु अति हर्षाई। अन्न वस्त्र सब देहि मँगाई॥
निरवधि अतिथी प्रभु गृह आवहिं। यथा योग्य प्रभु सन सब पावहिं॥
कोउ दिन संन्यासी बहु आवहिं। हर्ष सहित प्रभु तेहि बैठावहिं॥

मातु निकट एक शिष्य तब, भेजहिं दीनदयाल।
"पाक बनावहु सबहिं लगि, हम आवत तत्काल"॥१॥

घर मँह व्यंजन है कछु नाहीं। चिंता करत मातु मन माँहीं॥
केहि बिधि पाक बनावहुँ जाई। तेहि क्षण सामग्री बहु आई॥
तब लक्ष्मी बहु पाक बनावा। गौर आइ सब भोग लगावा॥
संन्यासिन कहँ तबहिं बोलावा। प्रेम सहित प्रभु सबहिं जिंवावा॥
एहि विधि अतिथी सेवा करहीं। सकल लोग कहँ शिक्षा देहीं॥
होइ गृहस्थ धर्म नहिं जाना। अतिथी-सेवा मन नहिं आना॥
गृही होइ अतिथी नहिं पूजत। रौरव नरक दुजाइ ख भोगत॥

यदि गृह महँ कछु संबल नाहीं। तृण जल भूमि अवसि गृह माँहीं[1] ॥
मधुर वचन कहि तेहि परितोषै। फल अङ्कुर सों तेहि संतोषै ॥
यथा शक्ति सेवा करु जाई। "अतिथीभक्ति" कहत एहि भाई ॥

अति आदर कर अतिथि सों, पूछहिं अति सन्मानि।
जो माँगै सो देहिं तेहि, अच्युत सम अनुमानि ॥२॥

भाग्यवान अति भिक्षुक अहहीं। नारायण गृह भोजन करहीं ॥
प्रभु कर अन्न देव मुनि चाहत। भिक्षुक तेहि कहँ सहजहिं पावत ॥
कोउ कोउ कह अस उक्ति बनाई। प्रभु प्रसाद कोउ अन्य न पाई ॥
ब्रह्मा, शिव, सुक, नारद आदी। व्यास आदि परमारथ वादी ॥
नवद्वीप अवतार सोहावा। जानि सकल सुर तहँ सब आवा ॥
भिक्षुक रूप धारि सब काहू। प्रभु गृह आवहिं अधिक उछाहू ॥
और शक्ति केहि महँ अस भाई। प्रभु सन्मुख आवै हर्षाई ॥
कोउ कहत सुन बात हमारी। दीन दुखी तारब एहि बारी ॥
देवादिक तो प्रभु सँग रहहीं। दयाहीन पर प्रभु नित करहीं ॥
यहि अवतार प्रतिज्ञा भाई। सुर-दुर्लभ जो बाँटब जाई ॥

यही ते प्रभु दीन कहँ, अन्न देत हर्षाइ।
होत कृतारथ जीव सब, सुरदुर्लभ पद पाइ ॥३॥

श्री लक्ष्मी देवी हर्षाई। करत काज गृह कर मन लाई ॥
वधू चरित लखि कै सब हर्षाहिं। शची मातु अतिसै सुख पावहिं ॥
गृह कारज सब लक्ष्मी करहीं। प्रातकाल सों तनिक न टरहीं ॥
स्वस्तिक आदि देव गृह लिखहीं। पूजा लागि साज सब धरहीं ॥
शची मातु सेवा मन धरहीं। तुलसी पूजन नित प्रति करहीं ॥
लक्ष्मी चरित देखि प्रभु हर्षहिं। मुख सों एकौ बात न बोलहिं ॥
लक्ष्मी प्रभु सेवा हित लागी। चरण निकट बैठी सब त्यागी ॥
अद्भुत चरित शची तब देख्यो। प्रभुपद निकट ज्योति अवरेख्यो ॥
कोउ दिन पद्म गंध अति आवै। घर बाहर सब दिसि सो छावै ॥
एहि विधि रमासहित हरि रहहीं। गुप्त रूप कोउ जान न सकहीं ॥

तब प्रभु यात्रा करन को, करि विचार मन माँहिं।
बंग देश को जाव हम, कह्यो प्रभू सब पाँहिं ॥४॥

प्रथमहिं मातु निकट प्रभु जाई। यात्रा की सब बात सुनाई ॥
लक्ष्मी प्रति प्रभु बोले तबहीं। माता कहँ हम सौंप्यो तुमहीं ॥

---

१. तथाहि मनु संहितायां (३—१०१)—

तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सुनृता।
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥

अर्थ

(दरिद्रता के कारण यदि घर में अन्न नहीं) तो शयन के हेतु तृण, विश्राम के हेतु भूमि, जल और प्रिय वचन का धार्मिक के घर में (इन सब वस्तुओं का) अभाव नहीं हो सकता।

करेहु सासु सेवा मन लाई। अतिथी सेवेहु अति हर्षाई॥
सब प्रबन्ध करि गौर गोसाईं। लियो शिष्य कछु साथ बोलाई॥
बंग देश शुभ यात्रा कीन्हा। सकल लोग कहँ दर्शन दीन्हा॥
गौरहिं देखि सबहि नर नारी। अचरज करहिं मनहिं अति भारी॥
अस सरूप हम कहुँ नहिं देखेउ। मानहु काम भूमि पर उतरेउ॥
धन्य धन्य इनके पितु माता। धन्य प्रभू तुम जन सुखदाता॥
धन्य सती जो व्याहेहु इनहीं। सेवा प्राप्त करै जो नितहीं॥
एहि बिधि बंग देश नियराए। पद्मावती तीर प्रभु आए॥

जल तरंग शोभा निरखि, अति अपार जलधार।
वन उपवन राजत तहाँ, हर्ष गौर उदार॥५॥

पद्मावती तीर प्रभु जाई। स्नान कीन्ह सब सँग हर्षाई॥
धन्य भई पद्मावति तबहीं। चरण स्पर्श प्रभुकर भा जबहीं॥
पद्मावती नदी अति सुन्दर। तासु तीर बन सबहि मनोहर॥
स्थान सोइ प्रभु के मन भावा। शिष्य सकल अतिही सुख पावा॥
रहे तहाँ प्रभु गन सह जाई। जल क्रीड़ा प्रभु के मन भाई॥
यह संवाद पाइ सब लोगा। कहहिं भलो यह बनो सँयोगा॥
प्रभु कर सुयश दशौंदिशि छायो। विद्यासागर मम गृह आयो॥
भेंट लेइ बहु पण्डित आए। विद्यार्थी गण चहुँ दिशि छाए॥
हाथ जोड़ि बिनती बहु करहीं। प्रभु छबि देखि मोद मन भरहीं॥
"बड़ो भाग्य प्रभु आप पधारे। धन्य धन्य बहु भाग्य हमारे॥

वहुत यत्न करि जाहिं हम, नवद्वीप सुखधाम।
सो प्रभु आपु पधारे, भे हम पूरण काम॥६॥

तुम सम अध्यापक नहिं भाई। गुरू वृहस्पति परौ लखाई॥
यह दृष्टान्त योग्य तुम नाहीं। अस पांडित्य कहाँ जग माहीं॥
ईश्वर अंश अहो तुम ताता। निश्चय यहै सुनहु तुम भ्राता॥
एक निवेदन अहै गोसाईं। विद्या दान देहु हर्षाई॥
तव टिप्पणी पढ़न सब चाहत। शिष्य करौ हम सब यह माँगत।
कीरति तव रहिहै यहि देशा"। सुनत बचन बिहँसे सुर ईशा॥
प्रभु संतोष सबहिं कहँ दीन्हा। तहाँ वास कछुदिन प्रभु कीन्हा॥
बंग देश तव पावन भयऊ। अजहूँ धन्य कहत सब कोऊ॥
मध्य मध्य पापी कोउ आई। लोग बिगाड़हिं बुधि भरमाई॥
उदर भरन हित करहिं उपाई। रामहि आपु कहहिं समुझाई॥

कृष्ण कीर्तन छाँड़ि कै, पापी कोउ इक आइ।
कहवावै निज नाम सों, जनता कहँ भरमाइ॥७॥

पापी नहिं बूझत यह बाता। तीन दिना लघु जीवन ताता॥
राढ़ माँझ एक असुर बिराजै। विप्र होइ विप्रन सँग बाजै॥

आपुन कहँ "गोपाल" बतावै। सब "सियाल" वाकों गुहरावैं॥
श्री चैतन्य चन्द्र बिनु कोई। और नहीं ईश्वर जो होई॥
हाथ उठाइ सत्य हम कहई। जगन्नाथ चैतन्यहिं अहई॥
जेहि के सुमिरन तें दुख भागत। जासु भक्त सुमिरन सुख पावत॥
सकल भुवन जाको यश गावत। गौर भजन नीको मोहिं लागत॥
श्री वैकुण्ठनाथ यहि रीती। बंग निवास कीन्ह अति प्रीती॥
सब शिष्यन कहँ प्रभू पढ़ावत। शोभा निरखि लोग सुख पावत॥
बहुत शिष्य प्रभु के ढिग आवत। प्रेम सहित प्रभु सबहिं बतावत॥

प्रभु ढिग पाठ पढ़न हित, आवत बटु समुदाय।
पढ़ि पढ़िकै तब शिष्य सब, निज-निज घर चलि जायँ॥८॥

पदवी प्राप्त कीन्ह सब आई। रहे मास दुइ प्रभु हर्षाई॥
इहाँ दुखिन मन लक्ष्मी रहहीं। गौर विरह सो सहि नहिं सकहीं॥
आई सेवहिं अतिमन लाई। गौर बिरह दिन प्रति अधिकाई॥
नाम मात्र भोजन सो करई। कठिन बिरह दुख सहि नहिं सकई॥
क्रंदन करहिं रात्रिभर जाई। गौर चरण ध्यावहिं मनलाई॥
प्रभु समीप जान सो चाहेउ। निज प्रतिबिंब तहाँ सो राखेउ॥
प्रभु पद ध्यान धारि हिय माहीं। क्षण महँ पहुँच गई प्रभु पाहीं॥
इहाँ शची दुख कहि नहिं जाई। रोअत अति कुररी की नाई॥
यह दुख कथा कहत नहिं बनई। तेहिते अति संक्षेपहिं कहई॥
भक्त सकल सुनि भए दुखारी। कीन्ह काज सब समय बिचारी॥

बंग देश महँ बास करि, कछु दिन दीनदयाल।
शिक्षा शिष्यन कहँ दई, सबहीं कियो निहाल॥९॥

तब सुधि प्रभु कहँ गृह को आई। सुनत लोक सब व्याकुल धाई॥
जेहि कर शक्ति जहाँ लगि होई। प्रभु सन्मुख राखहि सब सोई॥
स्वर्ण, रजत, जलपात्र, सिंहासन। कंबल वस्त्र बहुत बिधि आसन॥
उत्तम वस्तु जहाँ लगि गृह महँ। आनि धरेउ प्रभु आगे सब तहँ॥
आशिर्वाद सबहिं प्रभु दीन्हा। यात्रा कर उद्यम तब कीन्हा॥
विदा लीन्ह सब सन प्रभु जाई। श्री गौरांग चले हर्षाई॥
प्रभु सँग लगे शिष्य बहु आई। पढ़न हेतु नदिया महँ जाई॥
ताही समय विप्र एक आवा। अति सुकृती विद्वान सुहावा॥
साधन साध्य समुझि नहिं पावा। बूझेसि बहुजन उतरु न भावा।
इष्ट मन्त्र नित जपत निरन्तर। तदपि शांति नहिं तेहि उर अन्तर॥
रात्रि शेष एक सपना देखेउ। देव एक तेहिते अस कहेऊ॥

भाग्यवान तुम सुनहु द्विज, चिन्ता अब कछु नाहिं।
श्री निमाइ सब कहहिंगे, गमनहु तिनके पाहिं॥१०॥

साधन साध्य सबै वह कहिहैं। पद्मातीर जाउ सो मिलिहैं॥
नर नहिं वे हैं नरनारायण। धारि रूप आए जग तारन॥

गुप्त बात नहिं कोउसन कहेऊ। नहिं तों जन्मजन्म दुख भोगेऊ॥
अन्तर्ध्यान देव तब भयउ। तपन मिश्र तबहीं उठि बैठेउ॥
स्वप्न देखि द्विज रोवन लागे। अति आनन्द प्रेम रस पागे॥
चले तुरत उठिकै प्रभु पासा। मन प्रसन्न उर अधिक हुलासा॥
बैठे जहाँ गौर अति सुन्दर। शिष्यन सँग अति रूप मनोहर॥
विप्र आइ चरणन शिर नावा। हाथ जोड़ि तब वचन सुनावा॥
"हम अति हीन दीन जन स्वामी। कृपा करहु तुम अन्तरयामी॥
साधन साध्य कछू नहिं जानत। कहहु मोहिं हम अति दुख पावत॥
विषयादिक सों मन हर्‌यो, शांति मिली नहिं मोहिं।
करहु पार यहि दीन कहँ, सत्य कहत हम तोहिं" ॥११॥
प्रभू कहेउ तुम अति बड़भागी। कृष्ण पदारविन्द अनुरागी॥
कृष्ण भजन अति अगम अपारा। कलि महँ सुलभ कीन्ह करतारा॥
चारहु युग कर धर्म विचारा। क्षिति पर रखि प्रभु धाम सिधारा*॥
ध्यान, भजन, सेवा, संकोर्तन। चारिहु युग कर धर्म निदेशन॥
नाम यज्ञ कलि एक अधारा। किए अन्यथा नहिं भवपारा॥
जपहु रात दिन तुम हरिनामू। खात पियत सोअत सब ठामू॥
यहि के महिमा कर नहिं पारा। कलिमहँ सुनहु विप्र यह सारा॥
जप तप यज्ञ नाहिं कलि माहीं। हरी भजन बिनु दूसर नाहीं॥
कृष्ण भजहु तुम घर पर जाई। दृढ़ विश्वास धरहु मन लाई॥
साधन साध्य सबै जो अहहीं। नाम जपत जानब तुम सबहीं॥
महा मंत्र[1] यह श्लोक है, सोलह नाम को तन्त्र।
बत्तीस अक्षर याहि में, संत भजहिं यहि मंत्र ॥१२॥
उपजै प्रेम जपत यहि जबहीं। साधन साध्य जानिहौ तबहीं॥
श्री मुख सों शिक्षा सुनि काना। कीन्ह दंडवत विप्र सुजाना॥
विप्र कह्यो हम प्रभु सँग चलहीं। प्रभु तब कह्यो "जपहु हरि अबहीं॥
वाराणसि अबही तुम जाहू। कछु दिन बाद मिलब पतियाहू॥
साधन साध्य कहब तब तुमहीं। नाम जपहु सुख सों तुम नितहीं"॥
अस कहि प्रभु आलिंगन कीन्हा। प्रेम दान तेहि कहँ प्रभु दीन्हा॥
प्रेम मगन अति पुलकित भयऊ। प्रभु उपदेश हृदय महँ धरेऊ॥
तब इकंत महँ प्रभु सन जाई। स्वप्न सकल सो कहेसि बुझाई॥
सुनि प्रभु कहेउ गुप्त करि राखहु। काहू सन तुम यह जनि भाषहु॥
अस कहि बिदा ताहि प्रभु दीन्हा। शुभलग्नहि पयान प्रभु कीन्हा॥

---

*. तथाहि श्रीमद्भागवद्गीतायाम्—

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

अर्थ—साधुओं की रक्षा, दुष्टों का नाश तथा धर्म संस्थापन (रक्षा और प्रचार) के हेतु हम (भगवान) प्रत्येक युग में अवतार लेते हैं।

तथाहि श्री मद्भागवते १०-८-१३ श्लोके—

बंग देश कहँ धन्य करि, आए प्रभु निज धाम।
प्रेम सहित सबसों मिले, भे सब पूरण काम ॥१३॥

संध्या समय गौर गृह आए। सकल वस्तु लीन्हें मन भाए॥
जननी चरण जाइ शिर राखा। वस्तु सकल सन्मुख रखि भाखा॥
तुम्हरी कृपा कुशल हम आए। अस कहि गंगा न्हान सिधाए॥
पाक करन हित जननि सिधारी। परिजन सकल दुखित अतिभारी॥
शिक्षा गुरु लखि धवल तरंगा। गङ्ग प्रणाम कीन्ह अति रङ्गा॥
गङ्गा न्हाइ गौर गृह आए। नित्य कर्मकरि बहु सुख पाए॥
भोजन कीन्ह अधिक हर्षाई। द्वार आइ बैठे सुखदाई॥
सब परिजन आए तेहि काला। मिले सबहिं प्रभु दीनदयाला॥
भ्रमण कथा प्रभु बहुविधि बरनी। भाषा कर वर्णन हँसि कीनी॥
लक्ष्मी विजय कहेउ नहिं कोऊ। दुखी होब सुनि कै प्रभु सोऊ॥

कछुक समय रहि लोग सब, गए आपने वास।
शिष्यन सँग प्रभु कौतुकी, करत हास परिहास ॥१४॥

शची देवि अन्तर दुख पाई। प्रभु के निकट तबौ नहिं आई॥
प्रभु तब स्वयं मातु ढिग जाई। देखेहु ताहि दुखित मन आई॥
बोले मधुर वचन प्रभु तेहि छन। माता दुखित अहहु केहि कारन॥
दूर देश सों हम गृह आए। मंगल मोद सबहिं मन भाए॥
मन मलीन देखत हौं तुमहीं। कारन कवन बतावहु हमहीं॥
पुत्र वचन सुनि अति दुख पाई। नीचे मुख करि रोअत जाई॥
प्रभू कहेउ माता हम जानेउ। बधू अमंगल कछु हम सुनेऊ॥
तब सब लोगन्ह कहेउ बिचारी। स्वर्गलोक तव वधू सिधारी॥

आसन् वर्णास्त्रयोह्यस्य गृह्णतोऽनुयुगं तनुः।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतांगतः॥

अर्थ—सत्ययुग में शुक्ल, त्रेता में रक्त, द्वापर में कृष्ण और कलियुग में भगवान का पीत वर्ण होगा।

तथाहि—

कृते यद् ध्यायते विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तत् हरिकीर्तनात्॥

अर्थ—सत्ययुग में ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से, द्वापर में सेवा से और कलिकाल में नाम कीर्तन से भगवान प्रसन्न होते हैं।

तथाहि—

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

अर्थ—हरिनाम के बिना कलिकाल में दूसरी गति नहीं है॥

१. अथ महामन्त्र—

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

लक्ष्मी विजय सुनत दुख पावा। नत मस्तक कछु समय बिताया॥
नारि विरह करि अंगीकारा। मौन होइ प्रभु करहिं बिचारा॥
लोक रीति सों खेद करि, कीन्हेउ दुःख प्रकाश।
पुनि धीरज धरि गौर प्रभु, बोले तब सुखराश॥१५॥
प्रभू कहेउ "दुख काहे करहू। माता तुम धीरज अब धरहू"॥
होनहार सो निश्चय होई। ताकों मेटि सकै नहिं कोई॥
"जग अनित्य" वेद अस भाषा। निज आधीन ईश जग राखा॥
योग वियोग सकल जो होई। प्रभु इच्छा जानहु तुम सोई॥
पति सन्मुख जो सद्गति पावै। तेहि कर भाग्य बड़ो सब गावै"॥
यहि बिधि जननी कहँ समुझाई। सकल कृत्य कीन्हेउ सुरसाईं॥
अमृत सम सुनि प्रभु की बानी। सुखी भए दुख निशा सिरानी॥
यहि विधि प्रभु श्रीगौर किशोरा। लगे पढ़ावन सबहिं उदारा॥
श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
वृन्दावन दास कछु यश कियो गान॥१६॥

श्री चैतन्म भागवते आदि खण्डे वंग देश विजयो नाभ व्रजभूषणदास कृत भाषानुवाद दशमोऽध्यायः का समाप्त।

एकादश अध्याय

जय जय गौरचन्द्र जय नित्यानन्द।
जय जय महाप्रभु गौर गोविन्द॥
स्नान ध्यान करिकै प्रभु नितही। करि प्रणाम जननिहिं प्रभु चलहीं॥
शिष्यन कहँ प्रभु जाइ पढ़ावहिं। श्री मुकुन्द सञ्जय के धामहिं॥
जासु तनय पुरुषोत्तमदासा। जन्म-जन्म दोउ प्रभु कर दासा॥
प्रतिदिन तिनके गृह प्रभु जाई। शिष्य पढ़ावहिं अति हर्षाई॥
चण्डी गृह महँ प्रथमहिं आई। आसन पर बैठहिं शिर नाई॥
शिष्य सकल तब क्रम सो आवहिं। हर्ष सहित प्रभु सबहिं पढ़ावहिं॥
जौ कोऊ शिष्य भूलि कै कबहीं। भ्रम वश तिलक लगाय न सकहीं॥
तब प्रभु धर्म सनातन लागी। मर्यादा रचहिं सब त्यागी॥
तेहि क्षण अति लज्जित तेहि करहीं। ऐसो कर्म करो नहिं कबहीं॥
प्रभू कहैं तुम तिलक न दीन्हा। आज मनहुँ संध्या नहिं कीन्हा॥
यदि कपाल पर द्विजन के, तिलक न देखौ जाय।
तौ मसान सम कहहिं बुध, सो द्विज अति दुख पाय॥१॥

१. तथाहि (भा० ६।१६।१६) "कस्य के पति पुत्राद्या मोह एवहि कारणम्" भाषा—पति पुत्र किसका कौन है। मोह ही सबका कारण है।

संध्या आजु न किएहु बिचारी। संध्या वंध्या भई तुम्हारी॥
संध्या जाइ करहु तुम घरहीं। पाठ पढ़न आएहु पुनि तबहीं॥
सकल शिष्य प्रभु के जे अहहीं। धर्म परायण सो नित रहहीं॥
कौतुक मिस प्रभु कर परिहासा। सब कर जाइ करहिं उपहासा॥
केवल स्त्रीसन प्रभु नहिं बोलहिं। श्रीहट वासिन कहँ प्रभु छेड़हिं॥
तिनकी भाषा महँ प्रभु बोलहिं। तिनहिं चिढ़ाइ सबहिंसन बाजहिं॥
"हय हय" कहि सब क्रोधसों कहहीं। देश तुम्हारो जानत सबहीं॥
मातु पिता सब श्रीहट वासी। काहे करत मोर तुम हाँसी॥
मानै नहिं प्रभु जन सुर त्राता। और खिजावैं कहि कटु बाता॥
महा क्रोध करि मारन धावहिं। भागि चलैं प्रभु, सो नहिं पावहिं॥

अधिकारी के निकट कोउ, पकरि प्रभुहिं लै जाय।
सकल सखा सब जाइकै, प्रभु कहँ पुनि लै आय॥२॥

कोउ दिन प्रभु कहुँ छिप कर बैठहिं। फोरि कमंडल घर महँ पैठहिं॥
करहिं चपलता सब सन जाई। स्त्री लोगन सन बोलहिं नाहीं॥
स्त्री अस नाम गौर अवतारहिं। सुनेउ कबहुँ नहिं प्रभु निज कानहिं॥
याही तें सब भक्त बिचारी। नागर गौर न कोउ उचारी॥
यद्यपि सब स्तव प्रभु कहँ सोहैं। बुधगन तदपि न ऐसो कहैं॥
श्री मुकुन्द मन्दिर यहि रीती। पाठ पढ़ावहिं सबहिं सप्रीती॥
चहुँदिशि शिष्य विराजत रहहीं। मध्य गौर शोभा अति लहहीं॥
विष्णु तैल कोउ दास लगावै। व्याख्या करत प्रभू सुख पावैं॥
प्रात समय दुइ प्रहर पढ़ावहिं। तब गंगा महँ जाइ नहावहिं॥
पुनि अपरान्ह समय महँ आई। शिष्य पढ़ावहिं प्रभु सुखदाई॥

सब शिष्यन कहँ ध्यानदै, शिक्षा देत सुझाय।
एक वर्ष महँ शिष्य सब, पंडित ह्वै गृह जायँ॥३॥

सुत कर व्याह होब केहि भाँती। चिन्तित मातु रहत दिन राती॥
नगर माँझ सब कन्यहिं देखहिं। पुत्र योग्य मन माहिं बिचारहिं॥
नवद्वीप एक पंडित ज्ञाता। नाम सनातन सब सुखदाता॥
अति उदार हरि भक्त सुजाना। पर उपकारी सब कोउ जाना॥
राजपंडित अस पदवी जासू। सबही कर अति आदर तासू॥
भाग्यवान अति सब जन कहहीं। बहु लोगन कहँ पालन करहीं॥
अति सुन्दर एक कन्या ताही। मूर्तिमती लक्ष्मी सम आही॥
शची मातु देखेउ तेहि जबहीं। पुत्र योग्य जानेउ सो तबहीं॥
गंगा न्हान परम प्रिय तेही। मातु पिता सेवा रत रहहीं॥
विष्णुहिं पूजत अति मन लाई। जगत मातु सम छबि सुखदाई॥

घाट किनारे शची कहँ, देखत ही ढिग जाय।
नम्र होइ पायन परत, मन महँ अति हर्षाय॥४॥

आशिर्वाद मातु तेहि देहीं। अति सुन्दर पति तुम कहँ मिलहीं॥
शची मातु मन महँ तब गुनई। पुत्र योग्य यह कन्या अहई॥
पंडित हूँ सन सब मिलि कहहीं। कन्या योग्य गौर वर अहहीं॥
पण्डित काशीनाथ बोलाई। शची मातु बोली हर्षाई॥
मिश्र सनातन यदि मन भावै। निज कन्या हम कहँ सो देवै॥
पण्डित गयउ तहाँ तत्काला। सुमिरत कृष्ण कृष्ण गोपाला॥
अति आदर करिकै तिन पूछेउ। केहि कारण तुम आज पधारेउ॥
पंडित कहेउ अहै एक बाता। मानहु मोर बचन तुम ताता॥
निज कन्या विश्वम्भर अर्पहु। कन्या योग्य उचित वर जानहु॥
यह सम्बन्ध मोहिं अति भावा। जौ तुम्हरौ मनहू सुख पावा॥

कृष्ण सहित जिमि रुक्मिणी, सोहत अति गुणखान।
विष्णु प्रिया अस गौर की, जोड़ी बनी महान॥४॥

वचन सुनत द्विज अति सुखमानी। निज लोगन पुछेहु सनमानी॥
सबहि कहेउ का पूछहु ताता। दाहिन तुम कहँ भयउ विधाता॥
हर्षित होइ तब पंडित राजा। द्विज सन कहेउ करब सब काजा॥
बड़ भाग्य हम अस वर पावा। करहु काज अब जो मन भावा॥
हम सम्मत सबही विधि अहहीं। आज्ञा होइ सो हम सब करहीं॥
सुनि पंडित हर्षित अति भयऊ। शची मातु सन सब कछु कहेऊ॥
कार्य सिद्धि सुनि हर्षित माता। माथ नवायेउ हरि सुखदाता॥
सब उद्योग करन सो लागी। आन उछाह अतिसै सुख पागी॥
शिष्य सकल सुनि शुभ संवादा। अति प्रसन्न सब तजेउ विषादा॥
बुद्धिमंत तब सब सन कहेहू। सब उद्योग करब हम सुनहू॥

श्री मुकुन्द तबहीं कहेउ, सुनहु सखा मतिधीर।
कछुक काज हमहूँ करब, तुम उदार बलवीर॥५॥

बुद्धिमन्त तब बचन उचारा। करब महोत्सव बड़ यहि बारा॥
ब्राह्मन सम विवाह नहिं होई। राजा सम करिहौं सब सोई॥
सब मिलि शुभदिन लग्न बिचारी। सब उद्योग करहिं अति भारी॥
अति विशाल चन्द्रातप बाँधेउ। कदली वृक्ष चहूँदिशि राखेउ॥
पल्लव आम्र चहूँ दिशि बाँधा। पूर्ण कलश दीपक हू राखा॥
दीन्ह निमन्त्रण सब कहँ जाई। वैष्णव पण्डित सब सुखदाई॥
"संध्या समय सबहिं कल आई। शुभ अधिवास करब हर्षाई॥
बीड़ा लै आशिष सब दीजै। सफल मनोरथ सबकर कीजै"॥
शुभ अवसर शुभ लगन सोहाई। वाद्य बजन लागे सुखदाई॥

ताल मृदंग बाजन लगे, बीणा अरु सहनाइ।
शंख पखावज आदि सब, सुनत सबै हर्षाइ॥६॥

जय जयकार सती सब करहीं। विप्र वेद ध्वनि मिलि उचरहीं ॥
सभा मध्य बैठे प्रभु आई। चहुँदिशि बैठे द्विज समुदाई ॥
अति प्रसन्न ह्वै सब मनमाहीं। चन्दन लेप करत सब पाहीं ॥
अतर देइ माला पहिरावहिं। बीड़ा लै सबहीं सुख पावहिं ॥
द्विज कर अन्त नगर महँ नाहीं। बहु आवत बहु जात सराही ॥
तिन महँ अति लोभी जे लोगा। बार बार आवत करि योगा ॥
चन्दन बीड़ा लै पुनि जावैं। आनँद मगन कौन लखि पावैं ॥
प्रभु हँसि तब आज्ञा अस दयऊ। बीड़ा तीन देउ सब कोऊ ॥
माला चंदन देहु लुटाई। चिन्ता कछुक करहु जनि भाई ॥
एक बार लै पुनि जो आवत। लहि संतोष सो अब घर धावत ॥

पाछे कोउ जन चीन्हि कै, कहैं द्विजहिं कोउ बात।
परमार्थहु कर दोष अति, समुझत प्रभु सकुचात ॥७॥

द्विज-प्रिय प्रभु अस आज्ञा दीन्हा। पूर्ण मनोरथ सब कर कीन्हा ॥
अब कोउ बार बार नहिं आवै। तीन बार लै सब गृह जावै ॥
माला चन्दन पान गिलौरी। रहा भँडार सकल भरि पूरी ॥
मर्म न काहू कछु कोउ जाना। नगर लोग सब करहिं बखाना ॥
बाँटन महँ जो महि पै गिरेऊ। सो लखि सबहिं अचंभा भयऊ ॥
प्राकृत जन कर कई विवाहू। तेहि सामग्री होय उछाहू ॥
सकल कहहिं धनि-धनि अधिवासू। सबहि मगन उर अधिक हुलासू ॥
बहु उत्सव हम देखेउ भाई। यहि आगे मोहिं कोउ न सोहाई ॥
यहि उत्सव सम कोउ नहिं कीन्हेंउ। एहि समान बाँटेउ नहिं कोऊ ॥
मिश्र सनातन आए तबहीं। सामग्री लीन्हें सब जनहीं ॥

शुभ अधिवास भयउ तब, कीन्ह तिलक द्विजराज।
वेद पढ़त सब विप्रवर, भयउ सकल शुभ काज ॥८॥

जय जयकार लोग सब करहीं। बहु विधि वाद्य बजावत सबही ॥
मिश्र सनातन करि सब काजू। गए भवन सब सहित समाजू ॥
गौर स्वजन सब यहि विधि जाई। शुभ अधिवास कीन्ह तेहिं ठाईं ॥
सामग्री लक्ष्मी कहँ दीन्हा। बहुत भाँति पूजन सब कीन्हा ॥
प्रात काल करिकै अस्नाना। विष्णुहिं पूज्यो गौर सुजाना ॥
बैठे बन्धु सहित प्रभु आई। नान्दीमुख कीन्ह्यो हर्षाई ॥
कर्म सकल प्रभु विधिवत कीन्हा। विप्र पुरोहित कहँ बहु दीन्हा ॥
मंगल ध्वनि चहुँ ओर सुहाई। वाद्य बजत सबके मन भाई ॥
ध्वजा पताका तोरण बाँधेउ। कदली वृक्ष चहुँदिशि राखेउ ॥
शचीमातु अतिसय बड़ भागी। लोकाचार करन सो लागी ॥

प्रथमहि गंगा पूजिकै, षष्ठी पूजेउ जाइ।
सकल स्वजन गृह जाइकै, न्योत्यौ अति हर्षाइ ॥९॥

लावा, केला, तैल, गिलौरी । सेन्दुर आदि दीन्ह सब गौरी ॥
पुनि स्त्री गण कहँ सोइ सब बाँटेउ । प्रभु प्रताप द्रव्यहु सब बाढ़ेउ ॥
बार बार माता सब दीन्हा । तैल, स्नान नारि गण कीन्हा ॥
यहि विधि लक्ष्मी गृह, सब भयऊ । लक्ष्मी मातु परम सुख लहेऊ ॥
मिश्र सनातन परम सुजाना । आनँद मगन दीन्ह बहुदाना ॥
सकल कर्म करि गौर उदारा । बैठे आइ तबहिं निज द्वारा ॥
तब ब्राह्मण सब लीन्ह बोलाई । अन्न-वस्त्र दीन्हेउ मन भाई ॥
हाथ जोरि विनती बहु कीन्हा । जो जेहि योग्य ताहि सो दीन्हा ॥
आशीर्वाद सकल द्विज दीन्हा । भोजन लागि गवन सब कीन्हा ॥
समय जानि तबहीं सब लोगा । वस्तु सकल आनी अति योगा ॥

लगे सजावन गौर कहँ, सब मिलिके हर्षाइ ।
चन्दन लेप्यो सकल अँग, शोभा नहिं कहि जाइ ॥१०॥

केसर लेप कीन्ह अति सुन्दर । अर्धचन्द्र कर तिलक मनोहर ॥
हरि मन्दिर तेहि मध्य बनाई । स्वर्ण मुकुट दीन्हेउ पहिराई ॥
सूक्ष्म पीताम्बर प्रभु पहिरायो । करि त्रिकच्छ सबही मन भायो ॥
कज्जल श्री नयनन महँ दीन्हा । कानन कुण्डल मन हरि लीन्हा ॥
पुष्प माल गल महँ पहिराई । बाजू बँद बाँध्यो मन भाई ॥
धान दूब कंगन कर बाँध्यो । आम्र मंजरी प्रभु पहिरायो ॥
यथा योग्य करि सब शृङ्गारू । तब बरात कर करहिं विचारू ॥
प्रभु छबि देखि मुग्ध सब काहू । नयन नीर उर अधिक उछाहू ॥
समय जानि करि कह सब लोगू । विजय करहु अब होत बिलम्बू ॥
प्रहरेक घूमि नगर महँ भाई । गोधूली पहुँचब सब जाई ॥

दिव्य सिंहासन साजिके, बुद्धिमन्त मति धीर ।
प्रभु सन्मुख राखेउ तुरत, भई तहाँ अतिभीर ॥११॥

वाद्य गीत कोलाहल भारी । बेद पढ़त सब मंगलकारी ॥
भाट सकल मिलि कीर्तन करहीं । आनँद मगन लोग सब फिरहीं ॥
तब प्रभु मातु प्रदक्षिणा कीन्हा । बन्दि विप्र शुभ आशिष लीन्हा ॥
सिंहासन बैठे प्रभु जाई । सकल कँहारन लीन्ह उठाई ॥
जय जयकार लोग सब करहीं । नारी गण मंगल उच्चरहीं ॥
गंगा तीर प्रथम सब गयऊ । छत्र चँवर सब शिर पर धारेउ ॥
जलन लगे बहु दीप अपारा । खेल करत बहु वेश सँवारा ॥
बुद्धिमन्त के सैनिक जेते । चले पाँति महँ मिलि करि तेते ॥
नाना वर्ण पताकाधारी । तेहि पाछे सब चले सँभारी ॥
चले विदूषक नाना रूपा । लगे हँसन सब देखि सरूपा ॥

नर्तक नृत्य करहिं सब, निज निज लोगन साथ ।
अति हर्षित गावत चले, बिविध बाजने हाथ ॥१२॥

बजत मृदङ्ग, शंख, करताला। पटह, पखावज, डमरु बिशाला॥
नाना भाँति वाद्य सब बाजहिं। पणव निसान चहुँ दिशि गाजहिं॥
बहु शिशु बाजन बिच घुसि नाचहिं। गौर निरखि मन महँ सुख पावहिं।
बाल वृद्ध सब मिलि कै गावहिं। गंगातीर रम्य अस्थानहिं॥
पुष्प चढ़ाइ गंग सन्मानी। नगर चले सब अति सुखमानी॥
सकल अमानुष वैभव देखी। सोचहिं सब नर-नारि विशेषी॥
व्याह बड़ेन कर हम बहु देखे। अस वैभव कबहूँ नहिं पेखे॥
स्त्री अरु पुरुष प्रभुहिं लखि हर्षहिं। आनँद भरे पुष्प सब वर्षहिं॥
जिनके घर कन्या सुकुमारी। ते सब सोचत होय दुखारी॥
मोर भाग्य नहिं लिख्यो विधाता। पायहु हम नहिं अस जामाता॥

नवद्वीप वासीन के, करौं चरण परनाम।
निज नयनन देख्यो सकल, गौरचन्द्र सुख धाम॥१४॥

नगर माँझ तब चली बराता। भ्रमे सकल नदिया सुरत्राता॥
गोधूली वेला शुभ आई। मिश्र द्वार पहुँचे हर्षाई॥
जय जय शब्द भयो सुखकारी। बाजत वाद्य दुहूँ दिशि भारी॥
सहित समाज मिश्र तब आए। गोद लेइ गौरहिं बैठाए॥
वरन हेतु सामग्री लाई। जामाता ढिग बैठे आई॥
पाद्य अर्घ वस्त्रादिक दीन्हा। पूर्ण मनोरथ सब कर कीन्हा॥
तब तेहि पत्नी तहँ चलि आई। संग नारि सब परम सुहाई॥
मंगल पूजन विधिवत् कीन्हा। धान दूब मस्तक पर दीन्हा॥
आरति कीन्ह बहुत हर्षाई। लोकाचार सकल मनभाई॥
अलंकार सों तबहि सजाई। आसन सह लक्ष्मी को ल्याई॥

आसन पर तब गौर कहँ, बैठारयो सनमानि।
अन्तः पट करिकै तबहिं, करत रीति सुखमानि॥१४॥

तब नारीगण लक्ष्मिहिं ल्याई। सप्त प्रदक्षिण ताहि कराई॥
नमस्कार करि सन्मुख आई। पुष्प चढ़ायहु अति हर्षाई॥
वाद्य सकल बाजन तब लागे। जय जयकार करत सुख पागे॥
जगत मातु लक्ष्मी प्रभु चरना। माला अर्प्यो भव भय हरना॥
यहि विधि आत्म समर्पण कीन्हेउ। प्रभु माला सोइ तेहिगर अर्पेउ॥
लक्ष्मीनारायन तब दोउ जन। फेंकन पुष्प लगे हर्षित मन॥
देवन पुष्प वृष्टि झरि लाई। देखत नहिं कोउ तिन कहँ भाई॥
लक्ष्मी गण प्रभु गण मिलि डोलैं। निज-निज गण कर जै जै बोलैं॥
ऊँचे करि वर कन्या लेई। करहिं विवाद परस्पर तेई॥
वरगन जितै कबहुँ कन्यागन। हँसत गौर लखिकै सबही जन॥

करत मसखरी प्रभू सन, गौर हँसत लखि नेह।
आनन्दित ह्वै सबहि जन, बोलत भरे सनेह॥१५॥

शत शत दीप बरत चहुँओरा। वाद्य गीत महँ सब अति भोरा॥
वाद्य गीत कर ध्वनि अति भारी। गीत सुनत लागत सुखकारी॥
मुख चन्द्रिका[1] भई यहि रीती। बोलत मिलत सबहि अति प्रीती॥
लक्ष्मी सँग गौरहिं बैठारी। मिश्र सनातन समय विचारी॥
कन्यादान करन हित आई। पाद्य अर्घ दीन्हेउ सुखदाई॥
सकल कर्म विधिवत सब करिकै। किय संकल्प मोद मन भरिकै॥
बिष्णु-प्रीति हित कहिकै गौरहिं। कियो समर्पण प्रभुकर लक्ष्मिहिं॥
दिव्य धेनु शय्यादिकलाई। दासी दास दीन्हे हर्षाई॥
वाम पाश लक्ष्मी बैठाई। होम करन लागे सब आई॥
लोकाचार सकल शुभ कर्मा। वेदाचार आदि सब धर्मा॥

करिकै तब सब विप्रवर, जामातहिं गृह आनि।
वास दीन्ह निज भवन में, प्रेम सहित सन्मानि॥१६॥

भोजन कीन्ह सबहि मनभाई। वास तहाँ कीन्हेउ हरि राई॥
लक्ष्मी-कृष्ण एक सँग रहेऊ। अति आनन्द राति सब जागेऊ॥
मिश्र सनातन सह परिवारा। लहेउ सकल आनन्द अपारा॥
जाम्बवंत अरु जनक आदिजन। भए धन्य लहि विष्णु चरन धन॥
मिश्र सनातन सोइ धन पाई। पूजे गौर चरन मन लाई॥
विष्णुहिं पूजे वहु मनलाई। सोइ प्रसाद पायेहु सब भाई॥
प्रातकाल उठि कै सब आए। लोकाचार करत मन भाए॥
लखि अपराह्न समय सब लोगू। लगे चलन कर करन सँजोगू॥
वाद्य बजन लागे सब आई। स्त्रीगण जै जै करत सुहाई॥
आशिर्वाद देत द्विज सबही। श्लोक पढ़न लागे सब तबहीं॥

नमस्कार करि लोग सब, मिले सबहिं हर्षाय।
लक्ष्मी सह प्रभु गौर हरि, चढ़े पालकी जाय॥१७॥

हरि हरि कहि कै जयध्वनि करहीं। विदा कराय चले घर तबहीं॥
मारग मँह देखहिं नरनारी। करहिं प्रशंसा सब अति भारी॥
"भाग्यवती यह" स्त्री एक कहेऊ। "कमला पारवतीं बहु सेवेउ॥
तेहि ते अस सुन्दर वर पावा"। सुनि हँसि दूसर बचन सुनावा॥
हर गौरी सम हम अनुमाना। कोउ कह कमला हरि हम जाना॥
कामदेव रति सम कोउ कहेऊ। इन्द्र शची सम कोउ एक मानेउ॥
सीताराम सदृश कोउ भापहिं। निज निज रुचि मन सब अनुमानहिं॥
भाग्यवंत नदिया पुरवासी। निज नयनन देखेउ सुखरासी॥
कृपा दृष्टि प्रभु चहुँदिशि देखी। भए सुखी नर नारि विशेषी॥
नृत्य गीत बहु वाद्य बजावत। वर्षत पुष्प सबहि गृह आवत॥

शुभ क्षण अरु बेला विमल, आए प्रभु निज धाम।
शची मातु तब आइकै, पूज्यो प्रभु सुखधाम॥१८॥

---

१. वर और कन्या की परस्पर शुभ दृष्टि।

गृह भीतर तब गई लिवाई। संग सुहागिन नारि सुहाई॥
लक्ष्मी-नारायण तब आई। गृह भीतर बैठे हर्षाई॥
जय जय हरि सबही मिलि कहई। सो आनन्द कहत नहिं बनई॥
जेहि के मूरति केर विवाहू। दर्शन तृप्त होत सब काहू॥
पाप मुक्त सबही जन होई। स्वर्ग जाय सुख भोगै सोई॥
सोइ प्रभु कर विवाह जो देखेउ। सफल जन्म तेहि कर जग भयऊ॥
जत नट भाट आदि जे लोगा। सब कहँ दीन्ह्यो जो जेहि योगा॥
वस्त्र दीन्ह प्रभु द्विजन बोलाई। निज बांधव जन कहँ हर्षाई॥
बुद्धिमंत कहँ हृदय लगाई। तेहि परितोषेहु प्रभु सुखदाई॥
प्रभु लीला कर अन्त न भाई। आदि अन्त केवल कहि जाई॥

एक दंड महँ करहिं प्रभु, जित लीला सुख खान।
शत वर्षहु नहिं वरणि सक, कोऊ कवि जियजान॥१६॥
नित्यानन्द स्वरूप कर, आज्ञा शिर धरि मान।
सूत्र मात्र वर्णन कियो, तिनकी कृपा महान॥२०॥
यह लीला प्रभु गौर की, पढ़ै सुनै करि नेह।
गौर चरण पावत सोई, यामैं नहिं सन्देह॥२१॥
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानंद चाँद जान।
वृन्दावन दास किय कछु पद युग गान॥

॥ **इति श्री** चैतन्य भागवते आदि खंडे बृजभूषणदास कृतभाषा अनुवादे श्री विष्णु-प्रिया-परिणय वर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः॥

द्वादश अध्याय

जय जय दीनबन्धु श्री गौर सुन्दर।
जय जय लक्ष्मीकान्त जगत-ईश्वर॥
जय जय भक्त रक्षा हेतु अवतार।
जय सर्वकाल सत्य कीर्तन विहार॥
भक्त गोष्ठी सहित गौरांग जय जय।
चैतन्य कथा श्रवण मात्र भक्ति प्राप्त होय॥

दोहा—आदि खंड की कथा मृदु, अमृत सम जिय जान।
परम मनोहर गौर यश, जा महँ कियो बखान॥१॥

यहि विधि नवद्वीप के धामहिं। है गृहस्थ प्रभु शिष्य पढ़ावहिं॥
प्रेम भक्ति बाँटन प्रभु आए। करत न सो प्रभु का चित लाए॥
तुच्छ विषय सब लोग लुभाए। परमारथ पथ सकल भुलाए॥
गीता भागवतादि जे पढ़हीं। संकीर्तन तिनहूँ नहिं करहीं॥

भक्त सकल मिलि कीर्तन करहीं। तालो दै हरि नाम सुमिरहीं॥
करिं उपहास पखंडी कहहीं। "उच्च नाम कीर्तन किमि करहीं॥
ब्रह्म हृदय महँ सदा विराजत। हमहिं ब्रह्म, हम भेद न मानत॥
दास प्रभू कर भेद न भाई। व्यर्थ बकहिं सब गाल बजाई"॥
कोउ कहै हम सबही जानत। पेट भरन कर बिधि हम मानत॥
ऊँचे करिकै नाम सुनाई। लोगन कहँ सो देत जनाई॥

इनके घर अरु द्वार कहँ, तोड़हु सब मिलि जाय।
मंत्र विचारहिं सकल मिलि, दुष्टन कहँ समुझाय॥२॥

यह सुनि भक्त सकल दुख पावहिं। भय वश काहू सन न बतावहिं॥
शून्य सकल जग कहँ सो देखहिं। "कृष्ण कृष्ण" कहि प्रभु कहँ सुमिरहिं॥
हरीदास आए तेहि काला। शुद्ध भक्त अरु तेज विशाला॥
हरीदास कर चरित सुहावा। सुनतहि जाहि भक्ति नर पावा॥
बूढ़न ग्राम प्रगट भे आई। धन्य देश सोइ कारण भाई॥
अजहूँ कीर्तन होत सदाहीं। भक्त प्रसाद प्रगट सब ठाँहीं॥
कछु दिन तहाँ रहे हरिदासा। पुनि गंगा तट कीन्ह निवासा॥
फुलिया नगर रहे कछु काला। भजत कृष्ण प्रभु दीनदयाला॥
श्री अद्वैत भवन पुनि आए। शान्तीपुर अतिहो सुख पाए॥
हर्षित अति आचार्य गोसाईं। संत समागम सम कछु नाहीं॥

श्री अद्वैत संग महँ, करत प्रेम रस पान।
मगन रहत प्रभु भक्त सँग, गावत हरि गुन गान॥३॥

हरीदास गंगा तट फिरहीं। उच्च नाम कीर्तन तहँ करहीं॥
विषय विमुख सो परम विरागी। कृष्ण भक्त अतिसै अनुरागी॥
क्षणभरहू हरिनाम न छाँड़त। सदा कृष्ण हरिनाम उचारत॥
नृत्य करैं आपुहिं सो कबहीं। कबहुँ सिंह सम गर्जन करहीं॥
रोवत कबहूँ ऊँचे स्वर सों। हँसत कबहुँ अति प्रेम मगन सो॥
गर्जत कबहुँ करत हुंकारा। मूर्छित होइ गिरत बहु बारा॥
कबहुँ अलौकिक शब्द उचारत। व्याख्या करि बहुविधि सोइ भाषत॥
अश्रु कंप रोमाञ्च अपारा। कृष्ण-भक्ति के सकल विकारा॥
प्रभु हरिदास नृत्य जब करहीं। उदय शरीर होत ते सबही॥
नयनन सों जल बहत अपारा। पापंडिहु लखि करत बिचारा॥

पुलकावलि सब अंग पर, अद्भुत शोभा देत।
ब्रह्मा शिवहू लखि चकित, भक्तन मन हरि लेत॥४॥

फुलिया के ब्राह्मन जे अहहीं। श्रद्धा अति सब प्रभु पर करहीं॥
अति आदर सब तिन कर करहीं। तिन सँग नाम जपत सब रहहीं॥
कछु दिन तहाँ रहे हरिदासा। नाम जपत घूमत चहुँ पासा॥
काजी जाइ मुलुकपति ठाँई। समाचार सब कह्यो सुनाई॥

यवन होइ कर हिन्दू धर्मा। तेहि बुलाइ बूझहु सब मर्मा॥
सुनत बचन सोइ प्रभुहिं बुलावा। सकल दुष्ट मिलि तेहिं लै आवा॥
कृष्ण प्रसाद प्रभू हरिदासा। हरिपद कमलहिं दृढ़ विश्वासा॥
यवन कहा कालहुँ नहिं डरई। कृष्ण-कृष्ण सो निशिदिन करई॥
यवन संग सो तहँ चलि आए। सज्जन सुनिकै सब दुख पाए॥
बन्दीगृह महँ सब जन मन में। सोचहिं मिटिहि ताप दरसन तें॥

रक्षक गण आदिक जिते, बन्दी गण के साथ।
प्रभु आवत हैं देखि कै, सबहिं नवायो माथ॥५॥

भुज प्रलम्ब अरु नयन विशाला। कंठ विराजत तुलसी माला॥
भक्ति सहित सब कीन्ह प्रणामा। उपजी हृदय भक्ति निष्कामा॥
भक्ति देखि सब कर हरिदासा। आशिष दीन्हें अधिक हुलासा॥
"यहि विधि रहहु परम सुख रूपा"। बुझेहु नहिं कोउ बचन अनूपा॥
गूढ़ बचन कोउ समुझि न पावा। सुनत ताहि मन महँ दुख लावा॥
तब करि कृपा कहत हरिदासा। गुप्त बचन कर कीन्ह प्रकासा॥
आशिर्वाद दीन्ह हम सबही। बूझेहु नहिं पाएहु दुख तुमही॥
मंद बचन हम कबहुँ न कहहीं। करि विचार समुझहु तुम सबहीं॥
कृष्ण चरण मति सब यहि काला। यहि विधि सदा भजहु गोपाला॥
इहाँ कृष्ण कर चिंतन करहू। सब मिलि कृष्ण भजन रत रहहू॥

इहाँ अन्य कछु काज नहिं, करहु न कछु उत्पात।
सुमिरहु प्रभु अति दीन ह्वै, धन्य-धन्य तुम तात॥६॥

गृह पर जाय विषय महँ परिहो। हरिहिं बिसारि दुष्ट संग रहिहो॥
पुनि अपराध सकल सोइ होइहैं। विषय धर्म सबही मिलि करिहैं॥
बन्दी रहउ नाहिं हम कहेऊ। यहि विधि कृष्ण भजन नित करहू॥
यहि मिस हम आशिस अस दीन्हा। शंका चाहिय नहिं कछु कीन्हा॥
सब पर दया करत हम रहहीं। कृष्ण चरण रति उपजै सबहीं॥
मुक्त होय सब द्वैदिन माहीं। चिन्ता अब कछु कीजिय नाहीं॥
रहहु जहाँ जाकर मन भावा। कृष्ण चरण सब कर दृढ़ नावा॥
यहि विधि करि सबकर सन्माना। मुलुकपती पहँ कीन्ह पयाना॥
अतिसै तेज देखिकै राजा। बैठारयो सब सहित समाजा॥
मुलुकपती तब पूछत भयऊ। "कहौ भाइ तुम यह का करहू॥

यवन होइ बहु भाग्य सों, करहु अन्य कर धर्म।
हिन्दुन लखि हम खायँ नहिं, तुम बूझहु नहिं मर्म॥७॥

महावंश जन्मे तुम भाई। जाति धर्म सब धोइ बहाई॥
तुम आपन परलोक सुधारहु। कीन्ह्यो जो कछु सो अब त्यागहु॥
कलमा पढ़ि अब सब तजि देहू। मानहु मोर बचन दृढ़ गहू"॥
मधुर बचन तब कह हरिदासा। "सुनहु सखा हम सबकर दासा॥

ईश्वर एक जगत कर साईं। हिन्दू यवन भेद नहिं भाई॥
अहै पुरान कुरान एक मत। बिलग नाहिं है परमारथ पथ॥
नित्य शुद्ध प्रभु एक सदाहीं। अव्यय अरु अखंड जग माहीं॥
सबके हृदय बसत सोइ ईशा। पूर्ण ब्रह्म सोई जगदीशा॥
सोइ प्रभु कर जस आज्ञा होई। माथ नवाइ करत सब कोई॥
सोइ प्रभु नाम जगत सब लेई। निज-निज शास्त्र मते सब कहई॥

ईश्वर जेहि जग निरमयेउ, एक सोई जगदीश।
पोषण कर सब जीव कहँ, सुनहु न दूसर ईश॥८॥

ईश्वर मोहिं सन जाहि करावत। करौं सोइ मोहिं वोही भावत॥
हिन्दू कुल कोइ ब्राह्मण होई। यवन होइ इच्छा सों सोई॥
तेहि कर कहा करत जग कोई। कर्म लिखा सो निश्चय होई॥
मारन सों कछु काज न सरई। मारन धर्म नाहिं कोउ कहई॥
हिंसक जन निज हिंसा करहीं। याही तें बहु दुख जग सहहीं॥
करहु विचार तुमहि अब भाई। दोष होय तस करहु उपाई"॥
सत्य वचन सुनि सब मन भावा। काजी दुष्ट हृदय दुख पावा॥
बोलेउ अति सरोष सो पापी। "दण्ड देहु यहि जगपरितापी॥
बहु लोगन यहिके मत चलिहैं। यवन धर्म अपमानित होइहै॥
यहि कहँ घोर दंड कछु दीजै। हितकर बचन मान मम लीजै"॥

मुलुकपती तबहीं कहेउ, "सुनहु भाइ मम बात।
मौर शास्त्र जो कहत है, करहु तुमहुँ सोइ बात॥९॥

नाहिं त दण्ड देब हम तुमही। दंड भोगि, मनिहौ तुम अबही"॥
हरीदास दृढ़ होइ तब कहहीं। "प्रभु इच्छा कोउ टारि न सकही॥
जो अपराध करत फल पावत। ईश्वर करत जोइ मन भावत॥
देह खंड ह्वै प्राणहु जाई। हरीनाम छाँड़ब नहिं भाई"॥
मुलुकपती सुनिके तब पूछेहु। काजी कहा दण्ड तुम बोलहु॥
काजी कह "मारहु एहि भाई। प्रति बाजार घुमाइ घुमाई॥
बीस बजार मार यदि खाई। प्राण बचै तब जानौं भाई॥
तब हम इनकहँ ज्ञानि समुझिहैं। नाहिं त मरि सुरधाम सिधरिहैं"॥
डाँटि तबै सैनिक सन कहई। "मारेहु इमिजिमि प्रान न बचई॥
यवन होइ हिन्दुन कर धर्मा। करत दुष्ट, निज करै न कर्मा॥

दूर होइहै पाप तब, मरिहै जब यह नीच"।
आज्ञा सुनि सब लै चले, हरीदास कहँ खींच॥१०॥

महा क्रोध मारन सो लागे। प्रति बाजार तिनहिं करि आगे॥
कृष्ण कृष्ण सुमिरत हरिदासा। मगन प्रेम दुख करत न भासा॥
हरीदास पर होत प्रहारा। देखि दुखी सब करत विचारा॥
होइहै राज नाश कोउ कहहीं। दुःख देत संतहिं खल नसहीं॥

राजहिं मंत्रिहिं कोउ सरापहिं। मार-मार करि कोउ उठि धावहिं ॥
कोउ जाइ सैनिक पग धरहीं। धीरे मारहु तेहि सन कहहीं ॥
पैसा देन कहत जन कोऊ। तदपि न मानत सैनिक सोऊ ॥
दयाहीन सब दस्यू घोरा। पाप कर्म रत मद महँ भोरा ॥
प्रति बाजार क्रोध करि मारहिं। तदपि प्रभू कछु दुःख न मानहिं ॥
कृष्ण प्रसाद दुःख नहिं तेहीं। भक्तन कहँ दुख होत न कबहीं ॥

जिमि प्रह्लाद शरीर महँ, असुर प्रहार न भान।
सर्व शास्त्र वर्णन करत, हरि प्रताप जग जान ॥११॥

यहि विधि यवनन कीन्ह प्रहारा। दुःख न पायो प्रभू उदारा ॥
जेहि कहँ सुमिरत सब दुख भागत। तेहि कहँ दुःख कहा, सब जानत ॥
जो पापीगण तिनकों मारत। तिनहिं लागि हरिदास बिचारत ॥
कृष्ण कृपा इनपर तुम करहू। यह अपराध न कछु तुम गिनहू ॥
यहि विधि नगर नगर सब जाईं। मारत हरीदास सब ठाँईं ॥
प्राण लेनहित दृढ़ करि मारहिं। हरीदास कछु ताहि न मानहिं ॥
विस्मित होइ सब मिलि यह कहहीं। एते मार पुरुष नहिं बचहीं ॥
दुइ बजार को मारहि खाई। मरत सबै देखे हम भाई ॥
बीस बजार मार यह खाई। मरत नहीं अरु हँसत सदाई ॥
कोउ पीर यह निश्चय जानेउ। अस कहि सबै अचम्भा मानेउ ॥

यवन सकल बोलत, "सुनहु सुनहु हरिदास।
तुम्हरे कारण आजु हम, सबकर होइहैं नास ॥१२॥

एतो मार खाय मम पाहीं। तुम्हरो प्राण जाय किमि नाहीं ॥
निश्चय बध काजी अब करिहै। दया नैकु मन महँ नहिं धरिहै ॥
हँसकरि हरीदास तब भाषेउ। मोहिं जियत यदि तुम दुख पावउ ॥
तौ हम मरत लेहु यह अवहीं। अस कहि ध्यान धरेउ सो तबहीं ॥
ध्यान धरत आविष्ट सो भयऊ। सर्व शक्ति मय प्रभु सुख लहेऊ ॥
भए अचेष्ट श्वास नहिं तन में। विस्मय करन लगे सब मन में ॥
मुलुक पती पहँ लै गए तबहीं। "माटी देहु" कहेउ तत्क्षणहीं ॥
"सद्गति तब ह्वै है" कह काजी। नीच कर्म कीन्हेउ यह पाजी ॥
माटी दीन्हे सद्गति ह्वै है। गंगा फेंकहु दुख बहु पैहै ॥"
काजी बचन सुनत सब पापी। लगे उठावन जगपरितापी ॥

उठहिं न तब हरिदास प्रभु, बैठे निश्चल होइ।
विश्वम्भर प्रभु हृदय महँ, किमि उठाइ सक कोइ ॥१३॥

महामल्ल सब चहुँ दिसि ठेलहिं। एकौ अंग न प्रभु कर डोलहिं ॥
कृष्णानन्द मगन हरिदासा। बाहर कछु नहिं करत प्रकाशा ॥
हरीदास जानत कछु नाहीं। कहाँ अहौं जलथल के माँहीं ॥
जिमि प्रह्लाद कृष्ण कहँ भजहीं। तिमि हरिदास नाम बल रहहीं ॥

यह सब कछू विचित्र न मानहु। गौर सदा तेहिके उर जानहु ॥
हनूमान जिमि आपु बँधावा। ब्रह्म शस्त्र आदर मन भावा ॥
यहि विधि हरीदास सब सहेऊ। जग शिक्षा हित दुःख न मानेउ ॥
"दंड सहत यदि प्राणहु जाई। हरीनाम छाँड़ब नहिं भाई" ॥
जाकी रक्षा गोविंद करहीं। कोउ शक्ति तेहि मारि न सकही ॥
हरीदास सुमिरत मन माहीं। सकल अमंगल तुरत नसाहीं ॥

सत्य सत्य पार्षद प्रमुख, ठाकुर श्री हरिदास।
नाम प्रताप प्रचार हित, आए प्रभु सुखरास ॥१४॥

गंगा में फेंक्यो हरिदासा। कछु क्षण गए लीन्ह निश्वासा ॥
नदी किनारे तब प्रभु आए। नाम जपत उर आनँद छाए ॥
फुलिया नगर बहुरि प्रभु आए। नाम जपत बिचरत मन भाए ॥
यवनन देखत अति भय पायो। हिंसा मिटी प्रेम उर छायो ॥
पीर समुझि सब नावहिं माथा। यवन सकल तब भए सनाथा ॥
पुनि स्थिर भए कछुक हरिदासा। मुलुकपती आयो अति त्रासा ॥
हाथ जोड़ि ठाढ़ा भयो आगे। विनय करत उर अति अनुरागे ॥
सत्य सत्य तुम पीर सुजाना। तुम्हरे हृदय एक दृढ़ ज्ञाना ॥
योगी ज्ञानी मुख सों बोलहिं। सिद्धि तुमहिं पायो हम समुझहिं ॥
तुम्हरे दर्शन को हम आए। क्षमहुँ दोष प्रभु हम शिर नाए ॥

तुम्हरे सन्मुख हैं सबहि, एक बराबर नाथ।
शत्रु मित्र को भेद नहिं, अस कहि नायो माथ ॥१५॥

चीन्हे तुमहिं कौन जगमाहीं। जो इच्छा सोइ करहु सदाही ॥
गंगा तीर गुफा महँ रहहू। निज इच्छा सों जहँ तहँ भ्रमहू ॥
जो इच्छा होवे सो करहू। कृपा दृष्टि हम पर नित रखहू ॥
हरीदास गुण गण को गावै। दर्शन करत भक्ति उर आवै ॥
मारन हित आए जो आगे। पीर मानि के चरनन लागे ॥
यवनन पर करि कृपा गोसाईं। फुलिया आए अति हर्षाई ॥
उच्च नाम कीर्तन प्रभु करहीं। ब्राह्मण सभा गए प्रभु तबहीं ॥
विप्र सकल देखत हरिदासा। परमानंद मगन दुख नासा ॥
हरि हरि कहन लगे सब कोई। नाचत प्रभू मगन मन होई ॥
प्रभु कर अद्भुत सकल विकारा। अश्रु कम्प मूर्छादिक सारा ॥

प्रेम मगन प्रभु महि गिरत, श्री हरिदास सुजान।
निरखत द्विज सब मोद भरि, उर आनन्द महान ॥१६॥

बैठे स्थिर होइ तव हरिदासा। विप्र सकल बैठे चहुँ पासा ॥
हरीदास कह 'सुनहू कृपाला। दुःख न मानहु दीनदयाला ॥
हरिनिन्दा हम सुनेहु अपारा। सोइ हित दंड दीन्ह करतारा ॥
मोहि संतोष भयउ बड़ भारी। क्षमा कीन्ह प्रभु दीन बिचारी ॥

बड़ो पाप थोड़ें महँ टारी। हरि निन्दा सम अघ नहिं भारी॥
जे हरि निन्दा सुनैं सुनावैं। रौरव नरक वास ते पावैं॥
योग्य दण्ड दीन्ह्यो प्रभु मोहीं। पुनि अस पाप कबहुँ नहिं होही॥"
यहि बिधि विप्रन्हि कथा बुझाई। कीर्तन करत सबहिं हर्षाई॥
यवन सकल जे प्रभु दुख दयऊ। वंश सहित सब यमपुर गयऊ॥
तब हरिदास गुफा इक जाई। गंगा तीर बहुत सुखदाई॥

तहाँ बैठि हरिदास प्रभु, जपन लगे हरिनाम।
तीन लाख हरिनाम नित, लेत प्रभू निष्काम॥१७॥

गुफा भई वैकुण्ठ समान। आवहिं तहँ बहु भक्त सुजाना॥
महा नाग एक भीतर रहई। विष ज्वाला कोउ सहि नहिं सकई॥
ताकी झार सबै कोउ पावैं। हरीदास कछु भान न लावैं॥
ऐसी ताप कहा एहि ठाहीं। सोचत लोग सकल मन माहीं॥
विप्र सकल मिलि करहिं विचारा। ज्वाला किमि तहँ होत अपारा॥
वैद्य सकल आए तेहि ठाँई। देखि गुफा सब मन्त्र पढ़ाई॥
विषधर एक गुफा महँ रहई। इहाँ जाय कोउ रहि नहिं सकई॥
हरीदास सों सब मिलि कहेहू। विषधर निकट वास जनि करहू॥
तब सब मिलि आए प्रभु पासा। कहेउ बात सब सहित हुलासा॥
'जहाँ नाग तहँ उचित न वासा। रहउ अनत हम करब सुपासा॥

ज्वाला हम नहिं सहि सकत, आवत जब प्रभु पास।
यह बिनती प्रभु मान कर, करहु अनत कहुँ बास'॥१८॥

हरीदास कह सुनहु सुजाना। हम तो इहाँ बहुत सुख माना॥
बहु दिन इहाँ रहे हम भाई। विष की झार कबहुँ नहिं पाई॥
बड़ो खेद जो तुम दुख सहहू। करब सोइ जो तुम सब कहहू॥
रहहि सत्य यदि सो एहि ठाँई। काल्ह छाँड़ि यदि नाग न जाई॥
तौ हम काल अनत कहुँ जैहैं। कीर्तन करहु सबहिं सुख पैहैं॥
चिंता तजि सब कीर्तन करहीं। अचरज एक दीख सब तबहीं॥
हरीदास छाँड़ब सुनि बचना। महानाग त्यागेहु सोइ अयना॥
संध्या समय निकरि सो भाग्यो। सब के देखत दूरि परायो॥
महा भयंकर अद्भुत रूपा। नील पीत सो परम अनूपा॥
महामणी चमकत सब देखी। डरे सकल नर नारि बिशेखी॥

कृष्ण, कृष्ण भय सों कहत, देखि नाग को जात।
सुखी भए तेहि जातही, आनँद उर न समात॥१९॥

सर्प गयो अब ज्वाला नाहीं। विप्र सुखी भए सब मन माँही॥
महाशक्ति ठाकुर कर देखी। श्रद्धा द्विज सब करत विशेखी॥
यह बड़ि कौन बात प्रभु केरी। नाग गयो जेहि कर हित हेरी॥
जासु कृपा भव बंधन काटत। सो नित भक्त वचन सब राखत॥

एक कथा अद्भुत अब सुनहू। नागराज भाख्यो सो कहहूँ ।।
एक दिना बड़ मन्दिर माहीं। नाचत डंक[1] सबहि हर्षाहीं ।।
मंत्र सिद्ध नाचत अति सुख सों। ताल मृदंग बजत सब स्वर सों ।।
ऊँचे स्वर सबही मिलि गावत। हरीदास लखि अति सुख पावत ।।
नागराज वश मंत्रहिं होई। डंक शरीरहिं नाचत सोई ।।
कालीदह प्रभु कीन्ह जो लीला। सोइ गीत गावत सुख शीला ।।

निज प्रभु महिमा सुनत ही, उमग्यो प्रेम अपार।
मूर्छित होइ गिरे प्रभु, सके न आपु सँमार ।।२०।।

कछु क्षण महँ प्रभु चेतन पायो। करि हुंकार नृत्य मन लायो ।।
प्रभु आवेश देखि के नागा। एक ओर होइ चितवन लागा ।।
उठहिं गिरहिं ठाकुर हरिदासा। अश्रु कंप सब भाव प्रकाशा ।।
नयनन सों जल बहत अपारा। गीत सुनत सब धीरज हारा ।।
तिनके संग सबहि मिलि गावत। डंकहु हाथ जोरि प्रभु निरखत ।।
प्रभु आवेश शांत जब भयऊ। डंक आय नाचन पुनि लागेऊ ।।
प्रभु आवेश लोग सब देखा। लहेउ सबहि आनन्द विशेखा ।।
चरणधूलि प्रभु की सब लेहीं। प्रेम सहित सब अँग महँ देहीं ।।
ढोंगी एक विप्र मन लाई। हमहूँ नाचब प्रभु की नाईं ।।
मूरख लोग नृत्य सों भाई। करत भक्ति अस मन दृढ़ लाई ।।

अस विचारि सोइ स्थान महँ, गिर्यो तुरत भहराय।
स्वाँस रोकि मूर्छित मनहुँ, सबहि गए घबराय ।।२१।।

गिरत देखि तेहि डंक विचारी। मारन लग्यो क्रोध करि भारी ।।
बेंत लेई सो बहु विधि ताड़त। हाथ पैर सब अंगनि मारत ।।
मार खाय अति सै भय पाई। बाप बाप कहि चल्यो पराई ।।
तब निज सुख सों नाचन लागे। डंक नृत्य लखि सब सुख पागे ।।
अति आश्चर्य लोग सब गुनहीं। हाथ जोड़ि तब तेहि सन कहहीं ।।
केहि कारन प्रभु विप्रहिं मार्यो। हरीदास कहँ माथ नवायो ।।
यहि कर भेद मोहिं सन कहहू। प्रभु तुम सब कछु जानत अहहू ।।
विष्णु-भक्त अति नाग गोसाईं। प्रश्न सुनत अति सै हर्षाई ।।
डंक मुखहिं सो बोलन लागा। सुनत बचन सब अति अनुरागा ।।
बड़ रहस्य यह पूछेहु मोहीं। जगहित लागि कहब हम तोहीं ।।

श्री ठाकुर हरिदास कर, प्रेम भक्ति सब देख।
बड़ी भक्ति सों सबहि जन, आदर कियो विशेख ।।२२।।

---

१ सँपेरा। यह सँपेरा एक ब्राह्मण था जिसने मंत्र द्वारा नागराज को सिद्ध कर लिया था। नृत्य के समय नागराज इसके शरीर में आ जाते थे जिससे इसका नृत्य और गीत बहुत सुन्दर होता और जो कोई प्रश्न पूछता उसका यह ठीक उत्तर देते। भूत, भविष्य, वर्तमान सब कहता।

सोइ देखि ढोंगी सो ब्राह्मन। ईर्ष्या करिकै गिरयो ताहि छन॥
हमरे नृत्य बीच कोउ आई। विघ्न करै अस को जग भाई॥
हरीदास सम सो किमि होई। यहि कारण मारयो हम सोई॥
हमहूँ कहँ सब कोउ बड़ मानै। यहै द्वेष करि नाटक ठानै॥
कृष्ण प्रीति द्विज के उर नाहीं। दंभी बड़ो द्वेष मन माँहीं॥
विषय विमुख निष्काम जो होई। कृष्ण भक्ति पावै जन सोई॥
हरीदास कर नृत्य सुहावन। सोई नृत्य कर सब जग पावन॥
कृष्ण स्वयं नाचहिं तेहि संगा। तेहि दर्शन सों भवभय भंगा॥
तिनके योग्य नाम हरिदासा। तेहिके हृदय कृष्ण कर वासा॥
सब पर कृपा जगत उपकारी। प्रभू संग जन्मत तनुधारी॥

प्रति औतार जन्म सब, लेत पारषद आय।
विष्णु वैष्णव सेवहीं, विपथ कबहुँ नहिं जायँ॥२३॥

घड़ी एक जे इन सँग रहहीं। कृष्ण चरण पावत ते जनहीं॥
ब्रह्मा शिव भक्तन सँग चाहत। आदर करि सब इन कहँ मानत॥
व्यर्थ जातिकुल सब जग भाई। यहै दिखायो प्रभु महि आई॥
जन्मे नीच कुलहिं जग आई। हरीदास प्रभु आज्ञा पाई॥
नीच कुलहिं जो भक्ती पावत। शास्त्र सकल तेहि उत्तम मानत॥
उत्तम कुल जन्मेउ यदि कोई। भजै न कृष्णहिं पापी सोई॥
उत्तम कुल तेहिकर का करिहै। रौरव नरक जाइ सो परिहै॥
शास्त्र वाक्य सब कर विश्वासा। अधम कुलहिं जन्मे हरिदासा॥
असुर होइ प्रह्लाद सुहाए। हनूमान कपि जग यश छाए॥
यहि विधि हरीदास सुनु भाई। अधम जाति तिनके मन भाई॥

हरीदास के चरण की, देवहु चाहत धूर।
इनके दरसन के करत, होय पाप सब दूर॥२४॥

तीर्थ सकल चाहत मन माँहीं। हरीदास मम जल अवगाहीं॥
हरीदास आश्रय जे करहीं। तिनके दर्शन तें दुख टरहीं॥
शत मुख सों शत वर्ष बखानौं। कहि न सकौं तेहियश जियजानौं॥
भाग्यवान अति तुम सब भाई। प्रभु महिमा हमहूँ कछु गाई॥
सुकृती जे हरिदास सुमिरिहैं। कृष्ण चरण सो निश्चय पैहैं॥
अस कहि नाग मौन ह्वै रहेऊ। सुखी समाज सकल सब भयऊ॥
हरीदास महिमा अति भारी। कहेउ नाग तेहि समय बिचारी॥
सबहिं प्रीति हरिदास सों करहीं। नाग वचन सब संशय टरहीं॥
यहि विधि हरीदास नित रहहीं। भक्ति प्रकाश गौर नहिं करहीं॥
सबहि विमुख कोउ भक्ति न मानहिं। कीर्तन कर कोउ मर्म न जानहिं॥

भक्ति प्रकाश कतहुँ नहिं, नहिं हरिपद विश्वास।
वैष्णव देखत दुष्ट जन, सकल करत परिहास॥२५॥

अपनेहि मिलिके साधु सकलजन । करहिं कृष्ण कीर्तन आनँद मन ॥
करताली दै नाम सुनावैं । दुष्ट सकल अतिसै दुख पावैं ॥
पाषंडी सब मिलिकै कहहीं । राज्य नाश येही सब करहीं ॥
पड़ब अकाल घोर सब जानहु । यह सब बड़ ढोंगी तुम मानहु ॥
कीर्तन करि बहु भाव बतावैं । खान पियन हित बहु रँग लावैं ॥
नाच गाइ सब लोग रिझाई । पेट भरन कर करहिं उपाई ॥
चार मास वर्षा रितु रहई । शयन करहिं हरि सब सुख लहई ॥
तेहि महँ यहि सब हरिहिं पुकारहि । ऊँचे स्वर हरिनाम सुनावहिं ॥
उचित कबहुँ नहिं यह सब भाई । निद्रा भंग होब हरि राई ॥
क्रुद्ध होत तिनके संसारा । परहि अकाल न कछु निस्तारा ॥

महँगो होइहै धान यदि, कहत एक जन आय ।
धरि मारब हम सबहिं जन, कहुँ यदि भागि न जायँ ॥२६॥

"श्री गोविन्द नाम सुनु भाई" । कह्यो एक जन बड़ तब आई ॥
"लेत जागरण महँ सब लोगू । श्री एकादशि दिन तजि भोगू ॥
नित्य नाम जप नहिं कछु काजा । व्यर्थ देहिं दुख सकल समाजा" ॥
यहि बिधि अटपट सब जन कहहीं । वैष्णव सुनि सब अति दुख लहहीं ॥
तदपि कृष्ण कीर्तन सब करहीं । हरीदास सब सुनि दुख सहहीं ॥
भक्ति अनादर कर सब कोई । नाम जपहिं भक्तन दृढ़ होई ॥
ऊँचे स्वर हरि कीर्तन करहीं । पापी तेहि सुनिकै सब जरहीं ॥
हरि नदी ग्राम एक द्विज रहही । हरीदास सन क्रोध सों कहही ॥
"सुन हरिदास कहा तुम करहू । ऊँचे स्वर काहे तुम जपहू ॥
मन महँ जपहु शास्त्र कह भाई । उच्च नाम तोहि कौन बताई ॥

कौन शास्त्र महँ यह अहै, रटहु सदा हरिनाम ।
आजु सभा महँ कहहु मोहिं, भलो बन्यो सब काम" ॥२७॥

बोले तब हरिदास गोसाईं । जानहु सब हरिनाम बड़ाई ॥
तुम सब सन सुनि हम कछुजानी । कहहु कहा तुम सब बड़ ज्ञानी ॥
शतगुन पुण्य होय बुध भाषत । उच्चनाम सों जग सुख पावत† ॥
शत गुन पुण्य होय केहि कारन । कीन्हेउ प्रश्न विप्र अति पावन ॥
दोष कछुक नहिं शास्त्र बखानै । नाम जपत भक्तन सुख मानै ॥
कह हरिदास "सुनहु सब कोई । वर्णत वेद भागवत सोई ॥
हरीदास मुख शास्त्र विराजत । प्रेम मगन प्रभु ताहि बखानत ॥
'द्विजवर सुनहु नाम गुणभारी । सुनत जात जरि पातक भारी ॥
पशु पक्षी कीटादिक यावत । सुनत नाम सुरलोक सिधारत ॥
पशु पक्षी सब बोलि न सकहीं । नाम प्रभाव तरत हैं सबहीं* ॥

†—तथाहि "उच्चैः शतगुणंभवेत्"
अर्थ—ऊँचे स्वर से नाम लेने से सौगुना (पुण्य) होता है ॥

नाम जपत जन सोई तरत, पर उपकार न होय।
उच्चनाम के जपन तें, सुनत सकल जग सोय ॥२८॥

याही तें शत गुन फल कहहीं। शास्त्र सकल गुण वर्णन करहीं ॥*
मनहिं जाप सों जो फल लहहीं। सत गुन उच्च जाप सों मिलहीं ॥
ध्यान देइ अब सुनु मम पाही। निज हित नाम जपत मन माँही ॥
ऊँचे स्वर हरि भजन जे करहीं। सुनत ताहि जीवादिक तरही ॥
जिह्वा पाइ जीव जग सोऊ। नर बिनु बोलि सकत नहिं कोऊ ॥
व्यर्थ जन्म इनकर सब जानहिं। उच्च नाम इन सब कहँ तारहिं ॥
यहि महँ कहा दोष तुम देखहु। यहि सन बड़ को हृदय विचारहु ॥
कोउ निज पेट भरहिं जग माहीं। कोउ भोजन बहु जनहिं कराहीं ॥
दोउ महँ बड़ को कहहु विचारी। उच्चनाम महिमा अति भारी ॥
हरीदास कर वचन सुनत ही। भयउ क्रोध बोलेउ सो तबहीं ॥

"यहि कलिकालहिं होइहै, सकल धर्म पथ नाश।
दरशन कर्ता† भए जब, ठाकुर श्री हरिदास ॥२९॥

शास्त्रहिं सुने कि कलि के शेषा। शूद्रहि करब शास्त्र उपदेशा ॥
अन्त कहा अबहीं सब देखेहु। व्यापेउ घोर कली सब जानहु ॥
यहि विधि सकल लोग भरमाई। घर-घर खात फिरत हर्षाई ॥
व्याख्या तुम जो किय सब पाहीं। हम देखब सब ग्रंथन माँहीं ॥
उचित नहीं यदि तब हम आई। नाक कान कटिहौं तव भाई" ॥
दुष्ट वचन सुनिके हरिदासा। हरि हरि कहत चले निज वासा ॥

---

*तथाहि श्री भागवते दशम स्कंधे (३४।१७) सुदर्शन वाक्य

"यन्नाम गृह्णन्नखिलान् श्रोतॄनात्मानमेवच।
सद्यः पुनाति किं भूयस्यस्य स्पृष्टः पदाहि ते ॥

भावार्थ

जीव आपका नाम केवल उच्चारण करने से अपने को और जो अन्य सुनने वाले हैं तथा उन सुनने वालों के जो संसर्गीलोग हैं, सबको पवित्रकर देता है। हम निश्चय ही आपके श्री चरण स्पर्श के प्रभाव से अपने को तथा अन्य लोगों को पवित्र करेंगे ॥

*तथाहि श्री नारदीये प्रह्लाद वाक्यं

जपता हरि नामानि स्थाने शत गुणाधिकः।
आत्मानश्च पुनात्युच्चैर्जन् श्रोतॄन् पुनाति च ॥

भावार्थ

हरि नाम जप परायण मौन जपकर्ता से उच्चैःस्वर से हरिनाम जप करने वाले को सौगुना अधिक फल होता है। कारणकि मन में जप करने वाला अपने को ही पवित्र करता है और ऊँचे स्वर से जप करने वाला अपने को और साथ-साथ में सुनने वालों को भी पवित्र करता है।

† धर्म शास्त्र को बतलाने वाला।

उत्तर तेहिकर कछु नहिं दीना। उच्चनाम कीर्तन लवलीना॥
पापी सकल सभासद वृन्दा। बोले नहिं कछु सब मतिमन्दा॥
राक्षस सकल नाम के ब्राह्मण। यम यातना योग्य सब खलगण॥
कलियुग महँ राक्षस सब आई। ब्राह्मण कुल जनमत दुखदाई॥
सुजन जनहिं दुख देन हित, जनमत कलिमहँ आय।
संग घालि बहु लोग कहँ, सब मिलि यमपुर जायँ॥३०॥*
ऐसे विप्रन संग बराई। त्यागि देहु सब मिलिकै भाई॥†
कहत शास्त्र अस नीति बिचारी। ये सब त्यागन के अधिकारी॥
ब्राह्मण होई अवैष्णव जोई। तेहि सँग बात करत नहिं कोई॥
होत पुण्य छय संगहि कोने। धर्मशास्त्र साक्षी बहु दीने॥
कछु दिन पै सोइ विप्रहिं पापी। ग्रस्यो वसन्त रोग परितापी॥
गिर गइ नाक दुःख बहु भोगेउ। कहेउ जथा सोई फल पाएउ॥
भक्ति शून्य लखि जग हरिदासा। कृष्ण, कृष्ण कहि छाँड़हि श्वासा॥
वैष्णव दर्शन इच्छा करिकै। नवद्वीप आए सब तजिकै॥
सकल भक्त लखिकै हरिदासा। भे प्रसन्न सबकर दुख नासा॥
श्री अद्वैत पाइ हरिदासहिं। इन कहँ राख्यो प्राण समानहिं॥
सब वैष्णव हरिदास पर, श्रद्धा करत अपार।
हरीदास तिन जनन पर, दियो अपनुपौ वार॥३१॥
पाषंडिन के वचन सब, कहत सबै मिलि आय।
गीता भागवतादि पर, कर बिचार सुख पाय॥३२॥
सुनहिं पढ़हिं जे यह कथा, प्रेम सहित मन लाय।
गौर कृपा तेहि पर करत, दरस देत हर्षाय॥३३॥
श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चांद जान।
वृन्दावन दास किय कछु पद युग गान॥
वृजभूषण भाषा किय मान।

इति श्री चैतन्य भागवते आदि खण्डे श्री हरिदास महिमा वर्णनं नाम द्वादशोध्यायः॥

---

* तथाहि वाराह पुराणे महेश वाक्यं—

राक्षसाः कलिमाश्रित्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु।
उत्पन्ना ब्राह्मणकुले बाधन्ते श्रोत्रियान् कुलान् (कृशान्)॥

भावार्थ

कलियुग में राक्षस लोग ब्राह्मण के घर जन्म लेकर जो सद् ब्राह्मण सच्चे मार्ग पर चलने वाले भगवद्भक्त हैं उनको बाधा पहुँचाते हैं अर्थात् कलंकित करते हैं।

† तथाहि पद्म पुराणे महेश वाक्यं—

किमत्र बहुनोक्तेन ब्राह्मणाः ये अवैष्णवाः।
तेषां संभाषणं स्पर्शं प्रमादेनापि वर्जयेत्॥

भावार्थ

इस विषय में हम और क्या कहें! ब्राह्मण होकर भी यदि वह अवैष्णव है तो भूलकर भी उससे भाषण नहीं करना चाहिए और न उसका स्पर्श करना चाहिए।

त्रयोदश अध्याय

जय जय श्री गौर सुन्दर महेश्वर।
जय नित्यानन्द प्रिय नित्य कलेवर॥
जय सर्व्व वैष्णवेर धन प्राण।
कृपा दृष्टि कर प्रभु सर्व्व जीव प्राण॥

आदि खंड की कथा सोहाई। सावधान है सुनु सब भाई॥
जेहि विधि गया चले हरिराई। प्रेम प्रकाश करत मन लाई॥
अध्यापक होइ गौर गोपाला। विद्या महँ मन दीन्ह कृपाला॥
पाषंडी बाढ़े चहुँ ओरा। भक्ति नाम कोउ जान न थोरा॥
माया महँ सब जीव भुलाने। भक्त देखि मन अति दुख मानें॥
गौर पढ़ावन महँ चितलाए। भक्त दुःख लखिके मन लाए॥
वैष्णव निन्दा खल गण करहीं। सुनत सकल प्रभु अति दुख लहहीं॥
आत्म प्रकाश करब हम अबहीं। गया होइ आवैं हम जबहीं॥
इच्छामय प्रभु श्री भगवाना। गया दरश हित कीन्ह पयाना॥
शास्त्र विधी सबही प्रभु कीन्हा। शिष्य अनेक साथ प्रभु लीन्हा॥

हर्षित होइ के मातु सन, आज्ञा प्रभु तब लीन्ह।
गया दरश कहँ पुनि चले, हरि चरनन मन दीन्ह॥१॥

धर्म कथा प्रभु सब सन कहहीं। हास विलास मोद मन भरहीं॥
चलहिं मार्ग जो प्रभु सुख पाहीं। नगर ग्राम तीरथ है जाहीं॥
मन्दारहि पर्व्वत प्रभु आए। मधुसूदन लखि शीश नवाए॥
तब पर्व्वत पर विचरण कीन्हा। दरश देइ सब कहँ सुख दीन्हा॥
प्राकृत जन सम प्रभु सुरराया। ज्वर प्रकाश कीन्हेउ निज काया॥
जगत सिखावन हित प्रभु आए। मारग महँ ज्वर सबहिं दिखाए॥
चिन्तित भए शिष्य सब अतिही। कीन्ह उपाय बहुत सब जनहीं॥
ज्वर छाँड़त नहिं सब घबराए। प्रभु तब सबहिं उपाय बताए॥
"विप्र चरण जल सब दुख नासत। लावहु बेगि अबहिं ज्वर भागत॥"
पान कीन्ह प्रभु जन हित लागी। शिष्य सकल प्रभु के बड़ भागी॥

दूर भयउ ज्वर निमिष महँ, देखत सब हर्षान।
विप्र चरन महिमा अमित, सकल शास्त्र परमान॥२॥

विप्र चरन जल प्रभु कर पाना। प्रभु स्वभाव सब शास्त्र बखाना*॥

---

*तथाहि श्री गीतायां (४।११)

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ! सर्व्वशः॥

अर्थ—हमको जो जिस रूप से भजन करता है, हम भी उसका उसी रूप से भजन करते हैं। हे पार्थ! मनुष्य **लोग हमारे ही पथ** का अनुसरण करते हैं।

दास्यभाव सों प्रभुहिं जो ध्यावै। तेहि कहँ प्रभु निश्चय नित सेवै॥
याही तें सबही अस कहहीं। सेवक-वत्सल प्रभु जो अहहीं॥
हारहिं आपु जितावहिं जनहीं। प्रभू-चरन रक्षक जग अहहीं॥
यहि बिधि करि प्रभु ज्वर कर नाशा। द्विज महिमा प्रभु कीन्ह प्रकाशा॥
तीर्थ पुनपुना पहुँचे जाई। स्नान कीन्ह प्रभु अति हर्षाई॥
पितृ कर्म करि कीन्ह प्रणामा। गया प्रवेश कीन्ह सुखधामा॥
ब्रह्मकुण्ड महँ करि अस्नाना। पितृ देव कहँ प्रभु सन्माना॥
प्रभु पुनि पादपद्म पर जाई। दरस करत नैनन जल छाई॥
घेरे चरन चिह्न द्विज रहहीं। पुष्प माल तेहि पर बहु चढ़हीं।

गन्ध पुष्प अरु वस्त्र बहु, अलंकार अरु भोग।
पादपद्म पर राजहीं, को कवि बरणै योग॥३॥
चहुँदिशि श्री पद पद्म के, द्विज सब करत बखान।
महिमा श्री पद कमल की, सुनत प्रभू हर्षान॥४॥

शंकर हृदय माँझ ध्यावत जिन चरनन कों
लक्ष्मी जिन चरनन की आसा नित राखहीं।
राजा बलि सीस पर सोभित जो चरन भयौ
सोई श्री चरण यह भक्त सब ध्यावहीं॥
छिनहूँ इन चरनन कों ध्यान जे धरत नर
यमराज दूत दूरही ते देखि भाजहीं।
'भूषण' योगीन को हू दुर्लभ जो श्रीचरन
निरखत सोइ भाग्यवंत भक्तन सुख पावहीं॥

यहि पद सों गंगा प्रगटानी। यहि पद ध्यान धरत मुनि ज्ञानी॥
श्री अनन्त जेहि चरन पुजारी। निरखहु सोइ पद भवभय हारी॥
चरन प्रभाव सुनत प्रभु हर्षे। प्रेम मगन लोचन जल बर्षे॥
कम्प स्वेद रोमांच अपारा। उदय भए सब एकहि बारा॥
सर्व जगत हित गौर उदारा। प्रेम भक्ति कर करब प्रचारा॥
सोई प्रचार करन प्रभु चहई। प्रेम मगन लोचन जल बहई॥
बहत नयन सों अविरल धारा। देखि विप्र सब करहिं बिचारा॥
अति अद्भुत संन्यासी कोऊ। प्रेम मार्ग में रत है सोऊ॥
हरि इच्छा कहँ कहु को जाना। ईश्वर पुरि आए सोई स्थाना॥
पुरी देखि प्रभु गौर गोसाईं। दण्ड प्रणाम कीन्ह हर्षाई॥

ईश्वर पुरि हू गौर कहँ, देखि बहुत सुख पाइ।
नयनन सों जल बहि चले, लीन्ह गौर उर लाइ॥५॥

प्रेमानन्द मगन दोऊ जन। नयनन जल सों सींचि गयउ तन॥
प्रभू कहेउ तब दर्शन पायेउ। यात्रा सफल करन प्रभु आयेउ॥
पिण्ड देत तीरथ महँ जाई। तरैं पितृगण अस स्तुति गाई॥
पिण्ड देइ जेहि कहँ तहँ जाई। तरैं सोइ जन और न भाई॥

संतन के दर्शन तें सबहीं। तरैं पितृगण अस बुध कहहीं॥
तुम सम संत और कहँ मिलिहैं। आज तीर्थ फल हम सब पइहैं॥
भवसागर सों मोहिं उबारयो। यह शरीर हम तुमहिं समर्प्यो॥
कृष्ण चरण अमृत रस हमहीं। पान करावहु प्रभु हम कहहीं॥
यहै दान हम तुम सों माँगत। सुनि मृदु बचन पुरी अस भाषत॥
"ईश्वर अंश सत्य तुम ताता। पण्डित, सुनहु गूढ़ यह बाता॥

जग महँ कहँ पांडित्य अस, अस चरित्र विख्यात।
ईश्वर अंश बिना कोऊ, यहि जग लहै न तात॥६॥

आजु स्वप्न शुभ देखेउ प्राता। तेहि कर फल पायउ हम ताता॥
तव दर्शन तें पंडित सुनहु। परानन्द सुख अनुभव करहूँ॥
जब सों तोहिं देखेउ नदिया महँ। तब सों कछु भावै नहिं मोहिं कहँ॥
सत्य कहौं कछु और न मानहु। कृष्ण दरस सुख तोहि लखि पावहुँ॥"
सुनि प्रिय पुरी बचन प्रभु कहेऊ। बड़े भाग्य तव दरशन पावेउ॥
यहि विधि भई बतकही नाना। बरनब वेदव्यास सोइ जाना॥
पुरी निकट तब अनुमति लीन्हा। श्राद्ध करन हित तब मन दीन्हा॥
बालू पिण्ड फल्गु महँ कीन्हा। प्रेत गया पुनि प्रभु चल दीन्हा॥
श्राद्ध कीन्ह तहँ प्रभु हर्षाई। विप्रन दान दीन्ह मन लाई॥
हाथ जोरि बिनती बहु भाखी। पितृ उधार भए जग साखी॥

दक्षिण मानस कहँ चले, श्राद्ध कीन्ह मन लाइ।
राम गया पुनि प्रभु गए, राम गए जिहि ठाँइ॥७॥

राम अवतार श्राद्ध जहँ कीन्हा। यहि अवतार पिण्ड तहँ दीन्हा॥
श्राद्ध युधिष्ठिर कीन्हे जहाँ। शिष्य समेत गए प्रभु तहाँ॥
सोइ प्रीतिवश गौर गोपाला। सकल कर्म कीन्यो तत्काला॥
चहुँदिशि विप्र घेरि प्रभु बैठहिं। मन्त्र पढ़हिं अरू श्राद्ध करावहिं॥
पिण्डा करि प्रभु जल महँ फेंकहिं। पितृ सकल तेहि धरि-धरि लीलहिं॥
शची सुअन तेहि लखि कै हर्षहिं। भव बन्धन तिनकर सब खंडहिं॥
उत्तर मानस पिण्डदान करि। भीम गया पहुँचे पुनि श्रीहरि॥
शिव अरु भीम गयादिक स्थाना। पिण्ड देइ प्रभु अति सुख माना॥
षोडश गया पुनि कीन्ह पयाना। करि षोडशी दीन्ह बहु दाना॥
ब्रह्मकुण्ड महँ करि अस्नाना। गयाशिरहिं पहुँचे सुखमाना॥

पिण्डदान करिकै तहाँ, पादपद्म पर जाइ।
माला चन्दन लेइ कै पूजत अति हर्षाइ॥८॥

यहि विधि श्राद्ध कर्म सब कीन्हा। विप्र पूजि शुभ आशिष लीन्हा॥
पुनि निज बास चले सब काहू। प्रेम मगन उर अधिक उछाहू॥
करि विश्राम स्वस्थ तब होई। प्रभू बनावन लगे रसोई॥
रंधन पूर्ण भयउ जेहि अवसर। ईश्वरपुरि आए सह अनुचर॥

प्रेम मगन हरिनाम उचारन। झूमत झूमत मुनि चलि आवत॥
रन्धन छाँड़ि उठे हर्षाई। कीन्ह प्रणाम माथ महि लाई॥
आसन पर बैठारयो लाई। पुनि वचन बोले मुसकाई॥
भले समय हमहू इत आए। गौर सुनत अतिसै हर्षाए॥
कहत गौर बड़ भाग्य हमारा। भिक्षा आज करहु मम द्वारा॥
पुरी कह्यो तव प्रभु का पैहैं। गौर कह्यो हम और बनैहैं॥

और बनावन काज नहिं, अन्न करहु दुइ भाग।
हम दोऊ मिलि पाइहैं, धन्य हमारो भाग॥६॥

हँसि करिकै प्रभु मुनि सन कहेऊ। मोहिं पर यदि प्रसन्न तुम अहऊ॥
यह सामग्री तुम सब पावहु। अन्य पाक को ध्यान न राखहु॥
कछु संकोच करहु जनि ताता। भिक्षा करहु मानि मम बाता॥
अस कहि ताहि अन्न सब दीन्हा। हर्षित होइ दूसर पुनि कीन्हा॥
एती कृपा पुरी पर करहीं। पुरी कृष्ण सम प्रभु कहँ गिनहीं॥
श्री कर सों प्रभु पुरिहिं परोसहिं। परमानन्द पुरी सब पावहिं॥
गुप्त वेश तहँ लक्ष्मी आई। प्रभु हित पाक कीन्ह हर्षाई॥
भिक्षा मुनि कहँ प्रथम कराई। भोजन हित बैठे प्रभु जाई॥
ईश्वर पुरि सँग प्रभु करि भोजन। सुनत कथा सब भवभय मोचन॥
कृष्ण प्रेम धन पावै सोई। कृपा गौर की जेहि पर होई॥

सकल अङ्ग महँ पुरी के, दिव्य गन्ध प्रभु आनि।
निजकर सों लेपन कियो, मन महँ बहु सुख मानि॥१०॥

ईश्वरपुरि कर प्रेम अपारा। सोइ कथा को बरणै पारा॥
स्वयं प्रभू चैतन्य गोसाईं। पुरी जन्म स्थल देखेउ जाई॥
हट्ट ग्राम* कहँ कीन्ह प्रणामा। ईश्वर पुरी जन्म यहि ग्रामा॥
धन्य भूमि यह अस प्रभु कहेऊ। नयन नीर पुलकित तन भयऊ॥
सोइ भूमि कर माटी लेई। बहिर्बास महँ बाँधेउ तेई॥
ईश्वरपुरि कर नाम निरन्तर। रटत रहे प्रभु ताही अवसर॥
प्रभु अति हर्षित होइ अस कहई। "जन्म स्थान श्री पुरि कर अहई॥
यह मृत्तिका परम प्रिय हमहीं। तीर्थ रूप जानहु सब जनहीं॥
ईश्वर पुरि पर कृपा घनेरी। भक्तन पर ममता प्रभु केरी॥
ईश्वर पुरि कर दर्शन पाई। यात्रा सफल भई सुनु भाई॥

एक दिना एकांत महँ, पुरीराज ढिग जाय।
विनती करिकै तेहि कह्यो, दीक्षा हित समुझाय॥११॥

पुरी कह्यो यह कत बड़ि बाता। तव हित प्राण सकौं तजि ताता॥
शिक्षागुरु तव पुरीराज सन। लीन्ह दशाक्षर अति हर्षित मन॥
कीन्ह प्रदक्षिण गुरु कर जाई। हाथ जोरि बोले हर्षाई॥
"यह शरीर हम अर्पेउ तुमहीं। मोहिं पर कृपा करहु प्रभु अबहीं॥

*कुमारहट्ट।

अविचल कृष्ण-प्रेम हम पावैं । सदा मगन नित प्रभु यश गावैं" ॥
प्रभु के वचन सुनत सुख पावा । प्रभु उठाय मुनि हृदय लगावा ॥
प्रेम मगन नयनन जल बहई । परमानन्द जनित सुख लहई ॥
कीन्ह कृपा मुनि पर एहि रीती । कछु दिन गया रहे अति प्रीती ॥
आत्मप्रकाश समय अब आवा । प्रेम भक्ति नित नूतन भावा ॥
गौर एक दिन बैठे जाई । प्रभु एकान्त स्थान हर्षाई ।

इष्ट मन्त्र कर जप करत, ध्यान धरत उर माँह ।
हरि लीला निरखन लगे, बैठे तरु की छाँह ॥१२॥

ध्यान टूटि तब रोअन लागे । कृष्ण प्रेम रस में अनुरागे ॥
कहन लगे, "श्रीकृष्ण गोपाला । तुमहीं हौ मेरे प्रतिपाला ॥
मन हरि मेरो कहाँ सिधारे । दर्शन दै मोहिं कहाँ पधारे ॥
रोअत कहि कहि प्रभु याही कहँ । मगन भए श्रीकृष्ण प्रेम महँ ॥
लोटहिं भुइँ पर होइ अधीरा । व्याकुल अति उर धरहिं न धीरा ॥
धूलि धूसरित अँग सब भये । आर्तनाद करि बोलन लगे ॥
कृष्ण छाँड़ि मोहिं कहाँ पधारे । अस कहि बिकल भए प्रभु भारे ॥
परम गँभीर प्रभू जो रहेऊ । प्रेम रसहिं तेहि अस्थिर करेऊ ॥
भक्ति विरह सागर निज जाई । तैरन लगे थाह नहिं पाई ॥
शिष्य आइ सब धीरज दीन्हा । बहु उपाय करि प्रभु थिर कीन्हा ॥

कह्यो गौर तब शिष्य सन, तुम सब गृह फिरि जाउ ।
मथुरा कहँ हम जात हौं, जहाँ कृष्ण को ठाँउ ॥१३॥

अब माया महँ हम नहिं फँसिहैं । घर अरु द्वार छाँड़ि सब दैहैं ॥
बहु बिधि सब शिष्यन समुझाई । राखेहु प्रभु कहँ सब बरियाई ॥
प्रेम मगन प्रभु कछु नहिं बूझहिं । कहा करौं कछु मन नहिं समुझहिं ॥
काहू सन कछु प्रभु नहिं कहेऊ । रात्रि शेष मथुरा चलि दयऊ ॥
कृष्ण कृष्ण पावहुँ कहँ तुमहीं । मथुरा चले कहत अस मनही ॥
कछु पथ गए सुनो अस बानी । "हे द्विजमणि, हे शारंग पाणी ॥
मथुरा मगन समय यह नाहीं । अन्य समय है सुनु मम पाहीं ॥
जायहु तबहिं अबहिं गृह जाहू । श्रीपति प्रभु, हम कहँ पतियाहू ॥
श्री वैकुण्ठनाथ तुम अहहू । जग तारन हित महि पर आयेहु ॥
परिकर सह लीन्हेउ अवतारा । प्रेम भक्ति कर करन प्रचारा ॥

ब्रह्मा शिव सनकादि सब, जेहि रस महँ लवलीन ।
बाँटब सोइ रस सबहि कहँ, ऊँच नीच अरु दीन ॥१४॥

प्रभु अवतार लीन्ह येहि कारन । हम सब सेवक कहेहु ताहि सन ॥
श्री अनन्त प्रभु-यश नित गावत । प्रभु चरनन यश तेहि अति भावत ॥
तुमहि विधाता, तुम प्रभु अहहू । तव आज्ञा हौं पालन करहूँ ॥
अबहिं महाप्रभु गृह को गमनहु । पाछे प्रभु मथुरा कहँ जायहु" ॥

सुनि अकाशवाणी प्रभु हर्षे। अति आनँद लोचन जल वर्षे ॥
शिष्य निकट प्रभु आए तबही। नदिया चले हरषि अति सबही ॥
नवद्वीप आए सुख धामा। नित नित प्रेम बढ़त निष्कामा ॥
आदि खंड पूरन यहि भयऊ। मध्य खंड सब मनसों सुनउ ॥
गया विजय प्रभु की जे सुनहीं। गौरचन्द्र निश्चय तेहि मिलहीं ॥
कृष्ण कथा सुनि कृष्णहिं पावहिं। कृष्णहु तेहि सँग कबहुँ न त्यागहिं ॥

अन्तर्यामि निताइ प्रभु, कह्यो मोंहि हर्षाइ।
गौर चरित तुम कछु लिखहु, भाषा ललित बनाइ ॥१५॥

तिनकी कृपा कछुक हम गाई। मोहि महँ शक्ति कछू नहिं भाई ॥
जिमि बालक कठ पुतरि नचावै। प्रभु मोहिं सों तिमि काज करावै ॥
एहि विधि प्रभुकर यश हम कहहीं। प्रभु की कृपा पार सब लहहीं ॥
श्री चैतन्य कथा को मानहु। आदि अन्त हम कछु नहिं जानेहु ॥
नभ कर अन्त पच्छि नहिं पावहिं। निज शक्ती भर ठाड़े धावहिं ॥
एहि विधि प्रभु यश अन्त न भाई। प्रभु की कृपा शक्ति भर गाई[1] ॥
सब वैष्णव पद मोर प्रणामा। भजहु सदा प्रभु पूरण कामा ॥
नहिं अपराध मोर कछु भाई। भजहु गौर सब काम बिहाई ॥
भक्ती प्राप्त करन यदि चहहू। नित्यानन्द चरन रत रहहू ॥
हमरे प्रभु श्री गौर गुणाकर। इहै भरोसो मम उर अन्तर ॥

नित्यानन्दहिं कोउ कहत, यह हैं प्रभु बलराम।
कहै कोउ श्री गौर कर, यह अतिही प्रियधाम ॥१६॥

अति तेजस्वी कोउ अस कहहीं। कहत कोउ कछु समझ न परहीं ॥
प्रभु योगी अथवा प्रभु ज्ञानी। जो जेहि भाव भजै सोइ जानी ॥
जेहि तेहि बिधि प्रभु नित्यानन्दा। गौर अभिन्न रूप सुखकन्दा ॥
तिनको चरन बसै मन मोरे। करहिं कृपा मोहिं पर नहिं थोरे ॥
एतेहु पर कोउ निन्दा करिहैं। तेहि शिर लात अवसि हम हनिहैं ॥
नित्यानन्द प्राणधन मोरे। यह विश्वास तजौं नहि भोरे ॥
तुमरी कृपा गौर कहँ पावहिं। जन्म जन्म नित प्रभु कहँ ध्यावहिं ॥
आदि खंड की कथा जे सुनहीं। गौर कृपा तेहि पर अति करहीं ॥
ईश्वरपुरि सों विदा होइकै। आए गृह हर्षित मन ह्वै कै ॥
देखि सबहिं अति हर्षित भेटे। कठिन बिरह सब कर प्रभु मेटे ॥

---

१. नभः पतन्त्यात्मसमं पतत्त्रिणः
तथा समं विष्णुगतिं विपश्चितः ॥

अर्थ—पक्षी गण आकाश में अपनी शक्ति के अनुसार ही उड़ते हैं। उसी प्रकार पंडित लोग अपनी बुद्धि के अनुसार भगवान की लीला का वर्णन करते हैं।

श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चन्द्र जान।
वृन्दावनदास किय कछु पद युग गान॥

आदि खंड कथा दिव्या ये शृण्वन्ति महात्मनः।
सर्वापराध निमुक्तास्ते भवन्ति सुनिश्चितं॥

ये पठन्ति महात्मानो विलिखन्ति परादरैः।
प्रलयेऽपि च तेषां वै तिष्ठत्येव हरेः स्मृतिः॥

जन्मारभ्य गयाभूमि गमने यः कथोदयः।
तत् कथ्यते विज्ञजनेनादि खंडस्य लक्षणम्॥

कारुणो भक्तिदातृत्वे चैतन्य गुण वर्णने।
अमायाकथने नास्ति नित्यानन्दसमः प्रभुः॥

अर्थ—आदि खंड की दिव्य कथा जो भक्तलोग भक्तिपूर्वक सुनते हैं उनके सब अपराध निश्चयपूर्वक नष्ट हो जाते हैं॥

जो भक्तलोग प्रेमपूर्वक इस आदिखंड का अध्ययन करते तथा लिखते हैं उनको भगवान श्रीहरि का स्मरण सदा बना रहता है॥

महाप्रभु के जन्म से आरम्भ होकर गयाभूमिआगमन तक की श्री गौर लीला को विज्ञ लोग आदिखंड की लीला कहते हैं॥

दया करने में, भक्ति बाँटने में, श्री चैतन्य का गुण वर्णन करने में तथा सत्य कथा कहने में श्रीनित्यानन्द प्रभु के समान कोई नहीं है॥

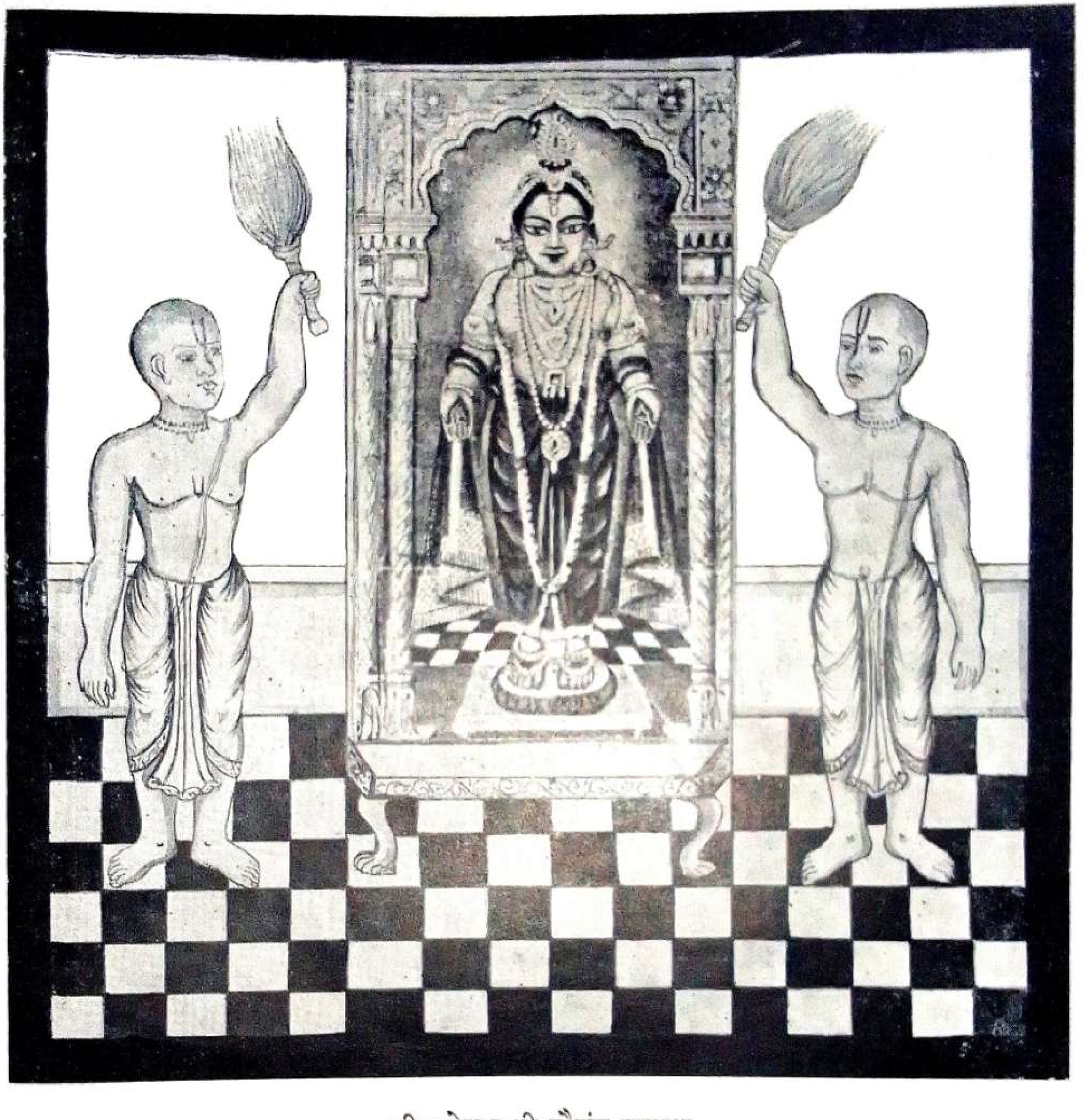
इति श्री चैतन्यभागवते श्री आदिखंडे गयाभूमि गमन् वर्णनं

नाम त्रयोदशोध्यायः॥

आदिखंड अनुवाद यह, पूरन किय हम आज।
'व्रजभूषण' प्रभु की कृपा, पढ़िहहिं सन्त समाज॥

॥ समाप्तश्चायम् आदिखंडः॥

—०:*:०—



श्रीधामेश्वर श्री गौरांग महाप्रभू

श्री नवद्वीप धाम में श्री श्री विष्णु प्रिया जी द्वारा पूजित श्री गौर का विग्रह वर्तमान है। यह मंदिर नवद्वीप में वर्तमान है और धामेश्वर के नाम से विख्यात है।

जय शची नन्दन जय गौर हरो। विष्णु प्रिया आराधन नदिया बिहारी॥

श्रीचैतन्य-भागवत

मध्यखंड

प्रथम अध्याय

मंगलाचरण

आजानुलंबित भुजौ कनकावदातौ
संकीर्तनैकपितरौ कमलायताक्षौ ।
विश्वम्भरौ द्विजवरौ युगधर्मपालौ
वन्दे जगत प्रियकरौ करुणावतारौ ॥
नमस्त्रिकाल सत्याय जगन्नाथसुतायच ।
सभृत्याय सपुत्राय सकलत्रायते नमः ॥
जय जय जय विश्वम्भर द्विजराज ।
जय विश्वम्भरप्रिय वैष्णवसमाज ॥
जय गौरचन्द्र धर्मसेतु महाधीर ।
जय संकीर्तन प्रिय सुन्दर शरीर ॥
जय नित्यानन्द बांधव धन प्राण ।
जय गदाधर अद्वैत केर प्रेमधाम ॥
जय श्रीजगदानन्द-प्रिय अतिशय ।
जय वक्रेश्वर काशीश्वर केर हृदय ॥
जय जय श्रीबासादि-प्रिय वर्गनाथ ।
जीव प्रति कर प्रभु शुभ दृष्टिपात ॥

मध्य खंड की कथा सोहाई । सुनत कथा अतिसै सुखदाई ॥
अन्तर मल सब धोइ बहावत । कीर्तन करत बहुत सुख पावत ॥
हरि कीर्तन आरम्भ भयउ जब । मिटेउ शोक सन्ताप सबहिं तब ॥
पिण्डदान करि प्रभु गृह आए । समाचार सबही कोउ पाए ॥
मिलन हेत सबही उठि धाए । कोउ पाछे कोउ आगे आए ॥
यथा योग्य प्रभु कर सम्माना । गौर देखि सब अति सुख माना ॥
निज मन्दिर सब कहँ बैठाई । तीर्थ कथा प्रभु सबहिं सुनाई ॥
"तुमरी कृपा गया करि आए ।" वचन सुनत सब अति हर्षाए ॥
बड़े सुनम्र होइ प्रभु कहहीं । प्रभू विनय लखि सब सुख लहहीं ॥
चिरजीवी होउ कोउ अस कहहीं । हाथ फेरि कोउ मन्त्र उचरहीं ॥

हाथ वक्ष धरि कोउ करै, आशिर्वाद प्रदान ।
गोविंद परमानन्द प्रभु, करिहैं कृपा महान ॥१॥

शची मातु मन मोद अपारा । पुत्र निरखि सब शोक बिसारा ॥
पति मुख निरखि प्रिया हर्षानी । प्रिया-मातु-पितु बहु सुखमानी ॥

वैष्णवगण सुनि अतिमन भाये। प्रभु देखन हित सब जन आये॥
आदर करि सब कहँ बैठावा। कुशल प्रश्न करि वचन सुनावा॥
करि परितोष बिदा सब कीन्हा। हर्षित होइ सब आशिष दीन्हा॥
दोइ चारि वैष्णव कहँ लेई। गुप्त कथा तिन सन प्रभु कहई॥
मोर कथा अब तुम सब सुनहू। मंगलमय हम सब जो कहहूँ॥
गया प्रवेश करत सुनु भाई। मंगल गीत सुनेहु सुखदाई॥
विप्र समूह स्तुती सब करहीं। लखहु तीर्थपादोदक सबहीं॥
यहि थल प्रभु त्रेता महँ आई। कृष्ण चरण धोए हर्षाई॥

विष्णु चरण सम्बन्ध सों, गंगा तीर्थ महान।
शंकर शीश धरयो सोई, आदर सों तेहि जान॥२॥

सोइ चरण जल सों यह स्थाना। पादोदक तीरथ जग जाता॥
लेत तीर्थ पादोदक नामा। बहत नयन सों जल अविरामा॥
बड़ अस्थिर प्रभु तबहीं भयऊ। "कृष्ण कृष्ण" कहि रोवन लागेउ॥
कर्दममय सब भा उद्याना। महाश्वाँस छाँड़त बिधि नाना॥
"कृष्ण कृष्ण" कहि लेहिं उसासा। पुलक स्वेद अरु कम्प प्रकाशा॥
पंडित श्री मानादि भक्तगन। निरखहिं कृष्ण प्रेम कर क्रंदन॥
प्रेमधार नयनन सों वहई। गंगा मनहुँ नेत्र महँ बसई॥
चमत्कार लखि सब मिलि सोचहिं। बहु आश्चर्य मनहिं मन मानहिं॥
यहि विधि पंडित कबहुँ न देखेहु। प्रभु की कृपा भई हम जानेहु॥
पथ महँ कछु वैभव इन देखेहु। ईश्वरपुरी-कृपा हम समुझेहु॥

वाह्य ज्ञान तब भयउ प्रभु, कहेहु सबहिं हर्षाय।
आज जाउ घर आपने, काल्ह कहब समुझाय॥३॥

जहाँ कहौं आवहु तहँ सबही। निर्जन स्थल हम मिलिहैं तुमहीं॥
आपन दुख हम सबहिं सुनैहौं। शुक्लाम्बर गृह तुम सब ऐहौ॥
तुम अरु सदाशिवहि लै आयहु। समय ठीक करि सबहिं पठायहु॥
गृह कारज लगि प्रभु गृह रहेऊ। निरवधि कृष्ण चरण मन दयऊ॥
महाविरक्त सम कर व्यवहारा। गौर चरित को बूझनिहारा॥
शची मातु कछु बूझत नाहीं। तदपि पुत्र लखि सुख मनमाहीं॥
कृष्ण-कृष्ण कहि रोदन ठानहिं। आँगन नयनन जल सों सींचहिं॥
"कृष्ण कहाँ" कहि-कहि प्रभु बोलहिं। प्रेम बढ़ै तब भुविपर लोटहिं॥
शची मातु लखि देव मनावहिं। हाथ जोरि बिनती बहु भाषहिं॥
प्रभु प्रकाश आरंभेहु जबहीं। सुखी भए सब जग के जन-ही॥

प्रेम वृष्टि प्रभु करन हित, शुभारम्भ यह कीन्ह।
भक्त सकल आए तहाँ, प्रभु चरनन मन दीन्ह॥४॥

प्रभु कहँ देखन गए जे प्राता। कहेउ प्रभू तिन सन यह बाता॥
शुक्लाम्बर गृह तुम कल ऐहौ। तब आपन दुख तुमहिं सुनैहौं॥

अति हर्षित श्रीमान विप्रवर। देखि प्रेम प्रभु कर विचार कर ॥
प्रात काल करिकै अस्नाना। फूल लेन हित चले सुजाना ॥
श्रीवासहि आँगन एक सुन्दर। वृक्ष कुन्द अत्यन्त मनोहर ॥
कल्पतरू सम सो बहु फूलत। जत तोरत तत औरहु बाढ़त ॥
वैष्णव सकल पुष्प नित लेहीं। सदा पुष्प तेहि सन बहु झरहीं ॥
प्रातकाल भक्तन सब आवहिं। यहि विधि मिलहिं बहुत सुख पावहिं ॥
कृष्ण कथा सब कहहिं सुनावहिं। श्री वासादिक जन सब आवहिं ॥
गोपीनाथ आदि सब भक्तन। तोड़त रहे पुष्प हर्षित मन ॥

हँसत हँसत ताही समय, पण्डितवर श्रीमान।
पुष्प लेन हित विप्रवर, आए तहँ मतिमान ॥५॥

हँसत देखि सबही तेहि पूछेऊ। काहे अस प्रसन्न लखि परऊ ॥
कारन आवशि अहै सुनु ताता। कहा कहहुँ सो तुम सन भ्राता ॥
तब पण्डित बोले हर्षाई। सुनहु सबहि कारन मन लाई ॥
महा असम्भव अद्भुत बाता। वैष्णव भयो निमाई ताता ॥
गया होइ आए सुनि काना। भेंट करन हम गए विहाना ॥
बड़ बिरक्त सम बात सो करहीं। उद्धतपन कछु लेश न अहहीं ॥
निर्जन स्थान लेइगे हमहीं। मगन भए हरि कथा कहतहीं ॥
पादपद्म कर नाम लेतहीं। नयनन सों जल बह्यो तुरतहीं ॥
कम्प पुलक रोमाञ्च आदि सब। कृष्ण कहत भुवगिरे मूर्छि तब।
मूर्छित भए ज्ञान कछु नाहीं। उठि बहोरि देखत सब पाहीं ॥

कृष्ण कृष्ण कहिकै सुनहु, रोए अति बिलखाय।
गंगा देवी आय जनु, नयनन नीर बहाय ॥६॥

तिनकी भक्ति देखि सब समुझहिं। कोऊ देवता मन अनुमानहिं ॥
बाह्य भए केवल यह कहेऊ। शुक्लाम्बर गृह कल सब आयेउ ॥
तुम अरु सदाशिवहु तहँ आयेउ। श्री मुरारि कहँ तहाँ बोलायेउ ॥
आपन दुःख कहब हम सबहीं। गंगातीर तासु गृह अहहीं ॥
मंगल कथा कहेउ सब पाहीं। यामें कछुक रहस्य लखाहीं ॥
वैष्णव सुनत सबहि हर्षाने। हरि हरि कहि पण्डित सन्माने ॥
कहेउ प्रथम श्रीवास उदारा। "प्रभु की कृपा बढ़ै परिवारा[1] ॥
कृष्ण भक्ति सबही जग पावै। राम कृष्ण हरि कहि जग गावै" ॥
ऐसहि होय कह्यो सब काहू। मगन प्रेम मन परम उछाहू ॥
हरि हरि कहत चले सब घरहीं। पूजा करन हेतु तत छनहीं ॥

---

१. तथाहि—
गोत्रं नो वर्द्धताम् ॥
अर्थ
हम लोगों का गोत्र (परिवार) बढ़े ॥

पूजा करि श्रीमानहू, शुक्लाम्बर गृह जाय।
मिले भक्त सब आइके, आनँद उर न समाय ॥७॥

प्रभू गदाधर सुनि हर्षाई। शुक्लाम्बर गृह पहुँचे जाई ॥
सुनब कथा जो कछु प्रभु कहिहैं। गृह भीतर हम छिपिके रहिहैं ॥
विश्वम्भर पहुँचे तेहि काला। मिले सबहिं प्रभु दीनदयाला ॥
अति आदर प्रभु सब सन बोलहिं। अस्थिर मन प्रभु कर सब देखहिं ॥
वैष्णव गण लखि प्रभु अस कहहीं। प्रेम भक्ति लक्षण उच्चरहीं ॥
"प्रभु मिलिके मोहिं त्याग गए कहँ"। यह कहि कहि प्रभु मगन भए तहँ ॥
यह पद कहि प्रभु खंभहि पकड़ेउ। प्रभु को भार सो सहि नहिं सकेऊ ॥
गिरेउ खम्भ प्रभुहू गिर गयऊ। कहाँ कृष्ण कहि मूर्छित भयऊ ॥
भक्तहु गान सुनत हर्षाए। उर आनँद कछु बोलि न पाए ॥
गदाधरहु भीतर गृह रोवहिं। प्रेमानन्द मगन सब लोटहिं ॥

भक्त सकल मुर्छित भए, ह्वैके प्रेम अधीर।
गंगा देवी निरखि सब, भए मगन मतिधीर ॥८॥

प्रभु चैतन्य होइके तबहीं। रोवन लगे कृष्ण कहि तहहीं ॥
"अहो कृष्ण तुम कहा सिधारे। छाँड़ि मोहिं तुम कहाँ पधारे" ॥
यह कहिके प्रभु रोवन लागे। गिरे भूमि महँ अति अनुरागे ॥
भक्तहु प्रभु कहँ घेरे रहहीं। प्रेम मगन नयनन जल बहहीं ॥
पुनि पुनि प्रभू गिरत धरणी पर। प्रेम विवश कछु नहिं विचार कर ॥
प्रेम मगन कीर्तन सब करहीं। शुक्लाम्बर गृह अमृत बहहीं ॥
स्थिर होइ प्रभु बैठे तहँ आई। तदपि न रुकत प्रेम जल छाई ॥
गृह भीतर कोहै प्रभु पूछेउ। "तोर गदाधर" पण्डित कहेऊ ॥
नीचे मुख करि रोअत देखेउ। लहि संतोष ताहिं सन कहेऊ ॥
भाग्यवान तुम, सुनहु गदाधर। कृष्ण चरण को जन्मतें मधुकर ॥

वृथा गँवाये जन्म हम, भजे न कृष्ण मुरारि।
बड़े भाग्य गुरु कृपा सों, मिले हमहिं दिन चारि ॥९॥

दैव दोष सों ताहि हेरायेउँ। अस कहि मुरछि भूमि पर गिरेऊ॥
धूलि धूसरित श्री अँग होही। उठहिं बहुरि पुनि पुनि प्रभु गिरहीं ॥
बहुत वेग सों प्रभु महि गिरहीं। दैवहि प्रभु कर रक्षा करहीं ॥
नयन वारि कों थामि न सकहीं। कृष्ण कृष्ण केवल मुख कहहीं ॥
गला पकड़ि भक्तन सन कहहीं। "कहहु कृष्ण हम कहँ किमि मिलहीं ॥"
प्रभू विकल लखि सब जन रोवहिं। कहा करैं सब मिलि यह सोचहिं ॥
प्रभू कहत मेरो दुख नासहु। नन्दकुमारहिं मोहिं मिलावहु ॥
अस कहि बिलखहिं रोवहिं भारी। प्रेम मगन तनु दशा बिसारी ॥
क्षण महँ दिन बीत्यो यहि रीति। बड़े कष्ट गृह गए सप्रीती ॥
विस्मित मन सबही गृह आए। प्रभु कर प्रेम देखि सुख पाए ॥

वैष्णव सभा गए सब, कही बात समुझाय।
अति अपूर्व सुनि सब कहहिं, "हरि हरि" अति हर्षाय ॥१०॥

अनुपम प्रेम देखि कोउ कहेऊ। मानहु श्रीहरि भू पर आयेउ ॥
कोउ कहैं बड़ पंडित भाई। पाषंडिन शिर कटिहैं जाई ॥
कोउ कहैं, श्रीकृष्णहि अहई। यामे कछु संशय नहिं रहई ॥
"ईश्वरपुरी संग" कोउ कहेऊ। "गया धाम प्रभु तेहि संग रहेऊ ॥
कछु प्रभाव देखेउ सो तहहीं। यहि विधि मिलि सब टीका करहीं ॥
आशिर्वाद सबहिं मिलि देहीं। कृष्ण कृपा तेहि पर नित करहीं ॥
कीर्तन करन लगे मिलि सबहीं। गावहिं नाचहि "हरि हरि" कहहीं ॥
भक्त सकल हर्षित यहि भाँती। प्रभू मगन निज रस दिन राती ॥
गंगादास कह्यो प्रभु पाहीं। "धन्य वत्स तुम यहि जग माँही ॥

गया जाइ तुम कीन्ह भल, पितर कीन्ह भवपार।
पितृरिणहि तें उरिन होइ, सुखी रहौ संसार ॥११॥

विद्यार्थी तुमरे जे अहहीं। ब्रह्मा हू सों ते नहिं पढ़हीं ॥
अन्य कतहुँ सो पढ़न न जाहीं। तिनके मन भावै कोउ नाहीं ॥
आए तुम शिष्यन सुख दाता। कल सों सबहिं पढ़ावहु ताता" ॥
करि प्रणाम गुरु चले विश्वम्भर। चहुँ दिशि शिष्य मध्य महँ शशधर ॥
श्रीमुकुन्द सञ्जय गृह आए। मंडप महँ बैठे हर्षाए ॥
पुण्यवंत सञ्जय तहँ आए। आनँद मगन प्रेम उर छाए ॥
गोद उठाइ तासु सुत लीन्हा। पुरुषोत्तम सञ्जय प्रभु चीन्हा ॥
नयन नीर सों तेहि अँग सींचेउ। स्त्री गण जै जै सब मिलि कहेउ ॥
मुकुँद भवन अति आनँद भारी। दृष्टिपात शुभ कीन्ह बिचारी ॥
निज मन्दिर प्रभु आइ पधारे। बैठे जाइ विष्णु गृह द्वारे ॥

प्रभुहिं मिलन जे आवहीं, विदा करहिं सन्मानि ॥
बूझत नहिं कोउ प्रभु चरित, अति विरक्त अनुमानि ॥१२॥

विद्या गर्व कतहुँ कछु नाहीं। दीन होइ बोलत सब पाहीं ॥
पुत्र चरित्र मातु नहिं बूझहिं। गंगा विष्णू सबहिं मनावहिं ॥
"कृष्ण, सुनहु स्वामी मम नाहीं। पुत्रहु सकल गए प्रभु पाहीं ॥
केवल एक सुतहि अब अहई। हम अनाथिनी बिनती करई ॥
यह वर मोहिं देहु जग साईं। स्वस्थ होइ गृह रहे निमाई ॥"
पुत्र निकट लक्ष्मिहिं बैठावहिं। देखत हू प्रभु ताहि न देखहिं ॥
निरवधि क्रन्दन करि प्रभु कहही। कृष्ण, कृष्ण रटि चहुँ दिशि फिरही ॥
अस हुंकार करहिं प्रभु कबहीं। लक्ष्मी डरि भीतर गृह चलहीं ॥
कृष्ण भजत प्रभु सोअत नाहीं। बैठहिं उठहिं विरह उर माहीं ॥
अन्य लोग लखि प्रभु सकुचाहीं। प्रात काल गंगा उठि जाहीं ॥

गंगा न्हाइ जबहिं प्रभु, आए गृह सुखधाम।
शिष्य सकल आए तुरत, कीन्हेउ दंड प्रणाम ॥१३॥

कृष्ण बिना कछु प्रभु नहिं बोलहिं। शिष्य सकल यह मर्म न जानहिं ॥
बैठे शिष्य पढ़ावन तबहीं। प्रेम प्रकाश करन हित सबहीं ॥
हरि हरि कहि पोथी सब खोलहिं। सुनत मगन प्रभु कछु नहिं बोलहिं ॥
हरि ध्वनि सुनत प्रेम उर छावा। तिन कर कृपा दृष्टि सब पावा ॥
प्रेमाविष्ट होइ प्रभु बोलहिं। सूत्र वृत्ति हरिनाम बतावहिं ॥
प्रभू कहेउ सब काल सदाहीं। कृष्ण सत्य आगम अस कहहीं ॥
सर्व शास्त्र श्रीकृष्णहि गावत। कर्ता हर्ता कृष्ण बतावत ॥
पालहिं कृष्ण जे ईश्वर अहहीं। अज भव आदिक सेवा करहीं ॥
कृष्ण चरण तजि आन बखानहिं। व्यर्थ जन्म ते लोग गवावहिं ॥
आगम निगम वेद अरु दरशन। सबहि कहत भजु कृष्ण चरण धन ॥

अध्यापक सब मूढ़ मति, हरि माया वश होइ।
कृष्ण भक्ति कहँ छाँड़ि कै, कुपथ चलैं सब कोइ ॥१४॥

करुणासागर कृष्ण गोपाला। सेवक वत्सल दीनदयाला ॥
जग के जीवन नन्दकुमारा। भक्त जनन के प्राण-अधारा ॥
जेहि कहँ नहिं प्यारो यह नामा। व्यर्थ तासु विद्या केहि कामा ॥
अधम दरिद्र लेइ यह नामा। नाशै दोष जाय हरि धामा ॥
सब शास्त्रन कर मत यह भाई। कर संदेह दुःख सो पाई ॥
कृष्ण भजन तजि शास्त्र बखाने। शास्त्र मर्म सोइ मूढ़ न जाने ॥
शास्त्र मर्म जानत नहिं भाई। व्यर्थहि शिष्य पढ़ावै आई ॥
गर्दभ सम सो शास्त्रहिं ढोवैं। मरैं वृथा कोउ काज न आवैं ॥
पढ़नो लिखनो काम न आवै। कृष्ण चरण यदि मन नहिं लावै ॥
कृष्ण पूतनहिं मुक्ती दीना। अस प्रभु चरण न मन लव लीना ॥

अघासुरहिं तारत भए, दया रूप भगवान।
ऐसे प्रभु कहँ छाँड़िकै, पावहिं दुःख महान ॥१५॥

कृष्ण नाम सों सब अघ भागत। दुष्ट जीव तेहि कहँ नहिं सुमिरत ॥
ब्रह्मा शिव सब कृष्णहिं सुमिरहिं। महामहोत्सव सबहि मनावहिं ॥
ताहि छाँड़ि सब यक्षहिं पूजहिं। मंगल चंडी विषहरि ध्यावहिं ॥
अजामिलहिं तार्यो जेहि नामा। धन कुल मद भूल्यो गुण ग्रामा ॥
सुन सब भाइ सत्य हम कहहीं। भजहु अमूल्य कृष्ण पद सबही ॥
जिन चरणन सेवा नित चाहत। लक्ष्मी स्वयं ताहि नित ध्यावत ॥
जिन चरणन शंकर नित सेवहिं। चरण प्रताप गंग अघ नासहिं ॥
तेहि चरणन कहँ तुम सब ध्यावहु। मोर वचन सब मन महँ लावहु ॥
देखहु कौन अहै यहि नगरहिं। मम व्याख्या मम आगे खंडहिं" ॥
परब्रह्म विश्वम्भर मानत। व्याख्या तासु सत्य सब जानत ॥
शिष्य सकल सब चुप ह्वै सुनहीं। प्रभु विह्वल चित सत्यहि कहहीं ॥

कृष्ण सत्य अस सब कहहिं, शब्द मात्र लखि जात।
ईश्वर ही व्याख्या करहिं, कछु विचार की बात ॥१६॥

प्रभु कछु सावचेत तब भयऊ। लज्जित होइ शिष्यन सों पूछेउ।
कौन भाँति हम सूत्र बखाना। शिष्य कहत हम कछु नहिं जाना ॥
सकल शब्द श्रीकृष्णहि कहेहु। तब व्याख्या हम तनिक न समुझेहु ॥
हँसि तब श्रीविश्वम्भर कहेहू। पुस्तक बाँधहु गंगा चलहू ॥
प्रभू वचन सुनि पुस्तक बाँधेउ। गंगा स्नान करन सब चलेऊ ॥
केलि करहिं गंगा जल माहीं। जिमि समुद्र महँ शशि-परिछाहीं ॥
प्रभु क्रीड़ा दर्शन सब जाहीं। पुण्यवन्त सब जन हर्षाहीं ॥
जो स्वरूप विधि दरशन चाहत। सोइ प्रभु विप्र रूप धरि खेलत ॥
स्नान करत गंगा महँ जो जन। गौर दरश से तृप्त होत मन ॥
आपस में अस सब जन कहहीं। धन्य मातु पितु जेहि सुत अहहीं ॥

प्रभू परस सों सुरसरी, अति हर्षित मन होइ।
बहु तरङ्ग सो बढ़ि चली, नृत्य करत जनु सोइ ॥१७॥

श्रीब्राह्माण्ड नाथ कहँ पाई। प्रभु कहँ घेरयो चहँदिशि धाई ॥
ढालै जल श्रीअँग पर जाई। यह लीला सब वेदन गाई ॥
पोथिन हू कछु सो लिखि पाई। भक्तन वश श्रीकृष्ण कन्हाई ॥
करि कै स्नान प्रभू घर आए। शिष्यन सब निज गेह सिधाए ॥
वस्त्र बदल कर चरनन धोयेहु। तुलसी जल चढ़ाइ तेहि सींचेहु ॥
गोविन्द पूजन करि प्रभु आए। बैठे भोजन गृह हर्षाए ॥
तुलसीयुत बहु व्यञ्जन आनी। राखेहु मातु बहुत सुख मानी ॥
विश्वकसेनहिं कीन्ह निवेद। तब ब्रह्माण्डनाथ किय भोजन ॥
सन्मुख बैठि मातु कछु सोचहिं। गृह भीतर लक्ष्मी प्रभु निरखहिं ॥
मातु कहेउ, "तुम कहा पढ़ायेहु। झगड़ा आज काहि सन कीन्हेहु" ॥

प्रभू कहेउ, "सुनु मातु हम, पढ़ेउ कृष्ण को नाम।
चरण कमल श्रीकृष्ण को, सत्यसकल गुणधाम ॥१८॥

कृष्ण नाम गुण सत्यहि अहही। कीर्तन श्रवण सत्य बुध कहहीं ॥
सत्य कृष्ण के भक्त कहावैं। सत्य शास्त्र जे कृष्णहिं गावैं[1] ॥
कृष्ण भक्ति को सत्यहि कहई। नाहीं तौ पापंडी अहई ॥
चण्डालहु चण्डाल न माता। कृष्ण-चरण-पंकज मन राता ॥
विप्र विप्र नहिं कुपथ जो चलई। कपिल समान गौर सब कहई ॥
कपिल कह्यो जिमि मातु बुझाई। सोइ प्रभु कहत मातु समुझाई ॥

---

१. तथाहि जैमिनि भारते चाश्वमेधिके पर्वणि—

यस्मिन् शास्त्रे पुराणे वा हरिभक्तिर्न दृश्यते।
श्रोतव्यं नैव तत् शास्त्रं यदि ब्रह्मा स्वयं वदेत् ॥

अर्थ—जिस शास्त्र वा पुराण में हरिभक्ति का बर्णन नहीं है उसको यदि स्वयं ब्रह्मा भी आकर कहें तो नहीं सुनना चाहिए।

"सुनहु मातु श्रीकृष्ण प्रभावा। करत भक्ति नर वांछित पावा॥
सर्वभाव श्री कृष्णहिं भजहू। कृष्ण-भक्तकर नाश न कबहूँ॥
कृष्ण भक्त लखि काल डरावै। तेहि सन्मुख सो कबहुँ न आवै॥
गर्भवास कर दुःख न होई। जन्मत मरत कष्ट नहिं सोई॥
श्रीकृष्णहिं जे भजत नर, कवहुँ दुःख नहिं ताहि।
भजहु कृष्ण सब काम तजि, पाप भस्म है जाहि॥१६॥
जगत पिता श्रीकृष्णहिं अहही। पिता भजै नहिं सो सुत द्रोही॥
पिता-द्रोह पातक अति भारी। जन्म जन्म भोगत दुखकारी॥
सावधान होइ माता सुनहू। जीवन की का गति तुम गुनहू॥
कृष्ण भजहिं नहिं पापी जनहीं। मरि मरि गर्भवास दुख सहहीं॥
खट्टो तीतो मातु जो खावै। लागै अंग दुःख सो पावै॥
मज्जा माँस आदि विच रहही। कृमि सब काटै सो दुख सहही॥
दूर करन की शक्ती नाहीं। ज्वाला सहै मरै सोइ माहीं॥
पन्जर बँधी डोलि नहिं सकहीं। भाग्यहि प्राण बचै नहिं मरहीं॥
कोउ पापी कर जन्म न होई। गर्भहिं-गर्भहिं सो दुख सहई॥
जीव तत्व माता अब सुनहू। गर्भहि ज्ञान होई जब कहहूँ॥
सात मास महँ गर्भ कहँ, ज्ञान होइ सुनु मातु।
सुमिरै सो तव प्रभू कहँ, कहै दुःख की बात॥२०॥
कृष्णहि सुमिरि कहै दुख रोई। "तुम बिनु रक्षा करै न कोई॥
प्राणनाथ जग जींबन तुमहीं। तुम बिनु और कहौं दुख केहीं॥
बाँधै जोइ छुड़ावै सोई। राखेहु प्राण दयालू होई॥
धन कुटुम्ब हित जन्म गँवायेहुँ। तवपद-पंकज कवहुँ न ध्यायेहुँ॥
पाप कर्म करि पुत्रहिं पालेहु। कहाँ गए हम दुःखहि भोगेहु॥
यहि दुख सों को पार करैया। बन्धु तुमहिं अरु तुमहिं खेवैया॥
सत्य चरण तव हम सो जानेहु। रक्षा करहु शरण हौं आयेहु॥
कल्पतरू प्रभु हौं तोहिं छाँड़ेहुँ। महा मोह वश तुमहिं भुलायेहुँ॥
उचित दंड हम तेहि कर पायहु। करहु कृपा प्रभु मोहिं उबारहु॥
इती कृपा प्रभु करहु कृपाला। कबहुँ न बिसारौं दीनदयाला॥
कथा तिहारी जहँ नहीं, अमृत सम सुनि जात।
वैष्णव गण जहँ रहत नहिं, सो थल मोहिं न सोहात॥२१॥
उत्सव आपु जहाँ नहि होई। स्वर्ग होहु भावै नहिं सोई[1]॥

---

१. तथाहि (भा० ५।१६।२४)—

न यत्र वैकुण्ठ कथा सुधापगा
न साधवो भागवतास्तदाश्रयाः।
न यत्र यज्ञेशमखा महोत्सवाः।
सुरेशलोकोऽपि न वै स सेव्यताम्॥

अर्थ—श्रीकृष्ण के कथारूपी अमृत की नदी जहाँ नहीं बहती, भगवान के चरण सेवी भक्त लोग जहाँ नहीं है और जहाँ श्रीकृष्ण के लीला विषयक जन्मोत्सव नृत्य कीर्तन आदि नहीं होते, वह स्थान स्वर्ग लोक होने पर भी वास करने योग्य नहीं।

गर्भवास दुख नीको लागै। सुमिरहुँ तोहिं जहाँ अनुरागै ॥
पठवहु नहिं मोहिं प्रभु तेहि ठाऊँ। सुमिरन तव हम करन न पाऊँ ॥
आपन कर्म दोष सो सुनहू। बहुत जन्म दुख हम बहु सहेहू ॥
ऐसो दुख हम नितही सहहीं। यदि तव सुमिरन दुख महँ करहीं ॥
तव सुमिरन महिमा अति भारी। दास्य भाव मोहिं देहु खरारी ॥
तव चरनन सेवा नित करिहौं। दासो नन्दन ह्वै गृह रहिहौं ॥
दरस तुम्हार सदा हम पैहैं। प्रभु सेवा करि अति सुख लैहैं ॥
यहि दुख सों यदि मोहिं उबरिहौ। तुमहिं छाँड़ि प्रभु अनत न जैहौं ॥"
यहि विधि गर्भवास दुख पावै। कृष्ण स्मरण कारण भल लागै ॥

जेहि तेहि विधि यदि होत है, कृष्ण स्मरण सुखमूल ।
सोई अवस्था धन्य है, हरत जगत को शूल ॥२२॥

स्तव प्रभाव सों दुख नहिं पावै। काल पाइ तब भुवि पर आवै ॥
सुनहु मातु यह जीव स्वभावहिं। विसरि जाइ जब भुवि पर आवहिं ॥
मूर्छागत होइ कबहुँक रोवै। कहि न सकै कछु दुख बहु होवै ॥
जीव कृष्ण सेवक होइ त्यागत। भजत कृष्ण नहिं तब दुख पावत ॥
बुद्धि ज्ञान कछु दिन पर होई। कृष्ण भजत बड़ भागी सोई ॥
दुष्ट कर्म सों जे नहिं भजहीं। यहि विधि दुःख पाइ सो मरहीं ॥
अनायास जे जन जग मरहीं। दुःख बिना जीवत जग रहहीं[1] ॥
कृष्ण भजहिं सोई यह पावहिं। कृष्ण स्मरण सबकर दुख नाशहिं ॥
यहितें माता, कृष्णहि भजहू। साधु संग करि हरि हरि जपहू ॥"
कपिल समान मातु सन कहहीं। सुनि प्रभु बचन शची सुख लहहीं ॥

"भक्तिहीन जे कर्म सब, फल नाहीं कछु होइ ।
उलटै हानी होतु है, भजहु कृष्ण सुख सोइ" ॥२३॥

भोजन शयन सदा प्रभु कहहीं। कृष्ण, कृष्ण अरु कृष्णहिं रटहीं ॥
कृष्ण बिना कछु और न भाषहि। सुनि आश्चर्य करत सब लोगहिं ॥
वैष्णवगण सुनिकै सव बाता। बैठि विचार करहिं सब भ्राता ॥
'कृष्ण प्रकाश भयहु तेहि देही। साधु संग सों गति यह तेही ॥
पूर्व संस्कारहिं सो भाई। भक्ति प्रगट यह परत लखाई" ॥

---

१. तथाहि (भा० ३।३१।३२)—

यद्यसद्भिः पथि पुनः शिश्नोदरकृतोद्यमैः ।
अस्थितो रमते जन्तुस्तमो विशति पूर्ववत् ॥

अर्थ—जीव यदि सत पथ पर चलते हुए भी यदि केवल अपने स्वार्थ के हेतु ही उद्यम शील है और पुनर्वार यदि दुष्टों के संग से पाप कर्म में रत हो तो वह पूर्ववत् प्रकार से नरक की वासना भोगता है ।

अनायासेन मरणं विना दैन्येन जीवनं ।
अनाराधित गोविन्दचरणस्य कथं भवेत् ॥

अर्थ—श्रीगोविन्द का भजन करने से जीव बिना कष्ट के मरता है और बिना दीनता के संसार में सुख से रहता है ॥

यह विधि निज मन करहिं विचारा । सुखी भए श्रीवास उदारा ॥
वैष्णवगण अति हर्षित भये । मन सन्ताप दूर चलि गये ॥
विश्वम्भर कर भयउ प्रकाशा । पाषंडिन कर होइहैं नाशा ॥
वैष्णव आवेशहिं विश्वम्भर । कृष्ण रूप जग देखि निरन्तर ॥
कृष्ण नाम कानन सों सुनहीं । मुख सों कृष्ण कृष्ण प्रभु कहहीं ॥

विद्यारस मँह मत्त जे, रहत रहे दिन रात ।
कृष्ण कृष्ण ते अब कहहिं, दूसर नाहिं सोहात ॥२४॥

शिष्य सकल उठि प्रातहिं भाई । पाठ पढ़न हित पहुँचें आई ॥
सबहिं पढ़ावन हित प्रभु आए । कृष्ण बिना कछु कहि नहिं पाए ॥
'सिद्धवर्ण' जब बालक कहहीं । 'नारायण' उत्तर प्रभु देहीं ॥
केहि बिधि वर्ण सिद्ध प्रभु होई । कृष्ण कृपा कारण प्रभु कहई ॥
करहु उचित व्याख्या हे गुरुवर । शिष्यन कह्यो प्रभू सन मृदुस्वर ॥
गौर कह्यो नित कृष्णहिं सुमिरहु । कृष्ण भजन कहँ सब कछु समुझहु ॥
आदि मध्य अरु अन्त समाना । कृष्ण भजन बिन और न आना ॥
प्रभू वचन सुनि कहहिं शिष्य गण । ऐसो कहत वायु के कारण ॥
शिष्य कहहिं अस कहा बतावहु । गौर कह्यो, जस शास्त्र बखानेहु ॥
गौर कह्यो यदि आजु न समुझहु । भलीभाँति कल हम सों बूझेहु ॥

हम पुस्तक सब देखिहैं, तुम आएहु मम पास ।
सुनत वचन प्रभु के सबै, गए तबै निज वास ॥२५॥

गंगादास निकट सब जाई । शिष्य सकल निज कथा सुनाई ॥
व्याख्या सकल जो पंडित करहीं । कृष्ण बिना कछु और न कहहीं ॥
गया होइ आए गुरु जब तें । कृष्ण प्रधान कहत हैं तब तें ॥
पुलकित अंग कृष्ण मुख कहहीं । करि हुँकार मगनमन हँसहीं ॥
धातु सूत्र एकत्रहि करिहैं । श्री कृष्ण व्याख्या नित कहिहैं ॥
तासु चरित कछु बूझि न सकहीं । पूछहिं हम सब अब का करहीं ॥
पण्डित गंगादास महाना । कहेउ वचन सुनि हम सब जाना ॥
निजनिज गृह सब गवनहु अबहीं । आवहु कल तेहि सँग लै सबही ॥
तब हम तिनहिं बुझाइ कहब सब । पाठ पढ़ावहि भलीभाँति सब ॥
हर्षित होइ सब घरहि सिधाए । प्रातकाल गुरु सँग सब आए ॥

गुरु-चरणन रज लेइ कै, लीन्ह्यों माथ लगाय ।
"विद्यालाभ होहि" अस, कह्यौ गुरू हर्षाय ॥२६॥

गुरु कह सुनु भैया विश्वम्भर । मानहु मोर वचन अति हितकर ।
बड़े भाग्य द्विज विद्या पढ़हीं । तव नाना नीलाम्बर अहहीं ॥
पिता तिहारे मिश्र पुरन्दर । दोउ पण्डित अति विज्ञ विप्रवर ॥
व्याख्या अरु विद्या महँ भाई । तुम्हरो कीर्ति चहूँ दिशि चाई ॥
विद्या छाँड़न तें मति जानेहु । भक्ति अवसि मिलि है जनि समुझेहु ॥
तुम्हरे पिता आदि सब कोइ । भक्त रहे नहिं का सब सोई ॥

बात समुझि तुम विद्या पढ़हू। पढ़हु पढ़ावहु वैष्णव बनहू॥
भलो बुरो कछु मूर्ख न समुझै। विद्या पढ़ै सो सब कछु बूझै॥
कृष्ण भजहु अरु शिष्य पढ़ावहु। मम उपदेश ध्यान महँ लावहु"॥
गौर कह्यो, "सब आपु प्रसादा। जोति सकै को मोहिं विवादा॥

व्याख्या जो हम सूत्र की, कहों शिष्य समुझाय।
तेहि कर खंडन करि सकै, ऐसो कोउ न दिखाय॥२७॥

यहि नदिया महँ सबहिं पढ़ैहौं। दोष दिखावै हम तेहि देखिहौं॥
गुरू वचन सुनि हर्षित भयऊ। चरण बन्दि प्रभु गृह तब गयऊ॥
गंगादास धन्य जग माँहीं। विद्या पढ़ेहु गौर जेहि पाहीं॥
सरस्वती-पति वेद - अधारा। त्रिभुवनपति श्री गौर उदारा॥
शिष्यन संग चले प्रभु तबहीं। तारागण घेरे जिमि शशिहीं॥
एक नागरिक द्वारे जाई। बैठे प्रभू तहाँ हर्षाई॥
बड़े भाव सो वस्त्रहिं बाँधी। व्याख्या सुनत शिष्य चुप साधी॥
प्रभू कह्यो तब अति हर्षाई। सन्धि करन हू जेहि नहिं आई॥
ते कलि युग महँ पण्डित मानी। भट्टाचार्य कहावत ज्ञानी॥
शब्द ज्ञानहू जेहि नहिं होई। तर्क शास्त्र व्याख्या कर सोई॥

हमहिं प्रबोध करै अस, को है यहि नद[1] माँहिं।
खण्डन मण्डन जो करै, दोष दिखावैं ताहिं॥२८॥

यहि विधि अटपट प्रभु बहु कहईं। प्रति उत्तर तेहिको को करई॥
गंग दरश पण्डित जो जावैं। प्रभू वचन सुनि गर्व नसावैं॥
कोउ महँ शक्ति नहीं अस अहई। प्रभु सन्मुख सिद्धान्त सो करई॥
प्रभु आवेशहिं व्याख्या करहीं। रात्रि भए तबहूँ नहिं टरहीं॥
प्रभु समीप एक मन्दिर माँही। भक्त एक तहँ रहत सदाहीं॥
रत्नगर्भ अस नाम प्रकासा। भजत कृष्ण उर अधिक हुलासा॥
तीन पुत्र तेहि कर अति सुन्दर। भजत रहहिं श्रीकृष्ण निरन्तर॥
कृष्णानन्द, जीव, यदुनाथा। पढ़हिं कृष्ण लीला कर गाथा॥
द्विज भागवतहिं कहत अति प्रीति। पढ़ेउ श्लोक एक अतिहि सप्रीती॥[2]
बड़े मधुर स्वर सों सो पढ़ई। गौर सुनत अति आनँद लहईं॥

---

१. नदिया, नवद्वीप।

२. तथाहि (भा० १०-२३-२२)

श्यामं हिरण्यपरिधिं वनमाल्य-बर्ह-
धातु प्रवाल नट वेष मनु व्रतांसे।
विन्यस्त हस्तमितरेण धुनानमब्जं
कर्णोत्पलालक कपोल मुखाब्जहासम्।

कमर में पीताम्बर धारण किए हुए तथा गले में बनमाला आदि पहिरे हुए नटवर स्वरूप श्रीकृष्ण एक हाथ सखा के कन्धे पर रखे हुए हैं और दूसरे हाथ से एक कमल हिला रहे हैं। दोनों कानों में कुंडल, मुख पर घुँघराली अलकें शोभित हो रही हैं और भगवान मन्द मन्द हँसते हुए भक्तों का मन हरण कर रहे हैं।

भक्ति प्रभाव सुनत प्रभु, मूर्छित भे तत्काल।
बिस्मित अति सब शिष्य गण, भक्तन भए निहाल ॥२६॥

कछु क्षण महँ मूर्छा प्रभु बीती। बोल बोल प्रभु कहत सप्रीती ॥
प्रेम मगन द्विज पढ़तहिं जाई। भुइँ पर लोटहिं गौर गोसाईं ॥
प्रेम-समुद्र उठ्यो तेहि अवसर। भुइँ भइ नयन नीर सों गर गर ॥
अश्रु कम्प अरु पुलक मनोहर। मगन प्रभू अति आनँद अन्तर ॥
भक्ति सहित पुनि पुनि सो पढ़ई। प्रभू निरखि सो अति सुख लहई ॥
ह्वै प्रसन्न तेहि कण्ठ लगावा। धन्य भयो द्विज प्रभु उर लावा ॥
प्रेम पूर्ण सो तेहि क्षण भयऊ। प्रभू चरणन धरि रोवन लागेउ ॥
श्री चैतन्य प्रेम महँ फँसिकै। बन्दो भयो चरण जल लैकै ॥
प्रेम सहित सो पुनि पुनि पढ़ई। करि हुंकार बोल प्रभु कहई ॥
देखि सकल जन अद्भुत बाता। करत प्रणाम जोरि दोउ हाथा ॥

पढ़हु नहीं अब विप्रवर, कहेउ गदाधर आय।
प्रभु कहँ धरि राखेउ सबहि, अति आदर सों जाय ॥३०॥

क्षण महँ स्वस्थ प्रभू तब भयऊ। कहा भयो प्रभु सब सन पूछेउ ॥
का चाञ्चल्य कीन्ह हम भाई। कह्यो शिष्य तुम धन्य गोसाईं ॥
हम महँ शक्ति कहन की नाहीं। सावचेत होइ प्रभु हर्षाहीं ॥
प्रभू सुहृद गण कीन्ह निवारण। स्तुती करहु जनि सुनहु शिष्यगण ॥
गंगा दरश चले सब तबहीं। करि प्रणाम बैठे सब तहँहीं ॥
यमुना तीर सखा सँग आई। क्रीड़ा करत रहे यदुराई ॥
तेहि विधि गौर किशोर दयाला। कृष्ण कथा रस मत्त कृपाला ॥
प्रभु करि कृपा बिदा सब कीन्हेउ। हर्षित आपु भवन तब आयेउ ॥
भोजन कीन्ह जगत के स्वामी। निद्रावश भे अन्तरयामी ॥
प्रातःकाल सब शिष्य सुजाना। पढ़न हेतु आए करि स्नाना ॥

प्रभुहू गंगा स्नान करि, बैठे मण्डप आय।
कृष्ण बिना कछु नहिं चहत, कहहिं भक्ति समुझाय ॥३१॥

शिष्य सकल पूछेउ प्रभु जाई। धातू संज्ञा कहहु बुझाई ॥
"कृष्ण शक्ति" प्रभु कह हर्षाई। "देखौ खण्डन करै को आई ॥
राजन कर सुन्दर अति देही। भूषण सोहत अँग पर तेही ॥
तेहि के भय सब लोग डरावैं। धातु गए तेहि माटी खावैं ॥
भस्म होय वह सुन्दर देही। यहि कर खण्डन करि को सकही ॥
कृष्ण शक्ति सब देह बिराजत। धातु रूप सबही महँ राजत ॥
तेहि सन स्नेह करत सब कोई। कृष्ण भक्ति ते वश जग होई ॥
भ्रम बश अध्यापक नहिं समुझहिं। तुम सब निज मन करहु बिचारहिं ॥
आदर करि जेहि शीष नवावहु। धातु गए लखि दूर परावहु ॥
पिता गोद सुत अति सुख पावै। धातु गए मुख अग्नी देवै ॥

धातू संज्ञा और नहिं, कृष्ण शक्ति ही मूल।
यहि महँ दोष कहै जो, करै सोइ बड़ भूल ॥३२॥

कृष्ण शक्ति अति पूज्य सुनहु सब। करहु कृष्ण कर भक्ति तुमहु अब॥
भजहु कृष्ण, श्री कृष्णहि सुमिरहु। कृष्ण नाम सब मुख सों बोलहु॥
सुनहु कृष्ण कर नाम सुहावन। कृष्ण चरन ध्यावहु अति पावन॥
दुर्वा जल जेहि चरन चढ़ावत। यम यातना कबहुँ नहिं पावत॥
अघ बक आदि सकल जे तारे। भजहु सोइ नँदनन्दन प्यारे॥
पुत्र बुद्धि सों नाम पुकार्यो। अजामील गोलोक सिधार्यो॥
जेहिकर नाम भजहिं शिव शंकर। लक्ष्मी सेवहिं चरन मनोहर॥
शेष चरन महिमा नित गावत। भजहिं चरन ते सब सुख पावत॥
तृन धरि दंत भजहु प्रभु चरना। कृष्ण-चरन सब भव-भयहरना॥
यावत प्रान शरीरहिं राजै। शक्ति तुम्हारे देह बिराजै॥

तब लौं श्रीकृष्णहिं भजहु, कृष्ण-चरन करु ध्यान।
पिता मातु सब कृष्ण हैं, कृष्णहिं सबके प्रान ॥३३॥

हाथ जोरि सब यह वर माँगहु। कृष्ण चरण तुम सब रति पावहु॥
दास्य भाव महँ प्रभु यह भाषत। निज महिमा सब लोग बतावत॥
भयो पहर दुइ यहि विधि बोलत। हरी नाम महिमा प्रभु गावत॥
शिष्य सकल चुप ह्वै सब सुनही। प्रभुसन सो कछु कहि नहिं सकहीं॥
प्रभु के शिष्य सकल हरिदासा। गौर भजत जे सब तजि आसा॥
स्वस्थ भए पुनि गौर किशोरा। लज्जित होइ देखहिं सब ओरा॥
प्रभू कह्यो केहि भाँति बखानेहु। शिष्य कह्यो सब सत्य बतायेहु॥
शब्द अर्थ जो तुमहिं बखाना। दोष दिखावै अस को आना॥
सत्य सकल व्याख्या प्रभु करहू। हम जेहि लागि पढ़हिं प्रभु सुनहू॥
सोइ अर्थ सो पुष्ट न करई। हाथ जोरि हम तुम सन कहईं॥

प्रभू कह्यो तुम कहहु सब, वायु ग्रस्यो कै मोहिं।
व्याख्या हम सब सूत्र की, कह्यो कौन बिधि तोहिं ॥३४॥

शिष्य कह्यो "केवल हरिनामा। व्याख्या सकल कृष्ण गुणग्रामा॥
सूत्र वृत्ति टीका एक भावा। कृष्ण बिना कछु प्रभुहिं न आवा॥
बूझि सकै को अस जग माहीं। भक्ति निवास करत तव पाहीं॥
कृष्ण चरित्र सुनत प्रभु केरी। अद्भुत दशा भई हम हेरी॥
सो चरित्र लखि हम सब गुनहीं। मानुष तुम नहिं हम सब कहहीं॥
प्रभू कह्यो तुम सबका देखेहु। चमत्कार हम सब बड़ निरखेहु॥
कम्प पुलक अरु अश्रु अपारा। देखेहु नहिं हम अस संसारा॥
कल प्रभु जबहिं विचारत रहेऊ। श्लोक एक द्विज तबहीं पढ़ेऊ॥
श्री भागवत श्लोक सुनि काना। मूर्छित भयेहु सबहिं भय माना॥
प्रान रह्यो नहिं तव तनु माँहीं। अति विस्मित सब जन बिलखाहीं॥

जब चैतन्य भयेहु प्रभु, क्रन्दन कियेहु अपार।
गंगादेवी बहत जनु, नयनन सो जलधार ॥३५॥

कम्प होन लाग्यो पुनि तबहीं। धरि न सकैं शतजन प्रभु तुमहीं ॥
सकल अंग पुलकावलि राजत। स्वेद धूल सब अंग बिराजत ॥
यह अपूर्व लीला लखि सब जन। नारायण तुम कहँ कह हरिजन ॥
कहत कोउ शुक व्यास विचारी। नारद देव कहत नरनारी ॥
ऐसी भक्ति और नहिं होई। तब मिलि धरयो तुमहिं सब कोई ॥
जब कछु सावचेत प्रभु भयऊ। तुम सब बात कछुक नहिं जानेउ ॥
बात हमारि चित्त धरि सुनहू। दश दिन सों जो व्याख्या करहू ॥
कृष्ण भक्ति व्याख्या अति सुंदर। पाठ बंद सब रह्यो निरन्तर ॥
कहत तुमहिं हम सब भय माना। शब्द अशेष अर्थ तुम जाना ॥
हम उत्तर कछु दै नहिं सकहीं। प्रभू विचार करहु निज मनहीं ॥

प्रभू कह्यो दश दिनन सों, पाठ पढ़्यो नहिं कोय।
हम सों क्यों नाहीं कह्यो, हम बूझत सब सोय ॥३६॥

शिष्य कह्यो, "तुम उचित बखानेहु। कृष्ण सत्य हम कहँ समुझायेहु ॥
सकल शास्त्रहू सम्मत अहहीं। दोष इहै हम ग्रहण न करहीं ॥
तुम जो कहेहु सत्य सब ताता। कर्म दोष नहिं मानत बाता ॥"
शिष्य वचन सुनि अति सुख पावा। परम प्रेममय वचन सुनावा ॥
"सत्य सत्य हम तुमहिं सुनावहिं। कहेहु काहु सन नहिं इहि बातहिं ॥
कृष्ण वर्ण बालक एक सुन्दर। मुरलि बजावत परम मनोहर ॥
देखौं सोइ बालकहिं निरन्तर। सुनहुँ कृष्ण को नाम मनोहर ॥
देखहुँ व्रज को धाम सुहावन। सकल भुवन मानहुँ वृन्दावन ॥
यह विनती अब तुम सब पाहीं। पाठ पढ़ाउब अब हम नाहीं ॥
जहाँ रुचै तुम सब तहँ जाहू। पढ़हु, प्रसन्न रहहु सब काहू ॥

कृष्ण बिना कछु अवर नहिं, निकरत मुख सों बात।
सत्य कहौं हम सबहिं सन, मानहु तुम सब तात" ॥३७॥

अस कहि प्रभु पुस्तक कर लयऊ। नयन नीर भरि बाँधत भयऊ ॥
शिष्य सकल प्रभु कहँ शिर नावा। हाथ जोरि मृदु वचन सुनावा ॥
"हमहूँ करब जो प्रभु मन आवा। पढ़े तुम्हारे ढिग मन भावा ॥
अनत कहाँ हम सब अब जैहैं। संग तुम्हारे रहि रहि गैहैं" ॥
गुरु विरह दुख सों अति कातर। बोले वचन "सुनहु सुखसागर ॥
तुम्हरे मुख सों जो हम सुने। वही ध्यान हिरदय महँ बसै ॥
जन्म जन्म सोइ हृदय बिराजै। अनत कहाँ जावैं केहि काजै ॥
सोइ उत्तम जो तुमहि बताओ"। अस कहि चरण बन्दि सुख पायो ॥
सब शिष्यन तब पुस्तक बाँधे। हरि हरि कहि अति हर्षित भये ॥
सुनत बचन प्रभु अति मन भावा। नयन नीर भरि सब गर लावा ॥

डुबे आनँद सिन्धु महँ, शिष्य सकल हरषाय।
नीचे मुख करि कै सबहि, नयनन सों भरि लाय ॥३८॥

बोलि न सक देखहिं प्रभु ओरा। आशिर्वाद दीन्ह प्रभु गोरा ॥
"जौ हम सत्य कृष्ण के दासा। पूरब तब तुम्हरी सब आसा ॥
कृष्ण शरण अब तुम सब लेहू। कृष्ण नाम को तुम सब जपहू ॥
कृष्ण नाम केवल सब सुनहू। कृष्ण प्राणधन सब कर होहू ॥
पढ़ेउ बहुत अब और न काजा। कृष्ण कहहु अब सब तजि लाजा ॥
कृष्ण कृपा तुम सब कछु जानब। सकल शास्त्र हिरदय महँ आवब ॥
जन्म जन्म तुम सब हरिदासा। भजहु कृष्ण सब तजि कै आसा" ॥
अमृत सम सुनि प्रभु की बानी। आनँद मगन भए सुख मानी ॥
शिष्यन पद हम बन्दन करहीं। बड़ो भाग्य प्रभु सों जे पढ़हीं ॥
यह सब निश्चय प्रभु के दासा। कृष्ण पढ़ावत सहित हुलासा ॥

यह लीला श्री गौर की, दरश कीन्ह जे आय।
तिन के दर्शन ते सुनहु, पाप दूर ह्वै जाय ॥३९॥

मोर जन्म तेहि समय न भयऊ। हम पापी नहिं दरसन पायेउ ॥
कृपा करहु प्रभु गौर उदारा। हृदय बसै लीला सुख सारा ॥
नवद्वीप महँ विद्या पढ़ेऊ। चिह्न सकल अजहूँ तहँ रहेऊ ॥
गौर चरित कर अन्त न अहई। आविर तिरोभाव सब कहई ॥
विद्या चर्चा इति करि दीन्हा। शुभारम्भ कीर्तन कर कीन्हा ॥
प्रभु विद्या विलास हम गावा। शेष भयउ सो अति मन भावा ॥
संकीर्तन महँ प्रभु मन दीन्हेउ। शिष्य सकल अति आनँद लहेऊ ॥
प्रभु करि कृपा कहेउ सब पाहीं। पढ़े लिखे हम बहु जग माहीं ॥
कीर्तन करि अब पूरन करहू। शिष्य कहहिं केहि विधि सो कहहू ॥
ताली दै प्रभु सबहिं सिखावहिं। प्रभु सँग सब मिलि कै तहँ गावहिं ॥

(केदार राग)

"हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
गोपाल गोबिन्द राम श्री मधुसूदन ॥"

विधि बताय प्रभु हाथ सों, ताली देत सिखाय।
गावहिं अति मधुरे स्वरहिं, शिष्यन सकल सुनाय॥४०॥

शिष्यन सँग प्रभु कीर्तन करहीं। कीर्तन-प्रिय कीर्तन मन देहीं ॥
मध्य गौर चहुँदिशि सब बालक। कीर्तन करत परम सुख पावत ॥
प्रभु निज नाम रसहिं महँ झूमत। अति आवेशहिं भुइँ महँ लोटत ॥
बोल बोल कहि इत उत गिरहीं। भूमि विदीर्ण होत जब पड़हीं ॥
गण्ड गोल सुनि सब पुरवासी। आए देखन सब सुख रासी ॥
वैष्णव सकल निकट जे बसहीं। कीर्तन सुनि आए सब तहँहीं ॥

प्रभु आवेश देखि सब भक्तहिं। परम अपूर्व चकित सब सोचहिं॥
अति सन्तोष भयो उर माहीं। कहत सबहि मिलि अति हर्षाहीं॥
नदिया महँ कीर्तन यह देखहु। अस दुर्लभ भक्ती सब निरखहु॥
नयन सफल हम सब कर भयऊ। प्रेम भक्ति लक्षण मन भायेउ॥

जो निमाइ उद्धत रहेउ, भक्त भयउ सो आज।
प्रभु इच्छा को जानि सक, अब भा सुखी समाज॥४१॥

सावचेत विश्वम्भर भयऊ। कृष्ण कृष्ण कहि बोलन लागेउ॥
है चैतन्य कछू नहिं करहीं। सब भक्तन कहँ गले लगावहिं॥
सब मिलिकै प्रभु स्वस्थ कराये। तब वैष्णव गण निज गृह आये॥
शिष्य सकल प्रभु के जे साथा। उदासीन होइ भए सनाथा॥
कीर्तन कर प्रभु कीन्ह प्रकाशा। भक्तन दुख कीन्हे सब नाशा॥

श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
वृन्दावन दास प्रभु लीला कियो गान॥
भाषा माहिं ताहि कीन्ह व्रजभूषणदास।
गौर पद रज पावौं यहै अभिलाष॥

इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खण्डे श्री संकीर्तनारम्भ वर्णन नाम प्रथमोध्यायः॥

—o: * :o—

द्वितीय अध्याय

जय जय जगत जीवन गौर चन्द्र।
दान देहु प्रभु निज श्रीपद द्वन्द्व॥
भक्त गोष्ठी सहित श्री गौरांग जय जय।
गौर कथा सुनतहि भक्ति प्राप्त होय॥

प्रभु लखि वैष्णव अति सुख पावहिं। विस्मित होइ सब हृदय बिचारहिं॥
श्री अद्वैत निकट सब जाई। समाचार सब कहेउ सुनाई॥
भक्ति प्रभाव सोऊ सब जाना। सुनि अद्वैत परम सुख माना॥
श्री अद्वैत जान यह बाता। प्रभु अवतरेउ भक्त सुखदाता॥
तदपि प्रगट सो कहत न बातहिं। प्रगट करहिं पुनि तुरत लुकावहिं॥
बोले बचन परम हर्षाई। "मोर बात अब सुनु सब भाई॥
आज रात्रि मोहिं अनुभव भयऊ। गीता कर एक श्लोक बिचारेउ॥
अर्थ तासु मोहिं ठीक न आवा। कीन्ह उपास अन्न नहि भावा॥
स्वप्न माँझ मोसो कोउ कहेहू। उठहु अचारज भोजन करहू॥
श्लोक अर्थ हम तुम सन कहहीं। आवहु तुम करि भोजन अबहीं॥

पाएहु जो चाहत रहेहु, दुःख करहु केहि काज।
कीन्ह रहेउ संकल्प जो, सफल भयो सो आज ॥१॥

बहु उपवास कीन्ह तुम भाई। पूजेहु मोहिं बहुत मन लाई॥
कृष्ण कृष्ण कहि क्रन्दन करेऊ। भुज उठाइ तुम जाहि बोलायेउ॥
भई प्रतिज्ञा सत्य तुम्हारी। सोइ तुम्हार प्रभु देखु बिचारी॥
प्रगट भए सोइ कीर्तन हेतू। गृह गृह कीर्तन भवनिधि सेतू॥
ब्रह्मा कहँ दुर्लभ जो दर्शन। तव प्रसाद देखब सोइ सब जन॥
यहि श्रीवास घरहिं जित वैष्णव। सुर दुर्लभ सब देखब वैभव॥
भोजन करहु हमहुँ अब जैहैं। भोजन समय बहुरि हम ऐहैं॥
आँख खोलि हम जब सोइ देख्यो। यहि विश्वम्भर को अवरेख्यो॥
देखत देखत अन्तर भयऊ। कृष्ण रहस्य कछू नहिं बूझेउ॥
करहिं प्रकाश कवन विधि सोई। सो नहिं जान सकत है कोई॥

विश्वम्भर कर भ्रात बड़, कहहुँ सबहिं समुझाय।
गीता हम सन सों पढ़त, नित उठि मम घर आय ॥२॥

ताहि बुलावन यह शिशु आवै। परम मनोहर सब मन भावै॥
चित्त हरै शिशु अतिही सुन्दर। भक्ति होहु यहि कहौं निरन्तर॥
उच्चवंश पण्डित को बालक। नाना नीलाम्बर कुलपालक॥
उत्तम पण्डित स्वयं सुजाना। कृष्ण भक्ति तेहि उचित विधाना॥
भएहुँ सुखी बड़ सुनि यह बाता। आशिर्वाद करहु सब ताता॥
कृष्ण अनुग्रह सब पर होई। कृष्ण नाम लेवै सब कोई॥
सत्य सत्य यदि प्रभु सोई ह्वैहैं। यहि ब्राह्मण पहँ निश्चय ऐहैं॥
आनँद सों अद्वैत कृपाला। जगहित कर हुंकार दयाला॥
जय जय करि सब वैष्णव बोलहिं। हरि हरि सब मिलि भक्तन भाषहिं॥
कीर्तन करन लगे सब कोऊ। प्रभु अवतार विदित जग भयऊ॥

कहहिं कोउ अति भल भयउ, कीर्तन करु सब भाइ।
श्री निमाइ पण्डित सबहिं, मारग दीन्ह दिखाइ ॥३॥

करि प्रणाम आचार्यहिं सबही। कृष्ण कृष्ण कहि गे सब घरहीं॥
मारग महँ प्रभु कहँ जब मिलहीं। आदर सों सम्मानित करहीं॥
प्रातकाल प्रभु गंगा जाहीं। वैष्णव सकल देखि हर्षाहीं॥
श्रीवासादि देखि प्रभु हर्षहिं। अति आदर प्रणाम करि बोलहिं॥
आशिर्वाद देहिं सब कोई। "कृष्ण चरण भक्ती तव होई॥
कृष्ण कहहु अरु कृष्णहि सुनहू। कृष्ण भजहु अरु सब कछु लहहू॥
विद्या रूप आदि कछु नाहीं। कृष्ण भजन सम कछु जग माहीं॥
जगत पिता श्री कृष्णहिं जानहु। कृष्णहि सब कर जीवन मानहु॥
दृढ़ करि कृष्ण भजन करु भाई। कृष्ण चरण पंकज उर लाई"॥
आशिर्वाद सुनत प्रभु हर्षित। देखत सबहिं नयन भरि पण्डित॥

"आशिष दीन्ह्यो मोहिं सब," गौर कह्यो सब पाहिं।
"पावत जन तुम्हरे दिए, कृष्ण भक्ति जग माहिं ॥४॥

तुम्हरे सेवत सब कछु पावै। कृष्णहु तेहि पर कृपा दिखावैं॥
भक्तिधर्म तुम मोहिं सिखावहु। हमरो बड़ो भाग्य तुम जानहु॥
जेहि कहँ कृष्ण भक्ति तुम देहू। सोइ पावै नहिं कछु सन्देहू॥"
अस कहि चरण धरत प्रभु तिनके। कार्य करहिं नित प्रति प्रभु उनके॥
काहू कर प्रभु वस्त्र कचारहिं। कुश माटी काहू कहँ अरपहिं॥
धोती वस्त्र देहिं प्रभु काहू। सकल कहहिं प्रभु तुम घर जाहू॥
हाय हाय करि सब जन कहहीं। यह का करहु उचित नहिं तुमहीं॥
प्रभु निज दासन सेवा करहीं। आनँद मगन मोद मन भरहीं॥
सेवक लागि कर्म सब करहीं। सेवक लागि धर्म परिहरहीं॥
सबके प्रिय अस शास्त्र बखानै। सेवक प्रिय यह सब जग जानै॥

भक्त हेतु त्यागहिं सबहिं, दुर्योधन परमान।
वंश सहित तेहि मारेहू, कृपासिन्धु भगवान ॥५॥

प्रभु-सेवहि यह भक्त स्वभावा। जनहित काज प्रभुहिं मन भावा॥
कृष्णहि बेंचि सकै जन चाहैं। भक्तन प्रन प्रभु सदा निबाहैं॥
श्री द्वारिका सत्यभामा जू। हर्षित होई बेंच्यो सो हरि जू॥
सोइ प्रभु श्री गौरांग गुणाकर। गुप्त रूप बिहरहिं पृथ्वी पर॥
चीन्हत नहिं आपन प्रभु कोई। जिनहिं लागि आए प्रभु सोई॥
कृष्ण भजन यदि तुम सब चहहू। भक्तन कर सेवा नित करहू॥
गौरचन्द्र प्रभु यहै सिखावहिं। स्वयं करहिं अरु सबहिं बतावहिं॥
वस्त्र आदि प्रभु सब लै चलहीं। लज्जा मन महँ नैकु न करहीं॥
वैष्णव सकल निवारण करहीं। गौर विनय लखि अति सुख लहहीं॥
ह्वै प्रसन्न सब प्रभु सन कहहीं। आशिर्वाद सकल द्विज देहीं॥

"भजहु सदा श्री कृष्ण कहँ, सुमिरहु कृष्ण सुजान।
सुनहु नाम श्री कृष्ण को, कृष्णहिं सबके प्रान ॥६॥

बोलहु कृष्ण होहु हरि दासा। कृष्ण हृदय महँ करहिं प्रकासा॥
कृष्ण बिना तोहिं और न भावै। तुम्हरे बल हमरो दुख जावै॥
मूर्ख सकल जे कीर्तन हँसहीं। तुम्हरी कृपा सो कीर्तन करहीं॥
पण्डित सब जीत्यो जिमि तुमहीं। पाषंडी नाशहु तिमि सबहीं॥
तुम्हरी कृपा भक्त जे अहहीं। सुख सों कीर्तन मिलि सब करहीं॥"
प्रभु कर अङ्ग स्पर्श सब करहीं। आशिर्वाद मगन मन देही॥
बिनती करि निज दुःख सुनावहिं। "सुनहु तात हम बहु दुख पावहिं॥
यहि नदिया बहु पण्डित अहहीं। भक्ति बखान कोउ नहिं करहीं॥
यती तपस्वी अरु बहु ज्ञानी। संन्यासी आदिक विज्ञानी॥
कृष्ण कीर्तन कोउ नहिं करहीं। उलटो दूषण हम कहँ देहीं॥

तिनहिं सुनहिं पापी सकल, कीर्तन करहिं न कोय।
मानत नाहीं हम सबहिं, दुःख मोहिं बहु होय ॥७॥

कृष्ण कीर्तन नहिं कहुँ सुनहीं। याहि दुःख सों हम नित जरहीं ॥
अब प्रसन्न हरि हम पर भयऊ। सद्पथ पर हरि तुम कहँ आनेऊ ॥
पाषण्डिन कर अब क्षय होई। हम सब यह निश्चय कर सोई ॥
चिरञ्जीव तुम होहु कृपाला। कृष्ण भजहु तुम दीनदयाला ॥
करहु प्रचार भक्ति कर भाई। कृष्ण भजहिं सबही मिलि आई ॥"
भक्त सकल जो आशिष देहीं। तेहि कहँ प्रभु निज शिर धरि लेहीं ॥
आशिर्वाद भक्त जब देहीं। कृष्ण भक्ति पावै जन तबहीं ॥
सकल भक्त दुख सुनि विश्वम्भर। करेउ प्रकाश भक्ति अति सत्वर ॥
भक्त वचन प्रभु सदा निबाहैं। भक्तन प्रिय भक्तहिं नित चाहैं ॥

धन्य मोर जीवन सफल, तुमहु प्रशंसहु जाहि।
तुम रक्षा जाकर करहु, तेहि कहँ भय कछु नाहिं ॥८॥

पाषण्डी केहि गिनती भाई। सुख सों कीर्तन करु सब जाई ॥
भक्त-दुःख प्रभु सहि नहिं सकहीं। भक्त लागि प्रभु जग अवतरहीं ॥
हम समुझत तुम कृष्ण बुलैहौ। नदिया आनँद सों सब भरिहौ ॥
जग उद्धार करब तुम सबहीं। प्रभु अवतार होब इहि पुरहीं ॥
मोहिं सेवक सब आपन जानहु। यहै भाव तुम मन महँ राखहु ॥
सबकर चरन धूलि प्रभु लेहीं। आशिर्वाद सकल जन देहीं ॥
गंग नहाइ चले सब घरहीं। प्रभु प्रसन्न होइ निज गृह चलहीं ॥
भक्त दुःख सुनि दीनदयाला। पाषण्डिन पर क्रोध बिसाला ॥
"संहारब सब" अस कहि बोलहिं। "हम सोइ" "हम सोइ" कहि अस धावहिं ॥
क्षण महँ हँसहि क्षणहिं महँ रोवहिं। मूर्छित होइ क्षण महँ प्रभु सोवहिं ॥

लक्ष्मी लखि मारन कबहुँ, धावत प्रभु अकुलाय।
वैष्णव आवेशहिं प्रभू, इहि विधि रहत भुलाय ॥९॥

बूझि न सकत शची का रोगा। पुत्र स्नेह बस कह का भोगा ॥
कहहि सबहिं सन सुत व्यवहारू। "स्वामी विधि लीन्ह्यो दिन चारू ॥
पुत्र सकल सुरलोक सिधारे। बच्यो यही एक पुत्र हमारे ॥
तेहि कर मति कछु बूझि न सकहीं। हँसै कबहुँ बोलै मन मनहीं ॥
कबहुँ रोइ, मूर्छित पुनि होवै। मारहुँ मारहुँ कहि कहि धावै ॥
वृक्षन पर कबहूँ चढ़ि जावै। देखत ही पुनि भुइँ पर आवै ॥
कड़ कड़ दाँत करत दिन राती। पुनि आपुहि मारत बहु भाँती ॥
भुँइ पर लोटत अति दुख पावै। कहा कहौं कछु कहत न आवै ॥
भक्ति विकार कोउ नहिं जानत। वायु रोग सबही मिलि मानत ॥
बाँधन हित पुनि कह सब कोई। आवै प्रभु कहँ देखन जोई ॥

पाषंडी लखिकै प्रभू, मारन कों तेहि धाय।
माता तुरतहि जायकै, प्रभुहिं पकरि लै आय ॥१०॥

प्रथमहिं वायु कोप कह कोई। इन कहँ ग्रसत भयो पुनि सोई॥
दोउ पग बाँधि राखु यहि जाई। भोजन कहँ नरियर जल माई॥
जब तक शान्त होय नहिं जाई। कोउ कह यह सब काम न आई॥
शिव घृत मस्तक पर तुम देऊ। ता पाछे यहि स्नान करायेऊ॥
स्वस्थ होय जब तक नहिं माई। यहि क्रम सों राखेउ मन लाई॥
शची मातु अति सरल सुभाऊ। मानत सोइ जो कह सति भाऊ॥
व्याकुल अति चिन्ता सों रहई। श्री गोविन्द चरन तब भजई॥
वैष्णवहू कहँ शची बोलायो। एक दिना श्रीवास पधारयो॥
प्रभु उठि तब प्रणाम तेहि कीन्हा। प्रेम पुलक चरणन रज लीन्हा॥
तुलसी पूजत रहे निमाई। भक्त निरखि रोमावलि छाई॥

अश्रु कंप रोमाञ्ज सब, उदय भए तब आय।
मूर्छित प्रभु तुरतहि भए, लोटहिं भुँइ पर जाय॥११।

सावचेत होइ क्रंदन करहीं। महाकम्प स्थिर रहि नहिं सकहीं॥
श्री निवास लखि मनहिं बिचारहिं। भक्ति योग लक्षण सब पावहिं॥
वायु कहत को सो कछु नाहीं। धन्य धन्य तुम यहि जग माहीं॥
सावचेत होइ तब प्रभु पूछेउ। पण्डित कहहु कहा तुम समुझेहु॥
कवन व्याधि मो कहँ का अहई। वायू कहि बाँधन कोउ कहई॥
श्री निवास हँसि कै तब कहई। "भलो बायु हमहूँ तेहि चहई॥
महा भक्ति हम तौ सब देखहिं। कृष्ण कृपा बिनु कोउ नहिं पावहिं॥
धन्य धन्य तुम जो यहि पाएहु। भक्ति योग अति दुर्लभ जानहु॥"
वचन सुनत प्रभु हर्षित भयऊ। दृढ़ करि तेहि आलिंगन करेऊ॥
वायु कहत सब कोउ मिलि हमहीं। केवल मोहिं प्रबोधेहु तुमहीं॥

बहु कृतकृत्य भये हम, सुनिकै तुम्हरी बात।
तुमहूँ यदि वायू कहत, डूबत गंगहि तात॥१२॥

कह श्रीवास भक्ति दृढ़ तुमहीं। ब्रह्मा शिव याचत येहि सबही॥
एक संग हम कीर्तन करिहैं। पाषंडी पापी सब जरिहैं॥
श्री निवास माता सन कहेहू। "मन सो शंका अब सब मेटहु॥
वायु कोप शंका जनि करहू। कृष्ण भक्ति निश्चय मन धरहू॥
कृष्ण चरित यदि अद्भुत देखेहु। मन महँ ताहि गुप्त करि राखेहु॥
याकों बूझि सकै नहिं काहू। कतहुँ कहेहु जनि मोहिं पतियाहू"॥
अस कहि श्री निबास गृह गयऊ। मातु हृदय शंका मिटि गयऊ॥
तदपि दुखित उर अन्तर रहई। घर बाहर सुत होवै डरई॥
यहि बिधि प्रभु विश्वम्भर रहहीं। तिनहिं न जानि सकै कोउ जनहीं॥
आपु जनावै तब कोउ जानै। प्रभु महिमा बड़ सब कोउ मानै॥

साथ गदाधर लेइ प्रभु, एक दिना सुरराज॥
श्री अद्वैत दरस हित, पहुँचे जहँ द्विजराज॥१३॥

श्री अद्वैत दरस प्रभु पावा। तुलसी पूजत सोइ मन लावा ॥
बैठि जलहिं सो तुलसी सेवहिं। हरि हरि कहि दोउ भुजा उठावहिं ॥
पूजा छाँड़ि हँसत अरु रोवत। सिंह समान गर्ज करि बोलत ॥
सोइ हुंकार सुनत जन डरपहिं। रुद्र समान मूर्ति सब देखहिं ॥
देखत ही अद्वैत कृपाला। मूर्छित गौर गिरे तत्काला ॥
भक्ति योग अद्वैत गोसाईं। चीन्हेउ निज प्रभु कहँ हर्षाई ॥
आजु कहाँ तुम बचिकर जैहौ। बहुत लुकायहु अब नहिं बचिहौ ॥
अब प्रभु प्रगट तुमहिं हम करिहैं। जगत जनाय आज हम देहैं ॥
उत्तम समय बूझि मुनिराया। सब पूजाकर साज सजाया ॥
गौर चरन पूजत अति प्रीती। विनय करत अर्चत बहु रीती ॥

गंध पुष्प अरु धूप, दीपादिक सब अर्पहीं।
धरि मन सहँ सोइ रूप, पढ़त श्लोक[1] अति हर्षहीं ॥१४॥

शीश चरन पर रखिकै पढ़हीं। आपुन प्रभुहिं चीन्हि जल ढरहीं ॥
नयनन जल सों प्रभु पद धोयो। हाथ जोरि तब विनय सुनायो ॥
तबहिं गदाधर हँसिकै कहेऊ। बालक सँग बड़ अनुचित कीन्हेउ ॥
श्री अद्वैत तबहिं हँसि बोले। इते दिना तक बालक जाने ॥
तबहिं गदाधर विस्मित भयऊ। ईश्वर प्रकट होइ जग आयेउ ॥
ताही समय स्वस्थ प्रभु भयऊ। सन्मुख श्री अद्वैत निहारेउ ॥
प्रभू छिपावहिं निजको सबसों। बन्देउ आचार्यहिं दोउ कर सों ॥
चरन धूलि लै शिर पर राखेउ। देह समर्पि विनय बहु भाखेउ ॥
"करौ अनुग्रह हम पर साईं। हम अनुगत ध्यावैं मन लाई ॥
धन्य भयो तव दर्शन पाई। कृष्ण भक्ति बाढ़हु हर्षाई ॥

भव बन्धन तुम नाशहु, छण महँ दीनदयाल।
कृष्ण बसत तव हृदय महँ तुम तौ परम कृपाल ॥१५॥

भक्त बड़ाई नित प्रभु देहीं। भक्त करै जिमि तिमि प्रभु करहीं ॥
श्री अद्वैत मनहिं मन कहहीं। तव माया हम सब कछु समुझहिं ॥
आज प्रभो हम जीत्यो तुमहीं। मन वाञ्छित पायो हम सबहीं ॥
हँस कर आचारज तब कहहीं। "सबसों बड़ तुमहि हम गिनहीं ॥
कृष्ण कथा हित रहहु इहाँहीं। पावैं दरस सदा हम सबही ॥
सब वैष्णव तुव दर्शन चाहत। तुम सँग कीर्तन सब अभिलाषत ॥"

---

१. तथाहि विष्णु पुराणे (१।१६।६५)

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥

अर्थ – प्रह्लाद जी ने हाथ जोड़कर स्तुति करते हुए कहा, "हे कृष्ण, आप ब्रह्मण्यदेव हैं, गौ और ब्राह्मणों तथा जगत का हित करने वाले हैं। गौओं का पालन करने से आपका एक नाम गोविन्द पड़ा है। आपको हम बार-बार नमस्कार करते हैं।

सुनि अद्वैत वचन प्रभु हर्षे। आनँद मगन नयन जल बर्षे॥
करि स्वीकार गये निज बासा। जानेउ द्विज प्रभु करब प्रकासा॥
करन परीक्षा द्विज मन ठयऊ। शान्तीपुर तब सो चलि गयऊ॥
मोरे प्रभु यदि सचमुच होइहैं। प्रभुकर सत्य दास यदि हम हैं॥

तब प्रभु हम कहँ बाँधिकै, लावहिंगे निज पास।
प्रभु दासहि छाँड़त नहीं, राखत जन अभिलास॥१६॥

श्री अद्वैत चित्त को बूझै। गौर बुलायो तेहि को समुझै॥
यह सब कथा नाहिं जो मानै। प्रभु सेवा निष्फल सो जानै॥
प्रतिदिन श्री विश्वम्भर देवा। कीर्तन करि, कर वैष्णव सेवा॥
प्रभु लखि सब प्रसन्न मन होई। प्रभु पहिचान सकत नहिं कोई॥
प्रभु आवेश विलक्षण लखहीं। अति संदेह करत सब जनहीं॥
आनँद आवेशहि जब होई। बरनि सकै नहिं तेहि जग कोई॥
कम्प होय अति प्रबल अपारा। शत जनहू नहिं सकहिं सँभारा॥
नदी समान नयन जल बहई। पुलकित अंग सबहि लखि परई॥
अट्टहास करि बहु बिधि हँसहीं। प्रेम मगन मूर्छित ह्वै पड़हीं॥
साबचेत होइ हरि हरि बोलहिं। कृष्ण बिना कछु और न भाषहिं॥

प्रभु हुंकार घोर अति, सुनत फटै दोउ कान।
करहिं अनुग्रह जाहि पर, तरत बिना जलयान॥१७॥

कबहुँक अंग बज्र सम होई। कबहुँक माखन सम लखि परई॥
अति अपूर्व लखि कै सब लक्षन। मानत प्रभु मानुष नहिं कोउ जन॥
कहत सबै यह कोउ अवतारी। कृष्ण अंश कोउ कहत विचारी॥
कोउ कह शुक प्रह्लाद समाना। कहत कोउ नारद हम जाना॥
कहत कोऊ सब दुःख मिटायो। कीर्तन विधि सब हमहिं सिखायो॥
सब वैष्णव गृहिणी जे अहहीं। कृष्ण प्रगट सब ही मिलि कहहीं॥
यहि विधि मन बिचार सब करई। सावचेत होइ प्रभु अस कहई॥
"कहाँ गए, पाउब कब कृष्णहिं"। गला पकरि प्रभु सब सन पूछहिं॥
श्वाँस छाँड़ि प्रभु रोदन करहीं। स्थिर होइकै सब सन यह कहहीं॥
"हमरो दुःख सकल तुम सुनहू। सावधान होइ निज मन गुनहू॥

मोर दुःख कर अन्त नहिं, कहा करैं हम रोइ।
कृष्ण पाइकै सुनहु सब, पुनः गँवायो सोइ॥१८॥

गुप्त कथा सुनबे हित सबही। चहुँ दिशि बैठि मुदित मन सुनहीं॥
प्रभू कह्यो सुन्दर एक ग्रामा। कानाई शाला तेहि नामा॥
कृष्ण चरित कर मूर्ति अनेका। ब्रज लीला विस्तृत सविवेका॥
बालक एक श्याम अति सुन्दर। गुञ्जमाल उर परम मनोहर॥
मोर पंख शिर पर अति सोहै। घुँघराली अलकैं मन मोहैं॥
झलमल मणि अङ्गन पर राजै। मोहन वंशी हाथ विराजै॥

चरनन में नूपुर अति शोभे। सुन्दर भुज भक्तन मन लोभे ॥
कौस्तुभ अरु श्रीवत्स विराजत। उर मणि माल परम छवि पावत ॥
पीताम्बर सुन्दर अति सोहत। कमल समान नेत्र मन मोहत ॥
हँसत हँसत हमरे ढिग आयो। भुज भरि अंक मोहिं तब लायो ॥

भागि गयो पुनि कहाँ सो, हम नहिं जान्यो ताहि"।
अतिहि दीन होइ कहत प्रभु, समुझि परै कहु काहि ॥१६॥

जेहि पर कृपा करत सोइ समुझत। प्रभु कर मर्म भक्त जन बूझत ॥
कहत कहत प्रभु मूर्छित भयऊ। कृष्ण कृष्ण कहि भुइँ पर गिरेऊ ॥
कृष्ण कृष्ण कहि सब उठि धाये। धूल झारि प्रभु कहँ बैठाये ॥
सावचेत होइ पुनि प्रभु रोवहिं। कृष्ण कृष्ण कहि बहु बिधि विलपहिं ॥
पूर्ण स्वस्थ होइ बैठे तबहीं। अतिहि नम्र होइ देखत सबहीं ॥
अति संतोष सबहिं कहँ भयऊ। भक्ति कथा सुनि अति सुख लहेऊ ॥
कहत सबहि बड़ पुण्य हमारे। धन्य भए हम तुमहिं निहारे ॥
स्वर्गहु ते बड़ तव सतसंगा। जेहि ते पावत भक्ति अभंगा ॥
हम सेवक सब प्रभु के अहहीं। तुमहिं प्रधान सबै मिलि कहहीं ॥
आनँद सों सब कीर्तन करिहैं। दुःख सकल हम दूरि बहैहैं ॥

पापण्डिन के वाक्य सों, दग्ध भयो सब देह।
प्रेमामृत बरसाइ कै, कियो दीन पर नेह ॥२०॥

सब वैष्णव कहँ प्रभु समुझायेहु। तब प्रभु अपने भवन सिधारेउ ॥
ग्राम कथा प्रभु घरहु न करहीं। आनँद मगन सदा प्रभु रहहीं ॥
नयनन सो जल बहतहि जाई। मानहु गंगा नयन समाई ॥
"कहाँ कृष्ण" केवल यह बोलहिं। पूछेहू ते कछु और न भाषहिं ॥
वैष्णव जो सन्मुख प्रभु देखहिं। "कहाँ कृष्ण" तासों प्रभु पूछहिं ॥
यह कहि बहु विधि रोदन करहीं। भक्त प्रबोधहिं प्रभु कहँ धरहीं ॥
एक दिना अतिसै मन भाए। बीड़ा लिए गदाधर आए ॥
देखि गदाधर प्रभु तेहि पूछहिं। कहाँ कृष्ण मोहि कहहु विराजहिं ॥
पीत बसन श्यामल अति सुन्दर। हर्यो मोर मन, कहहु विप्रवर ॥
अतिहि दीन होइ वचन उचारहिं। कहा कहैं सोचत सो मन महिं ॥

कृष्ण तुम्हारे हृदय महँ, सदा विराजत भाइ।
कहेउ गदाधर गौर सों, बहु विधि सों समुझाइ ॥२१॥

सुनत हृदय महँ कृष्ण विराजै। नख सों हृदय विदारन लागे ॥
तुरत गदाधर कर गहि लीन्हा। बहु विधि सों प्रबोध तब कीन्हा ॥
आवत कृष्ण शान्त तुम होऊ। अस कहि कै समुझावत भयऊ ॥
शची मातु सब लखि हर्षानी। बालक बुद्धि जानि सुख मानी ॥
कहेउ गदाधर सन प्रियबानी। "बुद्धिमान तुम हम जिय जानी ॥
हौं भय सों सन्मुख नहिं जावौं। भलीभाँति तुम तेहि समुझावौ ॥

गौर संग तुम कबहुँ न छाँड़हु। तेहि के सँग तुम सदा बिराजहु ॥
माता अद्भुत लखि सब जान्यो। पुत्र भाव मन सों बिसरायो ॥
हृदय विचार करन तब लागी। नर नहिं यह कोऊ बड़ भागी ॥
महापुरुष कोउ मम घर आयो। यहि विधि मनहिं बहुत समुझायो ॥

भक्त सकल संध्या समय, गौर निकट तब आय।
पढ़त श्लोक अति प्रेम सों, सुनत गौर हर्षाय ॥२२॥

भक्ति योग सम्मत सब श्लोकहिं। पढ़हिं मुकुन्द प्रेम रस पोषहिं ॥
गायक चतुर मुकुन्द गोसाईं। प्रभु हिय प्रेम बढ़त ही जाईं ॥
हरि हरि कहि प्रभु गर्जन लागे। गिरहिं पड़हिं प्रभु सब भय त्यागे ॥
पकड़ि न सकत प्रभू कँह कोई। प्रभु दर्शन करि अति सुख होई ॥
सर्व भाव एक बारहिं आए। कम्प पुलक रोमांच सोहाए ॥
प्रभु आवेश रुकत नहिं भाई। क्षण महँ निशा बीति सब जाई ॥
कछु स्थिर प्रभु प्रभात महँ होवहिं। कीर्तन लंपट निशि दिन जागहिं ॥
यहि बिधि निज गृह कीर्तन करहीं। भक्त सकल अति आनँद लहहीं ॥
आरंभेउ प्रभु कीर्तन जबहीं। भक्त सकल दुख नासेउ तबहीं ॥
हरि हरि हरि प्रभु कीर्तन करहीं। पापण्डी सब सोइ न सकहीं ॥

क्रोध करहिं तब लोग सब, बोलहिं अटपट बानि।
वायू बश ये सब भए, साँची यह अनुमानि ॥२३॥

कोउ कहै निद्रा नहिं आवै। रात्री महँ उँचे स्वर गावै ॥
ऊँचे स्वर सों हरिहिं पुकारैं। क्रोध करहिं गे श्री हरि न्यारे ॥
इनकर नाश शीघ्र अब ह्वैहै। तब हम सब कहँ निद्रा ऐहै ॥
ज्ञान योग कहँ सब मिलि छाँड्यो। उद्धत सम सब कहँ भरमायो ॥
को कर कीर्तन कोउ नहिं जानत। सकल दुष्ट श्रीवासहिं मानत ॥
पेट भरन हित मिलि सब भाई। सबै सुनावहिं अति हर्षाई ॥
मन महँ जपिबै सों सुनु भाई। पुण्य होत नहिं का कहि जाई ॥
उँचे स्वर रात्रिहिं चिल्लाये। पुण्य होय, किन ग्रंथन गाये ॥
कहत कोउ बड़ अनुचित भयऊ। निश्चय नाश देश कर समुझऊ ॥
श्री निवास सब अनरथ हेतू। कहहुँ बात सब सुनहु सचेतू ॥

राजकर्मचारी कहेउ, भारी संकट आज।
दुइ नौका सेना इतै, आवत धरिबे काज ॥२४॥

कीर्तन बहुत होत पुर माँहीं। सुनि नवाब बोल्यौ मोहिं पाहीं ॥
'धरि आनहु सब कहँ मम पासा'। जानहु सब कर होइहै नासा ॥
श्री निवास सबही मिलि भगिहैं। हम सब अबै पकरि कै जैहैं ॥
प्रथमहिं हम सबसो इमि कहेऊ। श्री निवास घर गंगा फेंकउ ॥
तब कोउ हमरो कहा न मानेउ। अब भोगहु देखेहु तुम जानेउ" ॥
कहत कोउ हम काहे जैहैं। श्री निवास कहँ बाँधि पठैहैं ॥

जानेउ लोग नगर के सबही। राजा नौका आवत इतही ॥
धरिबे हित सब वैष्णव लोगहिं। वैष्णवहू सब सुने सचेतहिं ॥
प्रभुहिं सुमिरि कोउ भय नहिं मानहिं। बिधि जो रच्यो होइहै सो जानहिं ॥
प्रभू अछत हम कहँ भय नाहीं। श्री निवास सुनि कै बिलखाहीं ॥

यवन राज भय मानिहू, भइ प्रतीत मन माहिं।
श्री हरि हरि बोलन लगे, जेहि सुमिरत दुख जाहिं ॥२५॥

गौरचन्द्र सबके उर बसहीं। भक्तन भय जान्यो प्रभु तबहीं ॥
गौर स्वयं प्रभु, भक्त न जानहिं। प्रभू जनावन हित अब सोचहिं ॥
निर्भय प्रभु घूमत चहुँ ओरा। अद्वितीय सुन्दर प्रभु गोरा ॥
सर्व अंग महँ चन्दन सोहै। अरुण अधर नयनन मन मोहै ॥
घुँघराली अलकैं शिर सोहत। पूर्णचन्द्र मुख सब मन मोहत ॥
चारु जनेउ स्कन्ध पर राजत। दिव्य वस्त्र परिधान विराजत ॥
बीड़ा खात प्रभू चलि जाई। सुरधुनि तीर गए हर्षाई ॥
हर्षे सुकृती जन प्रभु देखी। पाषण्डी उर क्रोध विशेषी ॥
सब कछु जानि फिरत पुर माँहीं। राजाहू कर भय कछु नाहीं ॥
राजकुमार सदृश पुर घूमत। निर्भय मन कछु त्रास न बूझत ॥

कहेउ एक जन आइकै, बूझे हम सब बात।
भागन हित यह सब रच्यो, लखहु न इन कर घात ॥२६॥

सुन्दर बन लखि प्रभु सुख माने। गायन चरत तहाँ प्रभु जाने ॥
हंबा रव करि चहुँ दिशि धावहिं। जल पीवन हित गंगहि आवहिं ॥
दौड़त इत उत पूँछ उठाई। कोउ बैठत कोउ चरत अघाई ॥
गौअन लखि प्रभु गर्जन लागे। "हम सोइ हम सोइ" कहि प्रभु भागे ॥
श्री निवास गृह तुरतहिं आए। तिनहिं पुकारत अति मन भाए ॥
करहु कहा कहि ताहि पुकारा। पूजत श्री नृसिंह श्रीवासा ॥
जेहि घर महँ श्रीवास विराजहिं। तेहि कर द्वार लात सों पीटहिं ॥
"केहि कहँ पूजहु केहि तुम ध्यावहु। जेहि पूजहु सो हम यह देखहु ॥"
ज्वलित अनल सम पण्डित वासा। भई समाधि भंग अति त्रासा ॥
चहुँ दिशि इतउत देखन लागे। सन्मुख लखि प्रभु अति सुख पागे ॥

वीरासन बैठे तहाँ, विश्वम्भर भगवान।
गदा पद्म आदिक लिए, सुन्दर गौर सुजान ॥२७॥

मत्त सिंह सम प्रभु तहँ गर्जहिं। वाम कक्ष सों तालि बजावहिं ॥
श्री निवास लखि काँपन लागे। स्तब्ध होइ कछु बोलि न पाए ॥
तब प्रभु कहेउ, "सुनहु श्रीवासा। तुम नहिं जानेउ मोर प्रकासा ॥
तुमहिं उच्च संकीर्तन कीन्हेउ। नाड़ा मोहिं अतिसै आराधेउ ॥
हम सब लागि सहित परिवारा। पुर वैकुण्ठ छाँड़ि एहि बारा ॥
हम आये तुम कछु न बिचारेउ। नाड़ा छाँड़ि शान्तिपुर गयऊ ॥

साधुन कर सब दुःख नसैहौं। दुष्टन कहँ हम सब संहरिहौं ॥
तुम कछु चिन्ता करहु न भाई। पढ़उ मोर स्तव अब सुखदाई" ॥
श्री निवास प्रभु लखि अति हर्षेउ। दुःख गयउ उर आनँद लहेऊ ॥
खड़े भये अति प्रेम अधीरा। हाथ जोड़ि विनवत मति धीरा ॥

सहजहि पण्डित वास जू, अरु भागवत महान।
आज्ञा प्रभु की पाइकै, स्तुती करत सुख मान ॥२८॥

ब्रह्मामोहिं भागवत माँहीं। स्तुती कीन्ही सोइ पढ़ि हर्षाहीं[1] ॥

स्तुति

जय जय श्री बिश्वम्भर देवा। नवघन सम सन्तन कर सेवा ॥
पीताम्बर सुन्दर अति सोहत। जय शचिनन्दन सब मन मोहत ॥
गुंजमाल बनमाल बिराजत। मोर पंख शिर पर अति छाजत ॥
गंगादास शिष्य पद लागौं। प्रभु तुम सौं भक्ती वर मागौं ॥
दधि ओदन श्रीहस्त बिराजै। जगन्नाथ सुत मम उर राजै ॥
कोटि चन्द्र सम रूप मनोहर। शिङ्गा, वेणु, लकुट अति सुन्दर ॥
प्रभु तव चरण करौं हम बन्दन। वेद कहत तोहि श्री नँदनन्दन ॥
बार बार तव चरण नमामी। प्रभु तुमही हौ जग के स्वामी ॥
ब्रह्मस्तव पढ़ि कै कर जोरी। कहत पुनः लखि प्रभु की ओरी ॥
तुमहि विष्णु अरु कृष्णहु तुमही। यज्ञेश्वर जगदीशहु तुमही ॥

तव चरणोदक तीर्थवर, श्री गंगा जग जान।
तुमहिं राम, रावण हत्यो, भक्त जनन के प्राण ॥२९॥

अज भव आदि करत तव सेवा। वेद रूप नारायण देवा ॥
छल्यो बली वामन होइ तुमही। हयग्रीव ह्वै पालेहु जनहीं ।

---

१. तथाहि (भा० १०।१४।१)
"नौमीड्य तेऽभ्रवपुषे तड़िदम्बराय
गुञ्जावतंसपरिपिच्छलसन्मुखाय।
वन्यस्तजे कवलवेत्र-बिषाण-वेणु
लक्ष्मश्रिये मृदुपदे पशुपांगजाय ॥"

अर्थ—हे विभो, नवीन मेघ के समान आपका शरीर है, बिजली के समान आपके वस्त्र हैं, गुंजा से बने हुए कुण्डल और मस्तक पर मोर के पंख शोभित हो रहे हैं, गले में आप वनमाला धारण किए हुए हैं, वेणु, लकुट, शृंग आदि आपकी शोभा बढ़ा रहे हैं, आपके चरण युगल अति कोमल हैं, आप पशु-पालक नन्द के नन्दन हैं और आप स्तुति करने के योग्य हैं। आपको प्राप्त करने के हेतु हम आपकी स्तुति करते हैं।

जगहित नीलाचलहिं विराजहु। भक्तन हित पार्षदहि नामहु ॥
कमलाहू प्रभु तुमहिं न जानहिं। श्री बलदेव मोइ कहँ पावहिं ॥
मिथ्या माया फँसि नहिं माने। वृथा जन्म मम तुमहिं न जाने ॥
माया करि प्रभु मोहिं खेलायेउ। धोती वस्त्र लेइ मोहिं सेयेउ ॥
तेहि कर भय हम कछु नहिं मान्यो। ममहित प्रभु मोरे गृह आयो ॥
आजु दुःख सब मोर विनाशा। बड़ो भाग्य प्रभु कीन्ह प्रकाशा ॥
सफल जन्म तब दर्शन पायो। भयो सुमंगल दुःख नसायो ॥
भा उद्धार पितृ कुल सबहीं। नदिया धन्य भई प्रभु अबहीं ॥

आजु भाग्य बड़ नयन कर, पायो दर्शन तोर।
लक्ष्मी जेहि सेवत सदा, जय जय जय प्रभु गौर ॥३०॥

इति स्तुति

कहत कहत पण्डित श्रीवासा। ह्वै अधीर छाँड़हिं अति श्वासा ॥
हाथ उठाइ रुदन सो करई। भुँइ पर लोटत अति सुख लहई ॥
देखि अपूर्व गौर परकासा। परमानन्द मगन श्रीवासा ॥
स्तुति सुनि प्रभु प्रसन्न अति भयऊ। तब करि दया ताहि सन कहेऊ ॥
"घर महँ स्त्री पुत्रादिक जोई। ल्यावहु दरस करै सब कोई ॥
स्त्री सह तुम मम चरनन पूजहु। सो चाहहु सोई वर माँगहू" ॥
प्रभु आज्ञा सुनि पण्डित वासा। सबहिं बुलायो सहित हुलासा ॥
विष्णुहिं पूजन हित जो राखेउ। सब सामग्री प्रभुहिं चढ़ायेउ ॥
माला गन्ध धूप अरु दीपा। प्रभु चरनन पूजेउ कुलदीपा ॥
सबको लै श्रीवास उदारा। पूजत चरन सहित परिवारा ॥

श्री निवास-प्रिय गौर प्रभु, विश्वम्भर द्विजराज।
सबके शिर चरनन धरयो, तारयो सकल समाज ॥३१॥

हँसिकै प्रभु विश्वम्भर कहई। "मोर भक्ति सबके उर बसई" ॥
करि हुंकार गर्जि विश्वम्भर। श्री निवास सों बोले सत्वर ॥
"श्री निवास तुम सुनि भय मान्यो। राजा को अति क्रोधित जान्यो ॥
पकड़न हित सब वैष्णव लोगहिं। सेन पठाये सो अति क्रोधहिं ॥
विश्व माँहिं सब जीव जे रहहीं। सबके प्रेरक हम उर बसहीं ॥
हमहिं कहब सोई सो कहिहै। तबहिं धरन हित सेन पठैहै ॥
यदि स्वतन्त्र होइ सेन पठैहै। तोहिं धरन कहँ नौका ऐहै ॥
नौका पर प्रथमहिं हम चढ़िहैं। राजा आगे हम तब जैहैं ॥
हमहिं देखि सो तुरतहिं उठिहै। सिंहासन पर नहि टिकि सकिहै ॥
बिह्वल करि हम तेहि कहँ देखिहैं। यदि यहि विधि नहिं हमसों कहिहै ॥

पूछिहि मोहिं सन यदि कछू, कहब ताहि समुझाइ ॥
राजा तुम मो सन सुनहु, अबही देहुँ बुझाइ ॥

सत्य असत्य कहा तुम जानहु। पहले काजी मुल्ला आनहु ॥
हाथी घोड़ा जो कछु होई। आनहु इहाँ बचै नहिं कोई ॥
तब काजी कहँ आज्ञा करहू। आपन शास्त्र मते सों कहहू ॥
सबहि रोआवै तब हम जानहिं। इनकर शक्ति तबहि सब देखहिं ॥
यदि नाहीं ये सब करि सकिहैं। तब हम राजा सों यह कहिहैं ॥
कीर्तन बन्द करन इन कहे। इन कर शक्ति देखि तुम बहे ॥
आँख खोलि मम शक्तिहि देखहु। हाथी घोड़ा सबहि मँगावहु ॥
तब हम सब एकत्रित करिहैं। कृष्ण कृष्ण कहि तिनहिं रोएहैं ॥
राजा सहित सकल तेहि लोगा। भलो बनो है आजु सँजोगा ॥
सबहिं कृष्ण कहि आज रोएहौं। भलोभाँति हम तेहि अपनैहौं ॥

करहु नहीं विश्वास यदि, तुरत दिखावो तोहिं ॥
रुदन करै यदि बाल यह, तब जान्यो प्रभु मोहिं ॥३३॥

सन्मुख इक कन्या प्रभु देखेउ। भाग्यवान अति सब जग मानेउ ॥
श्री निवास पण्डित कर भ्राता। कन्या तासु नरायणि ख्याता ॥
अजहूँ तेहि वैष्णव जन सबही। "प्रभु अवशेष पात्र" यहि कहही ॥
अन्तर्यामी प्रभु सब जानेउ। नारायणि सन प्रभु अस कहेऊ ॥
"कृष्ण कृष्ण कहि अब तुम रोवउ"। सुनत वचन भइ विह्वल सोऊ ॥
नारायणि अति सै बड़भागी। "कृष्ण कृष्ण" कहि रोअन लागी ॥
चारि बर्ष की सुता सोहाई। नयनन जल सों भूमि सिचाई ॥
हँसिकर श्री विश्वम्भर कहेऊ। सुनु श्रीवास तोर भय गयऊ ॥
श्री निवास प्रभु सन अस कहहीं। काल रूप तव विग्रह अहहीं ॥
प्रथमहिं तुम्हरे नाम प्रतापा। प्रभु नहिं कीन्ह एक संतापा ॥

केहिकर भय प्रभु होइ मोहिं, जब हमरे घर माँहिं ।
स्वयं विराजत गौर हरि, रहौं जाहिके छाँह ॥३४॥

अस कहि मगन भए श्रीवासा। प्रभुहिं विलोकत सहित हुलासा ॥
गृह के सब जन प्रभु अवलोकहिं। प्रभु प्रकाश सब जन मिलि देखहिं ॥
वेदहु जेहिकर दर्शन चाहत। श्री निवास अनुचर सो पावत ॥
श्री निवास कर चरित उदारा। कीन्ह पवित्र सकल संसारा ॥
गृह बसुदेव प्रगट प्रभु भयऊ। नन्द घरहि लोला सब कीन्हेउ ॥
जगन्नाथ गृह यह अवतारा। श्री निवास गृह सकल विहारा ॥
सब बैष्णव प्रिय पण्डित वासा। कीर्तन हित आवहिं तेहि वासा ॥
जासु सुयश सब वेद बखानहिं। दासोदास तासु तेहि देखहिं ॥
याही ते वैष्णव बड़ कहहीं। जेहि सेवत निश्चय हरि मिलहीं ॥
प्रभु आज्ञा श्रीवासहिं दयऊ। "काहू सन यह बात न कहेऊ ॥

सावचेत पुनि भए प्रभू, मन संकोच अपार।
करि प्रबोध श्रीवासकर, प्रभू गए निज द्वार ॥३५॥

श्रीनिवास अतिसय सुख माना। पत्नी बधू भाइ सनमाना ॥
देखि प्रकाश स्तुति जो कीन्हा। पावै भक्ति सुनै मन दीन्हा ॥
अन्तर्यामी प्रभु बलरामा। आज्ञा मोहिं दीन्ह सुखधामा ॥
गौर चरित गावन कहँ कहेऊ। प्रभू वचन पालन हम कीन्हेउ ॥
सब वैष्णव सन विनती करहीं। मोर प्रभू बलरामहि अहही ॥
श्री बल्देव निताई भयऊ। इन महँ भेद कछू नहिं मानहु ॥
प्रेम पात्र चैतन्य गोसाईं। श्री बल्देव वेद अस गाईं ॥
श्री अवधूत कहत यहि बारा। श्री निताइ जेहि जगत पुकारा ॥
मध्य खंड की कथा सोहाई। सावधान होइ सुनु सब भाई ॥
एक वर्ष प्रभु कीर्तन कीन्हा। भक्तन कहँ प्रभु अति सुख दीन्हा ॥
श्री चैतन्य निताई ध्यावै। वृन्दावन प्रभु को यश गावै ॥
ब्रजभूषण भाषा महँ कीन्हा। प्रभु पद कमल सदा मन दीन्हा ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खण्डे श्री संकीर्तनारम्भ वर्णन नाम द्वितीयोध्यायः ॥

तृतीय अध्याय

जय जय सर्व प्राणनाथ विश्वम्भर।
नित्यानन्द गदाधर केर ईश्वर ॥
जय जय अद्वैतादि भक्तन अधीन।
भक्तिदान देहु प्रभु उद्धारहु दीन ॥

एहि विधि कीर्तन करत कृपाला। भक्तन कहँ प्रभु कीन्ह निहाला ॥
प्रान समान भक्त कहँ मानहिं। गला पकरि सब कर प्रभु रोवहिं ॥
कृष्ण कृष्ण कहि क्रंदन करहीं। भक्त सकल अति आनँद लहहीं ॥
गौर प्रेम लखि अति सुख पावहिं। देह गेह सब सुधि बिसरावहिं ॥
मगन प्रेम महँ प्रभु सँग रहहीं। कीर्तन लम्पट कीर्तन करहीं ॥
दिन अरु रात कछू नहिं जानहिं। कृष्ण भक्ति मय प्रभु कहँ देखहिं ॥
प्रभू भाव परिवर्तन करहीं। सुनत जोइ सोई मन धरहीं ॥
दास्य भाव जब क्रंदन करहीं। प्रहर दोइ गंगा जनु बहहीं ॥
हँसत जबहिं तब तेहि विधि रहहीं। प्रभुकर भाव न कोउ लखि परहीं ॥
मूर्छागत प्रभु जबहीं होहीं। प्रहर एक सोइ भावहिं रहहीं ॥

कबहूँ आसन मारिकै, बैठहिं ध्यान लगाइ।
सोऽहं सोऽहं कहहिं प्रभु, मंद मंद मुसकाइ ॥ १ ॥

नाड़ा कहाँ गए मोहिं आनी। प्रेम लुटाउब सब मनमानी ॥
सोइ छण कृष्ण कृष्ण कहि रोवहिं। आपन केश पैर महँ बाँधहिं ॥
श्री अक्रूर नंद सों जाई। कंस सँदेसो कह्यो सुनाई ॥
सोइ भागवत श्लोक तब पढ़हीं। माथ नवाइ भूमि परि रहहीं ॥
प्रभु अक्रूर मनहुँ ह्वै गए। तैसहिं कथा कहन तब लागे ॥
"मथुरा नन्द चलहु तुम भाई। संग लेइ दोउ सुत हर्षाई ॥
धनुष यज्ञ कर उत्सव देखहु। राजमहोत्सव लखि सुख पावहु ॥"
यहि बिधि कथा कहत प्रभु रहहीं। नाना भाव सहित सब कहहीं ॥
सोइ भाव भक्तन सब देखहिं। आनँद मँह सुधि बुधि बिसरावहिं ॥
श्लोक सुनेउ एकदिन अति सुन्दर। श्री वराह कर चरित मनोहर ॥

श्री वराह के भाव में, गर्जन लागे गौर।
श्री मुरारि गृह चले तब, भक्तन के शिरमौर ॥ २ ॥

हनूमान जिमि रामहिं प्यारे। श्री मुरारि तिमि गौर दुलारे ॥
श्री मुरारि गृह पहुँचे जाई। गुप्त चरन बंद्यो हर्षाई ॥
"यज्ञ वराह" कहत प्रभु आवहिं। स्तंभित गुप्त देखि प्रभु ध्यावहिं ॥
हरि मंदिर प्रवेश प्रभु कीन्हा। रूप वराह तुरत धरि लीन्हा ॥
सन्मुख जलभाजन एक देखे। स्वानुभाव विश्वम्भर हर्षे ॥
दाँतन सों उठाय सोइ लयऊ। श्री वराह सम गर्जत भयऊ ॥
श्री खुर चारि प्रकाशेउ तबहीं। महातेज कछु लखि नहिं परहीं ॥
श्री मुरारि उर विस्मय भारी। श्री वराह लखि ज्ञान बिसारी ॥
श्री वराह हर्षित होइ तबहीं। श्री मुरारि सों आज्ञा करहीं ॥
पढ़हु मोर स्तुति तुम हर्षाई। स्तब्ध मुरारि न कछु कहि जाई ॥

अति अपूर्व प्रभु रूप लखि, मगन प्रेम मन माहिं।
बोलहु बोलहु प्रभु कहेउ, तुम कहँ भय कछु नाहिं ॥ ३ ॥

एते दिन तुम जानेहु नाहीं। रहे विराजत हम यहि ठाहीं ॥
कंपित श्री मुरारि तब कहेऊ। विनती करि बोलत अस भयऊ ॥
"आपन स्तुति प्रभु आपहि जानौ। श्री अनन्त हू पार न पावौ ॥
सहस वदन सों तव स्तुति करहीं। यह ब्रह्माण्ड एक फन धरहीं ॥
तबहू अन्त न पायो सोऊ। निज मुख सों तिनहीं यह कहेऊ ॥
को समर्थ जो तव स्तुति करई। वेद प्रधान सकल जग कहई ॥
सर्वतत्व तव सोउ न जानत। सदानन्द तुम कहँ सब ध्यावत ॥
लोम कूप ब्रह्माण्ड समावै। तव लीला कर थाह को पावै ॥
तेहि ते प्रभु आपहि सब जानहु। करहु कृपा भक्तन समुझावहु ॥
केहि विधि स्तुती करौं जगस्वामी। कहहु कृपा करि अन्तर्यामी ॥

श्री बृन्दावन दास ठाकुर विरचित

श्री चैतन्य भागवत

(सचित्र)

अनुवादक

बृजभूषण दास

प्रकाशक

बृजभूषणदास

भूषणलौज लंका

वाराणसी

श्री चैतन्याब्द ४८३
सं० २०२६

मूल्य १३–५०

प्राप्तिस्थान

(१) बृजभूषणदास

भूषणकौन लंका

वाराणसी

(२) गौर किशोर दास

काशी मुद्रणालय विश्वेश्वरगंज

वाराणसी

(३) अरुणकुमार

श्री नाथदास (सुग्गू बाबू) नाटक वाले

CK १६/१६ ठठेरी बाजार, वाराणसी

मुद्रक—

काशी मुद्रणालय

विश्वेश्वरगंज, वाराणसी

अस कहि शीश नवाइ कै लोचन नीर बहाइ।
हाथ जोरि ठाड़ो भयो, निरषत प्रभु हर्षाइ ॥ ४ ॥

गुप्त वचन सुनि प्रभु अति हर्षे। क्रोध वेद पर करि अस भाषे ॥
"हाथ पैर मुख मोहिं कछु नाहीं। ऐसो वेद कहत सब पाहीं ॥
काशी में परकाशानन्दा। वेद पढ़ावत सो अति मन्दा ॥
खंड खंड मम अंगन करई। कोढ़ भयो तबहूँ नहिं समुझाइ ॥
विग्रह मोर सो मानत नाहीं। सर्वयज्ञमय मम तनु आही ॥
जेहि अँग परसि सकल शुभ होई। अज भव आदि गाव यश सोई ॥
तेहि कहँ सो मिथ्या कहि भाखै। देखहु साहस विष फल चाखै ॥
सुनहु मुरारि तोहिं सन कहहूँ। वेद गुह्य अति तुम सो सुनहू ॥
वेद सार हम यज्ञ वराहू। भूमि उधारेहु तुम पतियाहू ॥
कीर्तन हित मम यह अवतारा। रक्षा करब भक्त परिवारा ॥

दुष्ट सकल मारौं सदा, भक्तन करौं निहाल।
भक्त द्रोह नहिं सहि सकौं, भक्तन के प्रतिपाल ॥ ५ ॥

पुत्र होहु तौ तेहि कहँ मारहुँ। सेवक हित तेहि कर सिर काटहुँ ॥
मिथ्या हौं कबहूँ नहिं भाखौं। मोर वचन तुम मन महँ राखौ ॥
जब उद्धार कियो महि हमहीं। मोर स्पर्श सों प्रथ्वी तबहीं ॥
धरयो गर्भ हम सो अनुमाना। भयो पुत्र एक अति बलवाना ॥
सकल धर्म हम सुत सों कहेऊ। बड़ो प्रतापी जग महँ भयऊ ॥
गुरु द्विज धर्म सकल सो पालत। दैव दोष कछु कहि नहिं आवत ॥
बाण संग सो राक्षस भयऊ। भक्त द्रोह महँ सो मन दयऊ ॥
भक्त द्रोह हौं सहि नहिं सकेऊँ। सेवक हित तेहि कर सिर काटेऊँ ॥
जन्म जन्म तुम मोंहि कहँ सेवहु। येहि ते गूढ़ तत्व तोहि भाषेहु ॥
श्रीमुरारि सुनि प्रभु की बानी। प्रेम मगन तनु दसा भुलानी ॥

जय मुरारि जय गौर हरि, जय श्री यज्ञ वराह।
भक्तन के रक्षक सदा, गहौ हमारी बाँह ॥६॥

यहि विधि सब सेवक गृह जाई। दरस दीन्ह सब कहँ हर्षाई ॥
सकल भृत्य आपन प्रभु चीन्हा। आनँद मगन चरण मन दीन्हा ॥
पाषंडिन सों अब नहिं डरहीं। हाट बाट ऊँचे हरि कहहीं ॥
प्रभु-सँग मिलि कीर्तन सब करहीं। परमानन्द कृष्ण कहँ भजहीं ॥
सकल भक्त प्रभु चहुँ दिशि देखहिं। केवल नित्यानन्द न पावहिं ॥
भ्राताहित प्रभु सोच निरन्तर। श्रीनिताइ जाने प्रभु अन्तर ॥
नित्यानन्द चरित अब सुनहू। अति संक्षेप ताहिं हौं कहहूं ॥
राढ़ माँझ एकचाका ग्रामहिं। नित्यानन्द प्रगट भए जामहिं ॥
कछुक दूर मोड़ेश्वर राजहिं। हलधर श्रीनिताइ जेहि पूजहिं ॥
हाड़ाइ पंडित तहँ बसहीं। परम दयालु चरित तेहि अहहीं ॥

पत्नी तासु सुशील अति, पद्मावति गुणखान।
वैष्णव शक्ति पतिव्रता, जगत मातु जग जान ॥७॥

तिनके गृह हलधर के रूपा। श्रीनिताइ प्रगटे सुखरूपा ॥
प्रथम पुत्र श्री नित्यानन्दा। सुन्दर मुख लखि होत अनन्दा ॥
इनवर बाल चरित हम गाए। आदि खंड महँ परम सुहाए ॥
श्रीनिताइ कछु दिन यहि ठाईं। पंडित के गृह रहे गोसाईं।
गृह छाँड़न हित प्रभु मन ठयऊ। मातु पिता हित गृह नहिं छाँड़ेउ ॥
माता यदि पुत्रहि नहिं देखहिं। होइ विकल चहुँदिशि तेहि खोजहिं ॥
पंडित सुत कर आदर करहीं। अपने निकट ताहि कहँ रखहीं ॥
बाहर भीतर जहँ कहुँ जावैं। राखैं तेहि सँग अति दुलरावैं ॥
बारबार आलिंगन करहीं। आनँद मगन निरखि सुत रहहीं ॥
यहि विधि पुत्र संग सो डोलहिं। प्राणहु ते बड़ सुत कहँ मानहिं ॥

श्री निताइ जानत सकल, अन्तर्यामी राम।
पितृ स्नेह सों रहत घर, प्रभु परिपूरण काम ॥८॥

हरि इच्छा पंडित गृह आए। संन्यासी एक परम सुहाए ॥
अति आदर द्विज तिनकर कीन्हा। प्रेम सहित भिक्षा तेहिं दीन्हा ॥
राखेउ निज घर महँ हर्षाई। कृष्ण चरित वर्णत सुखदाई ॥
सर्व राति कीन्हेउ सत संगा। प्रात चलन कर भयउ प्रसंगा ॥
द्विज सन तब संन्यासी भाषेउ। भिक्षा एक तोहिं से चाहउँ ॥
"कहहु कहा", द्विज तासों पूछेउ। तीरथ जाहुँ सो द्विजसन कहेऊ ॥
उत्तम ब्राह्मण नहिं मम पाहीं। ज्येष्ठ पुत्र जो तव यह आहीं ॥
कछु दिन लागि देहु एहि सुतहीं। निज सुत सम हम देखब इनहीं ॥
तीरथ सब देखिहि यह बालक। चिंता नहिं प्रभु हैं जग पालक ॥
न्यासी वचन सुनत द्विज गुनहीं। कातर होइ चिन्ता बहु करहीं ॥

भिक्षा माँगेउ प्राण की, संन्यासी मोंहि पाहिं।
बिना दिए अब नहिं बनै, समुझत हौं मन माहिं ॥९॥

याचक कहँ पूरब महँ कहहीं। प्राणदान दीन्हेउ बड़ जनहीं ॥
दशरथ जीवन राम पियारे। माँगेउ मुनि तेहि राज दुलारे ॥
जीवन जासु राम आधीना। तदपि मुनी कहँ नृप सुत दीना ॥
आजु सोइ संकट मम आगे। रक्षा करब धर्म, सब त्यागे ॥
धन्य धन्य पंडित हाड़ाई। दशरथ अंश जगत सुखदाई ॥
तेहि ते निश्चय अस मति होई। ब्राह्मणि निकट गयो द्विज सोई ॥
आनुपूर्व सब कथा सुनाई। सुनत वचन तेहि कह्यो बुझाई ॥
जो इच्छा तव सोइ मम अहई। सुनत बचन द्विज चुप ह्वै रहई ॥
संन्यासी पहँ तब द्विज जाई। सौंप्यो पुत्र माथ महि लाई ॥
पुत्र लेइ संन्यासी गयऊ। श्री निताई यहि विधि गृह छाँड़ेउ ॥

श्री निताई जबही गए, मुनीनाथ के साथ।
हाड़ाई पंडित गिरे, भुइँ पर होइ अनाथ ॥१०॥

मूर्छा बिगत जबहिं द्विज जागे। विविध विलाप करन सो लागे॥
सुनत विलाप दुखित सब कोऊ। बिह्वल अति जड़सम द्विज भयऊ॥
लोग कहत द्विज पागल भयऊ। तीनमास द्विज अन्न न खायउ॥
जीवित गौर प्रभाव सों रहेऊ। निज जन गौर कबहुँ नहिं छाँड़ेउ॥
विष्णु वैष्णव कर यह रीती। जगहित काज तजत सब नीती॥
बिधवा मातु कपिल मुनि त्यागी। ह्वै निर्पेक्ष गए तप लागी॥
वैष्णव पिता व्यास सम शुकहू। छाँड़ि चले तेहि कछु नहिं गिनेहू॥
गौर छाँड़ि माता चलि गये। नाम प्रचार करन मन दये॥
परमारथ हित त्याग जो करईं। सोइ त्याग कहँ त्यागन कहईं॥
समुझै कथा कहहु को जनहीं। जगहित प्रभु लीला यह करहीं॥

काष्ट पषाणहु द्रवत हैं, बिरह वचन सुनि कान।
छाँड़ि चले रघुनाथ जू, दशरथ छाँड़े प्रान॥११॥

कथा सुनत यवनहु सब रोवहिं। प्रभु लीला कर पार को पावहिं॥
यहि बिधि नित्यानन्दहु छाँड़ेउ। अति आनँद तीरथ सब देखेउ॥
गया वराणसि प्राग नहाए। मथुरा द्वारावति मन भाए॥
नर नारायण आश्रम गयऊ। बौद्धाश्रम हरि व्यास पधारेउ॥
रंग, सेतु, मलया सब देखेहु। पुर अनन्त तब सो चलि गयऊ॥
निर्भय निर्जन वन सो भ्रमेऊ। गोमति गण्डक सरजू गयऊ॥
कावेरी दण्डक वन घूमे। बहुरि अयोध्या वेंकट गये॥
सप्त गोदावरि कन्या नगरी। रेवा महिष्मती हरिपूरी॥
प्रथमहिं गंगा जहँ अवतरी। यहि विधि प्रभु देखेउ सब नगरी॥
पुनि मथुरा महँ प्रभु तब आए। रहे तहाँ कछु दिन मन भाए॥

जन्मस्थान लखि पूर्वको, प्रभू करत हुंकार।
चीन्हत नहिं कोउ आन जन, खेलत कुंज मँझार॥१२॥

निरवधि बाल्य भाव प्रभु खेलहिं। और भाव कछु नाहिं बिचारहिं॥
भोजन हित प्रभु कछु नहिं सोचहिं। सखा भाव व्रज रज महँ लोटहिं॥
प्रभु चरित्र को बूझनहारा। कृष्ण प्रेम तनु दशा बिसारा॥
कबहूँ दुग्ध करहिं प्रभु पाना। बिनु माँगे कोउ देइ सुजाना॥
यहि विधि वृन्दावन प्रभु बसहीं। इहाँ गौर कीर्तन नित करहीं॥
गौर मगन कीर्तन महँ रहहीं। नित्यानन्द विना दुख लहहीं॥
श्रीनिताइ जानेउ सब बाता। गौर प्रकाश भए जनत्राता॥
आये झट नदिया पुर माहीं। गए अचारज नन्दन पाहीं॥
भक्त भूप नन्दन आचारज। प्रभु कर तेज निरखि भा अचरज॥
दीर्घ काय अवधूत समाना। गौर प्रेम मूरति गुणखाना॥

कृष्ण कृष्ण कहिकै करहिं, प्रेम सहित हुंकार।
महामत्त मानहु अहहिं, बलदाऊ अवतार॥१३॥

कोटि चन्द्र सम वदन मनोहर। मृदु मुसकान अधर अति सुन्दर॥
मुक्ता सम सब दशन विराजत। अरुण नयन भक्तन मन मोहत॥
बाहु विशाल भक्त भय हारी। चरण कमल भवभय संहारी॥
परम मधुर बोलत सब पाहीं। वचन सुनत भव सिंधु सुखाहीं॥
श्री निताइ नदिया पुर आए। सकल भुवन सब जय जय गाए॥
श्री निताइ महिमा बड़ भाई। गौर दंड तोड़ेउ जेहि जाई॥
वणिक उधार कीन्ह प्रभु सोई। जासु नाम जग पावन होई॥
आचारज अति हर्षित होई। राखेउ निज गृह प्रभु कहँ सोई॥
श्रीनिताइ आगमन जे सुनहीं। प्रेम भक्ति तेहि कहँ प्रभु देहीं॥
श्री विश्वम्भर यह सब जानेउ। अति आनन्द मगन मन भयेउ॥

पूर्वहि यहि मिस गौर हरि, सब भक्तन पहँ जाय।
कहत भए सब सों रहसि, मर्म न काहू पाय॥१४॥

"अरे भाइ दुइ दिनके भीतर। महापुरुष कोउ ऐहै सत्वर"॥
हरि इच्छा सोइ दिन करि पूजन। गौर गये जहँ सकल भक्तजन॥
आपुहि गौर सबहिं सन कहहीं। "आज स्वप्न एक देखेउ हमहीं॥
तालध्वजयुत रथ एक भाई। ठाढ़ भयो द्वारे मम आई॥
तेहि पर मल्ल वेश कोउ सोहत। एक स्तम्भ काधें पर राजत॥
हाथ कमण्डलु थिर नहिं बैठत। नील वस्त्र परिधान विराजत॥
माथे नील वस्त्र अति सोहै। कुण्डल अति विचित्र मन मोहै॥
हलधर सम हम समुझत उनहीं। अति सप्रेम पूछ्यो सो हमहीं॥
"श्री निमाइ पण्डित गृह यह है"। बार बार पूछत हँसि सोहै॥
बड़ अवधूत वेश अति भारी। प्रेम मत्त तनु दशा बिसारी॥

परम चकित हम ताहि लखि, पूछेउ अति सकुचाइ।
"कौन महाजन तुम अहहु, मोहिं कहहु समुझाइ"॥१५॥

"यहै भाइ मम" हँसि सो कहेऊ। "कल परिचै पैहो," सो बोलेउ॥
हर्षित भयउँ वचन सुनि काना। तेहि कहँ आपुन सम हम जाना"॥
कथा कहत तनु दसा बिसारी। हलधर भाव सों गरजत भारी॥
"मद आनहु मद आनहु" कहहीं। गौर घोर रव पुनि पुनि करहीं॥
श्रीनिवास पण्डित तब कहहीं। "सुनहु गोसाईं हमका देहीं॥
जो मद चाहहु सो तुव पाहीं। तुम जेहि देहु सों पावै ताहीं॥
दूरहि तें भय सों सब देखहिं। मन ही मन सब करत बिचारहिं॥
"यहि कर कारण निश्चय भाई"। श्लोक पढ़हिं प्रभु परम सोहाई॥
अंग डोलावहिं अरु प्रभु हँसहीं। कछु छण महँ प्रभु स्थिर ह्वै कहहीं॥
स्वप्न अर्थ प्रभु सबहिं बतावहिं। मम मन यहै बात इक आवहिं॥

महापुरुष आयो यहाँ, मोहि प्रतीत अस होइ।
पूरब हम तुम सन कह्यो, दरसन पैहो सोइ॥१६॥

"श्री निवास पण्डित तुम जाहू । हरीदास कहँ संगहि लेहू ॥
देखहु कौन कहाँ तें आये" । प्रभु आज्ञा सुनि दोऊ धाये ॥
सब नदिया तिन खोजेहु जाई । खोजत खोजत कह हर्षाई ॥
"प्रभु संकर्षण कैधौं आयहु । मोर कहा तुम निश्चय मानहु" ॥
आनँद मगन चहूँ दिशि खोजहिं । श्री निताइ उद्देश न पावहिं ॥
तीन पहर तिन नदिया खोजेउ । कतहुँ न पाइ प्रभू पहँ आयेउ ॥
प्रभु सन समाचार तिन कहेऊ । "पायहु नहिं कोउ हम बहु खोजेऊ ॥
वैष्णव संन्यासी गृह गये । यती गृहस्थ सबहि पहँ देखे ॥
पाषंडिन गृहहू हम देखे । नदियापुर महँ कतहुँ न पेखे ॥
पुर बाहर हम गये न ताता" । सुनत हँसे प्रभु जन सुरत्राता ॥

छल सों गौर बुझायहू, श्री निताइ बड़ गूढ़ ।
तिनको कबहूँ कोउ जन, मानत नाहिं विमूढ़ ॥१७॥

यहि अवतार गौर कोउ गावहिं । नाम निताइ सुनत उठि भागहिं ॥
गोविन्द पूजहिं शिव नहिं मानहिं । यहि अपराध नरक सो पावहिं ॥
गूढ स्वरूप निताई अहहीं । गौर जनावै जेहि सो लखहीं ॥
तासु चरित बूझै बिनु कोऊ । निन्दा करि पावत दुख सोऊ ॥
श्री वासादि निताई बूझहिं । दरश न पायहु सो प्रभु जानहिं ॥
तब हँसिकै प्रभु सब सन कहेहू । आवहु मम सँग तिन कहँ देखहु ॥
हर्षित होइ प्रभु सँग सब कोऊ । जय श्रीकृष्ण कहत उठि चलेऊ ॥
गौर सकल भक्तन सँग आए । आचारज गृह अति सचु पाए ॥
पुरुष रतन तहँ एक विराजत । कोटि सूर्य सम शोभा पावत ॥
सोइ आवेश बूझि को सकई । ध्यान जनित सुख महँ सो अहई ॥

हँसत देखि तेहि गौर हरि, समुझेउ प्रभु मन माहिं ।
ध्यान मग्न मम भ्रात है, भक्ति योग दरसाहिं ॥१८॥

सब सँग तेहि प्रणाम प्रभु कीन्हा । भे आगे ठाढ़े सो चीन्हा ॥
श्री निताइ को दर्शन करहीं । कोउ मुख सों कछुहू नहिं कहहीं ॥
महाप्रभू सन्मुख ही राजत । श्री निताइ प्रभु लखि सुख मानत ॥
मदन समान गौर अति सुन्दर । दिव्य माल परिधान मनोहर ॥
दिव्य ज्योतिमय अंग विराजत । चन्द्रहु निरखत तनु सुख पावत ॥
दन्त निरखि मुक्ता हू लाजत । घुँघराली अलकैं मन मोहत ॥
अरुण कमल सम दोऊ लोचन । बाहु विशाल भक्त भय मोचन ॥
यज्ञ सूत्र काधें पर सोहै । उर्ध तिलक भक्तन मन मोहै ॥
बिनु आभरन अंग अति सोहत । मृदु मुसकान भक्त चित चोरत ॥
आपुन प्रभु पहिचानि निताई । स्तम्भित भे अतिही हर्षाई ॥

एक दृष्टि सों गौर कहँ, निरखत होइ अधीर ।
पान करत मकरंद छबि, श्री निताइ बलबीर ॥१९॥

प्रेमभाव सों प्रभु अवलोकत। विवश अंग मुख सो नहिं बोलत॥
श्री गौरांग मर्म सब जानेउ। तेहि प्रगटन हित रचेउ उपाऊ॥
प्रभु संकेत बास प्रति कीन्हा। श्री भागवत पढ़हु कहि दीन्हा॥
श्री निवास समुझेहु प्रभु बानी। पढ़ेउ श्लोक[१] एक अमृत सानी॥
गिरे निताई श्लोक सुनत ही। मूर्छित होइ भूमि पर तहँहीं॥
अति आनन्द सों नित्यानन्दा। मूर्छित भये प्रभू सुखकन्दा॥
गौर कहत पुनि पुनि तुम पढ़हू। श्लोक सुनत पुनि चेतन भयहू॥
क्रंदन करन लगे प्रभु तबहीं। उमग्यो प्रेम सुनत पुनि पुनि हीं॥
सिंहनाद सम गर्जत भारी। ग्वात पछाड़ प्रबल भयकारी॥
ह्वै भयभीत कहन सब लागे। चूर्ण होव तनु अति अनुरागे॥

वैष्णव सब सुमिरन लगे, राम कृष्ण हरि राम।

रक्षा प्रभु इनकी करहु, तनु राखहु घनश्याम॥२०॥

छटपटाहिं प्रभु भुइँ पर लोटहिं। नदनन नीर सों निज तनु सींचहिं॥
विश्वम्भर लखि छाँड़हिं श्वासा। उर आनन्द प्रेम परकासा॥
कबहुँ हँसहिं नाचहिं पुनि लोटहिं। हाथ उठाइ गौर प्रभु बोलहिं॥
कूदहिं इत उत उड़हिं अकासा। कृष्ण भक्ति उन्माद प्रकासा॥
प्रेमानन्द मगन सब काहू। नयन नीर उर अधिक उछाहू॥
धरहिं निताई पकरि न सकहीं। हारे वैष्णव मिलिकै सबहीं॥
तब विश्वम्भर लीन्ह उठाई। गौर गोद पावत सुखदाई॥
भये शान्त निज प्रभु कहँ पाई। सौंपिहु प्राण गौर हर्षाई॥
जेहिकर प्राण ताहि सो दीन्हा। गौर प्रेममय निज तनु कीन्हा॥
रामगोद जिमि लछिमन सोअत। तिमि निताइ प्रभु गोद विराजत॥

प्रेम बाण उर महँ लगेउ, मूर्छित भे तत्काल।

गौर निताई लखि सकल, भक्तन भए निहाल॥२१॥

गौर नयन प्रेमाश्रु बहई। बदन निताई सिंचित करई॥
राम लखन जिमि पूरब सुनेऊ। गौर निताई तिमि सब देखेउ॥
दोउ भ्रातन कर प्रेम अपारा। राम लखन सम सब जग न्यारा॥
सावचेत तब भए निताई। हरि हरि कहि सब भक्तन गाई॥

---

१ तथाहि (भा० १०।२१।५)
बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं
बिभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयन्तीञ्च मालाम्।
रंध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैः
वृन्दारण्यं स्वपद रमणं प्राविशद् गीत कीर्तिः॥

भावार्थ—नटवर वेश में, मस्तक पर मोर शिखा, कानों में गुलाब का फूल, सोने के समान पिताम्बर तथा गले में वैजयन्ती माला धारण किए हुए और अधरामृत से मुरली के रंध्रों को भरते हुए श्रीकृष्ण चन्द्र ने अपनी नित्य लीला स्थली श्रीवृन्दावन में प्रवेश किया। सब लोग भगवान का यश गान करने लगे।

श्री विश्वम्भर गोद निताई। लखि विपरीत गदाधर भाषइ॥
जो अनन्त विश्वम्भर धरई। आजु गोद महँ प्रभुके अहई॥
श्री निताइ परभाव अपारा। जान गदाधर जग से न्यारा॥
प्रभू गदाधर जान निताई। श्री निताइ लखि सब हर्षाई॥
आनन्दमय मन भयो सबहिं कर। निरखत दोउ प्रभु सबहि नयन भर॥
दोउ परस्पर देखत दोऊ। प्रेम विवस बोलत नहिं कोऊ॥

देखत दोउ अति प्रेम सों, नयनन नीर बहाइ॥
धीरज धरि तब गौर प्रभु, बोले अति हर्षाइ॥२२॥

"शुभदिन बड़ो आजु मम भाई। भक्ति योग देखेउ सुखदाई॥
भक्तिहि चारि वेद कर सारा। ऐसो कम्प, अश्रु हुंकारा॥
ईश्वर शक्ति बिना नहिं होई। नयनन सो देखेउ हम सोई॥
कृष्ण संग छाँड़ैं किमि कहहू। ईश्वर पूर्ण शक्ति तुम अहहू॥
तुमहि भजन सो कृष्णहिं पावत। करहु पवित्र भुवन सब जानत॥
परम गूढ़ तव चरित अपारा। नहिं जग कोउ जो पावै पारा॥
मूर्तिमान तुम भक्ति स्वरूपा। कृष्ण प्रेम साकार अनूपा॥
जो कर आपु संग सब त्यागी। पावत कृष्ण-भक्ति बड़भागी॥
कृष्ण कृपा मोपर भइ सोई। आपु संग, दीन्हेउ मोहिं जोई॥
बड़े भाग्य तव चरनन पायउँ। तुमहिं भजत भक्ती हम पायउँ॥

प्रेमाविष्ट होइ प्रभु, श्री गौरांग उदार।
कहत कथा प्रिय अनुज सों, नहिं कोउ बूझनहार॥ २३॥

प्रभू कहेउ, 'पूछत भय मानहुँ। कवनदिशा सों तुम प्रभु आयहु॥
शिशु मति श्रीनिताइ अति विह्वल। बालक सम बोलत ह्वै चंचल॥
"प्रभु अवतार यहै" सो जानेउ। हाथ जोरि बिनती करि बोलेउ॥
प्रभू स्तुती सुनि लज्जित होई। सोइ हित कथा खोलकर कहई॥
कहत निताई, तीरथ भ्रमेऊ। कृष्ण तीर्थ हम सबही देखेउ॥
देखेउ स्थान, कृष्ण तहँ नाहीं। पूछेउ तब बड़ लोगन पाहीं॥
शून्य सिंहासन काहे भाई। कृष्ण गए कहँ कहहु बुझाई॥
उनहिं कह्यो प्रभु गौड़ पधारे। गया होइ प्रभु तहाँ सिधारे॥
नदिया महँ हरिकीर्तन होई। नारायन जन्मेउ कह कोई॥
पतित उधार सुन्यो नदिया महँ। सोइ हित पामर आयहु प्रभु पहँ॥

प्रभू कह्यो, "मम भाग्य बड़, पायहु दर्शन तोर।
अब कृतकृत्य भए सब, तुम भक्तन सिरमौर॥२४॥

प्रेम वारि तव लखि सुख पावा। धन्य-धन्य तव यश जग छावा॥
श्री मुरारि सुन कै हँसि कहई। "हम कछु तत्व समुझि नहिं सकई॥
सबहि अगोचर प्रभु तव बाता।" कह्यो वास "बूझब किमि ताता॥
शंकर माधव जिमि दोउ मानत। आपस में दोउ दोउ कहँ पूजत॥"

कह्यो गदाधर हम सब समुझहिं । राम लखन सम हम तौ मानहिं ॥
कहत कोउ दोउ काम सरूपा । राम कृष्ण कोउ कहत अनूपा ॥
कोउ कहत हम और न जानहिं । कृष्ण निकट आए बलरामहिं ॥
कोउ कहत दोउ मित्र परस्पर । अर्जुन कृष्ण समान सुहृदवर ॥
कोउ कहत परिचय बड़ अहई । गुप्त कथा दोऊ मिलि कहई ॥
सब भक्तन मिलि यहि विधि कहहीं । श्रीनिताइ चर्चा सब करहीं ॥
मित्र सखा अरु भ्रात बड़ सेवक सब विधि जान ।
श्रीनिताइ बिन और नहिं, बलदाऊ गुणखान ॥२५॥
निज इच्छा नाना विधि सेवहिं । कृपा करहिं औरन कहँ सौंपहिं ॥
आदिदेव योगी प्रभु ईश्वर । महिमा जानि सकै नहिं कोउ नर ॥
बिनु जाने निन्दा कोउ करहीं । भक्ति पाइ पुनि तेहि तजि देहीं ॥
श्री चैतन्य परम प्रिय अहहीं । श्री निताइ अस सब जग कहहीं ॥
प्राण समान मोहिं प्रिय होहू । यह भिक्षा माँगौं वर देहू ॥
श्री निताइ आशिष सों, मोमें । गौर चरण रति उपजी छिन में ॥
श्री निताइ मोहिं आज्ञा दयऊ । गौर चरित वर्णन करि कहेउ ॥
श्री यदुनाथ और रघुनाथहि । भेद नहीं कछु सब जग जानहिं ॥
तैसहि श्री निताइ बल्देवा । भेद नहीं दोऊ एक देवा ॥
पार होन भवसागर चहहू । श्री निताइ पद गहि कै रहहू ॥
प्रेम सहित जो यह कथा, गावत भक्त सुजान ।
विश्वम्भर तेहि देत हैं, भक्ति सकल गुणखान ॥२६॥
जग दुर्लभ सबसे बड़ भाई । विश्वम्भर यह नाम सोहाई ॥
श्री चैतन्य प्रभू सब कहहीं । सबके धन अरु प्राणहु अहहीं ॥
गौर निताइ मिलन जे सुनहीं । भव बन्धन काटहिं सो तबहीं ॥
श्री चैतन्य निताई जानहु । वृन्दावन प्रभु चरित बखानेहु ॥
भाषा महँ ब्रजभूषण कीन्हा । गौर चरण रज महँ मन दीन्हा ॥
॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खंडे श्री नित्यानन्द-चैतन्य दर्शनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥

—०::❀०—

चतुर्थ अध्याय

जय जय सर्व प्राणनाथ विश्वम्भर ॥
जय गौर नित्यानन्द दयालु ईश्वर ।
जय जय अद्वैतादि भक्तन अधीन ॥
भक्ति दान देहु प्रभु उद्धारहु दीन ।
एहि विधि कृष्ण कथा नित चलई । प्रभु सँग सदा निताई रहई ॥
महा भागवत सब वैष्णव गण । कृष्ण कथा बिनु जात न कोउ क्षण ॥

कृष्ण प्रेम रस मत्त देखाहीं। नेत्रन सों जल बहत सदाहीं ॥
श्री निताइ लखि चहुँ दिशि हर्षहिं। प्रेम विकल नेत्रन जल वर्षहिं ॥
महा प्रभू लखि आनँद भारी। श्री निताइ सों वचन उचारी ॥
सुनु श्रीपाद निताइ गोसाईं। तव पूजा होइहै केहि ठाईं ॥
कल पूर्णिमा व्यास को पूजन। तुमहि समुझि अब कहहु मोहिं सन ॥
श्री निताइ समझेहु प्रभु बाता। श्री निवास प्रति लखि कह बाता ॥
हाथ पकरि श्रीवासहि आनो। यहि द्विज गृह पूजा हम जानो ॥
श्री निवास सन कहेउ गौर तब। बहुत भार लागेउ तुम पर अब ॥

प्रभु सन तब पंडित कहेउ, भार कछुक नहिं तात।
सकल वस्तु है धरहिं महँ, प्रभु काहे सकुचात ॥ १ ॥

वस्त्र गंध घृत पान सुपारी। फल नैवेद्य आदि जल झारी ॥
पूजा वस्तु सकल गृह माँहीं। बिधि पुस्तक केवल गृह नाहीं ॥
सो काहू सन हम लैऐहैं। बड़े भाग पूजन हम लखिहैं ॥
सुनत वचन प्रभु अति हर्षाने। हरि हरि कहि सब तेहि सन्माने ॥
श्री निताइ सन प्रभु हँसि कहेऊ। पंडित गृह अब सबही चलऊ ॥
प्रभू वचन सुनि हर्षित होई। आज्ञा लेइ चले सब कोई ॥
सब वैष्णव सँग प्रभु विश्वम्भर। राम कृष्ण घेरे जिमि सहचर ॥
श्री निवास गृह पहुँचे जाई। अति आनन्द प्रेम उर छाई ॥
गृह कर द्वार बंद तब कीन्हा। अन्य काहु कहँ जान न दीन्हा ॥
कीर्तन हित आज्ञा प्रभु दयऊ। कीर्तन करन लगे सब कोऊ ॥

व्यास पूर्णिमा कल अहै, आज तासु अधिवास।
सबही मिलि कीर्तन करत, हृदय अधिक उल्लास ॥२॥

गौर निताई हिलि मिलि नाचत। घेरे प्रभु चहुँ दिशि सब गावत ॥
दोउ भाइन कर प्रेम सनातन। ध्यान धरहिं दोउ होइ मगन मन ॥
श्री गौरांग निताई ध्यावहिं। श्री निताइ गौरहिं मन लावहिं ॥
कोउ हुंकार करत कोउ गर्जन। मूर्छा वश कोउ, कोउ कर क्रन्दन ॥
कम्प स्वेद पुलकाश्रु विराजत। प्रभु विचार कोउ जान न पावत ॥
निज आनन्द मगन दोउ नाचहिं। गोद लेहिं पुनि दोउ मिलि रोवहिं ॥
चरन धरन दोऊ जन चहहीं। परम चतुर कोउ धरि नहीं सकहीं ॥
परमानन्द भूमि पर लोटहिं। निज लीला वश आपु न जानहिं ॥
देह वसन की सुधिहू भूलहिं। भक्त धरहिं पर धरन न पावहिं ॥
त्रिभुवन कहँ जो धारण करई। तिन कहँ कहहु कौन धरि सकई ॥

महा मत्त सम दोउ प्रभु, विहरत कीर्तन माँहिं ॥
हरि हरि कहिकै गौर हरि, नयनन नीर बहाहिं ॥३॥

बहु दिन पर पूरी अभिलाषा। आनँद मगन प्रेम परकाशा ॥
गौर नृत्य अतिअद्भुत करहीं। झुकि झुकि भाव बतावत सबहीं ॥

नित्यानन्द ताल दै नाचहिं। काँपत भूमि लोग सब डरपहिं॥
एहि विधि आनँद सों दोउ नाचहिं। केहि विधि को बरनै सो भावहिं॥
श्री निताइ यश सबहिं बतावौं। तासु प्रेम सब जगत दिखावौं॥
करब प्रकाश निताई अबहीं। श्री विश्वम्भर सोच्यो मनहीं॥
श्री बलराम भाव सो तबहीं। सिंहासन बैठे प्रभु तहँही॥
महामत्त सम प्रभु अति गर्जहिं। "मद आनहु, मद आनहु" बोलहिं॥
श्री निताइ सन तब प्रभु कहेऊ। हल मूसल हमरो तुम देऊ॥
श्री निताइ सुनि प्रभु की बानी। हाथ माँहि दीन्ह्यो सुख मानी॥

लेत देत कोउ कोउ लख्यो, और लख्यो नहिं कोय।
हल मूसल कोऊ लख्यो, भेद न जान्यो सोय॥४॥

जेहि पर कृपा करहिं सो जानै। केहि महँ शक्ति को प्रभु पहिचानै॥
यहि सब गुप्त कथा कोउ जानै। श्री निताइ कहँ सोइ पहिचानै॥
हल मूसल निताइ सो लेई। "बारुनि, बारुनि" प्रभु अस कहहीं॥
समुझत नहिं प्रभु बचनहिं कोई। चकित होइ सब इत उत लखई॥
सब करि युक्ति घड़ा भर लाई। गंगाजल दीन्ह्यो हर्षाई॥
देइ सबहिं जल प्रभु सोइ पीवहिं। मानहुँ करत बारुनी पानहिं॥
रामस्तुती चहुँ दिशि सब पढ़हीं। "नाड़ा नाड़ा" प्रभु अस कहहीं॥
नाड़ा कहि प्रभु माथ हिलावहिं। भक्त कछू तेहि बूझ न पावहिं॥
सब पूछेहु प्रभु तुम का कहहू। तब समुझाय सबहि प्रभु कहेहू॥
जेहि हित हम पृथ्वी पर आए। तुम अद्वैत कहहु मन भाए॥

आचारज के प्रेमवश, लीन्ह यहै अवतार।
लायो मोहिं वैकुंठ सों, करन नाम परचार॥५॥

हरीदास सँग सो गृह गयऊ। ह्वै निश्चिंत तहाँ सो बैठेउ॥
संकीर्तन हित यह अवतारा। घर घर हरि कीर्तन परचारा॥
विद्या धन कुल गर्व जे करहीं। ज्ञान तपस्या मद वश अहहीं॥
वैष्णव सों ईर्षा जे करहीं। प्रेम देव नहिं तिन कहँ हमहीं॥
साधारण जनता कहँ जाई। प्रेम लुटाउब हम बरियाई॥
सुनत बचन हर्षित सब काहू। स्वस्थ भए प्रभु हृदय उछाहू॥
पूछत सबहि कहा हम कीन्हा। कछु विशेष नहिं सब कहि दीन्हा॥
आलिंगन करि कह सब पाहीं। मम अपराध गुनब कोउ नाहीं॥
हर्षित भक्त सुनत प्रभु बानी। श्री निताइ लोटत मन मानी॥
शांत होत नहिं नित्यानन्दा। विह्वल प्रेम मगन सुखकन्दा॥

क्षणहिं हँसत, रोवत क्षणहिं क्षणहिं दिगम्बर होय॥
भावावेशहिं मत्त प्रभु, जानत नहि कहँ कोय॥६॥

दंड कमंडलु की सुधि नाहीं। सुधि शरीर नहिं कहँ चलि जाहीं॥
महाधीर चञ्चल अति भयऊ। हाथ पकरि प्रभु तेहि स्थिर कीन्हेउ॥
गौर बचन अंकुश सोइ मानै। नित्यानन्द और नहिं जानै॥
गौर कह्यो तुम अब स्थिर होऊ। काल्ह व्यास पूजा तुम सुनऊ॥

श्री निताइ स्थिर करि प्रभु गयऊ। भक्त सकल निज गेह पधारेउ ॥
श्री निताइ मंदिर श्री वासा। रहे तहाँ उर अधिक हुलासा ॥
रात्रि माँझ प्रभु करि हुंकारा। दंड कमंडलु कहँ संहारा ॥
प्रभु चरित कोउ बूझि न सकई। दंड कमंडलु सब तजि देई ॥
रामाई पंढित परभाता। देखेउ दंडकमंडलु पाता ॥
अति विस्मित श्रीवासहि कहेऊ। तुरत गौर पहँ सो तेहि पठेऊ ॥

रामाई मुख सों सुनत, आए गौर सुजान ॥
हँसत निताई गौर लखि, मर्म न काहू जान ॥७॥

दंड उठाइ लीन्ह प्रभु तबहीं। गंगा स्नान चले लै तिनहीं ॥
श्रीवासादि भक्त सब साथा। दंड प्रवाह कीन्ह निज हाथा ॥
श्री निताइ चञ्चल अति भारी। केवल गौर वचन वश कारी ॥
कुम्भी देखि धरन को धावै। हाय हाय कहि सब गोहरावै ॥
निर्भय होइ गंग महँ पौड़ै। जिमि कोऊ पृथ्वी पर दौड़ै ॥
गौर बचन सुनि कछु स्थिर होहीं। गौर कह्यो भ्राता सुनु मोंहीं ॥
व्यास पूजिबे हित झट चल चलऊ। सुनत वचन तुरतहि चलि दयऊ ॥
करि कै स्नान प्रभू सँग आए। सब वैष्णव गण अति मन भाए ॥
कृष्ण कृष्ण कीर्तन सब करहीं। श्री निवास हरि हरि हरि भजहीं ॥
प्रभु आज्ञा श्रीवासहिं दीन्हा। गुरु पूजा आयोजन कीन्हा ॥

मधुर मधुर कीर्तन करहिं, सबहिं मगन मन होय ॥
पुर वैकुंठ समान भो, श्री निवास गृह सोय ॥ ८ ॥

अति पंडित श्रीवास अचारज। शास्त्र विधी सों कर सब कारज ॥
सुन्दर दिव्य गंध युत माला। श्री निताइ कर देइ कृपाला ॥
कहेहु अचारज सुनहु निताई। माला लेइ कहहु अस भाई ॥
व्यासदेव कर सुमिरन करऊ। पुनि निज गले माल यह देऊ ॥
व्यास तुष्ट ह्वैहैं तेहि पाई। सिद्ध मनोरथ तब ह्वै जाई ॥
श्री निताइ सुनि हय हय कहई। कहा कहैं कछु बूझ न परई ॥
धीरे धीरे कछु कछु बोलत। माला हाथ चहूँ दिशि निरखत ॥
तब श्रीबास गौर सन भाषत। "तव श्रीपाद व्यास नहिं पूजत ॥"
प्रभू विश्वम्भर तब तहँ आई। कहेउ सुनहु श्रीपाद गोसाईं ॥
"माला देइ व्यास कहँ पूजहु"। सुनत वचन हर्षित होइ देखेहु ॥

विश्वम्भर कहँ देखिकै, श्री निताइ गुण खान।
माला पहिरायो प्रभुहिं, हृदय हर्ष अति मान ॥ ९ ॥

प्रभु मस्तक माला अति सोहत। घुँघराली अलकैं मन मोहत ॥
षड़ भुज भए तुरत विश्वम्भर। शंख चक्र लीन्हे सब निज कर ॥
गदा पद्म श्री हल अरु मूसल। षड़भुज लखि निताइ अति विह्वल ॥
मुर्छि निताई गिरे भूमि पर। वैष्णव सकल भए अतिकातर ॥

रक्षा करहु कृष्ण अस कहहीं। बड़ हुंकार गौर प्रभु करहीं ॥
तालि बजावहिं गर्जन करहीं श्री निताइ मूर्छागत अहहीं ॥
प्रभु निज हाथन ताहि उठाई। बोले बचन परम हर्षाई ॥
"उठहु निताइ मन स्थिर करहू। कीर्तन सुनहु जो चाहत अहहू ॥
कीर्तन हित तव यह अवतारा। सिद्ध भयउ का करहु विचारा ॥
प्रेम भक्ति तुम सन जग पैहै। तुम बिनु दिए नाहिं कोइ लहिहै ॥

करहु सम्वरन भाव यह, उठहु महामति धीर।
देखहु अब निज जनहि कहँ, काहे होत अधीर ॥ १० ॥

जेहि कहँ चाहहु तेहि कहँ बाँटहु। प्रेम मगन सब दिसि तुम बिहरहु ॥
तुम सों द्वेष करै जन जोई। हमहिं भजै भावत नहिं सोई ॥
प्रभू वचन सुनि अनँद भयऊ। षड़भुज दर्शन करि सुख पायउ ॥
गौर निताइ के मन बसहीं। या महँ विस्मय नहिं कछु अहहीं ॥
अद्भुत नहिं तेहि षड़भुज दर्शन। प्रभु अवतार भक्त मन रञ्जन ॥
श्री रघुनाथ पिण्ड जब दीन्हा। दशरथ प्रकट होइ तेहि लीन्हा ॥
प्रभु को लीला अद्भुत अहई। भक्तन हित कौतुक प्रभु करई ॥
नित्यानन्द स्वरूप स्वभावा। दास्य भाव तिनके मन भावा ॥
लक्ष्मण कर स्वभाव यह अहई। रामचन्द्र सेवा नित करई ॥
यहि विधि श्री निताइ कर भावा। श्री चैतन्य चरन मन लावा ॥

श्री अनन्त ईश्वर स्वयं, सृष्टिस्थिति के हेतु।
भवसागर के पार हित, भक्त जनन के सेतु ॥ ११ ॥

सकल सृष्टि जब जाइ बिलाई। शेष रहत अस श्रुति नित गाई ॥
तदपि अनन्त देव मन लावै। दास्य भाव महँ नित सुख पावै ॥
युग युग प्रति अवतारहिं जाई। निज स्वभाव सों दास कहाई ॥
श्री लक्ष्मण अवतार सोहाई। निरवधि सेवहिं निज प्रिय भाई ॥
जल भोजन निद्रा सब त्यागी। सेवा करत लखन बड़ भागी ॥
दास्य भाव नित मन महँ रखहीं। सेवा सों अघात नहिं कबहीं ॥
ज्येष्ठ होइ बलराम गोसाईं। दास्य भाव राख्यो उर लाई ॥
श्री कृष्णहिं कहँ स्वामी कहहीं। भक्ति करत नित प्रभु सन रहहीं[१] ॥
सोइ प्रभु श्री अनन्त भगवाना। नित्यानन्द प्रगट जग जाना ॥
श्री निताइ बलरामहिं जोई। भेद बखानै मूरख सोई ॥

करत अनादर जोइ जन, प्रभु-सेवक कर जाय।
प्रभु कर अपराधी सोई, नरक पड़ै दुःख पाय ॥१२॥

---

१. तथाहि (भा० १०।१३।३७) वत्सहरणे बलदेववाक्यं—
केयं वा कुत आयाता दैवी वा नार्युतासुरी।
प्रायो मायास्तु मे भर्तुर्नान्या मेऽपि विमोहिनी ॥

अर्थ—(श्री बलराम जी ने कहा) वे कौन हैं ? कहाँ से पधारे हैं ? क्या देवता हैं, असुर हैं अथवा मनुष्य हैं। हम समझते हैं कि यह हमारे प्रभू की ही माया है और कुछ नहीं है क्योंकि यह हमको भी विमुग्ध करती है ॥

ब्रह्मा शिव कमला कहँ ध्यावहिं । तबहूँ कमला हरि कहँ सेवहिं ॥
सर्व शक्ति मय शेष उदारा । सेवा धर्म स्वभाव अपारा ॥
यहि ते भक्त सुयश प्रभु कहहीं । अति संतोष ताहि महँ लहहीं ॥
ईश्वर कर स्वभाव यह अहई । सदा भक्त के वश सो रहई ॥
प्रभु के मुख सों निज यश सुनिके । सुख पावैं सो निज मन गुनि कै ॥
विष्णु वैष्णव कर जो प्रीती । वेद कहै स्वभाव सोइ नीती ॥
विष्णु वैष्णव तत्व जे अहहीं । जेहि विधि सों पुरान श्रुति कहहीं ॥
सोइ हम लिखत पुरान प्रमाना । गौर भक्त वश सब जग जाना ॥
नित्यानन्द कहत सब पाहीं । "हम सेवक चैतन्य गोसाईं ॥
सदा सोइ श्री मुख सों कहईं । हम उनकर मम ईश्वर सोई ॥

मम अस्तुति जे जन करहिं, गौर प्रभू के साथ ।
अहै सोई मम भक्त अरु, जग महँ सोइ सनाथ ॥१३॥

मोकों सो निश्चय करि पावै ।" यह सिद्धांत निताई गावै ॥
कहेउ निताई सो मोहिं भायेउ । षड् भुज लीला मोहिं मन भायेउ ॥
अति प्रसन्न होइहैं सुनि लीला । यहि तें लिख्यो सकल गुण शीला ॥
श्री निताइ प्रभु हिरदय बसहीं । दोउ प्रभु दोउ कर आदर करहीं ॥
प्रभु अनुरूप सदा सो सेवहिं । ईश्वर सेवा में मन राखहिं ॥
प्रभू स्वयं यह सबसन कहेहू । बेद पुरान सकल सो गायेउ ॥
प्रभु जो करहिं वेद सो होइहै । सकल भेद तजि शास्त्रन लिखिहैं ॥
भक्ति योग नहिं कोउ समुझत । गौर कृपा पावै सो बूझत ॥
ज्ञानवन्त सब वैष्णव अहहीं । नित्य शुद्ध सब जग अस कहहीं ॥
कलह सकल जो देखत अहहू । केवल कौतुक निज मन गुनहू ॥

समुझत जे नहिं मूढ़ यह, पूजत एकहि जाय ।
दूसर कर निन्दा करत, यमपुर सो जन पाय' ॥१४॥

वैष्णव हिंसा बड़ अपराधा । सहज जीव कर जो दुख साधा ॥
पूजहिं विष्णु दुःख जग देहीं । निष्फल पूजा, नरक सो पड़हीं ॥
"सर्व भूतमय" विष्णू अहहीं । समुझत नहिं सो बड़ दुख सहहीं ॥
विप्र चरण एक हाथ सो पूजत । माथे पर दूसर सों मारत ॥
कुशल नहीं अस जन कर कहहीं । समुझि बूझि देखहु तुम मनहीं ॥

---

१. तथाहि नारदीये--

अभ्यर्च्चयित्वा प्रतिमासु विष्णुं दुष्यन् जने सर्वगतं तमेव ।
अभ्यर्च्य पादौ द्विजनस्य मूर्द्धि द्रुह्यन्निवाज्ञो नरकं प्रयाति ॥

अर्थ – यदि कोई आदमी यथाविधि श्री विष्णु की पूजा करता है किन्तु साथ ही साथ जनसाधारण का अनिष्ट करता तो उसको पुण्य के बदले पाप होता है। कारण कि श्री विष्णु सब जीवों के हृदय में वास करते हैं। उसी प्रकार जैसे किसी एक ब्राह्मण के चरण की सेवा करे और उसके मस्तक पर प्रहार करे तो ऐसे व्यक्ति को निश्चय नरक प्राप्त होता है।

जेतो पाप प्रजा दुख दीन्हे। शतगुन वैष्णव निन्दा कीन्हे ॥
श्रद्धा करि विग्रह कहँ पूजहिं। भक्तन कहँ यदि सो नहिं मानहिं ॥
पतित नीच पर दया न करहीं। शास्त्र अधम इन सब कहँ कहहीं ॥
प्रभु अवतार भेद जे मानहिं। भजहिं एक दूसर नहिं जानहिं ॥
श्री रघुनाथ कृष्ण महँ भेदा। शिव बलराम न मानत वेदा ॥

ऐसे जन कहँ कहत हैं, शास्त्र सकल परमान।
भक्ताधम ए नर अहैं, कहत सकल मतिमान ॥१५॥[1]

भक्ताधम कर लच्छन कहेऊ। षड्भुज दर्शन पूरन भयेऊ ॥
श्री निताइ कर षड्भुज दर्शन। सुनत होत भव बन्ध बिमोचन ॥
सावचेत होइ प्रभू निताई। क्रंदन करत दीन की नाईं ॥
नदी समान नेत्र जल बहई। गौर भक्त सन पुनि अस कहई ॥
"पूर्ण व्यास पूजा सुनु भाई। कीर्तन करहु सबहिं मन लाई ॥"
प्रभु वचन सुनि सब अति हर्षे। हरि हरि कहि लोचन जल वर्षे ॥
कृष्ण कृष्ण कहि कीर्तन करहीं। नाचहिं गावहिं भुइँ पर गिरहीं ॥
गौर निताई मिलि दोउ भाई। कीर्तन करत जगत सुखदाई ॥
महामत्त होइ कीर्तन करहीं। वैष्णव सकल मोद मन भरहीं ॥
व्यास दिवस कर उत्सव भारी। हरि कीर्तन जग मंगल कारी ॥

एक एक कर धाइकै, चरन धरत मन लाय।
शची मातु देखत सकल, उर अनन्द अधिकाय ॥ १६ ॥

मातु निरखि प्रभु गौर निताइहिं। "मोर पुत्र दोउ" अस मन लावहिं ॥
यह उत्सव को बरणै पारा। श्री अनन्त कहि सकत सम्भारा ॥
सूत्र रूप हम चरित वखाना। कृष्ण चरित गावत सुख माना ॥
सन्ध्या काल महोत्सव भारी। पूजा व्यास भई सुखकारी ॥
कीर्तन करत गौर सँग सबहीं। आनँद मगन कृष्ण सब कहहीं ॥
कृष्ण कृष्ण कहि क्रंदन करहीं। यहि विधि भक्ति सिखावत सबहीं ॥
भए स्वस्थ तब गौर उदारा। श्री निवास सों बचन उचारा ॥
"सब नैवेद्य तुरत तुम लावहु"। सुनत वचन सो सब तहँ लायेहु ॥
निजकर सों भक्तन प्रभु दीन्हा। हर्षित होइ प्रसाद सब लीन्हा ॥
आनँद सो सब भोजन करहीं। धन्य भाग्य आपन सब कहहीं ॥

गृह भीतर जे जन रहे, प्रभु बुलाइ सब लोग।
निज कर सों दीन्हे सबहिं, पायहु सब सोइ भोग ॥ १७ ॥

---

१. तथाहि (भा० ११।२।४७)—
अर्चयामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते।
नतद्भक्तेन चान्येषु सः भक्तः प्राकृतः स्मृतः ॥

अर्थ—जो मनुष्य श्रीहरि के प्रीत्यर्थ उनके विग्रह की पूजा करते हैं किन्तु उनके भक्तों एवं अन्य जीवों की सेवा नहीं करते उनको सच्चा भक्त नहीं कहा जाता है।

जो प्रसाद ब्रह्माहू पाई। करत आपुनो भाग्य बड़ाई ॥
वैष्णव कर सब दासरु दासी। सोइ प्रसाद पायो अघनासी ॥
श्री निवास गृह चरित अपारा। भाग्यवान श्रीवास उदारा ॥
नित नूतन प्रभु चरित सुहावा। पुरवासी कछु भेद न पावा ॥
श्री चैतन्य निताई ध्यावै। दास बृन्दावन प्रभु यश गावै ॥
ब्रजभूपण भाषा महँ कीन्हा। प्रभु पद कमल सदा मन दीन्हा ॥

इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खण्डे श्री व्यास पूजन वर्णनं नाम चतुर्थ अध्यायः ॥

पंचम अध्याय

जय जय जगत जीवन गौरचन्द्र।
हृदय विराजहु नदिया चन्द्र ॥
जय जग-मंगल जय विश्वम्भर।
जय भक्त जय सर्व गौर किंकर ॥
जय जय परमानन्दपुरी जीवन।
जय जय दामोदर स्वरूप प्राणधन ॥
जय रूप सनातन प्रिय महाशय।
जय जय गोपीनाथ जगदीश हृदय ॥
जय जय द्वारपाल गोविन्द के नाथ।
जीव प्रति करहु प्रभु शुभ दृष्टिपात ॥

यहि बिधि गौर निताई लीन्हें। भक्तन सँग कीर्तन मन दीन्हें ॥
सुनहु कथा नदिया जिमि आए। श्री अद्वैत, सुनहु चित लाए ॥
ईश्वर आवेशहिं प्रभु इक दिन। श्रीरमाइ सन कहेउ ताहि छिन ॥
अति प्रसन्न होइ वचन उचारा। "जाहु अबहि अद्वैत दुआरा ॥
मम प्रकाश कहि पुनि तेहि कहेऊ। जेहिं हित तुम आराधन कीन्हेऊ ॥
नयन नीर जेहि लागि बहावा। करि उपवास बहुत दुख पावा ॥
सोइ प्रभु तव हित कीन्ह प्रकाशा। भक्तिहिं बँटिहैं सहित हुलासा ॥
आबहु भट कीर्तन अब करहू। श्री निताइ आए अस कहेहू ॥
जो देखेहु सो सब कछु भाषेहु। कछु तासों दुराव मति राखेहु ॥
पूजा हित सब साज सजावहु। स्त्री समेत प्रभु तुमहिं बोलायहु" ॥

आज्ञा सिर धरि तबहिं सो, चलेउ मुदित मन माहिं।
हरि हरि सुमिरन करत मन, श्री रमाइ मग जाहिं ॥१॥

प्रभु आज्ञा सों तेहि ढिग गयऊ। माथ नवाइ ठाढ़ सो भयऊ॥
आनँद सों परिपूरन गाता। मुख सों कहि न सकै कछु बाता॥
सब जानत अद्वैत गोसाईं। भक्ति प्रभाव सकल सुधि पाई॥
प्रभु आज्ञा आई सो जानेउ। रामाई सों बचन उचारेउ॥
"हमहिं बुलावन हित तुम आये"। हाथ जोरि तब पंडित बोले॥
"जानहु सब प्रभु चलहु शीघ्र अब"। सुनत वचन भे हर्षित अति तब॥
आनँद मगन प्रेम उर छावा। को समुझै सो चरित सुहावा॥
अटपट बचन कहत मन भाए। "कौन गोसाईं, कहाँ तें आए॥
नदिया कर अवतार को कहई। कौन शास्त्र महँ यह लखि परई॥
हम अध्यात्म ज्ञान के दाता। श्री निवास जानत सब बाता॥"

रामाई जानत सकल, श्रीअद्वैत स्वभाव।
उत्तर कछु दीन्ह्यो नहीं, बूझेउ मन कर भाव॥२॥

श्री अद्वैत चरित अति गूढ़ा। समुझति नहिं जे लोग विमूढ़ा॥
भक्त लोग तेहि सुनि सुख पावत। दुष्ट लोग उलटो सो मानत॥
पुनि बोले आचार्य गोसाईं। "कहहु भाइ पंडित रामाई॥
केहि कारन आगमन तुम्हारा। धन्य धन्य बहु भाग्य हमारा"॥
शांत भए आचारज जानेउ। रामाई तब वचन उचारेउ॥
नयन नीर भरि कहेउ, "गोसाईं। जेहि हित तप कीन्हेउ मन लाई॥
बहु उपवास जाहि हित कीन्हेउ। नयन नीर भरि जाहि पुकारेउ॥
सो प्रभु तव हित भूमि पधारे। भक्तिहि बाँटन हित प्रभु आये॥
कीर्तनहित प्रभु तुमहिं बोलाये। श्री निताइ नदिया महँ आये॥
पूजा सामग्री सब आनहु। स्त्री समेत प्रभु तुम अब गमनहु॥

गौर निताई एक तनु, तुम्हरे जीवन प्रान।
भलीभाँति जानहु सकल, तुम हौ बुद्धिनिधान॥३॥

बड़े भाग्य प्रभु तुम तहँ जैहौ। सहित समाज दरस सब पैहौ॥"
श्री रमाइ के वचन सुनत ही। गद् गद् भए नयन जल बहई॥
नृत्य करत प्रभु हाथ उठाई। मूर्छित गिरे भूमि हर्षाई॥
विस्मित लोग भए अति भारी। कछु क्षण महँ प्रभु उठे सँभारी॥
करि हुंकार कहत, "सुनु भाई। 'आनेहु' 'आनेहु' गौर निताई॥
स्वर्ग छाँड़ि मम हित प्रभु आए। धन्य महाप्रभु मोहिं अतिभाए॥"
अस कहि प्रभु लोटत महि माहीं। माता सुनि आईं प्रभु पाहीं॥
पतिव्रता सीता ठकुरानी। आचारज पत्नी सब जानी॥
प्रभु प्रकाश सुनि पुलकित गाता। नयन नीर मुख आव न बाता॥
क्रन्दन करत अच्युतानन्दा। श्री अद्वैत-तनय सुखकन्दा॥

क्रन्दन करत सबहि मिलि, श्री अद्वैत सुजान।
माता पुत्रादिक सकल, सेवक प्रेमनिधान॥४॥

कृष्ण प्रेम मय सब गृह भयऊ। प्रेम मगन आनँद उर छायउ ॥
कहेउ रमाई "प्रभु का कहहूँ। शीघ्र चलन कर उद्यम करहू ॥"
कहेउ अचारज, 'पंडित सुनहू। कैसे मानैं प्रभु निज कहहू ॥"
हम कहँ जब ऐश्वर्य देखैहैं। चरण आपनो मम शिर धरिहैं ॥
तब हम प्राणनाथ निज जानब। सत्य-सत्य तब निश्चय आनब ॥"
कहेउ रमाई "हम का कहिहैं। बड़े भाग्य हम यह सब लखिहैं ॥
तोर मनोरथ प्रभुमन भावा। तेहिं हित यह अवतार सोहावा ॥"
तुष्ट भए सुनि पण्डित बानी। शुभ यात्रा प्रभु मन में ठानी।
प्रभू कहेउ सीता सन जाई। पूजा साहित लेहु सजाई ॥
अबहिं चलन कर करहु उपाई। अस सुनि सो कारज मन लाई ॥

दूध दही माखन प्रभृति, गन्ध धूप अरु पान।
पुष्प, वस्त्र, कर्पूर, घृत, राख्यो सब करि ध्यान ॥५॥

श्री अद्वैत चले तत्काला। श्री रमाइ सन कहेउ कृपाला ॥
कहेउ प्रभू सन तुम अस जाई। "आए सो नहिं, सुनहु गोसाईं ॥
कहेहु मोंहि प्रभु जब कछु कहिहैं। नन्दन गृह हम छिपकर रहिहैं ॥
अन्तर्यामी गौर सुजाना। आचारज मन की सब जाना ॥
आचारज आए प्रभु जाना। श्रीनिवास गृह कीन्ह पयाना ॥
गौर भक्त सब जे निज अहहीं। प्रभु इच्छा आए सब तहहीं ॥
प्रभु आवेश सकल जन जाना। सब चुप करि तहँ रहे महाना ॥
प्रभु हुंकार करन तब लागे। भावावेश प्रेम रस पागे ॥
सिंहासन पर जाइ विराजे। नाड़ा आयो कहि सुख साजे ॥
"देखन सो प्रभुता मम चाहत।" बार-बार प्रभु याही भाखत ॥

श्री निताइ जान्यो सकल, गौर हृदय की बात।
छत्र लेइ ढाढ़े भए, शोभा नहिं कहि जात ॥६॥

प्रभू गदाधर बीड़ा देईं। निज निज सेवा सबही करईं ॥
स्तुती करत कोउ चमर डोलावत। सम्मुख ह्वै कोउ वाद्य वजावत ॥
तेहि अवसर रामाइ आए। स्वयं प्रभू बोले हर्षाए ॥
"मोर परिच्छा हित तोहि कहेउ। नाड़ा आयेउ," कहि अस हर्षेउ ॥
"जानतहू सो संशय करई। नन्दन आचारज गृह रहई ॥
लेन परीक्षा तोहिं पठायो। जाहु तुरत तुम तेहि लै आवौ ॥
हर्षित मन हम आज्ञा करईं।" चले रमाई हर्षित होई ॥
श्री अद्वैत निकट सब कहेऊ। आचारज सुनि हर्षित भयऊ ॥
गौर निकट आये तत्काला। हर्ष लखि कै गौर कृपाला ॥
दूरहिं तें प्रणाम बहु करई। स्त्री समेत अस्तुति बहु पढ़ई ॥

निर्भय पद बन्दन करत, सन्मुख होइ सो आज।
पूर्ण ब्रह्म को रूप लखि, भयो सिद्ध सब काज ॥७॥



श्री अद्वैताचार्य द्वारा श्री गौर चरण की पूजा

गौर चरन पूजत बहु रीति। लीन्ह सुवासित जल अति प्रीती ॥
धोयेहु चरण हृदय मँह लाई। दिव्य गन्ध अर्प्यो हर्षाई ॥
तुलसी चन्दन युत जललेई। अर्घ चरन पर प्रभु के देई ॥

पृष्ठ–१५५

कहत कहत नयनन जल छावा। आनँद मगन न कछु कहि आवा ॥
गौर कहेउ पूजा अब करहू। प्रभु आज्ञा सुनि हर्षित भयऊ ॥
गौर चरन पूजत बहु रीतो। लीन्ह सुवासित जल अति प्रीतो ॥
धोयेहु चरण हृदय महँ लाई। दिव्य गन्ध अर्प्यो हर्षाई ॥
तुलसी चन्दन युत जल लेई। अर्घ चरन पर पुनि प्रभु देई ॥
गन्ध पुष्प अक्षत अरु दीपा। शुचि नैवेद्य दीन्ह कुलदीपा ॥
प्रेम धार नयनन सों बहई। आरति करि पुनि बन्दन करई ॥
गौर हरी जय कहि जय कहई। पूजा षोड़श विधि पुनि करई ॥
माला वस्त्र पुनः प्रभु दीन्हा। अलंकार पुनि अर्पण कीन्हा ॥
शास्त्र विधी सों पूजा करई। बन्दन करत श्लोक यह पढ़ई ॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो-ब्राह्मण हिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमोनमः ॥

यहि श्लोक पढ़ि प्रभुहिं पुनि, कीन्ह्यो दंड प्रनाम ।
हाथ जोरि अस्तुति करत, आचारज गुणधाम ॥११॥

स्तुति

"जय जय सर्व प्राणनाथ विश्वम्भर। जय जय गौरचन्द्र करुणासागर ॥
जय जय भक्त वचन सत्यकारी। जय जय महाप्रभू महावतारी ॥
जय जय सिंधुसुता रूप मनोरम। जय जय श्रीवत्स कौस्तुभ विभूषन ॥
जय जय हरे कृष्ण मंत्र प्रकाशक। जय जय निज भक्ति योग विकासक ॥
जय जय महाप्रभु अनन्त शयन। जय प्रभु मोंहि लेहु आपनी शरन ॥
तुम विष्णु तुम कृष्ण तुम नारायन। तुम मत्स्य तुम कूर्म तुम सनातन ॥
तुमहि वराह प्रभु तुमही वामन। युग युग वेद को करहु पालन ॥
राक्षस-कुल-हंता जानकीजीवन। गुह वरदाता प्रभु अहल्या मोचन ॥
प्रभु प्रह्लाद लागि लीन्ह अवतारा। श्री नृसिंह को तनु तुम धारा ॥
सर्व देव चूड़ामणि हे द्विजराज। भए हैं कृतारथ प्रभु हम आज ॥
नीलाचल वैभव विस्तारा। खोजत वेद न पावत पारा ॥
आइ लुकाइ रह्यो यहि ठाईं। तुमहिं लुकाब परम प्रिय साईं ॥
भक्त जनन तोहिं परगट करहीं। कीर्तन हित आये प्रभु इतहीं ॥
तुम अनन्त ब्रह्माण्ड के नाथा। धरौं युगल चरनन पर माथा ॥
हर गौरी तव चरनन पूजत। लक्ष्मी सदा चरन तव निरखत ॥
श्री अनन्त नित तव यश गावत। ब्रह्मा सदा चरन तव ध्यावत ॥
तव लीला श्रुति स्मृति सब वर्णत। बलि शिर धन्य चरणरज परसत ॥
तव चरनन गंगा प्रगटानी। शंकर शिर पर धरि सुख मानी ॥

॥ इति ॥

बुद्धिमान गुरु कोटिसम, श्री अद्वैत सुजान।
भली भाँति श्री गौर की, महिमा सो सब जान ॥१२॥

श्री चरणन महिमा प्रभु कहई। नयनन सों जल अविरल बहई ॥
है अधीर चरनन शिर राखेउ। श्री गौरांग मर्म सब जानेउ ॥

चरन उठाइ शीश पर राखा। जय जय सब भक्तन तब भाषा॥
अति अपूर्व दर्शन सब पावा। हरि हरि कहत नयन जल छावा॥
लोटत महि कोउ भुज भरि लेई। गला पकरि कोउ क्रंदन करई॥
श्री समेत अद्वैत गोसाईं। पूर्ण मनोरथ नव निधि पाईं॥
श्री अद्वैत प्रभु कहँ चीन्हा। प्रभु विश्वम्भर आज्ञा दीन्हा॥
'हे नाड़ा, अब कीर्तन करहू।" आज्ञा सुनत मगन मन भयऊ॥
आज्ञा पाइ मगन मन होई। भक्ति सहित कीर्तन कर सोई॥
नृत्य करत बहु भाव बताई। अतिहि मनोहर ध्वनि चहुँ छाई॥

प्रभु सन्मुख कीर्तन करत, प्रेम मगन मन होय।
कबहूँ निरतत वेग सों, कबहुँ मंद अति सोय॥१३॥

कबहूँ तृण दाँतन महँ धरई। कबहुँ उठत कबहूँ भुइँ परई॥
कबहूँ श्वास दीर्घ अति छाँड़त। कबहूँ प्रभु मूर्छा कहँ पावत॥
जोइ भजन जबहीं प्रभु सुनई। वही भाव महँ कीर्तन करई॥
एक भाव महँ स्थिर नहि रहई। आनँद मगन नृत्य बहु करई॥
कबहूँ चरन गहत प्रभु जाई। अमित प्रभाव को समुझै ताही॥
गौर निकट प्रभु पुनि पुनि जाहीं। नित्यानन्द निरखि हर्षाहीं॥
"श्री निताइ आये" हँसि कहेऊ। "बहु दिन पर तव दर्शन भयऊ॥
जाब कहाँ अब तोहिं धरि राखब। प्रेम डोर महँ हम सब बाँधब॥"
कबहूं प्रभु कहि तिन सों बोलत। मतवाला कबहूँ कहि हर्षत॥
श्री अद्वैत चरित लखि गुनहीं। श्री निताइ मन ही मन हँसहीं॥

लीला हित श्रीकृष्ण की, भई मूर्ति दोइ रूप।
गौर निताई एक तनु, भक्तन हित सुर भूप॥१४॥

पूर्वहि कह्यो रूप धरि नाना। श्री निताइ सेवहिं भगवाना॥
एक रूप सों अस्तुति करहीं। अन्य रूप सों ध्यानहिं धरहीं॥
कबहुँ छत्र प्रभु शीशहि धरई। शयन शेष पर हरि नित करई॥
श्री अद्वैत परम प्रिय प्रभुहीं। भक्त सकल यह जानत अहहीं॥
जो कछु कलह दोउ महँ देखहु। ईश्वर लीला केवल जानहु॥
श्री अनन्त शंकर बहु प्रीती। सेवत गौर दोउ बहु रीती॥
यह लीला जे जन नहिं बूझहिं। मानहिं एक अन्य कहँ निन्दहिं॥
नरक जात निश्चय जन सोऊ। श्री अद्वैत निताई भजहू॥
श्री अद्वैत नृत्य लखि सबही। आनँद मगन भए सब जनही॥
गौर कह्यो. "तुम नदिया रहहू।" प्रभु आज्ञा सुनि हर्षित भयऊ॥

निज माला तब गौर प्रभु, श्री अद्वैतहिं दीन्ह।
माँगहु वर अस कह्यो तब, अति हर्षित तेहि चीन्ह॥१५॥

श्री अद्वैत कहत कछु नाहीं। माँगु माँगु कहि प्रभु हर्षाहीं॥
श्री अद्वैत कह्यो कर जोरी। "सुनहु गौर प्रभु विनती मोरी॥
और कहा माँगहु तव पाहीं। जो चाहेहु पायेहु सब ताही॥
तव सन्मुख इच्छा भरि नाचे। सकल अभीष्ट आजु फल पाये॥

पूर्ण मनोरथ सब भरि पायो। तब अवतार नयन सों देख्यो ॥
का चाहौं सो सब तुम जानहु। दिव्य दरस प्रभु कर हम पायहु ॥"
माथ डुलाइ गौर प्रभु कहेऊ। "तव हित भुइँ पर सुनु हौं आयउँ ॥
घर घर कीर्तन करब प्रचारा। मम यश व्यापब सब संसारा ॥
नारद शुक जेहि हित तप करहीं। सोइ भक्ति बाँटब सब जनहीं ॥"
श्री अद्वैत कह्यो कर जोरी। "विनती प्रभु मानहु एक मोरी ॥

स्त्री शूद्रादिक मूर्ख सब, चण्डालहु कहँ देहु।
नाचहिं तव गुन गान करि, प्रभु तुम यह यश लेहु ॥१६॥

विद्या धन कर गर्व जे करहीं। ऊँचे कुल मर्यादी अहईं ॥
तप कर गर्व करत मन माहीं। वैष्णव देखत मन कुढ़ि जाहीं ॥
वैष्णव कर निन्दा जे करहीं। कीर्तन सुनिकै जे सब जरहीं ॥
गौर भक्त सब कीर्तन करिहैं। ए पापी लखिकै सब मरिहैं ॥"
सुनि अद्वैत बचन प्रभु हर्षे। करि हुंकार नयन जल वर्षे ॥
गौर कह्यो, "हम ऐसहि करिहैं। मृषा बचन तव कबहुँ न ह्वैहैं ॥"
प्रभु कर बचन लोग सब जानत। मूर्ख नीच पर कृपा दिखावत ॥
चण्डालहु नाचत हरि गाई। भट्ट मिश्र सब लखि दुख पाई ॥
विद्या पढ़ि अरु मूँड़ मुड़ाई। बुद्धि नाश इन कर ह्वै जाई ॥
श्री निताइ निन्दा ए करहीं। रौरव नरक जाइ सब गिरहीं ॥

आचारज की कृपा सों, लह्यो प्रेम सब कोइ।
मध्य खंड महँ सब कह्यो, सुनहु भक्त गण सोइ ॥१७॥

गौर चरित सब विमल सोहावा। श्री अद्वैत चरित मन भावा ॥
सरस्वती जानत सब लीला। सोइ कहावत सब सुख शीला ॥
सब वैष्णव पद वंदन करहू। मम अपराध न कछु कोउ गिनहू ॥
श्री अद्वैत परम सुख पाई। रहे तहाँ अभिमत फल पाई ॥
पत्नी सह प्रभु कीन्ह निवासा। प्रेम मगन उर अधिक हुलासा ॥
श्री चैतन्य निताई जानहु। वृन्दावन प्रभु चरित बखानेहु ॥
ब्रजभूषण भाषा महँ गायो। वैष्णव भक्त चरण मन लायो ॥

इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खंडे
श्री अद्वैत मिलनं नाम पंचमोध्यायः

षष्ट अध्याय

नृत्य करत गौरांग।

चिन्तामणि सहजहिं जग दीन्ह्यो भक्तजनन के प्रान॥
श्री अद्वैत निताई लीन्हें नृत्यत प्रेमनिधान।
जगदानन्द श्री गर्भ के जीवन करुणासिंधु सुजान॥
पुण्डरीक बिद्यानिधि जय जय सब महँ भक्त प्रधान॥
'व्रजभूषण' सब गौर भक्तकर करत सदा गुणगान॥

यहि विधि श्री गौरांग गदाधर। नित्यानन्द संग प्रिय सहचर॥
अद्वैतादि भक्त सब लीन्हे। नृत्य करत सबही मन दीन्हे॥
श्री निवास गृह रहत निताई। बाल्य भाव में रहत सदाई॥
निज कर सों भोजन नहिं करई। बालक सम माता तेहि रखई॥
विद्यानिधि कर चरित सुहावा। कहहुँ कथा जो सब मन भावा॥
पुण्डरीक तेहि कर शुभ नामा। कृष्ण प्राणधन सब सुखधामा॥
चाटिग्राम जन्म सो लीन्हा। ग्राम सोइ पावन प्रभु कीन्हा॥
नवद्वीप महँ गौर प्रकासा। तेहि नहिं लखि श्री गौर उदासा॥
बैठे नृत्य अन्त में आई। पुण्डरीक कहि पुनि अस कहई॥
"पुण्डरीक तुम पिता समाना। दरस देहु तुम परम सुजाना॥

प्रेम पात्र गौरांग के, विद्यानिधि गुणधाम।
तिनहिं बुलावन हेतु प्रभु, रटत ताहि को नाम॥१॥

तेहि कर नाम लेइ प्रभु रोवहिं। भक्त सकल कछु मर्म न बूझहिं॥
भक्त कोउ अस मन महँ सोचहिं। पुण्डरीक श्रीकृष्णहि बूझहिं॥
विद्यानिधि सुनि सब अनुमानहिं। प्रभु कर कोउ भक्त बड़ समुझहिं॥
जब प्रभु स्वस्थ भली विधि भयऊ। हाथ जोरि सब प्रभु सन पूछेउ॥
केहि हित प्रभो करहु तुम क्रंदन। भक्त नाम कहु भव-भय-भंजन॥
कहाँ जन्म तेहि कर शुभ भयऊ। तासु चरित सब प्रभु तुम कहऊ"॥
"भाग्यवान तुम सब प्रभु कहेऊ। भक्त कथा पर रुचि तव भयऊ॥
अति अद्भुत सब चरित उदारा। होत पवित्र नाम सुनि सारा॥
विषयी सम सबहीं लखि परई। वैष्णव सहजहि नहिं कोउ कहई॥
चाटिग्राम जन्म है तासू। बड़ पण्डित सद्गुण सब पासू॥

कृष्ण प्रेम महँ मत्त सो, रहत सदा दिन रात।
कम्प पुलक सब होत है, नयनन सों जल जात॥२॥

गंगा दरसन निशि महँ करई। दिन महँ तहाँ कबहुँ नहिं जाई॥
गंगा महँ सो पैर न राखै। तासों गंग कबहुँ नहिं न्हावै॥
लोग सकल जल दूषित करई। कुल्ला दतुअन नहिं लखि सकई॥
यह सब लखि दुख मन महँ पावै। गंग दरस हित निसि महँ जावै॥

अति विचित्र तेहिकर विश्वासा। पूजत हरि नित तजि सब आसा ॥
पूजा प्रथम गंग जल पीवत*। नित्य कर्म महँ तब मन ल्यावत ॥
पण्डित गन कहँ शिक्षा देई। चाटिग्राम वास सो करई ॥
नदिया महँ तेहि कर गृह अहहीं। इहाँ शीघ्र आउब सो अबहीं ॥
देखब सब पर नहिं पहिचानब। विषयी सम सब काहू जानब ॥
देखे बिनु तेहि नहिं संतोषू। आकर्षहुँ तेहि करि परितोषू" ॥

अस कहि तेहि के भाव महँ, मगन भए तत्काल।
पुण्डरीक कहि रोवहीं, भक्तन के प्रतिपाल ॥३॥

भक्त तत्व केवल प्रभु जानत। जानत भक्त जबहिं प्रभु भाषत ॥
प्रभु आकर्षण पण्डित जान्यो। पुण्डरीक हिरदय महँ आन्यो ॥
नदिया गमन हेतु मन कीन्हा। निज सेवकन सो आयसु दीन्हा ॥
चले सकल तब साज सजाई। ब्राह्मण शिष्य सकल हर्षाई ॥
नदिया महँ सो कीन्ह निवासा। विषयी सम सब भोग बिलासा ॥
वैष्णव सकल कोउ नहि जानहिं। श्री मुकुन्द केवल पहिचानहिं ॥
श्री मुकुन्द चटग्राम निवासी। दोउ भक्त दोऊ सुखरासी ॥
निधि कर प्रेम भक्ति सब जानत। वासुदेव दत्तहु सब बूझत ॥
श्री मुकुन्द प्रिय अतिहि गदाधर। सदा रहत तेहि सँग जिमि अनुचर ॥
समाचार सब तेहि सन कहेऊ। हर्षित होइ तेहि सँग सो चलेऊ ॥

अद्भुत वैष्णव एक सुनु, आयो नदिया माँहिं।
वैष्णव दर्शन जौ चहहु, चलहु जहाँ हम जाहिं ॥४॥

अद्भुत वैष्णव तोहिं देखाउब। सेवक सम तुम मोहिं कहँ मानब ॥
सुनत गदाधर हर्षित भयऊ। कृष्ण कृष्ण कहि तेहि क्षण चलेऊ ॥
विद्यानिधि बैठे सुखदाई। तबहिं गदाधर सन्मुख जाई ॥
कीन्ह प्रणाम जोरि जुग पानी। सत्कारेउ निधि कहि मृदु बानी ॥
श्री मुकुन्द सन निधि तब कहहीं। "नाम कहा केहि ग्रामहि बसहीं ॥
विष्णु भक्त सम रूप मनोहर। आकृति प्रकृति लगत अति सुन्दर ॥"
"नाम गदाधर सुनहु सुजाना। शिशुपन तें विरक्त सब जाना ॥
माधव मिश्र-पुत्र सब कहई। वैष्णव प्रेमपात्र यह अहई ॥
भक्ति पंथ पर चलत सदाई। भक्तन संग रहत नित छाई ॥
विद्यानिधि सुनि हर्षित भयऊ। प्रेम सहित तब बोलन लागेउ ॥

विद्यानिधि कर देखिके, वैभव विपुल विशाल।
मन महँ अति विस्मित भयउ, कारन कौन कृपाल ॥५॥

---

*हरिं हरीतकीञ्चैव गायत्री जाह्नवी जलम्।
अन्तर्मल विनाशाय स्मरेत् भक्षेत् जपेत् पिबेत् ॥ (महाजनवाक्य)

शरीर के भीतर का मल नाश करने के लिए हरि का स्मरण करना चाहिए, हर्रे खाना चाहिए, गायत्री का जप करना चाहिए तथा गंगा जल पीना चाहिए।

राजा सम बैठे तेहि देखा। दिव्य सिंहासन सुन्दर भेषा ॥
चन्द्रातप तेहि ऊपर राजत। शय्या दिव्य तहाँ एक सोहत ॥
सोने को जलपात्र विराजत। डिब्बा पान तहाँ छबि पावत ॥
पीकदान दुहुँ दिशि दुइ राजै। पान चबात अधर छवि छाजै ॥
मोर पंख दुइ सेवक लेई। वायु करत तेहि अति सुख देई ॥
उर्ध्वपुण्ड्र चन्दन को सोहात। बिंदी लाल मध्य महँ भ्राजत ॥
घुँघराली अलकैं अति सोभित। दिव्य आँबला तैल सों मर्दित ॥
भक्ति प्रभाव वदन सब सुन्दर। भक्ति प्रेम मय रूप मनोहर ॥
जानत जे नहिं ते सब कहहीं। राजपुत्र मानहुँ कोउ अहहीं ॥
सन्मुख एक पालकी राजत। विषयी साज सबै तहँ सोहत ॥

देखि विषय कर साज सब, भा सन्देह अपार ।
मनहिं गदाधर सोच अति, कहत कहा व्यापार ॥६॥

परम विरक्त गदाधर अहही। माया के वश कबहुँ न फँसही ॥
निधि प्रति संशय जन्मेउ भारी। कहन लगेउ मन माँह विचारी ॥
"उत्तम वैष्णव विषयी रूपा। दिव्य योग अरु वेश अनूपा ॥
कीरति सुनि श्रद्धा उर आनी। दर्शन करत सो सकल नसानी" ॥
संकित हृदय गदाधर देखी। श्री मुकुन्द उर प्रीति विशेखी ॥
श्री मुकुन्द मन माहिं विचारेउ। निधिहि प्रकाश करन सो चाहेउ ॥
हरिमाया कछु समुझि न परई। पण्डित सब कछु जानत अहई ॥
श्री मुकुन्द गायक तब पढ़ई। हरि लीला कर श्लोक सो कहई ॥
बनी पूतना निर्दय भारी। बालक खात फिरत दिसि चारी ॥
विष लगाइ स्तन मारन आई। माता की गति दीन्हेऊ ताही ॥

ऐसे परम दयालु हरि, भजहिं भक्त भगवान ।
जे न भजहिं ऐसे प्रभुहिं, ते मतिमन्द महान ॥७॥[1]

---

१. तथाहि (भा० ३।२।२३)

अहो बकी यं स्तनकालकूटं जिघांसयाऽपाययदप्य साध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ॥

अर्थ—अहो, बकासुर की बहन पूतना ने श्रीकृष्ण को मारने के हेतु अपने स्तन में विष लगाकर पान कराया। दयालु श्रीकृष्ण ने ऐसी दुष्टा को भी माता के समान अच्छी गति दी। अब विचार करो कि ऐसे दया के निधान श्रीकृष्ण भगवान को छोड़कर दुःखी जीव किसके शरण में जाय।

तथाहि (भा० १०।६।३५)—

पूतना लोक बालघ्नी राक्षसी रुधिराशना ।
जिघांसयापि हरये स्तनं दत्वाऽऽप सद्गतिम् ॥

अर्थ - मनुष्यों के बालकों को मारने वाली तथा रुधिर पीने वाली राक्षसी पूतना ने मारने के हेतु श्रीकृष्ण को अपना स्तन पिला कर सद्गति पाई। अर्थात् श्रीकृष्ण भगवान ने केवल स्तन पान करने से प्रसन्न होकर माता के समान पूतना को अच्छी गति दी।

सुनतहिं भक्ति योग कर श्लोका। रोअन लगे विकल जिमि कोका॥
गंग समान नयन जल बहई। कम्प स्वेद हुंकार सो करई॥
बोल बोल कहि गर्जत जाहीं। व्याकुल होइ गिरयो महि माहीं॥
पद आघात नष्ट सब भयऊ। टूट फूट सब इत उत गयऊ॥
डब्बा पान झारि जल भाजन। शय्या आदि विविध सब आसन॥
प्रेमावेश वस्त्र सब फाड़ेउ। दिव्य केश सब माटी लागेउ॥
"कृष्ण प्राण प्रिय तुम मम अहहू। केहि कारण मोहिं वञ्चित करहू॥
अब की करु मम प्रभु उद्धारा।" यह कहि क्रंदन करत अपारा॥
लोटहिं भुइ महँ पटकहिं अंगा। लोग डरत तनु ह्वैहैं भंगा॥
भाव विकार प्रबल अति भयऊ। दस जनहू तेहि पकरि न सकेऊ॥

शय्या झारी वस्त्र अरु, बाटी बीड़ा पान।
पद आघात सो गयेहु सब, बचेहु न कछु तहँ जान॥८॥

सेवक सकल सँभार सकेला। शांत भए कछु संध्या बेला॥
यहि बिधि कछु क्षण प्रेम प्रकाशी। मूर्छित होइ रहे गुण राशी॥
धातु नहीं तिल मात्र शरीरा। डूबे निधी प्रेम निधि नीरा॥
देखि गदाधर विस्मित होई। चिंतित भयहु मनहिं अति सोई॥
"कीन्ह अवज्ञा हम अति भारी। साधु पुरुष कहँ देखि विचारी॥
अशुभ समय हम देखन आये।" अस कहि मगन एक क्षण भये॥
श्री मुकुन्द कहँ गरे लगायो। नयन नीर सों तेहि कहँ सींच्यो॥
कहेहु विनीत वचन अति तेही। "तुम तौ मेरे परम सनेही॥
दरस करायहु भक्त प्रवर कर। भयहु सफल मम जन्म मित्रवर॥
ऐसेहु भक्त अहैं भुवि माहीं। जासु दरस भव सिंधु सुखाहीं॥

बड़ संकट महँ आज हम, तुमहि उबारौ मोहिं।
कीन्ह्यो बड़ अपराध सुनु, सकल कहौं हम तोहिं॥९॥

विषयी सम लखि मन महँ गुनेऊ। विषयी वैष्णव इनहिं विचारेउ॥
मोहिं समुझि तुम कीन्ह उपाया। विद्यानिधि कर प्रेम प्रकाशा॥
यह अपराध भयउ मोहिं पाहीं। तेहि कहँ दूर करन हम चाहीं॥
वैष्णव भक्त सकल जे अहहीं। गुरू एक सब जन ही करहीं॥
अब लौं हम कोउ गुरू न कीन्हा। मंत्र इनहिं सन चाहौं लीन्हा॥
कीन्ह अवज्ञा मन महँ जोई। दोक्षित ह्वै सोधब हम सोई॥
सब अपराध स्वयं सो क्षमिहैं। शुद्ध भक्ति मोहि कहँ सो दैहैं॥
श्री मुकुन्द कहँ पुनि समुझाई। मंत्र कथा सब कहेउ बुझाई॥
सुनत मुकुन्द लहेउ सन्तोषू। हरि हरि कहि कीन्ह्यो परितोषू॥
प्रहर दोइ महँ निधि उठि बैठे। स्वस्थ होइ सब ही कहँ देखे॥

बहत गदाधर नयनसों, अविरल जल की धार।
गंग नदी जनु बहि चली, प्रेम न हृदय संभार॥१०॥

विद्यानिधि लखि हर्षित भयऊ। गोद लेइ तेहि हृदय लगायउ॥
तबहिं गदाधर चुप ह्वै गयऊ। श्री मुकुन्द निधि सन पुनि कहेऊ॥
"तव वैभव लखिकै सकुचाहीं। कीन्ह अवज्ञा तव उर माहीं॥
प्रायश्चित्त करन तेहि हेतू। चहत मंत्र तुम सन भव सेतू॥
विष्णुभक्त शिशुपन तें अहई। गौरभक्त गौरहिं अनुसरई॥
माधव मिश्र कुलहि सुत जायो। योग्य शिष्य यहि विधि उपजायो॥
शुभ दिन देखि तुमहिं अब कहऊ। आपन इष्ट मंत्र एहि देऊ॥"
पुण्डरीक सुनि हर्षित होई। कीन्ह प्रतिज्ञा तेहि सन सोई॥
"बड़ भाग्य विधि अवसर दीन्हा। महाभक्त वैष्णव हम चीन्हा॥
शुक्ल द्वादशी जो यह अइहै। सोइ दिन सफल मनोरथ ह्वै है॥"

हर्षित होइ गदाधर, कीन्ह्यो गुरुहिं प्रणाम।
श्रीमुकुन्द सों विदा होइ, आए पुनि निज धाम ॥११॥

गए गदाधर गौर निवासा। विद्यानिधि कर कीन्ह प्रकासा॥
निधि आगमन सुनत प्रभु हर्षे। ताहि सराहि नयन जल वर्षे॥
विद्यानिधि साधारण वेशा। सुहृदभाव सद्गुण कर शेषा॥
गौर निकट रात्रो महँ आयउ। निपट अकेल संग नहिं कोऊ॥
गौर निरखि मूर्छित होइ गिरेऊ। दंड प्रणाम करन नहिं पायउ॥
अति आनँद मूर्छा सो पायउ। छिन महँ बहुरि स्वस्थ सो भयऊ॥
करि हुंकार कहत प्रभु पाहीं। "त्राहि-त्राहि प्रभु हम कहँ जाहीं॥
तुमहि प्रान मेरे जीवनधन। रक्षा करहु ताप-त्रय-मोचन॥
अपराधी कहँ कत दुख दीन्ह्यो। जगत उधार प्रभू तुम कीन्ह्यो॥
केवल मोहिं छाँड़ि प्रभु दीन्हा।" कातर होइ क्रंदन पुनि कीन्हा॥

निज प्रीतम कहँ जानिकै, उठे तुरत हरिराय।
भक्त बछल श्री गौरहरि, लीन्ह्यो कंठ लगाय ॥१२॥

"पुण्डरीक" कहि क्रंदन करहीं। आजु तात देख्यो हम तुमहीं॥
निश्चय करि तब सबही जाने। विद्यानिधि आए सब माने॥
हरि-हरि कहि सब क्रंदन करहीं। अति अद्भुत कोउ कहि नहिं सकहीं॥
विद्यानिधि कहँ हृदय लगाई। नयन नीर जल सींचेउ ताही॥
प्रभु कर प्रिय समुझेहु सब लोगहि। भई प्रीति उर हरि-हरि बोलहिं॥
विद्यानिधि कहँ प्रभु नहिं छाँड़हिं। लीन भए जनु निधी शरीरहिं॥
एक प्रहर निश्चल ह्वै रहेऊ। हरि-हरि कहि तबहीं प्रभु उठेऊ॥
वाञ्छा सिद्ध आज मम भयऊ। कृष्ण मनोरथ सब मम पूरेउ॥
सब वैष्णव सँग ताहि मिलायेउ। निधिकर गुण प्रभु सब सन भाषेउ॥
"प्रेम निधी हम पदवी दीन्हेउ। प्रेम भक्ति बाँटन विधि भेजेउ॥"

विद्यानिधि गुण याहि बिधि, वर्णत गौर कृपाल।
भुज उठाइ हरि हरि कहत, भक्तन के प्रतिपाल ॥१३॥

प्रभू कह्यो शुभ दिन बड़ आजू । आज महामंगल शुभ काजू ॥
शुभ क्षण आज उठे हम भाई । प्रेमनिधी दर्शन शुभ पाई ॥
प्रेमनिधी पुनि सुस्थिर भयऊ । प्रभु पहिचानि दंडवत कीन्हेउ ॥
श्री अद्वैतहिं कीन्ह प्रणामा । यथायोग्य सब कहँ गुणधामा ॥
परमानन्द मगन सब भयऊ । प्रेमनिधी कर दर्शन पायेउ ॥
प्रेमभक्ति कर बजेउ बधावा । को कहि सकै मगन तेहि भावा ॥
तबहिं गदाधर प्रभु सन कहेऊ । मंत्रलेन हित आज्ञा माँगेउ ॥
"निधि व्यवहार न बूझेउ हम हीं । कीन्ह अवज्ञा हम प्रभु मनहीं ॥
तेहि अपराध निधी गुरु करिहैं । सकल दोष मम सो तब क्षमिहैं ॥"
प्रभु संतोष सुनत शुभबानी । शीघ्र लेहु प्रभु कह शुभ जानी ॥

प्रेमनिधी के निकट तब, लीन्ह गदाधर जाइ ।
दीक्षा अति ही प्रेम सों, रह्यो भुवन यश छाइ ॥१४॥

पुण्डरीक महिमा को कहई । जेहि कर शिष्य गदाधर अहई ॥
भक्तीरूप गदाधर मानहु । गौर अभिन्न इनहि सब जानहु ॥
विद्यानिधी कर चरित बखाना । दर्शन देहु इहैं हम जाना ॥
गुरु अरु शिष्य योग्य हैं दोऊ । निधी गदाधर कह सब कोऊ ॥
अति प्रिय गौर अहहिं जन दोऊ । इनकर मिलन यथा मति कहेऊ ॥
जो यह सुनत प्रेमधन पावत । श्रीनिताइ चरनन मन लावत ॥
श्री चैतन्य कृपा हम जानी । वृन्दावन प्रभु सुयश बखानी ॥
भाषा महँ व्रजभूषण कीन्हा । गौर चरणरज चाहै चीन्हा ॥

इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखण्डे पुंडरीक विद्यानिधि
मिलन नाम षष्ठोऽध्यायः

सप्तम अध्याय

जय जय श्री गौर सुन्दर सर्वप्रान ।
जय श्री नित्यानन्द अद्वैत प्रेमधाम ॥
जय श्रीजगदानन्द श्रीगर्भ जीवन ।
जय पुण्डरीक विद्यानिधि प्राणधन ॥
जय जगदीश गोपीनाथ के ईश्वर ।
जय होउ जेते गौरचन्द्र अनुचर ॥

यहि विधि नदिया गौर कृपाला । श्री निताइ सँग रहत रसाला ॥
श्री अद्वैत संग वैष्णव सब । कीर्तन करत सदा मिलिकै सब ॥
श्री निवास गृह रहत निताई । बाल भाव महँ रहत सदाई ॥
निज हाथन सों कबहुँ न भक्षहिं । पुत्र समान मातु प्रतिपालहिं ॥

नित्यानन्द तत्व सो जानत। मातु मालिनी तेहि गृह राखत ॥
एक दिना श्री गौर गोसाईं। कहत वास सों कथा सोहाई ॥
करन परीक्षा श्री निवास कर। पूछेउ गौर ताहि मधुरे स्वर ॥
"अवधूतहिं गृह काहे राखहु। कौन जाति कुल कछु नहिं जानहु ॥
अति उदार तुम हम सुनु कहहीं। आपन कुल रक्षा सब करहीं ॥
जौ आपन कुल रक्षा चाहहु। अवधूतहिं गृह बाहर राखहु ॥"
हँसिकै पण्डित कह्यो गोसाईं। मोहिं परिक्षहु यह न सोहाई ॥

एक दिना जो भजत तोहिं, सो है मेरो प्राण।
तुम दोऊ प्रभु एक हौ, भाषत वेद पुराण ॥ १ ॥

श्री निताइ अनुचित यदि करहीं। जाति धर्म धन सब कछु हरहीं ॥
तदपि न हम कहँ ताकर सोचू। सत्य कहत हम तजि संकोचू" ॥
सुनतहि श्री निवास की बानी। करि हुंकार कहेउ सुख मानी ॥
"कहहु कहा पण्डित श्रीवासा। श्री निताइ प्रति अस विश्वासा ॥
गुप्त तत्व तुम सब मम जानहु। है सन्तुष्ट देहुँ वर सुनहू ॥
लक्ष्मीहू यदि भिक्षा माँगहिं। तोरे गृह दारिद्य न आवहिं ॥
पशुहू जो तुव घर में अहहीं। मोर भक्ति सब काहू लहहीं ॥
श्री निताइ हम सौंप्यो तुमहीं। सेवा करहु यथामति सबही ॥"
श्रीवासहिं वर दै गृह गयऊ। श्री गौरांग सुखी अति भयऊ ॥
श्री निताइ गंगा महँ भ्रमहीं। गंगा महँ पौड़त नित रहहीं ॥

बीच धार महँ जातहैं, उर संतोष अपार।
बालक सँग खेलत कबहुँ, कबहुँ जाइ निज द्वार ॥ २ ॥

गंगा दास मुरारि निवासा। जाहि कबहुँ मन भरे हुलासा ॥
कबहुँ गौर घरहू प्रभु जाहीं। शची मातु लखि अति हर्षाहीं ॥
बड़ो प्रेम आदर सो करई। मधुर बचन कहि अति सुख लहई ॥
माता चरन धरन सो जावै। भागत मातु धरन नहिं पावै ॥
शची मातु एक स्वपनहिं देखेउ। विश्वम्भर सों ताहि सुनायेउ ॥
"निशि अवशेष स्वप्न हम देखेउ। श्री निताइ अरु तोहिं अवरेखेउ ॥
पाँच वर्ष कर शिशु दोउ होई। कलह करहु आपस महँ सोई ॥
लड़त लड़त ठाकुर गृह गयऊ। रामकृष्ण सँग बाहर आयउ ॥
श्री निताइ कृष्णहिं कर धरेऊ। तुम बलराम हाथ धरि राखेउ ॥
करहु लड़ाई सन्मुख हमरे। रामकृष्ण कह नयन तरेरे ॥

तुम कपटी आए कहाँ, बाहर होउ तुम दोउ।
हम दोउ कर यह गृह अहै, भोग आदि सब सोउ ॥३॥

कहत निताई सो दिन गयऊ। जबहि लूटि दधि माखन खायेउ ॥
ग्वाला कर अधिकार नसायेऊ। विप्रवंश अब प्रभुता पायेउ ॥
आपुहिं चीन्हि छाँड़ि सब दोजै। प्रेम सहित सब कारज कीजै ॥
नाहिं त मार खाब तुम भाई। लूटन सों राखब को साँईं ॥

रामकृष्ण कह "दोष न मोहीं। मारब दोउ बाँधि हम अबहीं॥
कृष्ण दोहाई यदि ना करऊ।" बड़े क्रोध बलदाऊ कहेउ॥
कहेउ निताई कृष्ण न डरहीं। बिश्वम्भर मोरे प्रभु अहहीं॥
यहि बिधि कलह करहु चारिउ जन। भोग लेइ खावहु हर्षित मन॥
हाथ सों छीनि लेइ कोउ खावै। मुख सो मुख मिलाइ कोउ पावै॥
"जननी" कहि निताइ मोहिं कहहीं। अन्न देहु भूखे हम अहहीं॥

जागि उठे हम सुनत ही, कहेहु तोहि सब बात।
बूझेहु नहिं हम बात कछु, कहहु तुमहिं अब तात" ॥४॥

हँसे विश्वम्भर सुनि शुभ सपना। माता सों बोले मृदु बचना॥
"सुन्दर स्वप्न मातु तुम देखेहु। काहू सन तुम जनि यह भाषेहु॥
तुमरे गृह के ठाकुर सुनहू। जाग्रत बड़ो तोहि सों कहहूँ॥
यहि सपना सों सो दृढ़ भयहू। सदा भोग आधो हौं लहहूँ॥
जेतो भोग नित्य तुम अर्पत। पाछे सों आधो हम पावत॥
लाजन वश हम कछु नहिं कहहीं। तोर वधू पर संशय करहीं॥
आजु सकल संदेह नसायो"। लक्ष्मी सुनि मन महँ सुख पायो॥
भीतर सों सब कथा सो सुनई। विश्वम्भर माता माता सों कहई॥
"श्री निताइ कहँ तुरत बोलावहु। सुन्दर भोजन ताहि करावहु"॥
पुत्र वचन सुनि अति सुख मानेउ। रंधन कार्य तुरत मन दीन्हेउ॥

श्री निताइ पहँ गौरहरि, गए तुरत हर्षाय।
देइ निमन्त्रण ताहि कहँ, कहेउ बहुरि समुझाय ॥५॥

"हमरे गृह भिक्षा सुनु भाई। आजु करहु तुम अति हर्षाई॥
चञ्चलता कछु करेहु न भाई। शिक्षा मोर धरेहु मन लाई"॥
कान पकरि "हरि हरि" सो कहई। "पागल सब चञ्चलता करई॥
आपन सम तुम सबही जानहु। ताहि समुझि मो सन अस भाषहु"॥
श्री निताइ उत्तर सुनि हर्षे। प्रेम मगन नयनन जल वर्षे॥
बैठे एक साथ मिलि दोऊ। भक्त आदि निज जन सब कोऊ॥
श्री ईशान दीन्ह जल सबहीं। पैर धोइ बैठे सब जन ही॥
भोजन हित दोउ आइ विराजे। राम लखन जिमि अवधहिं राजे॥
वैसेहि प्रेम भाव सों दोऊ। भोजन करत न जानत कोऊ॥
आई भोजन सबहिं परोसत। तीन भाग लखि दोऊ हरषत॥

पुनः आइ देखेउ तहाँ, शची मातु दोउ भाइ।
पाँच वर्ष के बाल सम, मन महँ अति हरखाइ ॥६॥

वर्ण कृष्ण अरु शुक्ल मनोहर। दोउ चतुर्भुज अरु दिगम्बर॥
गदा पद्म अरु शंख चक्रधर। श्री हल मुसल हार कंकन कर॥
श्री वत्स कौस्तुभ हृदय विराजत। कानन महँ कुण्डल अति सोहत॥
पुत्र हृदय निज वधू विलोकेउ। निरखतही अति भय मन उपजेउ॥

मूर्छित भूमि गिरी सों तहहीं। भींगेउ वस्त्र नयन जल बहहीं॥
इत उत अन्न सकल गृह छायो। निरखि विलक्षण सुधि बिसरायो॥
हाथ धोइ प्रभु तुरतहि धाए। मातु उठाइ कहत सकुचाए॥
उठहु मातु मन स्थिर तुम करहू। अकस्मात काहे भुँइ गिरेऊ।
केश सँभारि स्वस्थ होइ माता। रोअत कछु न कहत मुख बाता॥
दीर्घ श्वास छाँड़त अति भारी। प्रेम पूर्ण तनु दसा बिसारी॥

धोइ धाइ गृह सकल तब, स्वच्छ कीन्ह ईशान।
वचो अन्न पायो सोई, यहि सम धन्य को आन॥७॥

शची मातु सेवेउ सब काला। भाग्यवान ईशान कृपाला॥
बहु कौतुक यहि विधि नित होई। मर्म भृत्य बिन जान न कोई॥
मध्य खण्ड की कथा सोहाई। अन्तर मल सुनतेहि जेहिं जाई॥
नदिया महँ यहि विधि प्रभु रहहीं। सब भक्तन सँग कीर्तन करहीं॥
पार्षद सब जन्मे जहँ तहहीं। नवद्वीप आए सब जन ही॥
प्रभु अवतार सकल जग जाना। आनँद मगन सकल सुख माना॥
प्रभु प्रकाश लखि वैष्णव वृन्दा। मगन भए सेवहिं सुखकन्दा॥
प्रभुहु सबहिं प्रान सम मानहिं। गौर पारषद सब सन्मानहि॥
वेदहु जेहि कर खोज न पावा। भक्तन कहँ सो गले लगावा॥
भक्तन के गृह प्रभु नित जाहीं। अद्भुत रूप सबहिं दर्शाहीं॥

चार भुजा अरु छै भुजा, विविध रूप प्रभु धारि।
दरस देत सब भक्त कहँ, प्रेम न सकहिं सँभारि॥८॥

कबहुँ मुरारि गृहहिं प्रभु जाहीं। गंगादास देखि हर्षाहीं॥
चन्द्रशेखर गृह कबहुँ पधारहिं। नित्यानन्द सदा सँग राखहिं॥
बाल्य भाव महँ सदा निताई। सर्व भाव महँ रहत निमाई॥
मत्स्य, कूर्म, बाराह को रूपा। वामन, श्री नरसिंह स्वरूपा॥
निज निज भाव भक्त सब देखहिं। दरस पाइ निज भाग्य सराहहिं॥
गोपी भाव कौन दिन होई। रात दिना प्रभु रोअत रहई॥
उद्धव अरु अक्रूरहिं भावा। वर्णत गोपी प्रेम सुहावा॥
श्री बलराम भाव महँ होई। मदिरा कहत न बूझत कोई॥
ब्रह्मा भाव माँहिं विश्वम्भर। ब्रह्म मोह स्तुति पढ़त निरंतर॥
श्री प्रह्लाद भाव महँ कोउ दिन। हाथ जोरि स्तुति करत ताहि छिन॥

यहि विधि भक्ति समुद्र महँ, बिहरत गौर गोपाल।
शची मातु हर्षित निरखि, श्री गौरांग कृपाल॥६॥

शंका एक मातु मन बसई। गृहहिं त्यागि सुत अनत न जाई॥
आइ कहै "गंगा सुत जाहू"। गौर कहै "श्री कृष्णहि भजहू॥"
माता जौ कछु बात चलावै। कृष्ण कृष्ण बस उत्तर पावै॥
गौर "कृष्ण" बिन और न बोलहिं। लोग भाव कछु बूझि न पावहिं॥

जौन भाव महँ प्रभु जब होहीं। अति अपूर्व सोई सब लखहीं॥
एक दिना शिव गायक आयो। डमरू लै शिव स्तुति सो गायो॥
भिक्षा हित प्रभु गृह सो आई। नृत्य करत गावत हर्षाई॥
शंकर स्तुति सुनि प्रभु विश्वम्भर। शंकर मूर्ति भए गंगाधर॥
कूदि गौर तेहि ऊपर जाई। कंधे पर बैठे हर्षाई॥
करि हुँकार कहत हम शंकर। सब देखहिं शिव दिव्य जटाधर॥

अति सुकृती शिवभक्त सो, गायक परम सुजान।
जेहि के कंधे स्वयं प्रभु, चढ़े गौर भगवान॥१०॥

स्वस्थ होइ प्रभु श्री विश्वम्भर। कंधे से उतरे पृथ्वी पर॥
झोली मँह भिक्षा तेहि दीन्हा। ह्वै कृतार्थ सो प्रभु कँह चीन्हा॥
प्रेम मगन सो तब चलि गयऊ। हरि हरि सब लोगन मिलि कहेऊ॥
कृष्ण भक्ति कर होत प्रकाशा। भक्त कहत जय सहित हुलासा॥
भक्त सहित प्रभु कर नव लीला। बाँटत प्रेम भक्ति सुखशीला॥
गौर कहेउ, "भाई, सुनु बाता। रात्रि वृथा बीतत सुनु ताता॥
आज सबहि मिलि मंत्र दृढ़ावहु। हरि कीर्तन करि रात बितावहु॥
सब लोगन मिलि कीर्तन करिहैं। प्रेम नदी महँ सब तरि जैहैं॥
सब उद्धार होब सुनि नामा। कृष्ण नाम सब गुण कर धामा॥
परहित धन अरु प्राण तुम्हारा। जगहित कीर्तन करहु विचारा"॥

गौर वचन सुनि कै सबहि, भयो अधिक उल्लास।
हरे कृष्ण कहि लोग सब, कीर्तन करत प्रकास॥ ११॥

आरंभेउ प्रभु कीर्तन तबहीं। श्री निवास मंदिर मँह निशिहीं॥
कबहूँ शेखर भवनहु करहीं। संग निताइ गदाधर रहहीं॥
विद्यानिधि मुरारि श्रीवासा। श्री अद्वैत, विजय, हरिदासा॥
श्री हरिराय, नँदन, वनमाली। गंगादास राम सुखशाली॥
जगदानन्द, नरायन, वासू। बुद्धिमंत उर अधिक हुलासू॥
काशीश्वर गरुड़ाई, गोविन्दा। गोपीनाथ अरु ब्रह्मानन्दा॥
श्री जगदीश सदाशिव श्रीधर। मान, गर्भ अरु श्री वक्रेश्वर॥
शुक्लाम्बर पुरुषोत्तम आदी। गौर भक्त परमारथवादी॥
बहु चैतन्य भक्त जग अहहीं। गौर संग सब कीर्तन करहीं॥
गौर पारषद केवल रहहीं। अन्य कोउ तँह जाइ न सकहीं॥

प्रभु हुँकार शब्द अति, कीर्तन ध्वनी अपार।
व्यापि रह्यो ब्रह्माण्ड मँह, सुनत होत सबपार॥ १२॥

पाषंडी सुनि सब अति जरहीं। अटपट वचन सकल मिलि कहहीं॥
रात्री माँझ सब मदिरा आनहिं। ताहि पान करि मिलि सब गावहिं॥
मधुमति सिद्धि सकल यह जानहिं। रात्री मँह कन्या ये आनहिं॥
रात्री महँ कोउ सोइ न सकई। बोल बोल केवल सब कहई॥

यहि विधि कहि पापंडो मरहीं। कीर्तन मगन गौर नहिं सुनहीं॥
कीर्तन महँ प्रभु सुधि नहिं रहई। गिरहिं भूमि पर छटपट करई॥
बड़े बेग प्रभु भुईं पर गिरहीं। लखि पछाड़ सब ही मन डरहीं॥
अति कोमल शरीर दुखदेखी। शची मातु उर कष्ट विशेखी॥
गोविन्द कहि मूँदत दोउ लोचन। सुमिरि कृष्ण कह, कर दुख मोचन॥
वैष्णव आवेशहिं प्रभु लोटत। स्नेह बशहि माता दुख पावत॥

माता रोकि सकै नहीं, प्रभु पछाड़ जब खात।
गोविन्द सो विनती करत, सुनहु हमारी बात॥ १४॥

कृष्ण कृपा करि देहु यहै वर। गौर गिरे प्रभु जब पृथ्वी पर॥
हौं जानौं नहिं कछु सोइ बाता। एती कृपा करहु जगत्राता॥
यद्यपि सुत कहँ दुःख न होई। परमानन्द मगन सो रहई॥
तदपि मोहि कहँ सो नहिं भावै। जानौं नहिं हम सो मन आवै॥
माता के मन की प्रभु जानो। तेहि की इच्छा प्रभु सन्मानो॥
जब लौं हरिकीर्तन प्रभु करहीं। माता को सुधि नैकु न रहहीं॥
आनन्द नृत्य चलत सबकाला। अनुचर संग नृत्यत गोपाला॥
रातदिना कीर्तन शुभ होई। कोउ दिन निज गृह कीर्तन करई॥
भक्तन प्रभु गृह कीर्तन करहीं। मध्य गौर हरि अति सुख लहहीं॥
ईश्वर भाव कबहुं परकाशहिं। रोअत कबहुँ कहत हम दासहिं॥

चित्त देइ अब सुनहु सब, प्रभु आवेश चरित्र।
जेहि सम नहिं ब्रह्माण्ड महँ, सुनतहि होत पवित्र॥ १५॥

जेहि विधि प्रभू नृत्य तहँ करहीं। सोइ भाव सब कीर्तन करहीं॥
श्री हरिवासर कृत्य विधाना। प्रारम्भेउ कीर्तन भगवाना॥
श्री वासांगन कीर्तन करहीं। शुभारम्भ कीन्हेउ प्रभु तहहीं॥
कीर्तन ध्वनि गोविन्द गोपाला। उठेउ घोर रव परम विशाला॥
उषा काल सों प्रभु विश्वम्भर। नृत्य करत सब संग सुहृदवर॥
एक यूथ श्री वासहिं गावत। श्री मुकुन्द एक यूथहिं निरतत॥
श्री गोविन्द एक यूथहिं रहँहीं। यूथ यूथ मिलि कीर्तन करहीं॥
पकरि निताई प्रभु तहँ नृत्यहि। श्री अद्वैत चरण रज पावहिं॥
गुप्त रीति सों रज सो लेई। प्रगट चरण रज प्रभु नहिं देई॥
सजल नयन सब भक्त विराजहिं। गौर निरखि विह्वल होइ गावहिं॥

प्रभु कीर्तन वर्णन करहुँ, चालिस पद महँ सोय।
सुनहु ध्यान सों भक्त जन, प्रेम मगन मन होय॥ १६॥

भाट्यारी राग

चहुँ दिशि हरिध्वनि गौर नाचे रंगे।
विह्वल होइ परिषद सब संगे॥
बोलत हरे हरे॥ ध्रु०॥

रोअत प्रभु जब घंटन रोअत। लोटत भुइँ मँह केश न बाँधत।
प्रभु क्रंदन आरति अति भारी। देखत जन सुधि देत बिसारी॥ १॥
जबहि हँसत तब हँसतहि रहई। अट्टहास करि बहु बिधि हँसई।
दास्य भाव महँ आपुहिं भूलहिं। जय जय केवल बचन उचारहिं॥ २॥
हरि हरि कहि ऊँचे स्वर बोलहिं। ब्रह्माण्डहिं मानहुँ प्रभु भेदहिं।
कबहुँ विशाल रूप प्रभु धरहीं। अनुचर कोउ प्रभु धरि नहिं सकहीं॥ ३॥
कबहुँ फूल सम कोमल होहीं। काँधे धरि घूमत सब जनही।
सब वैष्णव प्रभु काँधे लेई। आँगन महँ नाचहिं सब कोई॥ ४॥
आनँद सों जब मूर्छित होहीं। कर्ण निकट सब हरि हरि कहहीं।
महा कंप सब अँग मँह होवै। शीत सों शिशु जिमि दाँत बजावै॥ ५॥
छिन छिन स्वेद होत सब अंगहिं। गंगा मनहुँ विराज शरीरहिं।
तपत कबहुँ अँग अनल समानहि। चंदन सूख जात तनु तुरतहि॥ ६॥
महाश्वास अद्भुत छिन छाँड़हि। सन्मुख सो सबहीं प्रभु देखहिं।
चरन धरन हित कबहुँ क धावहिं। भक्त सकल इत उत तब भागहिं॥ ७॥
श्री निताइ अँग पीठ लगाई। बैठे भक्तन चरन दिखाई।
प्रभू हँसत लखि भक्तन बूझेउ। चरन धूलि लेइ नव निधि पायेउ॥ ८॥
श्री अद्वैत कहत धरि पायेउ। आजु छंद सब दूरि बहायेउ॥
आनँद सों प्रभु भुईं पर लोटहिं। कृष्ण चरित सब भक्तन गावहिं॥९॥
जब उद्दंड भाव सों नाचहिं। पृथ्वी काँपत सब भय पावहिं॥
मधुर नृत्य कबहूँ प्रभु करहीं। नंदनँदन नटवर लखि परहीं॥१०॥
कबहुँ सिंह सम गर्जन करहीं। कान फटै सब हरि हरि कहहीं॥
कबहूँ पृथ्वी ऊपर उठहीं। कोउ देखत कोउ देखि न सकहीं॥११॥
भावावेशहिं जेहि प्रभु देखत। सजल नयन लखि प्रभु सुख पावत॥
कृष्णावेशहिं चञ्चल होई। मधुर भाव नाचत थेई थेई॥१२॥
जासु चरन आवेशहिं धरहीं। क्षण मँह तेहि माथे पर चढ़हीं॥
गला पकरि जेहि कँह प्रभु रोवहिं। क्षण महँ तेहि कंधे चढ़ि नाचहिं॥१३॥
बाल भाव मँह चञ्चल होई। मुख सों वाद्य बजावत सोई॥
पद नचाइ खिल खिल प्रभु हँसहीं। घुटरुन बाल भाव सों चलहीं॥१४॥
कबहुँ त्रिभंग सुन्दर कर भावा। प्रहर एक प्रभु रहि सुख पावा॥
मुरली भाव देखावत कर सों। मुरलीधर आए जनु ब्रज सों॥१५॥
दास्य भाव महँ क्रंदन करहीं। सेवा करन सबहिं कर चहहीं॥
कबहुँ चक्र सम फिरहिं भूमिपर। प्रभू चरन लागत निज शिर पर॥१६॥
अति अद्भुत प्रभु कर सब भावा। अपने हि नाम आप सुख पावा॥
हुंकारहिं जब सब अँग हिलहीं। स्थिर होइ सकहिं न पृथ्वी पड़हीं॥१७॥
गौर अंग छिन छिन रँग बदलत। गौर नयन दुइ गुन होइ दीखत॥
दिव्य सकल वैष्णव आवेशहिं। कहन योग्य नहिं सो प्रभु भावहिं॥१८॥

प्रभु कहि जिन वैष्णव आदरहीं। हमरो दास आज तेहि कहहीं ॥
जिनके चरन धरत प्रभु पूर्वहिं। आजु चरन तिनके शिर अर्पहिं ॥१९॥
प्रभु आनन्द देखि सब भक्तहिं। आनन्द मगन सकल मिलि भेंटहिं ॥
चन्दन माला सब अँग सोहै। प्रेम मगन गावत मन मोहै ॥२०॥
ताल मृदंग शंख सब बाजत। संकीर्तन ध्वनि मिलि भल लागत ॥
सब ब्रह्माण्ड पूरि ध्वनि रहेऊ। सकल अमंगल नाशत भयऊ ॥२१॥
का बड़ि बात प्रभू की अहही। सेवक नृत्य सकल अघ दहही।
अपनेहि नाम लेइ प्रभु नाचहिं। तेहि को फल कहु किमि बुध बरनहिं ॥२२॥
मंगल कीर्तन ध्वनि चहुँ ओरा। मध्य गौर नृत्यत घनघोरा।
जेहि कर नाम जपत शिव रहहीं। आजु सोइ प्रभु नाचत अहहीं ॥२३॥
वाल्मीक जेहि जपि सिधि पाई। अजामील कर यश सब गाई।
सुमिरत जिनहिं जात भव पारहिं। सोइ प्रभु देखहु कलियुग नाचहिं ॥२४॥
शुक नारद जेहि जपि जग भ्रमहीं। सहस बदन जेहिकर यश कहहीं।
नाम जपत जेहिकर दुख भागहिं। सोइ प्रभु नृत्य करत सब निरखहिं ॥२५॥
पापी बड़ तब जनम न भयऊ। अस उत्सव नयनन नहिं देखेउ।
तेहि ते शुक कलिकर यश गाई। श्री भागवतहिं कह्यो हर्षाई ॥२६।
निज आनन्द मगन विश्वम्भर। चरन ताल लागत अति सुन्दर।
माला गल महँ थिर नहिं रहई। पुष्प सकल भक्तन अँग परई ॥२७॥
गरुड़ पीठकर सुख कहँ गयऊ। शंख चक्र आदिक सब त्यागेउ।
शेष पीठ प्रभु सब तजि दयऊ। दास्यभाव रोअत महि लोटेउ ॥२८॥
श्री वैकुण्ठ भवन सुख त्यागेउ। दास्य सुखहिं आगे सब भूलेउ।
लक्ष्मीहूँ कहँ प्रभु बिसरायेउ। भुज उठाइ बिरही सम नाचेउ ॥२९॥
शंकर नारद जेहिकर दासा। प्रभु यश गावत सब तजि आसा।
सोइ प्रभु दाँतन तृण धरि आपुहिं। दास्य योग नृत्यत सुख पावहिं ॥३०॥
ऐसो दास्य योग जो तजई। अमृत तजि विष कहँ सो गहई।
सोइ भागवत पढ़त किमि जाई। भक्ति जेहि के उर नहिं भाई ॥३१॥
शास्त्र मर्म जानत नहिं बकहीं। गर्दभ सम बोझा लै मरहीं।
शास्त्र पढ़हि पै अर्थ न समुझहिं। अधम सभा सब उलटि बखानहिं ॥३२॥
वेद भागवत दास्य बखानहिं। अजभव आदि दास्य कहँ मानहिं।
श्री चैतन्य वचन नहिं मानहिं। सो चैतन्य नहीं हम समुझहिं ॥३३॥
दास्य भाव नाचत प्रभु गोरा। कीर्तन ध्वनि महँ सबहिं बिभोरा।
सुनत सुनत प्रभु मूर्छित भयऊ। श्री अद्वैत लेइ तृण आयेउ ॥३४॥
प्रभु ऊपर तृण द्वैत उतारा। तृण निज शिर धरि कर हुँकारा।
श्री अद्वैत भक्ति सब देखहिं। श्री निताइ लखि सो अति हर्षहिं ॥३५॥
नृत्य करत जग जीवन साईं। प्रभु आवेश अन्त नहिं भाई।
जो नहिं लिख्यो भागवत माहीं। सोउ भाव सब प्रभु प्रगटाहीं ॥३६॥

क्षन छन होत अंग सब स्तम्भित। हिल न सकत अँग लखि सब चकित।
सोइ अंग छिन महँ अस होई। अस्थि मात्र नहिं कोमल सोई ॥३७॥
कबहुँ अंग दुइ तिन गुन बढ़ई। कबहुँ छोट अति सो लखि परई।
मतवारे सम कबहूँ डोलहिं। हँस कर झूमहिं हँसि बतरावहिं ॥३८॥
एक एक वैष्णव कहँ देखहिं। पूर्व नाम लेइ सबहि पुकारहिं।
हलधर शिव शुक नारद आदी। अज उद्धव सब भक्त अनादी ॥३९॥
यहि विधि देखि सबहि सन बोलहिं। जेहि कर जो अवतार सो भाषहिं।
सुन्दर नृत्य वेश अति सुन्दर। आनँद सो निरखत सब अनुचर ॥४०॥
गौर हे परम दयाल।
धन्य दिति धन्य अवतार धन्य कलिकाल ॥ध्रु०॥

प्रथमहिं घर भीतर जे आवहिं। भक्त सकल देखहिं सुख पावहिं॥
अन्य कोउ तहँ जान न पावहिं। द्वार बन्द प्रभु आज्ञा पालहिं॥
पुरवासी प्रवेश नहिं पावहिं। कीर्तन सुनि सब जे जन आवहिं॥
भीतर जे जन जान न पावहिं। ठाड़ होइ सब कोउ पुकारहिं॥
कीर्तन देखब खोलहु द्वारा। लोक सकल मिलि करहिं पुकारा॥
कीर्तन मगन सकल जन अहहीं। तन सुधि नहिं कोउ केहि विधि सुनहीं॥
पाषंडी सब अटपट बोलहिं। "भिक्षुक ए सब मिलिकै नाचहिं॥
पहिचानब सब भीतर जाई। यहि ते द्वार न खोलत भाई"॥
कोउ कह सत्य कहेउ तुम भाई। आठ पहर केहि विधि कोउ गाई॥
कोउ कहत "सब मदिरा आनहिं। छिपि कै ताहि करत सब पानहिं॥

श्री निमाइ अति भल रहे, सबहो मानत ताहि।
प्रभु काहे ऐसो कियो, बूझत कछु हम नाहिं ॥१७॥

कहत कोउ पूरब संस्कारा। संग दोष कोउ कहत विचारा॥
पिता नहीं अरु वायु विकारा। संग दोष बिगर्‍यो घर द्वारा॥"
छाँड़ेउ सब अध्ययन कहत कोउ। सकल शास्त्र पण्डित सब भूलेउ॥
"एक मास पुस्तक नहिं देखहिं। अव्याकरण ताहि सब भाषहिं॥"
कोउ कहत "हम सबही बूझेउ। कीर्तन कर कारन सब जानेउ॥
रात्री महँ सब मंतर बोलहिं। कन्या पाँच तहाँ सो आनहिं॥
बहुत द्रव्य आवत तिन संगा। भोजन पान करहिं बहुरंगा॥
भिन्न लोग किमि तहाँ बोलैहैं। आनँद सकल नष्ट ह्वै जैहैं॥
यहि ते द्वार बंद सोइ राखत"। राजहिं खबर देव कोउ भाषत॥
हाथ बाँधि सब सो लै जैहै। बिनु आज्ञा कीर्तन किमि करिहै॥

परिहै घोर अकाल अब, दुख पाउब सब कोइ।
इन्द्र वृष्टि नहिं करहिंगे, धान कहहु किमि होइ ॥१८॥

श्री बासहिं कहँ कल हम धरिहैं। श्री अद्वैतहिं सन हम कहिहैं॥
श्री निताइ अवधूतहिं देखहु। आइ कहाँ सो यहाँ बिराजेहु॥

श्री वासहि गृह रहि सब करई।" अस कहिकै डरपावहिं सबई ॥
आनँद मगन भक्त नहि सुनहीं। प्रेम भाव सब कीर्तन करहीं ॥
ब्राह्मण धर्म नृत्य नहिं भाई। पढ़िकै उलटी चाल चलाई ॥
इनकर मुख देखत बड़ पापा। कोउ कहत मन अति परितापा ॥
"इनसे बोलत बहु दुख पावै। कीर्तन लखि सब वश ह्वै जावै ॥
श्री निमाइ परितच्छहिं देखहु। बुद्धिमान अति सो सब जानहु ॥
इनके सँग सों मन फिर गयऊ।" दूसर सुनिकै पुनि अस कहेऊ ॥
आत्मा पहिचाने बिनु सुनहू। तिनहि पुकारे का तुम लहहू ॥

हृदय विराजत ब्रह्म है, तेहि कहँ बूझत नाहिं।
घर में धन ढूँढत वनहिं, कहा कहौं हम ताहि ॥१६॥

पर चर्चा काहे सब करहू। चलहु घरहिं कोऊ अस कहेऊ ॥
"कीर्तन दर्शन नहिं करि पायेउ। निज कृत कर्म दोष कोउ कहेउ ॥
ए सब हैं सुकृती जन भाई। मन्द कहत मोहि नाहिं सोहाई ॥
पाषंडी मिलि सब तेहि कहई। "सोइ दल कर यह मानुष अहई ॥
कीर्तन नहिं देखन सों कहेउ। कहा मन्द हम तोहि न बूझेउ ॥
करत कोलाहल मिलि सब लोगा। कौन यज्ञ जप तप अरु योगा ॥
जाहि न लखि हम सब पछिताहीं। पागल सम सब मिलि कै खाहीं ॥
दूध दही सब वस्तु मिलाई। इनकर जाति नाश ह्वै जाई ॥
सब कर धर्म करत हैं नासा। देखि लोग सब कर परिहासा ॥"
अस कहि सब निज-निज गृह गयऊ। अन्य लोग पुनि तहँ सो आयउ ॥

पाषंडो जब दुइ मिलहिं, कहहिं अनर्गल बात।
जाइ बोलावहिं और कहँ, करहिं आपनो घात ॥२०॥

कोउ कहत देखहु जनि इनहीं। देखत ही चलि जैहौ तहँही ॥
श्री निमाइ यहि बिधि तहँ गयऊ। तिनही सम पागल सो भयऊ ॥
करहिं कोलाहल सब गृह माहीं। दुर्गोत्सव सम परत लखाहीं ॥
"हई हई हा हा" केवल सुनहीं। महाअशुभ हम सब मन गुनहीं ॥
वड़ बड़ पण्डित नदिया रहहीं। ए पाषंडी कैसे बसहीं ॥
नदिया पुरसों कल श्रीवासहिं। मारि भगाउब कर विश्वासहिं ॥
तिनकर घर उजारि सुनु भाई। गंगा महँ बोरब बरियाई ॥
ग्राम कुशल यहि महँ सुनु भाई। नाहि तो यवन धरब सब आई ॥"
यहि विधि पाषंडी सब कहहीं। तदपि धन्य ये सब जन अहहीं ॥
प्रभु सँग जन्म भयउ एक ग्रामहिं। देखेउ सुनेउ सकल निज नयनहिं ॥

गौरभक्त अति मगन सब, कीर्तन करत रसाल।
पाषंडिन के वचन कहँ, सुनहि न दीनदयाल ॥ २१ ॥

"कृष्ण मुरारि मुकुँद वनमाली"। कहहिं निरन्तर सब दै ताली ॥
श्री विश्वम्भर कीर्तन करही। थकत नहीं सब प्रभु सँग रहहीं ॥

शुद्ध सत्व सब चिन्मय रूपा। भक्त सकल आनन्द स्वरूपा ॥
क्षण महँ एक वर्ष चलि गयऊ। भजनानन्द मगन नहिं जानेऊ ॥
महारास कृतयुग प्रभु कीन्हेऊ। गोपिन एक क्षणहिं तेहि जानेऊ ॥
अति अचिन्त्य श्री कृष्ण प्रकाशा। जानत भक्त कटत यम फाँसा ॥
यहि विधि कीर्तन रत विश्वम्भर। रात्रि शेष महँ गौर विप्रवर ॥
शालिग्राम शिला उर लाई। बैठे प्रभु सिंहासन जाई ॥
सिंहासन चरमर सब करई। श्री निताइ तुरतहिं तेहिं स्पर्शइ ॥
श्री अनन्त सिंहासन माहीं। कीन्ह निवास तहाँ हर्षाही ॥

टूट्यो नहिं सो दृढ़ भयो, बैठे प्रभु सुखधाम।
कीर्तन शेष भयउ तब, बोले प्रभु गुण ग्राम ॥ २२ ॥

"हमहिं कृष्ण कलियुग महँ सुनहू। नारायण हमहीं मन गुनहू ॥
देवकीनन्दन हम भगवाना। हम ब्रह्माण्डनाथ जग जाना ॥
जो कछु कहहू हम सब सोई। तुम सब दास हमारे अहई ॥
मम अवतार तुमहिं लगि भाई। तुमहिं खियावहु सोइ हम खाई ॥
मोहिं उपहार सकल तुम देऊ। "सब तुम्हार" कहि के सब दीन्हेउ ॥
प्रभु कह्यो हम सबही पायो। "बड़ मंगल" अद्वैत हि भाख्यो ॥
हाथहि हाथ भक्त सब देहीं। आनँद सों प्रभु भोजन करहीं ॥
दही दूध अरु माखन खाई। लावहु और कहहि हर्षाई ॥
बहु मिष्टान्न आदि सब देई। नारिकेल जल फल प्रभु लेई ॥
"आनहु और" कहत सब खाई। भक्तन मन आनँद अधिकाई ॥

क्षन मँह खायो गौर प्रभु, दुइशत जन आहार।
और देहु माँगत बहुरि, प्रभु निज हाथ पसार ॥२३॥

भय वश भक्त प्रभू कहँ सुमिरहिं। हाथ जोड़ि विनती बहु भाषहिं ॥
महिमा तव प्रभु हम का जानहिं। सब ब्रह्माण्ड उदर जेहि राजहिं ॥
यह थोरो उपहार कहा है। प्रभू कह्यो थोरो नहिं यह है ॥
भक्तन कर उपहार अपारा। देहु और तुम परम उदारा ॥
केवल पान अहै सुनु साईं। देहु सोइ प्रभु कह सुख पाई ॥
प्रभू वचन सुनि अति सुखमाना। सबकर भय क्षन माँह नसाना ॥
देहिं कपूर पान सब कोऊ। हर्षित होइ लेत प्रभु सोउ ॥
पुनि गम्भीर होइ प्रभु हँसहीं। भक्त सकल लखि चुप ह्वै रहहीं ॥
चक्षु उघारि करहि हुंकारा। नाड़ा नाड़ा कह बहु वारा ॥
बड़े भाव भक्तन कहँ देखहिं। भय वश सन्मुख नहिं कोउ आवहिं ॥

श्री निताइ श्री गौर सिर, छत्र धर्‌यो सब जान।
सन्मुख होइ अस्तुति करत, श्री अद्वैत सुजान ॥२४॥

हाथ जोरि सन्मुख सब जाई। करत चरण वन्दन मन लाई ॥
जहाँ रहै तहई सो रहई। निश्चय गौर दरश सो लहई ॥

सुख पावै प्रभु वैभव सुनई। बिनु आज्ञा कोउ हिल नहिं सकई ॥
वर माँगहु अद्वैतहिं कहेऊ। तवहित यह अवतार सोहायेउ ॥
यहि विधि सब भक्तन सन कहहीं। "माँगु माँगु" कहि प्रभु सुख लहहीं ॥
प्रभु एहि विधि ऐश्वर्य प्रकाशहिं। निरखि भक्त आनँद बहु पावहिं ॥
गौर चरित कोउ बूझ न सकई। प्रभु ऐश्वर्य दरश सब देई ॥
तुरतहि मूर्छागत प्रभु होई। स्वस्थ होइ पुनि क्रन्दन करई ॥
दास्य भाव परकाशहिं तबहीं। गला पकरि क्रंदन बहु करहीं ॥
"भाई बाँधव" सब कहँ कहहीं। प्रभु माया कोउ समुझि न सकहीं ॥

भक्त बिना बूझत नहीं, प्रभु कर तत्व अपार।
होइ प्रसन्न लखि प्रभु चरित, बिनवहिं बारंबार ॥२५॥

सबहि कहत नारायन अहहीं। जगहित प्रभु आए लखि परहीं ॥
सिंहासन पर रहि कछु काला। मूर्छित भए श्री गौर कृपाला ॥
धातु मात्र नहिं पृथ्वी गिरयेउ। भक्त देखि प्रभु रोअन लागेउ ॥
सकल भक्त मिलि करहिं विचारा। हम कहँ छाँड़ेउ गौर किशोरा ॥
प्रभु यदि निष्ठुर हमसों भयऊ। प्रान तजब हम सब मिलि सुनऊ ॥
प्रभु सर्वज्ञ भक्त मन जानेउ। स्वस्थ होइ हरि हरि कह गर्जेउ ॥
आनँद सों सब नाचन लागे। प्रेमानन्द गौर रस पागे ॥
यहि विधि नदिया कीर्तन होई। प्रेम रसहि विह्वल सब कोई ॥
यह सब पुण्य कथा जे सुनहीं। तासु हृदय निश्चय प्रभु बसहीं ॥
श्री चैतन्य निताई मानहु। वृन्दावन प्रभु सुयश बखानहु ॥

वृजभूषण भाषा महँ, कीन्हेउ अर्थ विचार।
भक्त चरणरज शीश धरि, बिनवौं बारंबार ॥२६॥

इति श्रीचैतन्य भागवते मध्यखण्डे श्री चैतन्यैश्वर्य-प्रकाशादि वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥

अष्टम अध्याय

(गौरनिधि कपट-संन्यासी वेशधारी।
अखिल भुवन अधिकारी ॥ध्रु०॥)

जय जगन्नाथ शचीनन्दन चैतन्य।
जय श्री गौर कर संकीर्तन धन्य ॥
जय नित्यानन्द गदाधर के जीवन।
जय जय अद्वैत श्रीवास प्राणधन ॥
जय श्री जगदानन्द हरिदास प्रान।
जय पुण्डरीक वक्रेश्वर प्रिय जान ॥

जय वासुदेव प्रियतम जय जय।
सब पर प्रभु करुणा विस्तारय॥
भक्त गोष्ठि सहित गौरांग जय जय।
जय गौर पारषद जय जय जय॥

मध्य खंड की कथा सोहाई। सुनहु एक मन है सब भाई॥
गौरचन्द्र लीला मन गुनहू। महाप्रकाश कथा अब सुनहू॥
सब वैष्णव कर आशा पूरेउ। सात प्रहरिया भाव कहायेउ॥
सब अवतार को दर्शन दीन्हा। भोजन लीला प्रभु तब कीन्हा॥
भक्ति दान सब काहू पायेहु। प्रभु दर्शन सबके मन भायेहु॥
महाराज अभिषेक सोहावा। कीन्हेउ भक्त सकल मन भावा॥
तबहि एकदिन गौर उदारा। श्री निवास गृह मँह पगुधारा॥
श्री निताइ प्रभु संग सोहाए। क्रमशः भक्त सकल चलि आए॥
आवेशित चित प्रभु श्री गोरा। बड़े भाव देखत चहुँ ओरा॥
प्रभु इङ्गित बूझेउ सब भक्तन। कीर्तन करन लगे मिलि सब जन॥

दास्यभाव मँह और दिन, प्रभु नाचत हर्षाय।
कछु ऐश्वर्य प्रकाश करि, स्वस्थ पुनः होइ जाय॥१॥

और दिना कछु भाव प्रकाशहिं। अनजानत सिंहासन बैठहिं॥
आजु तुरत सिंहासन जाई। बैठे प्रभु तँह अति हर्षाई॥
सात प्रहर कर भाव अपारा। सब माया छाँड़यो यहि बारा॥
सात पहर प्रभु एकहि भावा। बैठि तहाँ निज रूप दिखावा॥
हाथ जोड़ि ठाढ़े सब भक्तन। प्रभुहिं बिलोकत सबहिं मगन मन॥
अति संतोष प्रभुहिं सब निरखहिं। सब वैकुण्ठ विलासहिं समुझहिं॥
प्रभु वैकुण्ठ नाथ इव राजहिं। कछु माया नाहीं परकाशहिं॥
प्रभु आज्ञा दीन्हेउ सब काहू। सब अभिषेक गीत मिलि पढ़हू॥
सुनि हर्षित होइ गावन लागे। माथ डोलावत प्रभु सुख पागे॥
कृपादृष्टि प्रभु निरखत सबहीं। प्रभु इङ्गित बूझेहु सब जनहीं॥

प्रभु अभिषेक करन हित, चाह्यो सब मन माँहिं।
गंगाजल आन्यो तुरत, छानि धर्यो एक ठाहिं॥ २॥

गंध चतुः सम *तेहि मँह डाल्यो। श्री कर्पूर आदि तेहि मेल्यो॥
जय जय करि कै सबहिं सँजोवहिं। जय ध्वनि करि सब बाद्य बजावहिं॥
श्री अभिषेक मंत्र सब पढ़हीं। श्री निताइ प्रभु शिर जल देहीं॥
श्री अद्वैत आदि सब लोगहिं। पुरुष सूक्त पढ़ि स्नान करावहिं॥
महामंत्रवित सब प्रभु भक्ता। गौर चरण सब अति अनुरक्ता॥
पढ़ि पढ़ि मंत्र सबहि जल डालहिं। श्री मुकुन्द आदिक सब गावहिं॥

---

* कस्तूरिकायां द्वौ भागौ चत्वारश्चन्दनस्यतु।
कुंकुमस्य त्रयश्चैकः शशिनः स्याच्चतुः समम्॥ (गरुड़ पुराण)
दो भाग कस्तूरी, चार भाग चन्दन, तीन भाग केसर और एक भाग कपूर एक साथ पीसकर मिलाने से चतुः सम गंध तैयार होता है। (श्री हरि भक्ति विलास ६।११५)

कोउ नाचहिं अरु कोऊ गावहिं। पतिव्रता सब जय जय बोलहिं ॥
प्रेम रूप सबही तब भयऊ। को मैं कहा बूझ नहिं परेऊ ॥
सिंहासन पर गौर विराजत। भृत्य सकल जल शिर पर डालत ॥
अष्टोत्तर शत घट सब कहहीं। शत शत घट कोउ अन्त न लहहीं ॥

मनुज रूप धरि देव सब, गुप्त रूप सों आइ।
प्रभु कहँ स्नान करावहीं, बहुत भाँति हर्षाइ ॥ ३ ॥

ध्यान माँहि जेहि चरण कमल पर। जल चढ़ाइ धनि होत सुकृत नर ॥
तासु निकट यम दूत न आवत। प्रत्यक्षहिं प्रभु कहुँ को पावत ॥
आज स्वयं सोइ प्रभु सब देखहिं। करत ग्रहण सब कर जल आपुहिं ॥
श्री निवास कर दास अरु दासी। प्रभुहित जल आनत सुख रासी ॥
स्नान करत प्रभु अति सुखमानी। भक्तन के सेवक बड़ जानी ॥
जल आनत "दुखी" एक बाला। प्रेम सहित जल लेत कृपाला ॥
तासु भक्ति लखि प्रभु अति हर्षेउ। "सुखी" नाम तेहि कर प्रभु राखेउ ॥
वेद मंत्र पढ़ि पढ़ि सब भक्तन। स्नान करावत अति हर्षित मन ॥
स्नान कराइ अंग सब पूछेउ। नूतन वस्त्र प्रभुहि पहिरायेउ ॥
चन्दन दिव्य अंग मँह दीन्हेउ। सिंहासन पर वस्त्र बिछायेउ ॥

सिंहासन पर तबहिं प्रभु, बैठे अति हर्षाय।
छत्र निताई शीश पर, धरयो तुरत तँह जाय ॥४॥

भाग्यवान कोउ, चमर डोलावै। कोउ पूजा सामग्री लावै ॥
चरन कमल पूजन सब लागे। पाद्य अर्घ्य देइ अति सुखपागे ॥
गंध पुष्प अरु धूप दीप सब। बहुत भोग राखेउ सन्मुख तब ॥
वस्त्र जनेऊ भूषण देईं। पूजा षोड़श विधि सब करईं ॥
तुलसी चंदन युत कर लेईं। गौर चरण अर्पत मन देईं ॥
श्री गोपाल दशाक्षर मंत्रहिं। पूजा करि अस्तुति बहु भाषहिं ॥
अद्वैतादि पारषद सबहीं। चरन धरयो मस्तक पर तिनहीं ॥
प्रेम नदी नयनन सों बहई। स्तुती सुनत प्रभु अति सुख लहई ॥
'सकल जगत के नाथ गोसाईं। दया करहु दीनन पर आईं ॥
आदि हेतु भक्तन के स्वामी। कीर्तन लंपट गौर नमामी ॥

कीर्तन हित अवतार यह, वेद धर्म प्रतिपाल।
भक्तन की रक्षा करहु, कलि को कियो निहाल ॥५॥

ब्रह्म स्वरूप जगत के कारन। गुणातीत प्रभु पतित उधारन ॥
सब को शरण देहु करि दाया। प्रभू विलक्षण है तव माया ।'
क्षीर सिंधु महँ विचरण करहू। भक्तन हित प्रभु भुईं अवतरहू ॥
आदि तत्व प्रभु अगम अपारा। शुद्ध सत्व प्रभु जग से न्यारा ॥
विप्र कुलहिं पावन प्रभु कीन्हेउ। वेद धर्म रक्षक तुम अहऊ ॥
पतित अजामिल पावन कारी। बालघातिनी प्रभु तुम तारी ॥

दोष लखहु नहिं कोउ कर कबहीं। भक्त सदा जय जय तब करहीं ॥"
सब काहू एहि विधि स्तुति करहीं। प्रभु सन्मुख भक्तन स्तुति सुनहीं ॥
पाइ दरस मन अतिहि उछाहू। ब्रह्मानन्द मगन सब काहू ॥
माया छाँड़ि प्रभू विश्वम्भर। चरन दीन्ह पूजत सब अनुचर ॥

श्री चरनन पर भक्त गण, गंध लगावत आनि।
तुलसी दल अरु कमल सों, पूजत कोउ सुखमानि ॥ ६ ॥

रत्न सुवर्ण रजत अरु भूषण। प्रेम सहित प्रभु कहँ कर अर्पण ॥
दिव्य वस्त्र कोउ आनि चढ़ावहिं। चरण वन्दि अतिसै सुख पावहिं ॥
बहु विधि पात्र आनि सब धरहीं। बहुत लोग प्रभु चरनन पड़हीं ॥
जेहि चरनन पूजन सब चहहीं। ब्रह्मा शिव अभिलाषा करहीं ॥
वैष्णव गृह कर दास अरु दासी। पूजहिं गौर चरन सुखरासी ॥
तिनके भाग्य कहाँ लगि वर्णउ। वैष्णव सेवा बड़ जग जानउ ॥
दूर्वा धान्य तुलसि सब लेई। अभय होइ श्री चरनन देई ॥
बहु विधि फल सब चरन चढ़ावहिं। गंध पुष्प चन्दन कोउ अर्पहिं ॥
कोऊ षोड़श विधि सों पूजहिं। कोउ षडंग विधि सों प्रभु ध्यावहिं ॥
कस्तूरी केसर अरु रोली। श्री कर्पूर आदि सब मेली ॥

प्रभू चरन अर्पत सोई, प्रेम मगन मन होइ।
बहुत पुष्प राजत तहाँ, कहा कहौं छवि सोइ ॥ ७ ॥

श्री वैकुण्ठनाथ तव भाषेहु। कछु नैवेद्य मोहिं अब अर्पहु ॥
हाथ पसारि कहेउ प्रभु सबहीं। जो जेहि भाँति देइ प्रभु खाहीं ॥
कदली फल कोउ प्रभु कहँ देई। देइ प्रभू कोउ मूँग बनाई ॥
दूध खीर माखन कोउ लावै। दही आदि कोउ भोग लगावै ॥
प्रभु कर पर सबहिं जन देहीं। महाप्रभू भोजन सब करहीं ॥
नगर नगर सब लोगन जाई। आनहिं उत्तम वस्तु बनाई ॥
नारिकेल महँ खाँड़ मिलाई। अर्पत प्रभुहिं प्रेम सो जाई ॥
बहु मिष्ठान्न लोग सब देहीं। प्रभू प्रेम सों भोजन करहीं ॥
कोऊ रितुफल आनि चढ़ावहिं। कोऊ गंगा जल प्रभु अर्पहिं ॥
प्रभु दर्शन कर हर्षित सबहीं। पुनः पुनः प्रभु कहँ सब देहीं ॥

शत शत जन अति हर्ष सों, देत जलहिं प्रभु आन।
योगेश्वर सम ताहि को, करत प्रेम सों पान ॥ ८ ॥

दही खीर अरु दूध अपारा। फल अरु मूल को बरणै पारा ॥
बहु मिष्टान्न प्रभू सब भँख्यो। बीड़ा पान हजारन दीन्ह्यो ॥
गौर अपूर्व शक्ति दरसायो। भक्त न जान्यो केहि विधि खायो ॥
प्रभू सनातन सों यह रीती। भक्त पदार्थ खात अति प्रीती ॥
जन्म कर्म भक्तन कर तबहीं। कहन लगे प्रभु तिनकर सबहीं ॥
तुरत स्मरण भक्तन सब करहीं। प्रेम मगन मन अति सुख लहहीं ॥

श्री वासहिं सों तब प्रभु पूछेउ। "कहहु स्मरन कछु है सो कहऊ ॥
सुनेउ भागवत तुम कोउ पाहीं। प्रेम रूप यह ग्रंथन माहीं ॥
हृदय द्रवेउ सुनि कै सोइ बानी। प्रेम मगन तनु दशा भुलानी ॥
रोअन लगेउ वेग सों तुरतहिं। गिरेउ भूमि पर मूर्छित तबहीं ॥

भक्ति योग बूझेउ नहीं, कहन लगे सब कोइ।
"यह काहे रोअत अहै, विघ्न करत है रोइ" ॥ ९ ॥

प्रेम विवश तुम कछु नहिं जानेउ। घर बाहर तोहि शिष्य निकालेउ ॥
देवानन्द विरोध न कीना। गुरू शिष्य सबही मतिहीना ॥
जबहिं तुमहि गृहु बाहर कीन्हेउ। दुखित होइ तुम निज गृह आयेउ ॥
व्यथित हृदय एकांतहि जाई। श्री भागवतहिं पढ़हु दुख पाई ॥
तोर दुःख लखि सहि नहिं सकेऊँ। श्री वैकुण्ठ सों तुरतहिं आयेउँ ॥
हृदय माँझ तब कीन्ह प्रवेशा। भक्ति पूर्ण तब भयेउ मुनीशा ॥
प्रेम योग हम तुम कहँ दयऊ। पाइ प्रेम तुम रोअन लागेउ ॥
नयन नीर भुइँ लोटहु जाई"। सुनि श्रीवास सकल सुधि आई ॥
विह्वल होइ लोटत भुइँ माँहीं। नयन नीर सुधि बुधि कछु नाहीं ॥
यहि विधि अद्वैतादिक सन सबहीं। पूरब कथा सबहि सन कहहीं ॥

आनन्द सागर महँ मगन, भक्तन कर समुदाय।
सुख सों श्री गौरांग प्रभु, ताम्बूलहिं प्रभु खाय ॥१०॥

बहु विधि भक्तन कीर्तन करहीं। "जय शचीनन्दन" सबही कहहीं ॥
जो कोउ भक्त आन नहिं पाए। भक्त भेजि प्रभु ताहि बोलाए ॥
कछु नैवेद्य देहु तुम हमहीं। ऐसे वचन ताहि सन कहहीं ॥
भक्त देइ सो प्रभु तब भक्षहिं। ताही सन प्रभु पुनि अस भाषहिं ॥
अमुक निशा हम तब गृह जाई। विप्र रूप ज्वर व्यथा नशाई ॥
सुमिरि सकल सो विह्वल होई। परत प्रभू चरणन महँ सोई ॥
गंगादास देखि प्रभु कहेउ। "करहु स्मरण जब भागत रहेउ ॥
रात्री महँ राजा भय पाई। सब परिवार सहित तुम जाई ॥
पार जान हित गंगहि आई। बैठि रह्यो नहिं नौका पाई ॥
रात्रि शेष लखि अति दुख पायउ। प्राण देन हित तुमहि विचारेउ ॥

मोरे सन्मुख यवन गण, भ्रष्ट करब परिवार।
गंगा महँ अब कूदिकै, प्राण देब यहि बार ॥११॥

नौका लै केवट बनि हमहीं। तब सन्मुख गंगा महँ भ्रमहीं ॥
अतिहि प्रेम सों तब तुम भाषेउ। "यहि विपत्ति सों मोंहि उबारउ ॥
जाति प्रान धन धर्म तुम्हारा। आवहु वेग करहु सब पारा ॥
एक रुपैया वस्त्रहु देहैं। प्रभू कृपा तुम पर बहु करिहैं" ॥
तब हम तुमहिं पार करि दीन्हा। पुर वैकुण्ठ गमन तब कीन्हा ॥
गंगादास सुनत सुख मानी। प्रभु लीला कर अन्त न जानी ॥

"गंगा पार जान हित लागो। सुमिरेहु मोहि सकल भय त्यागो ॥
पार करेहु तोहिं सुमिरन करहू" । गंगादास सुनत सुख लहेहू ॥
अति अघोर होइ मूर्छित भयहू । लोग सकल तेहि रक्षा करेहू ॥
यहि विधि सबहिं प्रेम सो कहहीं । श्री वैकुण्ठ अधीश्वर अहहीं ॥

सिंहासन पर राजहीं, उर पर चन्दन माल।
चँवर डोलावत कोउ जन, सिर पर तिलक विशाल ॥१२॥

केश सँवारत कोउ प्रिय आई। बीड़ा कोउ देत हर्षाई ॥
नाचत गावत मिलि सब कोऊ। यहि विधि सकल दिवस चलि गयऊ ॥
सन्ध्या निरखि भक्त मिलि सबहीं। धूप दीप लेइ पूजा करहीं ॥
घण्टा शंख मृदंग बजावहिं। लै करताल मजीरा नाचहिं ॥
आनँद मगन आरतो गावहिं। प्रभू प्रेम सो भक्तन निरखहिं ॥
बहु बिधि पुष्प चरन पर देहीं। "त्राहि प्रभू" कहि चरनन पड़हीं ॥
स्तुती करै कोउ जै जै कहई। चहुँदिशि आनन्द ध्वनि सुनि पड़ई ॥
रात्रि प्रवेश बहुत सुख भयऊ। पुर बैकुण्ठ समुझि सब कोऊ ॥
बहु ऐश्वर्य प्रकाशेहु तबहीं। हाथ जोड़ि सन्मुख सब रहहीं ॥
चरन भक्त मस्तक पर देहीं। प्रेम भाव सब वश कर लेहीं ॥

भक्तन कहँ वर देन हित, कृपा कीन्ह जन जान।
हाथ जोड़ि सब जन रहे, दीन बन्धु भगवान ॥१३॥

यही भाव महँ सबहिं बोलाई। कीन्ह कृपा भक्तन सुखदाई ॥
प्रभु कहेउ, "श्रीधर झट आनहु। आइ दरश करि सो सुख पावहु ॥
सदा भजन मम सो नित करई। दुःख बहुत भोगत सो अहई ॥
पुर बाहर मिलिहैं सो जानहु। नाम जपै "तेहि कहँ धरि आनहु ॥"
वैष्णव गण सब तुरतहि धाए। प्रभु आज्ञा तेहिं के गृह आए ॥
सुनहु चरित श्रीधर कर सबहीं। केला बेचि प्रान निज रखहीं ॥
घौंद एक केला कर लावै। काट काट करि कै तब देवै ॥
जो कछु बचै दिवस महँ ताहीं। आधो लै गंगा महँ जाई ॥
गंगा कहँ सो भोग लगावै। पुनि आधो निज कारज लावै ॥
यहि विधि प्राण की रक्षा करई। भक्त परिछा यहि विधि होई ॥

महा सत्यवादी सोई, धर्मराज सम जान।
मूल्य ठीक सोई कहै, कछु अन्तर नहि मान ॥१४॥

यहै बात जानत जन सोई। मूल्य देइ कै लेवहिं जोई ॥
यहि विधि नदिया महँ सो रहई। फल वाला जानत सब अहई ॥
पहिचानत तेहि कहँ नहिं कोई। नाम जपत निशि भर रह सोई ॥
चार प्रहर रात्री सो जागत। कृष्ण नाम जपि रात्रि बितावत ॥
ऊँचे स्वर सो "हरि हरि" कहई। पाखण्डी सो सहि नहिं सकई ॥
पाषंडी सब यहि बिधि कहई। "कान फटै कोउ सोइ न सकई ॥

श्रीधर मूर्ख भात नहिं खावै। मरै छुधा सों सबहि जगावै॥"
महामन्द मति सब यह कहई। श्रीधर निज कारज रत रहई॥
रात्रि काल हरि हरि कहि बोलहिं। प्रेम मगन ऊँचे स्वर गावहिं॥
दूरहिं तें भक्तन सो सुनेऊ। सोइ दिशा सब धावत भयऊ॥

श्रीधर निकट जाइ सब, बोले, "सुनिए मोहिं।
चलहु महाशय शीघ्र तुम, प्रभू बोलायो तोहिं॥१५॥

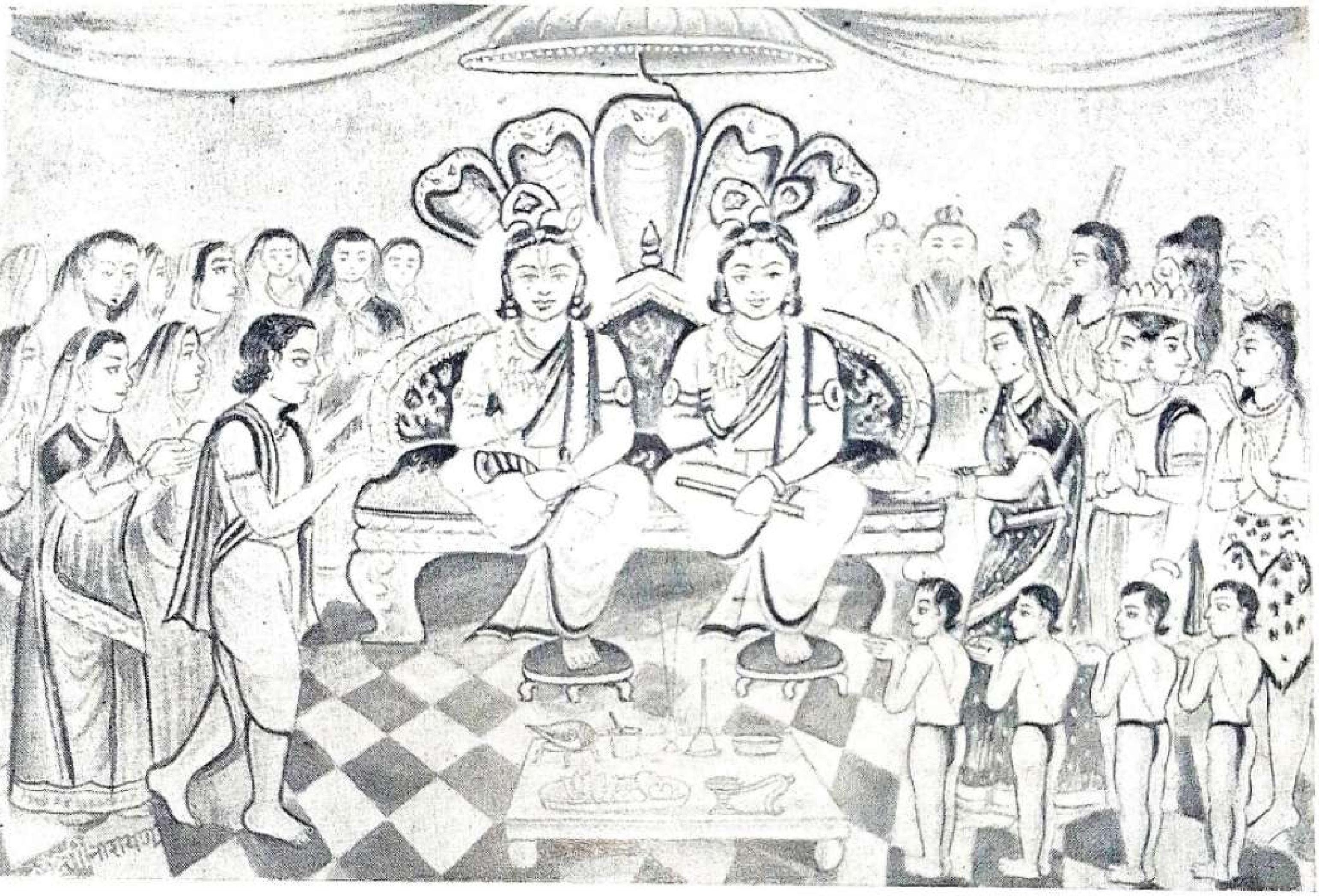
हम कृत कृत्य भए तोहिं देखी। तोहिं परसि फल लहेउ विशेखी"॥
प्रभू नाम सुनि श्रीधर तबहीं। प्रेम मगन विह्वल भे अतिहीं॥
मूर्छित होइ गिरयो पृथ्वी पर। तबहिं उठायो ताहि यत्नकर॥
प्रभु आगे सबही लै आये। श्रीधर निरखि प्रभू सुख पाये॥
"आवहु आवहु" प्रभु तब कहेऊ। "बहु आराधन तुम मम कीन्हेउ॥
हम सों प्रेम कियेहु बहु जनमा। सफल भयेहु तव सब कृत कर्मा॥
यहि जन्महिं सेवा बहु कीन्हेउ। साग तोर हम नित प्रति खायेउ॥
द्रव्य तोर अर्पित बहु खायेउ। भूलेउ कहा कलह जो कीन्हेउ॥
विद्याचर्चा जब प्रभु कीन्हा। चञ्चलता महँ बहु मन दीन्हा॥
श्रीधर गृह प्रभु सोई काला। केला हित तहँ जात कृपाला॥

मूल्य माँझ बहु कलह करि, आधो तेहि प्रभु देत।
एक मूल्य श्रीधर कहत, कम नाँहीं कछु लेत॥१६॥

श्रीधर उठि कै किचकिच करई। यहि विधि ठाकुर श्रीधर लड़ई॥
श्रीधर सों प्रभु कह अस जाई। "सुनहु तपस्वी श्रीधर भाई॥
धन बटोरि राखेउ हम जानत। साग हमारे हाथ सों छीनत॥
एते दिन लौं मोहिं न चीन्हेउ। को मैं, कहा ताहि नहिं जानेउ"॥
विप्र भक्त श्रीधर नहिं बोलत। प्रभु कर रूप देखि सो मोहत॥
मदन समान रूप अति सुन्दर। ऊर्ध तिलकहू परम मनोहर॥
बसन त्रिकच्छु बदन पर सोहै। घुँघराली अलकैं मन मोहै॥
चञ्चल चपल नयन रतनारे। शुभ्र जनेऊ सब सों न्यारे॥
श्री अनन्त जनु सूत्र रूप धरि। गौर अंग को रह्यो घेरि करि॥
पान खात प्रभु कहँ सो देखत। गौर रूप श्रीधर मन मोहत॥

बामन ठाकुर सुनहु मोहिं, श्रीधर कह्यो बुझाइ।
क्षमा करहु हम दीन अति, तुमरो दास कहाइ॥१७॥

प्रभू कह्यो "तुम चतुर सुजाना। बहुत द्रव्य तुम पहँ हम जाना"॥
"और दुकान अहैं प्रभु सुनहू। पैसा देइ तहाँ तुम लेहू॥
प्रभू कह्यो 'नित तुम सन लेहीं। हम जजमान छाँड़ि नहिं सकहीं॥
केला साग देहु तुम हमहीं। पैसा लेहु मोहिं सों तुमहीं'॥
मुग्ध होइ श्रीधर नहिं बोलै। अटपट वचन प्रभू तब कहै॥
"नित गंगा कहँ द्रव्य चढ़ावहु। अल्प मूल्य महँ मोहिं कछु देवहु॥



श्री गौरांग के महाप्रकाश का दर्शन

श्रीधर को दिव्य दर्शन

प्रभू कह्यो श्रीधर मोहि देखहु । अष्ट सिद्धि आपन तुम समुझहु ॥
महापुरुष श्रीधर तव देखेहु । श्याम वर्ण प्रभु कँह सो पायहु ॥
मोहन वंशी कर मँह सोहत । दहिने श्री वलराम विराजत ॥
ज्योतिर्मय सब रुप निहारे । स्तुती करत ब्रह्मा शिव घेरे ॥
शेष छत्र शिरपर धरे, देखेउ सो मतिमान ।
नारद शुक सनकादि सब, स्तुती करत गुणधाम ॥

पृष्ठ-१८१

जो गंगा तुम नित प्रति पूजहु। तासु पिता हम निश्चय जानहु" ॥
कान पकरि हरि श्रीधर कहई। चञ्चल समुझि साग प्रभु देई ॥
दिन प्रति कलह होइ यहि रीती। प्रभु अरु श्रीधर कर अति प्रीती ॥
चञ्चल समुझि प्रभू सन कहेऊ। हम हारे तुम सन द्विज सुनऊ ॥

पैसा बिनु हम देब तोहिं, केला मूल अरु पात।
कृपा करहु अब दीन पर, त्यागहु अटपट बात ॥१८॥

प्रभू कह्यो बड़ सुन्दर बाता। तुम परमारथ पथ के ज्ञाता ॥
श्रीधर साग जो नित प्रति देई। प्रभु सोइ साग सों भोजन करई ॥
भक्ति हीन कर कछु नहिं लेहीं। चाहे कोटि हजारन देहीं ॥
यहि कारन श्रीधर फल बेचहिं। प्रभु नदिया महँ इत उत विचरहिं ॥
लीला हित श्रीधर फल बेंचहिं। भक्त प्रभू कर चरित को समुझहिं ॥
बिना प्रभू के कहे को समुझै। प्रभू कहै तबही तौ बूझै ॥
प्रभू कह्यो, "श्रीधर मोहिं देखहु। अष्ट सिद्धि आरन तुम समुझहु ॥"
महापुरुष श्रीधर तब देखेहु। श्याम वर्ण प्रभु कहँ सो पायहु ॥
मोहन वंशी कर महँ सोहत। दहिने श्री बलराम विराजत ॥
ज्योतिर्मय सब रूप निहारे। स्तुती करत ब्रह्मा शिव देखे ॥

शेष छत्र शिर पर धरे, देखेउ सो मति मान।
नारद शुक सनकादि सब, स्तुती करत गुणधाम ॥१९॥

देवी सकल तहाँ अवलोकेउ। हाथ जोरि अस्तुति कर तेऊ ॥
देखत श्रीधर मूर्छित भयऊ। उलटि भूमि पर तुरतहि गिरेऊ ॥
"श्रीधर उठहु," प्रभू तब कहेऊ। प्रभू वचन सुनि उठिकै बैठेउ ॥
श्रीधर सों प्रभु तुरतहि कहेहू। "श्रीधर मोर स्तुती तुम करहू" ॥
श्रीधर कहेउ, "नाथ का कहहूँ। महामूढ़ हम स्तुति का करहूँ ॥
प्रभू कहेउ, "तव वचन प्रमाना। भक्त वचन महिमा जग जाना ॥
प्रभु आज्ञा सरस्वती भवानी। श्रीधर जिह्वा आइ समानी ॥
श्रीधर स्तुती करत कर जोरी। "स्तुती करौं का प्रभु हम तोरी ॥
जय जय महाप्रभू श्री विश्वम्भर। जय जय श्री गौर नदिया पुरन्दर ॥
जय अनन्त ब्रह्माण्ड के नाथा। रहहु सदा भक्तन के साथा ॥

शची गर्भ सों अवतरेउ, वेद न जानेउ तोहिं।
विप्रराज जै गौर प्रभु, उद्धारहु अब मोहिं ॥२०॥

नाना विधि युग धर्महिं पालहु। गुप्त रूप नदिया महँ घूमहु ॥
को जानै बिनु तुमहि जनाए। धर्म कर्म सब तुमहि सिखाए ॥
भक्ति ज्ञान अरु शास्त्र स्वरूपा। तुमहिं वेद अरु ध्यान के रूपा ॥
ऋद्धि सिद्धि तुम त्याग अरु भोगा। श्रद्धा दया मोह अरु योगा ॥
इन्द्र चन्द्र अग्नी जल सबही। सूर्य वायु धन बल सब तुमही ॥
भुक्ति मुक्ति अजभव सब तुमही। तुमरो ही यह सब जग अहही ॥

पूरब ही तुम हम सन कहेहू। "मोर चरन जल गंगा सुनहू" ॥
पापी मन हम सो नहिं मानेउ। तव श्रीचरन नाहिं पहिचानेउ ॥
गोकुल नगर धन्य तुम कीन्हेउ। कलियुग नदिया पावन भयऊ ॥
भक्ति लुकाइ फिरत तुम रहेऊ। नदिया महँ तुम ताहि लुटायेउ ॥

भक्ति प्रभाव सों भीष्म तोहिं, जीति सकेउ संग्राम।
मातु यशोदा बाँधेऊ, तुमहीं प्रभु सुख धाम ॥२१॥

भक्ति बलहिं सत्यभामहु तुमहीं। बेंच्यो है साक्षी सब जगहीं ॥
भक्ती वश काँधे पर धारेउ। गोपिन कहँ जे तोहिं आराध्यो ॥
जेहि इच्छा सों सब जग चलई। तेहिं काँधे श्रीदामहि चढ़ई ॥
भक्ति प्रभाव कहाँ लौं कहहीं। जेहि ते प्रभु हारत नित रहई ॥
भक्ति गुप्त अति किमि कोउ जानै। भक्ति प्रभाव सकल जग मानै ॥
तेहि तें भक्ति छिपावत रहेऊ। सो माया तव खण्डित भयऊ ॥
देखहु भक्ति सकल जग चाहत। तुम भक्तन रुचि नित ही राखत ॥
पूर्वहि कछुक भक्त सन हारेउ। अबकी सबहि तुमहिं धरि बाँधेउ" ॥
श्रीधर कर स्तुति सुनि सब हर्षैं। ताहि सराहि नयन जल वर्षै ॥
प्रभू कहेउ, "श्रीधर वर माँगहु। अष्ट सिद्धि सब तुम कहँ अर्पहु" ॥

श्रीधर कहेउ सुनहु प्रभु, बहुत नचायेहु मोहिं।
अब प्रभु तुम धीरज धरहु, हिरदय राखब तोहिं ॥२२॥

प्रभू कहेउ, "दरशन मम पायेहु। जो चाहहु सो हम सन माँगहु" ॥
"दीजै यह वर" श्रीधर कहेउ। ब्राह्मण रूप साग जो लीन्हेउ ॥
सोइ ब्राह्मण होवै मम नाथा। तेहि भजिकै हम होब सनाथा ॥
हम सों कलह जौन द्विज कीन्हा। हमरो प्रभु सोई हम चीन्हा ॥
जन्म जन्म हम सेवौं ताही। माँगौं यह वर हम प्रभु पाहीं ॥
उमगेउ प्रेम कहत यह बाता। ह्वै अधीर चितवत सुरत्राता ॥
नयन नीर उर आनन्द भारी। देखि चकित वैष्णव नरनारी ॥
हँसि कै तब विश्वम्भर कहेऊ। "महाराज पद हम तोहिं दयऊ" ॥
श्रीधर कहेउ, "कछू नहिं चाहौं। नाम आपु केवल रटलावौं" ॥
प्रभू कहेउ, "श्रीधर तुम दासा। यहि ते देखेउ मोर प्रकासा ॥

विचलित तुव मति नहिं भई, इतो प्रलोभन पाय।
तेहि तें भक्ती देत हौं, वेद गोप्य हर्षाय" ॥२३॥

जय जय सब भक्तन तब कीन्हा। श्रीधर कहँ भक्ती वर दीन्हा ॥
धन जन विद्या कछु नहिं चाहत। गौर भक्त कहँ को पहिचानत ॥
विद्या, धन, कुल से का होई। अहंकार फल भोगत सोई ॥
श्रीधर कदली देइ जो पायो। महा तपस्वी सो नहिं जान्यो ॥
विद्या धन कुल पावै जोई। अहंकार उपजै मन सोई ॥
करै द्रोह सब जग दुख देवै। नरक पड़ै दुख निज शिर लेवै ॥



श्री गौरांग श्रीरामचन्द्र के रुप में श्रीमुरारि गुप्त को दर्शन दे रहे हैं।

श्री मुरारि सन तव प्रभु कहेउ। मोर रुप तुम मन भरि देखउ॥
श्री मुरारि रघुनाथ निहारेउ। हरित श्याम रंग गौरहिं निरखेउ॥
वीरासन कर धनुप विराजत। बाम जानकी प्रभु के सोहत॥
दहिने लक्ष्मण कर धनु धारी। वानर अस्तुति कर सुखकारी॥
वानर सम देखेउ सों निजहीं।

पृष्ठ-१८३

मूर्ख दरिद्र देखि जे हँसहीं। पाइ नरक दुख बहुते सहहीं॥
वैष्णव चीन्हत को जग माँहीं। सिद्धि सकल जेहि के वश आहीं॥
दीन वेश लखि परत न कोई। श्रीधर सम वैष्णव जग सोई॥
अष्ट सिद्धि तजि भक्ती लीन्हेउ। तासु प्रभाव जगत सब जानेउ॥

सांसारिक दुख जे सकल, देखहुँ वैष्णव पास।
सो दुख बाधत ताहि नहिं, हृदय हरी सुखरास ॥२४॥

विषई जन यह मर्म न जानहिं। विद्या धन मद भक्ति न मानहिं॥
पढ़ि भागवत बुद्धि कोउ खोवहिं। श्री निताइ निन्दा करि भोगहिं॥
श्रीधर स्तुति करि जो वर पायो। सुनि सोइ कथा जो मन महँ लायो॥
प्रेम भक्ति निश्चय तेहि मिलई। कृष्ण चरण मति तेहि कहँ होई॥
वैष्णव निन्दा जे नहिं करई। कृष्ण मिलत निश्चय बुध कहई॥
निन्दा सों कछु सिद्ध न होई। भोगत पाप व्यर्थ जन सोई॥
भाग्यवान निन्दा नहिं करई। कृष्ण कृष्ण निशिदिन सो रटई॥
कृष्ण भक्ति निश्चय सो पैहैं। वैष्णव जन तेहि आशिष दैहैं॥
वैष्णव जन सों माँगत अहहीं। गौर निताइ कृपा नित करहीं॥
वृन्दावन यह चरित बखान्यो। व्रजभूषण भाषा सोइ कीन्ह्यो॥

लीला श्री प्रभु गौर को, कहो काहि पै जाय।
श्री निताइ की कृपा सों वरन्यो कछुक बुझाय ॥२५॥

॥ इति श्रीचैतन्य भागवते मध्यखण्डे श्रीधर बर लाभ वर्णनं नाम अष्टमोध्यायः ॥

नवम अध्याय

मोर मन हरि लियो गौर गुननिधि रे ॥ध्रु०॥

यहि विधि प्रभु श्रीधर वर देई। माथ डोलावत नाड़ा कहई॥
प्रभू कह्यो, "आचारज माँगहु"। कह्यो "जोइ माँग्यो सों पायेहुँ"॥
प्रभु हुंकार करत अति गर्जन। सन्मुख देखि सकत नहि कोउ जन॥
महा प्रकाश भक्त सब देखत। प्रभू गदाधर पान खिलावत॥
श्री निताइ शिर छत्रहिं धारत। सन्मुख सकल भक्त प्रभु ध्यावत॥
श्री मुरारि सन तब प्रभु कहेऊ। मोर रूप तुम मन भरि देखउ॥
श्री मुरारि रघुनाथ निहारेउ। हरित श्याम रंग गौरहि निरखेउ॥
वीरासन कर धनुष विराजत। वाम जानकी प्रभु कै सोहत॥
दहिने लक्ष्मण कर धनुधारी। वानर अस्तुति कर सुखकारी॥
वानर सम देखेउ सों निजहीं। मूर्छि मुरारि गिरे भुइँ तबहीं॥

कहेउ गौर प्रभु, "सुनहु कपि, भूलेहु का सब बात।
रावन तोहि जारन चहेउ, तुम फूँकेउ पुर तात ॥ १ ॥

सोइ कर हम तोहिं परिचय दीन्हा। उठहु मुरारि अभय तोहिं कीन्हा ॥
प्रान समान मोहिं तुम अहहू। सोइ राघव हम हनुमत तुमहू ॥
सौमित्रहिं देखहु तब जीवन। पर्बत आनि जियायेहु लछिमन ॥
सीता चरन करहु तुम वन्दन। जाहि दुखित लखि कीन्हेउ क्रंदन ॥
प्रभू वचन सुनि उठे मुरारी। प्रेम मगन तनु दसा विसारी ॥
रोदन करन लगे अति भारी। सकल भक्त लखि भए सुखारी ॥
पुनि मुरारि सों प्रभु तब कहेऊ। "वर माँगउ जो कछु तुम चहऊ" ॥
कहेउ मुरारि "और नहिं चाहौं। केवल तब यश निशि दिन गावौं ॥
सुनहु प्रभू जन्मौ हम जँहहीं। सुमिरन सदा करौं तव नितहीं ॥
भक्तन संग सदा हम रहहीं। तिनहिं छाँड़ि हम अनत न बसहीं ॥

रहहु सदा तुम मोर प्रभु, अरु हम तुमरे दास।
सत्य सदा यह प्रण रहै, राखहु चरनन पास ॥ २ ॥

भक्तन संग जहाँ अवतरहू। तहाँ दास ह्वै कै हौं रहहूँ ॥
प्रभू कहेउ, "यह वर तोहिं दीन्हा"। जय जय सब भक्तन मिलि कीन्हा ॥
श्री मुरारि सों कर सब प्रीती। गौर भक्त कर सुन्दर नीती ॥
सब पर कृपा मुरारी करहीं। बड़े भाग इनकर सँग मिलहीं ॥
तीरथ रूप होत सोइ स्थानू। श्री मुरारि यश कहाँ बखानू ॥
श्री मुरारि वल्लभ प्रभु अहहीं। सकल भक्त सों प्रभु तब कहहीं ॥
"सुनहु भक्त सब हम जो कहहीं। जे मुरारि नर निन्दा करहीं ॥
नहिं निस्तार होब सो कबहूँ। गंग नहावै नित सों तबहूँ ॥
हरी नाम गंगा तेहि विधिहै। भक्तन यश नित सबही गैहैं ॥
इनके हृदय मुरारी बसहीं। गुप्त मुरारि ताहि सब कहहीं" ॥

श्री मुरारि पर कृपा लखि, हर्षेउ भक्त समाज।
प्रेम मगन हरि हरि कहत, शुभ दिन सब कर आज ॥ ३ ॥

श्री मुरारि पर गौर गोपाला। कीन्ह कृपा प्रभु दीनदयाला ॥
सुनै जो कथा भक्ति सो पावै। प्रभु सन्मुख भक्तन सब गावैं ॥
प्रभु ताम्बूल खात सुख मानी। हरिदास सों कह मृदुबानी ॥
आज नयन भरि तुम मोहिं देखेहु। मोहिं परम प्रिय तुम सो जानेहु ॥
तोर जाति सो मोहिं अति भावै। पापी यवन सकल दुख देवैं ॥
बिदरत हृदय सुमिरि सो बाता। मारत तोहिं यवन जब ताता ॥
तोर दुःख लखि चक्रहिं लेई। मारन हित आये हम तहई ॥
प्राण लेन हित तुमहिं जो मारत। तिनकर हित तुम मनहिं बिचारत ॥
आपन कष्ट कछू नहिं समुझेहु। तिनकर भल तुम प्रभु सों याचेहु ॥
तेहि तें हम मारे नहिं उनहीं। उठो चक्र रहिगो सो तहहं ॥

तब संकल्प के कारणहिं, मारेहुँ नहिं हम कोइ।
कष्ट देखि तब पीठ पर, रहे जाइ हम सोइ ॥ ४ ॥

तिनकर मार पीठ पर लीन्हा। झूठ कहहिं तेहि देखहु चीन्हा॥
तोर दुःख हम सहि नहिं सके। गुप्त रूप परगट नहिं भये॥
श्री अद्वैत तोहिं भल चीन्हेउ। तेहि ते हम उनके वश अहऊँ॥
भक्त सुयश प्रभु निज मुख कहहीं। भक्त लागि प्रभु सब कछु करहीं॥
अग्नि पान ग्वालन हित कीन्हा। भक्त दास होइ तेहि सुख दीन्हा॥
भक्त बिना प्रभु और न जानै। भक्त समान जगत नहिं मानैं॥
ऐसे कृष्ण भक्त नहिं मानहिं। सो पापी निश्चय दुख पावहिं॥
भक्तन महिमा मन भरि सुनहू। हरीदास सों जो प्रभु कहेहू॥
करुण वचन प्रभु कर सुनि काना। मूर्छि गिरे हरिदास सुजाना॥
कछु सुधि नाहिं भूमि पर गिरेऊ। उर आनन्द श्वास रुकि गयऊ॥

प्रभू कहेउ हरिदास सों, उठहु वेगि हरिदास।
देखहु भरि लोचन हमहिं, मेरो महा प्रकास॥ ५॥

प्रभू वचन सुनि कछु सुधि आई। दर्शन करि अँखिया भरि आई॥
आँगन महँ लोटन सो लागेउ। महा श्वाँस अति लेत सोहायेउ॥
कबहूँ मुरछि भूमि पर आवहिं। अति आवेश भयहु हरिदासहिं॥
प्रभू करायहु स्थिर तब सोई। हाथ जोरि विनती सो करई॥
"प्रभु विश्वम्भर जग के स्वामी। बार बार तव चरन नमामी॥
बड़ पातकी अधम अति पामर। नीच जाति उद्धारेउ गिरिधर॥
प्रभु चरित्र हम केहि विधि गावैं। मोहिं लखि कै सब नाक चढ़ावैं॥
स्पर्श करत कोऊ नहिं मोहीं। ऐसे अधम उधारेहु तुमहीं॥
वचन सत्य तुम प्रभु निज कीन्हा। जो सुमिरत तोहिं तेहिं सब दीन्हा॥
छोट होइ यदि सुमिरन करई। तबहु प्रभू तुम तेहिं नहि तजई॥

बड़ो होय कै भजत नहिं, काटौ वाको माथ।
स्मरन हीन हम का कहौं, तुम प्रभु दीनानाथ॥ ६॥

दुर्योधन द्रौपदिहिं बुलाई। विवसन करन ताहि मन लाई॥
संकट समय सो तुमहिं पुकारयो। तुरत वस्त्र महँ प्रविसि बढ़ायो॥
स्मरन प्रभाव बस्त्र बहु बाढ़्यो। तबहुँ दुष्ट वैभव नहिं जान्यो॥
एक समय गिरिजहिं सब घेरी। खान चह्यो डाकिनि अति डरी॥
तव सुमिरन तब सोई कीन्हा। प्रगट होइ तुम दुख हरि लीन्हा॥
तव सुमिरन विहीन हम अहईं। चरन शरन तुमरो हम लहईं॥
पत्थर बाँधि प्रह्लादहिं फेंक्यो। दुष्ट हिरण्य कछू नहिं मान्यो॥
भजन प्रभाव ताहि अपनायो। सकल कष्ट सों ताहि बचायो॥
दुर्वासा भय पाण्डव पुत्रहिं। सुमिरत अभय दीन्ह जग जानहि॥
भये प्रगट अरु कहेउ बुझाई। "चिन्ता कछू करहु जनि भाई॥

भिक्षा मुनि कहँ देब हम, सोच करहु जनि तात"।
हाँडी कर महँ लेइकै, खायो तुम एक पात॥ ७॥

फूल्यो पेट ऋषिन कर तबहीं। भागि चले आश्रम सब कहहीं ॥
पाण्डव गण सब भए सुखारे। केवल स्मरण प्रभाव तुम्हारे ॥
सब कल्याण होत तोहिं सुमिरे। याही तें भक्तन उद्धारे ॥
अजामील महिमा अति भारी। अति पापी जानत नर नारी ॥
मरन काल पुत्रहिं गोहरायो। "नारायण" यह वचन उचार्यो ॥
सुमिरत ही सब दुःख नसायो। कछु विचित्र नहिं सब यश गायो ॥
चरन स्मरन हम कछु नहिं जानैं। तदपि प्रभू मोहिं निज करि मानैं ॥
तव दर्शन के हम नहिं योगू। चरण स्मरन जाचत हम लोगू" ॥
प्रभू कह्यो, "तुम अहौ हमारे। तुम कहँ कछु अदेय नहिं मोरे" ॥
हाथ जोड़ि तब कहँ हरिदासा। "हौं बड़ छोट करौं बड़ आसा ॥

आपु चरन जे भजत जन, भक्त सकल जे आहिं।
तिनकर जूठो मोहिं मिले, यहि चाहौं प्रभु पाहिं ॥ ८ ॥

जन्म जन्म हौं पावौं सोई। मम भोजन प्रसाद यहि होई ॥
पापी जन कछु स्मरन न जानौं। दासोच्छिष्ट सदा हौं पावौं ॥
यहि अपराध गनौ नहिं तुमहीं। हम अयोग्य यहि के सब विधिहीं ॥
हे प्रभु नाथ मोर विश्वम्भर। क्षमा करहु अपराध दीन कर ॥
हे शचिनन्दन यह वर दीजै। भक्त घरहि कुक्कुर मोहिं कीजै" ॥
भए प्रेम मय श्री हरिदासा। विनती करत न पूरत आसा ॥
प्रभू कह्यो, "सुन मम हरिदासा। वास करत जे तुमरे पासा ॥
जेहि के संग करब तुम बाता। सो सब मोहिं पाउब सुनु ताता ॥
तुम पर श्रद्धा जे जन करहीं। निश्चय ते मो कहँ आदरहीं ॥
तव शरीर महँ मेरो वासा। मन वच कर्म सों मोरे दासा ॥

तुम निज हृदय माँझ मँह, धरि बाँध्यो है मोहि।
भक्ति बिमल वर सुनहु तुम, देत अहौं अब तोहिं" ॥ ९ ॥

हरीदास कहँ प्रभु वर दीन्हा। जै जै सकल भक्त तब कीन्हा ॥
जाती कुल धन ते नहिं होई। भक्ती सों केवल हरि मिलई ॥
प्रेम बिना हरि कोउ नहिं पावत। दीन वचन प्रभु के मन भावत ॥
कौनहु जाति भक्त यदि होई। सो सर्वोत्तम शास्त्रहि कहई ॥
तासु प्रमाण यवन हरिदासा। देखेहु प्रभुकर दिव्य प्रकाशा ॥
प्रभु दर्शन ब्रह्मा को दुर्लभ। भक्तन के वश गोपीवल्लभ ॥
वैष्णव कर जे जाति बिचारहिं। नरक यातना सो सब पावहिं ॥
हरीदास स्तुति वर जे सुनहीं। कृष्ण प्रेमधन निश्चय लहहीं ॥
सकल शास्त्र यहि कर परमाना। भक्त सुयश गावत विधि नाना ॥
जय जय महाभक्त हरिदासा। हरीदास सुमिरत दुख नासा ॥

इन कहँ कोउ ब्रह्मा कहत, कोउ प्रह्लाद बखान।
महा भागवत कोउ कहै, गौर भक्त परधान ॥१०॥

देव आदि भक्तन सँग चाहत। हरीदास कर सँग नित याचत ॥
स्नान करहिं मम जल हरिदासा। गंगा अस मन कर अभिलासा ॥
हरीदास कर दरस जे करहीं। भव बन्धन सों ते छुटि जाहीं ॥
श्री प्रह्लाद दैत्य जिमि अहहीं। कपि हनुमान सबहिं कोउ कहही ॥
तेहि सम हरीदास लघु अहहीं। इन सम बड़ जग को लखि परहीं ॥
श्री मुरारि श्रीधर हरिदासा। प्रेम मगन नृत्यत प्रभु पासा ॥
प्रभु ताम्बूल खात हर्षित मन। ज्योति स्वरूप बैठि सिंहासन ॥
श्री निताइ सिर छत्रहिं धरई। श्री अद्वैत निरखि प्रभु कहई ॥
"सुनु आचार्य कहौं हम तोहीं। गुप्त बात परकासौं अबहीं ॥
भोजन निशि महँ तोहिं करायेहु। स्मरन अहै सोइ बात विचारहु ॥
मोहिं प्रगटावन कारनहिं, तुम श्रम कियो अपार।
भयहु मनोरथ पूर्ण अब, तुम तो परम उदार ॥११॥
मम अवतार भयहु नहिं तबहीं। कृष्ण चरण ध्यावहु तुम नितहीं ॥
भक्ति मात्र देखहु सब शास्त्रहिं। गीता शास्त्र पढ़ावहु शिष्यहिं ॥
तव व्याख्या समुझै जग में को। भक्तीमात्र बखानहु सबको ॥
भक्ति अंश जा महँ नहिं पावहु। दुखित होइ भोजन तुम त्यागहु ॥
उपवासी होइ सोवहु तबहीं। तोरे निकट आउँ तत्क्षणही ॥
तव उपवास मोर उपवासा। तुमहिं खियावहु सोइ मम ग्रासा ॥
तोर दुःख सहि सकौं न कबहीं। स्वप्न माँझ तुम सन हम कहहीं ॥
हे आचार्य अर्थ तुम सुनहू। यहै पाठ यह अर्थहिं गुनहू ॥
उठहु शीघ्र भोजन अब करऊ। तव हित हम प्रकाश यह करेऊ ॥
लहि संतोष उठहु तुम तबहीं। भोजन करि सुख पावहु मनहीं ॥
मोर वचन कहँ हृदय महँ, स्वप्नहि मानहु तात।
जब जब तुम शंका करहु, आइ कहौं सब बात ॥१२॥
जौन रात्रि जेहि दिन जो कहेहू। जौन श्लोक क्रम सों सब सुनहू ॥
सकल श्लोक क्रम सों प्रभु कहहीं। श्री अद्वैत प्रेम सों सुनहीं ॥
धन्य धन्य अद्वैत गोसाईं। तुमरे बश श्री गौर निताई ॥
प्रभू कह्यो सब पाठहिं सुनेहू। एक पाठ अबलौं नहिं कहेहू ॥
भापहुँ आज ताहि हम तुमसों। स्वारथ वश उलटो कह सबसों ॥
आपन सम्प्रदाय हित लागी। उलटो पाठ कहत भय त्यागी ॥
"सर्वतः पानि" आदि कह सबहीं। शुद्ध पाठ हम तुम सन कहहीं ॥
"सर्वत्र पानि" आदि सच मानहु। शुद्ध पाठ यह तुम जिय जानहु[१] ॥

---

१. तयाहि गीता १३।१३)

सर्वत्र पानि पादन्तत् सर्वतोऽक्षिशिरो मुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥

सब जगह जिसका हाथ, पैर, सब स्थान में जिसका नयन, मस्तक और शरीर तथा श्रवण कान) है वही परमात्मा सब जगह में व्याप्त है। (भक्तों के हेतु सब जगह प्रगट हो जाते हैं। "हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होहिं हम नाना।" शंकर जी का वचन श्रीरामचरित मानस में।)

गुप्त पाठ हम तुम सन कहेऊ। तुम अधिकारी जानत अहऊ॥
गौर शिष्य अद्वैत गोसाईं। सब व्याख्या प्रभु ताहि बताई॥

प्रेम मगन सुनि प्रभु वचन, नयनन सों बह वारि।
अति हर्षित पुलकित भए, बोले प्रभुहिं निहारि॥१३॥

और कहा बोलौं प्रभु हमहीं। तुम प्रभु हम तव किंकर अहहीं॥
मोर महत्व यहै बड़ भारी। कृपा करेहु प्रभु दीन विचारी॥
आनँद सों अति बिह्वल भयऊँ। प्रभु प्रकाश लखि अति सुख पायेउँ॥
यह सब कथा जे मानत नाहीं। पाप होइ अरु नरक ते जाहीं॥
महा भागवत जन जे अहहीं। श्री अद्वैत कथा ते सुनहीं॥
समुझत व्याख्या सो सब लोगहिं। गौर बतायो जो अद्वैतहिं॥
स्वयं गौर शिक्षा तेहि दीन्हा। भक्ति पूर्ण व्याख्या सब कीन्हा॥
नाना मत जिमि वेद बखानत। तिमि आचार्य वचन सब भाषत॥
शरत वृष्टि जिमि इत उत होई। तेहि को दोष देत नहिं कोई[२]॥
श्री अद्वैत दोष कछु नाहीं। जो जेहि भावै सो तस कहहीं॥

श्री चैतन्य चरण नित, सेवहिं श्री अद्वैत।
वैष्णव सब जानत अहैं, गौर चरनरत चित्त॥१४॥

सब वैष्णव कर वचन न मानैं। केवल आचारज सन्मानै॥
उचित नहीं तेहि कर यह काजा। श्री अद्वैतहु मानत लाजा॥
श्री चैतन्यहि ईश्वर मानत। सोइ अद्वैत भक्त सब जानत॥
अद्वैतहु तेहि आदर करहीं। महाप्रभू कहँ जे नित भजहीं॥
महाप्रभू कहँ जे नहिं मानहिं। व्यर्थ अचारज सेवा करहीं॥
शंकर भक्ती करिकै रावन। काट्यो निज शिर तेहि के कारन॥
श्री रघुनाथहि मान्यो नाहीं। शंकर मन सों छाँड्यो ताही॥
जान्यो नहिं शंकर कर भावा। व्यर्थ भई सेवा दुख पावा॥
अच्छो बुरो शिवहिं नहिं कहहीं। निज बुद्धी सों समुझत सबही॥
यहि विधि अद्वैतहिं नहिं जानी। पूजहिं ताहि गौर नहिं मानी॥

निज स्वभाव के कारनहिं, कहत अचारज नाहिं।
वैष्णव जे मानत नहीं, नरक माँझ ते जाहि॥१५॥

जासु कृपा अद्वैत गोसाईं। सर्व सिद्धि पायो सुखदाई॥
ऐसे वचन सुनत ते सबही। मारन धावत हैं सब जनहीं॥
माया प्रबल अहै अतिभारी। भ्रष्ट बुद्धि भइ तिनकर सारी॥

---

२. तथाहि (भा० १०-२०-३६)

गिरयो मुमुचुस्तोयं क्वचिन्न मुमुचुः शिवम्।
यथा ज्ञानामृतं काले ज्ञानिनो ददते न वा॥

शरत काल के मेघ कहीं बरसते हैं और कहीं नहीं बरसते हैं। उसी प्रकार ज्ञानी लोग ज्ञानामृत का दान करते हैं और कभी नहीं भी करते हैं।

प्रभु कर भक्तराज नहिं जानत। गौर भक्त अद्वैत न मानत॥
प्रथमहिं जो चरित्र सब भाषेहु। सो सब सत्य समुझि जिय जानहु॥
नहि माने सो नरकहिं जाही। श्री अद्वैतहु पावत नाहीं॥
श्री अद्वैत चरित जे सुनही। गौर भक्ति तेहिनि श्चय लहही॥
कहहिं अहर्निशि प्रभू निताई। "गौर प्रभू मम बोलहु भाई॥"
गौर स्मरन करिकै आचारज। प्रेम मगन उर धरहिं न धीरज॥

यह लखि जिनके हृदय महँ, गौर भक्ति नहिं होय।
तिन सों बोलन पाप है, पापी जन हैं सोय॥१६॥

श्री अद्वैतहिं श्रेष्ठ जे मानत। कृष्ण चरण निश्चय सो पावत॥
श्री अद्वैतहिं प्रिय सो होई। पापी जन बूझत नहिं सोई॥
"सबके ईश्वर प्रभु गौरांग। कहु गौरांग भजु गौरांग॥
श्री अद्वैत सदा यह कहहीं। परम प्रेम सों निशिदिन रटहीं॥
यहि महँ कछु सन्देह न भाई। कथा सुनत संशय सब जाइ॥
मध्य खण्ड की कथा सुहाई। गीता प्रभु अद्वैत बताई॥
सत्य पाठ अद्वैतहि भाष्यो। भक्ति कपाट गौर प्रभु खोल्यो॥
हाथ उठाइ गौर प्रभु कहेऊ। "करहु दरस अरु बर सब माँगउ॥"
गौर वचन सुनि सब सुख पावा। माँगहि जेहि के जो मन भावा॥
श्री अद्वैत कहेहु "वर देहू। पतित दीन कर दुख सब हरहू॥"

कोउ कहत प्रभु पिता मोहिं, आवन ह्याँ नहिं देइ।
बदलहु तेहि कर भाव यह, सुखी तबहिं हम होइँ॥१७॥

शिष्य लागि कोऊ कह प्रभुहीं। पुत्र हेतु याचत कोउ अहहीं॥
कोउ स्त्री कोउ सेवक हित कहहीं। गुरू भक्ति माँगत कोउ जनही॥
यहि विधि वर सबही कोउ माँगत। गौर देत सब कहँ जो चाहत॥
सत्य करन भक्तन कर बाता। हँसि हँसि देत वरहिं वरदाता॥
श्री मुकुन्द बाहर गृह आई। प्रभु सन्मुख भय वश नहिं जाई॥
श्री मुकुन्द सबके प्रिय अहहीं। परम भागवत जानत सबही॥
निरवधि कीर्तन प्रभु सँग करही। कारन कौन दण्ड प्रभु देहीं॥
प्रभू बोलावत तेहि कर नाहीं। यहि ते आवत नहिं प्रभु पाहीं॥
यहि ते सब वैष्णव दुख पायेहु। श्रीनिवास प्रभु सन तब भाषेहु॥
"जगन्नाथ प्रभु सुनु मम वचना। का अपराध मुकुन्दहि कीना॥

श्रीमुकुन्द तव परम प्रिय, हम सबको है प्रान।
गान सुनत सब कर द्रवत, हृदय सबहि यह जान॥१८॥

भक्ति परायण सकल सँभारत। बिनु अपराध ताहि किमि मारत॥
यदि अपराध कीन्ह कछु होई। ताहि दण्ड प्रभु दीजिय सोई॥
अपन दास को त्याग न सोहै। बिना बोलाए किमि सो ऐहै॥
प्रभु तेहि कहँ अब दर्शन दीजै। मधुर वचन कहि अपनो कीजै"॥

प्रभू कहेउ, ऐसो जनि कहहू। तेहि हित कहेहु न कोऊ कबहूँ ॥
बड़ छलिया जो पूर्वहि सुनेहू। सोई यह तुम सब नहिं लखहू ॥
कबहूँ बिनती बहु विधि करई। कबहूँ लाठी मारै सोई ॥
यह छलिया मम दरश न पैहै। चंचल मति सो किमि मोहिं लखिहै ।"
श्री निवास वक्ता बढ़ भारी। बोलै प्रभु सन युक्ति बिचारी ॥
आपु बचन प्रभु नहिं कोउ समुझत। हम मुकुन्द कर दोष न देखत ॥

अभय चरण प्रभु तब अहै, श्री मुकुन्द तब दास ॥
शरण तिहारे प्रभु सोई, तेहि हित सबहि उदास ॥१६॥

प्रभू कह्यो, "सो जहँ कहुँ जाई। तेहिके संग तहाँ सोइ गाई ॥
श्री वाशिष्ठ पढ़त वह जाई। श्री अद्वैत संग मन भाई ॥
भक्ति सहित तहँ नाचत गावत। प्रेम मगन बहु भाव बतावत ॥
अन्य लोग सँग जहँ जब जावै। भक्ति न मानत ज्ञान सिखावै ॥
भक्तो सों वड़ ज्ञानहि कहई। हम कहँ सोई लाठी हनई ॥
भक्ति स्थान तेहि किय अपराधा। तेहि ते दर्शन में है बाधा ॥"
बाहर सो मुकुन्द सब सुनई। दरशन नहिं पाउब सुनि कहई ॥
बड़ अपराध प्रथम हम कीन्हा। भक्ति न मानि प्रभू दुख दीन्हा ॥
परम भागवत मन महँ सोचत। श्री मुकुन्द यह मनहि विचारत ॥
यह शरीर हम राखब नाहीं। यहि अपराधी छाँड़व याही ॥

कब दर्शन हौं पाइहौं, हम जानत सो नाहिं।
दीन होइ तब सो कह्यो, श्री निवास के पाहिं ॥२०॥

"पूछहु प्रभु सन तुम यह जाई। कब पैहैं दरशन सुखदाई ॥'
क्रंदन करत मुकुन्दहिं देखी। भक्त दुखित सब भए विशेखी ॥
"कोटि जन्म यदि यहि कर होई। निश्चय दर्शन पैहै सोई ॥"
"निश्चय पैहौं", सुनि प्रभु बानी। प्रेम मगन तनुदसा भुलानी ॥
"पाउब पाउब" कहि सो नाचत। गौर भृत्य अतिसै सुख पावत ॥
अति आनँद सों नाचत तहईं। देखब प्रभु अस सुनि सुख लहईं ॥
देखि मुकुन्द हँसत विश्वम्भर। आज्ञा भइ 'आनहु तेहि भीतर ॥'
सब वैष्णव मिलि ताहि बोलावत। आनँद मगन सो कछु नहिं जानत ॥
प्रभू कहेउ दर्शन मम करहू। सब अपराध क्षमेहु सुख लहहू ॥
प्रभु आज्ञा सों सब धरि आनेहु। गौर चरण पर सो शिर राखेहु ॥

"उठहु उठहु प्रभु कहेउ तेहि, तुम मेरे प्रिय दास।
तब अपराध नहीं कछू, तोर हृदय मम वास ॥२१॥

संग दोष सब तुमरो नाशेउ। सुनहु तात हम तुम सो हारेउ ॥
कोटि जन्म पाउब हम कहेऊ। क्षण महँ तुम सब भोग मिटायेउ ॥
है अव्यर्थ वचन मम जानत। दृढ़ करि मोहिं हृदय महँ राखत ॥
कीर्तनिया मम रहु नित सँगा। हौं परिहास कियेहु अति रंगा ॥
शत अपराध करहु यदि तुमहीं। सब नासौं तुम अति प्रिय मोहीं ॥
भक्ति रूप तुम हो मम दासा। तब जिह्वा पर मोर निवासा" ॥

प्रभु आशिस मुकुन्द सुनि काना। क्रंदन करत बहुत दुख माना॥
धिक्कारत निज कहँ अतिभारी। प्रभू कृपा मन माँझ विचारी॥
दुखित होई तब बचन उचारेउ। "हम अति जड़ मति भक्ति न मानेहु॥
भक्ति हीन तव दरशन पाई। किमि सुख पैहौं सुनु हरि राई॥

विश्वरूप तब देखि कै, दुर्योधन मतिमन्द।
भक्ति शून्य सुख लह्यो नहिं, पर्‌यो मोह के फंद॥२२॥

वेदहु जेहि कर खोज न पावा। तेहि लखि दुष्टन बंश गँवावा॥
बड़ो पतित हम भक्ति न मानी। दरस पाइ प्रभु भक्ति न जानी॥
रुक्मिनि-हरन जबहिं प्रभु गयऊ। गरुड़ारूढ़ सबहि प्रभु देखेउ।
राजन पर प्रभाव नहिं पड़ेऊ। भक्तिहीन सब कछु नहिं समुझेउ॥
भयउ महाअभिषेक तुम्हारा। राजेश्वर तव रूप निहारा॥
महाज्योतिमय सब नृप देखे। तबहूँ प्रभु प्रभाव नहिं बूझे॥
ब्रह्मा आदि देव सब चाहत। प्रभु स्वरूप निरखौं वर माँगत॥
नगर विदर्भ रूप दिखरावा। भक्ति शून्य कछु नृपहिं न भावा॥
मरे सकल नृप परम अभागी। महामोहवस भक्तिहिं त्यागी॥
प्रभु वराह कर रूपहिं धारेउ। सर्व यज्ञमय रूप सोहायेउ॥

जल भीतर प्रगटित भए, धरा दशन पर धारि।
दरसन करि अस्तुति करत, देव सबै हिय हारि॥२३॥

हिरण्याक्ष पायहु सोइ दरशन। भक्ति शून्य कछु गन्यो न तेहि क्षन॥
महागोप्य अद्भुत प्रभु रूपा। श्री नृसिंह कर द्विव्य स्वरूपा॥
हिरण्य कशिपु सो दरशन पायो। भक्ति शून्य निज प्राणगँवायो॥
ऐसो दिव्य भक्ति नहिं मानेउँ। गिरेउ न शिर मम अचरज जानेउँ॥
ऋषि पत्नी कुब्जा पुर नारी। देखेउ कहँ प्रकाश सुखकारी॥
भक्ति हेतु प्रभु तेहि सब पावा। माली हू प्रभु के मन भावा॥
तहहीं कंस मर्‌यो दुखदाई। भक्ति हीन सुख कतहुँ न पाई॥
भक्ति हीन मूरख हम अहहीं। प्रभु की कृपा और का कहहीं॥
भक्ति प्रभाव शेष प्रभु धरहीं। निज शिर यह ब्रह्मांड न गिनहीं॥
एक सहस फन प्रभु कर राजै। एकफन पर यह भूमि बिराजै॥

सोऊ बिन्दु समान तहँ, शेष न जानत ताहि।
प्रभु यश गावत मगन सो, रहत सदा मन माँहि॥२४॥

जेहि को कोउ आश्रय जग नाहीं। प्रभु रक्षक भक्तन कर आहीं॥
अति पापी भक्ती नहिं मानेउँ। बहु जन्मेउँ शुभ गति नहिं जानेउँ॥
भक्ति योग शिव गौरी पायउ। नारद मुनि कर जग यश छायउ॥
वेदव्यास शास्त्र बहु रचेऊ। तदपि चित्त महँ शांति न पायऊ॥
संक्षेपहि भक्ती मुनि गावा। सोइ अपराध शांति नहिं पावा॥
नारद मुनि ऋषि कहँ समुझावा। करि विस्तार भक्ति मुनि गावा॥

जग उपकार भयउ अति भारी। पावा शांति ऋषी सुख कारी ॥
कीट समान होई हम सुनेहू। भक्ति न मानेउँ सोइ दुख सहेहू ॥
तब दर्शन के योग्य न हमहीं। प्रभु करि कृपा दरश मोहिं दीन्ही" ॥
अस कहिं क्रंदन सो बहु करई। काँपत अंग दीन होइ रहई ॥

बड़ो भक्त प्रभु कर अहै, श्री मुकुन्द प्रिय दास।
दुःख देखि प्रभु ताहि कर, मन महँ भए उदास ॥२५॥

श्री मुकुन्द सन तब प्रभु कहहीं। "तोर भक्ति अतिसै प्रिय मोहीं ॥
सत्य वचन तुम जो कुछ कहेऊ। तोर गान सुनि आइ बिराजेउँ ॥
भक्ति बिना मम दरश वृथाहीं। सत्य कहौं सुनु तुम प्रिय मोहीं ॥
वेद माँहिं हम जो कछु भाषेहु। कर्म अनेक सो फल जो पावहु ॥
ताहि मिटाइ सकत कोउ नाहीं। हम स्वतन्त्र मेटौं छिन माहीं ॥
सब विधि ऊपर मम अधिकारा। निज मुख वर्णन कियो अपारा ॥
भक्ति बिना कोउ फल नहिं पावै। भक्ति न मानि मोहिं दुख देवै ॥
मम दुख कारन दर्शन पाई। पावत नहिं कछु फल दुखदाई ॥
रजकहु पायहु दर्शन मोरा। वस्त्र माँगि हम ताहि निहोरा ॥
प्रेम हीन कछु लाभ न पावा। भक्ति बिना मोहि कछु नहिं भावा ॥

मम दरशन के कारनहिं, तेहि तप कियो अपार।
बहुत बार जन्मत भयउ, पावा दरस हमार ॥२६॥

भक्ति शून्य कछु सुख नहिं पायेउ। बड़े भाग्य निज नयनन देखेउ ॥
मम सेवक कर जो जन जाई। कर अपराध सो दुख बहु पाई ॥
दरशन सुख तेहि ते नहिं होई। भक्ति कबहुँ नहिं पावै सोई ॥
भक्ति बिना दरशन नहिं पावै। सत्य वचन तव मोहिं अति भावै ॥
भक्ती बाँटब तुम सन कहेऊ। प्रथमहिं प्रेम भक्ति तोहिं दयऊ ॥
तव कण्ठ स्वर अद्भुत भयऊ। गान सुनत भक्तन सुख लहेऊ ॥
प्रेम पात्र तुम जिमि मम अहहू। तिमि भक्तन कर निश्चय बनहू ॥
मम अवतार होय जहँ कहँऊ। मम गायक निश्चय तुम रहऊ" ॥
प्रभु वरदान मुकुन्दहिं दीन्हा। जय जय ध्वनि भक्तन सब कीन्हा ॥
"हरि बोल हरि बोल जय जगन्नाथ। हरि हरि कहि सब होउ सनाथ" ॥

हाथ उठाइ कै प्रेम सों, कहत भक्त सब कोइ।
नृत्य करत अति प्रेम सों, प्रभू निरखि सुख होइ ॥२७॥

श्री मुकुन्द स्तुति वर जे सुनहीं। प्रभु गायक निश्चय सो होहीं ॥
श्री चैतन्य कथा अति गूढ़ा। बुध समुझहिं नहिं बूझहिं मूढ़ा ॥
गौर कथा सुनि जे सुख पावहिं। श्री चैतन्य चरण सो निरखहिं ॥
यहि विधि सब भक्तन स्तुति कीन्हा। गौर प्रभु सब कँह वर दीन्हा ॥
अति उदार पण्डित श्रीवासा। तिनके गृह श्री गौर विलासा ॥
निज निज इष्ट प्रभुहिं सब देखे। श्री विश्वम्भर सब परितोखे ॥

महाप्रकाश याहि कहँ कहहीं। गौर चरित यहि विधि नित करहीं॥
शक्ति सहित प्रभु देखेउ सबही। प्रभु लीला प्रकाश नित करहीं॥
मन वच कर्म सों जे प्रभु दासा। ते सब निरखहिं सहित हुलासा॥
नवद्वीप बहु ज्ञानी बसहीं। संन्यासी योगी बहु रहहीं॥

गीता अरु भागवत कहँ, पढ़हिं कोउ मन लाय।
कोउ पालत निज धर्म कहँ, कबहुँ न मन विचलाय॥२८॥

ब्रह्मचर्य कोउ पालन करहीं। दान कोउ जन कबहुँ न लेहीं॥
बृथा धर्म सों निज तनु कसहीं। करि अभिमान भक्ति नहिं करहीं॥
देखेउ गौर प्रकाश न तिनही। यहि सुख सों वञ्चित रह सबही॥
श्री निवास कर दास अरु दासी। भरि लोचन देखेउ सुखरासी॥
पढ़े शास्त्र तबहूँ नहिं माना। माथ मुड़ायो तबहुँ न जाना॥
धन कुल विद्या प्रभु नहिं भावै। भक्ती सों केवल प्रभु पावै॥
बड़ी कीर्ति सों प्रभु नहिं मिलहीं। प्रभु केवल भक्तों वश अहहीं॥
प्रभु प्रकाश नदिया महँ भयऊ। सो दर्शन पण्डित नहिं पायेउ॥
कोउ फल पापी जन नहिं पावत। प्रभु दर्शन तेहि कहँ नहिं भावत॥
पापी जन यदि धर्महिं करहीं। तेहि ते फल कछु ते नहिं लहहीं॥

प्रभु लीला कर अन्त नहिं, वेद न पायो पार।
गौर अजहुँ लीला करत, देखत भक्त उदार॥२६॥

सोइ देखहिं कोउ और न लखहीं। गौर निरन्तर लीला करहीं॥
जौन मन्त्र जो वैष्णव जपही। जौन इष्ट कर ध्यान जे धरहीं॥
सोइ रूप श्रीगौर देखावहिं। निज भक्तन सों तब प्रभु भाषहिं॥
"अब मम कथा सुनहु सब भाई। मोर संग तुम लहब सदाही॥
मम लीला तब दासहु निरखब। जन्म जन्म मेरो संग पाउब॥
निज गर माल सबहिं प्रभु दीन्हा। चर्वित पान माँगि सब लीन्हा॥
आनन्द सों सब भक्षण करहीं। गौर प्रसाद पाइ सुख लहहीं॥
भोजन कर प्रसाद जो बचेऊ। पुण्यबती नारायणि पायेउ॥
श्रीनिवास भ्राता कर कन्या। प्रभु प्रसाद पावत सो धन्या॥
प्रभु प्रसाद आनन्द सों पावै। सब वैष्णव आशिष तेहि देवैं॥

"धन्य धन्य यह बालिका, सेवेहु प्रभु मन लाय।
याको जीवन धन्य है", कहत सबहि हर्षाय॥३०॥

प्रभु आज्ञा नारायणि दीन्हेउ। "प्रेम सों कृष्ण, कृष्ण कहि रोवउ"॥
"कृष्ण कृष्ण" बोली सो तुरतहिं। बाल स्वभाव सों सो तहँ रोवहि॥
अजहूँ वैष्णव जन यह जानी। "प्रभु अवशेष पात्र नारायनि"॥
गौर प्रभू जेहि कहँ जो कहहीं। सो जन ताहि तुरतही करहीं॥
यह लीला जे मानत नाहीं। नरक माँझ सो निश्चय जाही॥
श्री अद्वैतहि प्रिय अति अहहीं। श्री चैतन्य, सकल जन कहहीं॥

यहि ते वड़ अद्वैत गोसाईं। आचारज महिमा सब गाई ॥
श्री निताइ अति प्रिय चैतन्यहिं। यहि ते श्री निताइ सब बन्दहि ॥
श्री चैतन्य भक्त जे नाहीं। तृण समान सो यहि जग माहीं ॥
श्री निताइ दृढ़ता सों कहहीं। "श्री चैतन्य दास हम अहहीं" ॥

श्री निताइ की कृपा सों, गौर चरन रति होय।
श्री निताइ के भजन सों, दुःख न पावै कोय ॥३१॥

हमरे प्रभु को प्रभु चैतन्य। यहै भरोसा करि हम धन्य ॥
श्री निताइ चरनन रति होऊ। गौर कृपा करि यह वर देऊ ॥
श्री निताइ कहँ जो अति भावै। गौर चरित सोई हम गावैं ॥
श्री निताइ जगहित बहु करहीं। श्री चैतन्यहिं निसि दिन भजहीं ॥
गौर भक्ति सबही कहँ देहीं। इनकी कृपा गौर लखि परहीं ॥
भक्ति तत्व सब जगत सिखावहिं। श्री निमाइ बिन और न जानहिं ॥
सब वैष्णव कहँ अति प्रिय अहहीं। श्री निताइ भक्ती सब देहीं ॥
श्री निताइ जेहि कहँ नहिं भावै। गौर कहत "निश्चय सो जावै" ॥
आदिदेब योगी प्रभु ईश्वर। इनकी महिमा अलख अगोचर ॥
निन्दा काहू कीं नहिं करहीं। "कृष्ण कृष्ण" निशिदित प्रभु कहहीं ।

प्रेम भक्ति सों पाइहैं, श्री चैतन्य सुजान।
निन्दा सो नाहीं मिलत, सकल शास्त्र परमान ॥३२॥

सब कर आदर वेद बखाने। धर्म भागवत सब जग जाने ॥
मध्य खण्ड की कथा सोहाई। अमृत सम जानहु यहि भाई ॥
पाषण्डी कहँ कडुओ लागे। दैव दोष सों मरत अभागे ॥
श्री चैतन्य सुयश सुनि कोऊ। पावत नहिं सुख पापी सोऊ ॥
संन्यासी यदि गौर न मानै। जानउ सो खल शास्त्र न जानै ॥
पंछीहू यदि गौर सुमिरहीं। श्री चैतन्य धाम सो जाहीं ॥
गौर निताई जीवन मेरो। श्री निताइ कर हम हौ चेरो ॥
गौरचन्द्र निन्यानँद जीबन। नित्यानँद मेरो होय प्राणधन ॥
गौर पारषद जे सब अहहीं। हम प्रणाम सबही कहँ करहीं ॥
जेहि जेहि सँग प्रभु लीला कीन्हा। कृपा कीन्ह मोहि आशिष दीन्हा ॥
श्रीचैतन्य निताई जानउ। वृन्दावन प्रभु लीला वर्णउ ॥

भाषा महँ तेहि को कियो, वृजभूषण तब दास।
गौर चरण रज मोहिं मिले, और न दूजी आस ॥३३॥

॥ इति श्रीचैतन्य भागवते मध्य खण्डे महामहाप्रकाश वर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥

दशम अध्याय

राग मल्लार

निधि गौरांग—

कहाँ सों आयो यह प्रेम सिन्धु।
अनाथन के नाथ प्रभु पतितन के वन्धु ॥ध्रु०॥

जय जय विश्वम्भर द्विजकुल सिंह।
जय होय तव जेते चरन के भृंग॥
जय श्री परमानन्द पुरी के जीवन।
जय जय दामोदर स्वरूप प्राण धन॥
जय रूप सनातन प्रिय महाशय।
जय जगदीश गोपीनाथ के हृदय॥

यहि विधि नवद्वीप विश्वम्भर। करत चरित प्रभु परम मनोहर॥
मध्य खण्ड लीला बहु करेऊ। श्री निवास निज गृह पर देखेउ॥
भाग्यवान अतिसय श्रीवासा। देखेउ निजगृह महाप्रकासा॥
छल विहीन प्रभु सेवा कीन्हा। याही ते प्रभु दर्शन दीन्हा॥
श्री निवास गृह रहत निताई। पिता कहत श्रीवास सदाई॥
बाल्य भाव निशि दिन सो रहई। दुग्ध पान मालिनि कर करई॥
कबहुँ दुग्ध स्तन महँ नहिं होई। श्री निताइ परसत सो बहई॥
मालिनि प्रभु शक्ती सब जानहिं। शिशु समान प्रभु कहँ सो देखहि॥
श्री गौरांग निबारन कीन्हेउ। मालिनि तेहि ते कोउ नहिं कहेउ॥
प्रभु विश्वम्भर कहेउ निताई। "झगड़ा कोउ सन करेउ न भाई॥

चंचलता तुम करब नहिं, श्रीनिवास गृह माँहि।
मानहु दृढ़करि वचन मम, सत्य कहौं तव पाहिं॥१॥

प्रभू वचन सुनि नित्यानन्दा। विष्णुहि सुमिरि कहत सुखकन्दा॥
हम चंचलता कबहुँ न करहीं। आपन सम तुम समुझहु सबहीं॥
विश्वम्भर कह 'भल तोहिं जानौं'। श्री निताइ कह, "हम नहिं मानौं॥
मोर दोष तुम परगट कहहू"। विश्वम्भर कह, "सब तुम सुनहू॥
प्रेम वृष्टि तुम सब पर करहू। कछु विचार नहिं मन महँ धरहू"॥
श्री निताइ कह यह सब कर्मा। केवल पागल कर है धर्मा॥
शुद्ध प्रेम निज मोहिं न देऊ। मोहिं न देइ आपुहि आस्वादउ॥
मोर दोष तुम काहे कहऊ। सब सन निन्दा मेरो करऊ"॥
गौर कह्यो, "सब लोग न जानत। तोर दोष सब हमरो मानत॥
यहि ते हम शिक्षा तोहिं देहीं। कृपा करहु मानहु तुम हमहीं॥

हँसि कह नित्यानन्द प्रभु, सत्य बचन तब तात।
यदि चञ्चलता करहिं हम, कहेहु मोहि तुम बात॥ २॥

निश्चय चञ्चल हम तो अहहीं। प्रभू निरखि अस कहि बहु हँसहीं॥
प्रेम मगन प्रभु कछु नहिं जानत। कटि को वस्त्र शिरहि पर बाँधत॥
होइ दिगम्बर प्रेम सों नाचत। प्रेम भरे आँगन महँ डोलत॥
श्री निवास हरिदास गदाधर। हँसत सबै तेहि देखि दिगम्बर॥
शिक्षा कर प्रसाद यह अहई। भूलि जात सुधि तन सब कहई॥
गौर कहेउ, "तुम यह का करऊ। घर गृहस्थ कर कछु तौ समुझउ॥
हम पागल नहिं अबहीं कहेऊ। भूलि गयउ तुम जो कछु भाषेउ॥"
आनँद मगन निताई नाचत। कछु सुधि नहि सो सुनि नहिं पावत॥
स्वयं पकड़ि प्रभु बसन धरावहि। श्री निताई लीला को बूझहि॥
श्री चैतन्य वचन बस मानहिं। श्री निताई नहि औरहिं समुझहिं॥

श्री निताई निज हाथ सों, भात कबहुँ नहि खायँ।
श्री मालिनि निज पुत्रवत्, भोजन ताहि कराय॥ ३॥

श्री निताई कर अमित प्रभावा। भली भाँति मालिनि लखि पावा॥
पुत्र समान ताहि सो सेवत। धन्य देवि प्रभु सेवा पावत॥
एक दिना एक कागा आयो। पीतल की कटोरि लै भाग्यो॥
एक डालि पर बैठ्यो जाई। तुरत तहाँ ते गयो उड़ाई॥
मालिनि मन चिंता अति भयऊ। पुनः काग तहहीं चलि आयउ॥
सो कटोरि तेहि मुँह नहिं देखी। चिंतित मालिनि भई विशेखी॥
श्री निवास कर उग्र स्वभावा। ठाकुर कर घृतपात्र नसावा॥
सुनतहि क्रोध करब अति तेही। यह मन समुझि दुखित भइ अतिही॥
सूझत कोउ उपाय नहिं रोवहिं। श्री निताई यह लखिके पूछहिं॥
काहे रोवहु कहु मोहिं पाहीं। सकल दुःख हम नाशौं अबहीं॥

कहेहु मालिनि सुनहु प्रभु, काग लै गयो भाग।
ठाकुर के घृतपात्र को, देखहु सोई काग॥ ४॥

कहेउ निताई, चिन्ता छाँड़हु। पात्र देब हम चुप ह्वै बैठहु॥
कागा सों तब प्रभु हँसि कहेऊ। सुनहु काग झट पात्रहिं आनउ॥
सब के हृदय निताई बसहीं। आज्ञा सब जन पालन करहीं॥
उड्यो काग प्रभु आज्ञा सुनतहि। दुखित मालिनी सोइ दिशि देखहिं॥
कछू क्षण महँ कागा पुनि आयो। मालिनि निकट पात्र सो राख्यो॥
मालिनि प्रभु प्रभाव सब जानइ। हाथ जोड़ि अस्तुति सो करइ॥
"मृत गुरु पुत्रहिं जो जन आन्यो। यम के घर सों जो सुत लायो॥
सकल भुवन जो पालन करई। का बड़ि बात जो पात्र मँगावइ॥
पृथ्वी जेहि के शिर पर सोहै। भार न समुझत सब मन मोहै॥
जासु नाम सब दुःख नशावहिं। का बड़ि बात जो पात्र मगावहिं॥

महाप्रभावहिं देखि कै, तव चरणन ढिग जाय।
श्री कालिन्दी स्तुति कियो, प्रेम सहित हर्षाय ॥५॥[1]

चौदह भुवन को रक्षक जोई। का बड़िबात जौ पात्र मँगावई ॥
पूर्व युगहिं लक्ष्मण तुम भयऊ। वन महँ राम संग तुम गयऊ ॥
रक्षक सीता कर तुम रहेऊ। चरण भिन्न ऊपर नहिं देखेउ ॥
तव महिमा को वरनै पारा। कुल समेत रावण संहारा ॥
सदा राम सेवा मन लावा। का बड़ि बात जो पात्र मँगावा ॥
तदपि कर्म तव अल्प न अहई। करहु जोइ सब सत्यहिं अहई ॥
वेद पुराण सत्य सब भाषहिं। तव महिमा को पार न पावहिं" ॥
श्री निताइ स्तुति सुनिकै हँसहीं। बाल स्वभाव मातु सन कहहीं ॥
माता कछु भोजन कहँ देऊ। वचन सुनत मन हर्षित भयऊ ॥
दुग्ध श्रवहिं लखि नित्यानन्दा। बाल स्वभाव पियहिं सुखकन्दा ॥

अति अचिन्त्य प्रभुकर चरित, कहा कहौं हम ताहि।
विदित जगत महँ सब अहै, भक्त समुझि हर्षाहिं ॥६॥

प्रभु कर सकल अलौकिक कर्मा। समुझत सोइ जानत सत् धर्मा ॥
प्रेमभाव महँ निशदिन रहई। नवद्वीप महँ चहुँ दिशि फिरई ॥
परम तेजमय तासु स्वरूपा। देखि चकित पुरनर प्रभु रूपा ॥
कोउ योगी कोउ ज्ञानो कहहीं। भक्त कोउ कहि अति सुख लहहीं ॥
कोउ मानत कोउ मानत नाहीं। तबहूँ मोर प्रभू सो आहीं ॥
एतेहु पर जे निन्दा करहीं। निश्चत लात हनव तेहि शिरहीं ॥
एहि विधि श्री निवास गृह रहहीं। गौर सदा रक्षा तेहि करहीं ॥
गौर प्रभु एक दिन गृह माहीं। लक्ष्मी सँग बैठे हर्षाहीं ॥
लक्ष्मी प्रभु कहँ बीरा देहीं। आनन्द सों प्रभु सेवा करहीं ॥
जब लक्ष्मी सँग गौर विराजहिं। शची मातु अतिसय सुख पावहिं ॥

माता के सब भाव को, जानत गौर सुजान।
लक्ष्मी सँग प्रभु रहत हैं, याही तें गुणखान ॥ ७ ॥

ताही समय निताई आए। प्रेम मगन सुधिबुधि विसराए ॥
बाल्य भाव महँ वसन न पहिरे। प्रभु आगे ठाढ़े कर जोरे ॥
प्रेमाविष्ट लाज नहिं करई। गौर कह्यो "किमि वस्त्र न पहिरई" ॥
श्री निताई बस "हय हय" करई। "पहिरहु वस्त्र" गौर तब कहई ॥
"अब हम जाव" निताई कहेऊ। गौर कहेउ काहे अस करऊ ॥
श्री निताइ सुनि कह प्रभु पाहीं। "भोजन मोहिं मिलत अब नाहीं ॥"
गौर कह्यो "हम का तोहि कहेऊँ। तुम दूसर ही उत्तर देऊ ॥"
श्री निताइ प्रभु सन तब कहेऊ। "प्रभु दशवार सुनहु हम गयऊँ ॥"
"मोर दोष नहिं" प्रभु कह तबहीं। "इहाँ न आई" सो पुनि कहई ॥
"पहिरहु वसन" गौर पुनि कहई। "भोजन देहु" निताई बोलई ॥

---

१. श्री कालिन्दी (यमुना) के विवाह का विवरण भा० १०।५८ अध्याय में देखिए ॥

श्री चैतन्य के भाव महँ, मत्त निताई राय।
गुनत कछू बोलत कछू, श्री निताइ सुख पाय ॥८॥[1]

उठकर वस्त्र गौर पहिरावा। प्रेम मगन गौरहिं मन भावा ॥
श्री निताइ कर चरितहिं देखी। हँसत आइ आनन्द विशेखी ॥

---

१. श्री गौरांग के अवतार के मुख्य तीन उद्देश्य थे। प्रथम शुद्ध भक्ति शास्त्र का प्रचार करना। द्वितीय भजन किस प्रकार करना चाहिए यह स्वयं आचरण (भजन) कर जीवों को सिखलाना। तीसरा दुःखित जीवों को हरिनाम बाँट कर सुखी बनाना। श्री गौरांग का विद्याविलास पूरा हो गया। भक्तों के साथ कीर्तन हो रहा है। महा प्रकाश में भक्तों को खुलकर भगवान के दर्शन हुए। भगवान पूर्णरूप से भक्तों के निकट प्रगट हो गए। अब नाम प्रचार करना है। प्रथम नवद्वीप में होगा और तत्पश्चात् पूरे भारत भर में। भगवान के अवतार का एक एक क्षण बड़ा मूल्यवान होता है। अवतार का आधा समय बीत गया। श्री गौर चौबीस वर्ष के हो रहे हैं। नदिया में शीघ्र प्रचार कर तथा संन्यास लेकर बाहर जाना है। श्री गौर कीर्तन में मग्न हैं।

भक्त ही भगवान के मार्ग प्रदर्शक होते हैं। इसी हेतु भी नित्यानन्द ने इन गूढ़ संकेत भरे शब्दों में श्री गौर से प्रार्थना की कि हमको अब आज्ञा हो और हमलोग नदिया में प्रथम नाम प्रचार कर जीवों का उद्धार करें। इसी अध्याय में पहिले श्री गौर ने श्री निताई से कहा है कि तुम प्रेम के भंडारी हो और बिना समझे बूझे प्रेम बाँटते हो अर्थात् चुप क्यों बैठे हो, नाम बाँटो। श्री नित्यानन्द प्रेमरूपी मदिरा का पान कर अपने को भूले रहते हैं। श्री गौर का बचन सुनकर चैतन्य हो गए। प्रभु का आशय समझ कर आज आज्ञा माँग रहे हैं और कह रहे हैं कि हम भूखे हैं। श्री निताई की भूख (इच्छा) नाम बाँटने की है। भक्तों का पेट भगवन्नाम से भरता है, अन्न से नहीं। भक्तों में सब सामर्थ्य रहते हुए भी वे बिना भगवान की आज्ञा मिले कोई काम नहीं करते।

शेष के अवतार श्री नित्यानन्द स्वभाव से ही दिगम्बर हैं। आज प्रेम से अधीर होकर भगवान के सामने खड़े हैं। श्री गौर उनसे कह रहे हैं कि कपड़ा पहिरो। श्री निताई उत्तर दे रहे हैं कि हम जाते हैं अर्थात् हमारा काम इस अवतार में जीवों को नाम बाँटने का है वह हो नहीं रहा है। हम यहाँ रहकर क्या करेंगे। प्रभु ने कहा कि ऐसा क्यों करते हो? आपने उत्तर दिया कि भोजन नहीं मिलता। अर्थात् बिना आज्ञा मिले नाम नहीं बाँट सकते। श्री गौर ने कहा कि हमने तो कह दिया अब दूसरी बात क्या कहते हो। श्री निताई ने कहा कि दशबार (अवतार) आ चुके लेकिन प्रेम नहीं बाँटा। श्री गौर ने कहा कि इसमें हमारा दोष नहीं। तुम प्रेम के भंडारी हो बाँटो। श्री निताई ने कहा कि 'एथानाही आई'' अर्थात् आपका आज्ञापत्र हमको नहीं मिला। श्री गौर ने कहा कि अच्छा भाई कपड़ा तो पहिरो। उन्होंने पुनः भोजन (आज्ञा) माँगा। श्री गौर चुप हो गए। "मौनं सम्मति लक्षणं।" चुप होना बात मानना है। श्री गौर ने उठकर श्री नित्यानन्द को कपड़ा पहिराया और आगे के दूसरे अध्याय में जी खोलकर नाम बाँटने तथा पतित से पतित जीवों का उद्धार करने की आज्ञा (शक्ति) दी।

श्री अद्वैताचार्य ने बड़ी तपस्या कर भगवान का आह्वान किया अर्थात् बुलाया। श्री गौरांग के रूप में भगवान आए। भक्तों की इच्छा पूरी की। प्रभु का कष्ट तथा कार्य पूर्ण हुआ देख श्री अद्वैताचार्य ने विसर्जन करना चाहा और एक भक्त के हाथ एक पद लिखकर जगन्नाथ पुरी में श्री गौरांग के पास भेजा। उस पद में एक पंक्ति यह थी "हाटे ना बिकाय चाउल (चाउर)"। श्री गौर यह पद पढ़कर हँसे और बोले 'आचार्य बड़े चतुर हैं। आवाहन तथा विसर्जन करना भलीभाँति जानते हैं।' भक्त लोग यह प्रहेलिका (पद) कुछ न समझ सके। श्री गौर का वचन सुनकर धीरे धीरे बाद में समझे और अपार दुःख सागर में डूबने लगे।

प्रभु की इच्छा से हमारे समझ में जो भाव आया हमने लिखा। यदि भक्त लोग इसको उचित समझें तो ठीक है। यदि अनुचित समझें तो हमको क्षमाकर इसको त्याग दें।

निज सुत विश्वरूप सम देखहिं। वचन सुतहि सम कानन लागहिं ॥
कबहुँ कबहुँ सोइ रूपहिं देखत। कहत न कोउ सन सुत सम मानत ॥
गौर निताई दोउ सुत मानहिं। स्नेह दोउ सन करहिं समानहिं ॥
स्वस्थ निताई जबहों भयऊ। पहिरेउ वस्त्र देखि सब हर्षेउ ॥
लड्डू पाँच मातु तेहिं दीन्हा। भोजन एक निताई कीन्हा ॥
और चार कहँ इत उत फेंकेउ। शची दुखित होइ तासों पूछेउ ॥
"काहे फेंकेउ" सुनि सो कहेऊ। "काहे एक साथ तुम दीनेउ" ॥
आइ कहेउ "अब दूसर नाहीं"। श्री निताई कह खोजहु ताही ॥

घर भीतर देखत भई सोइ लड्डू तहँ जाय।
फेंक्यो याको बाहरहि, केहि विधि गृह महँ आय ॥६॥

धूल पोंछि सोइ लड्डू लेई। चकित होइ बाहर सो आई ॥
खात सोइ लड्डू तेहि देख्यो। पूछ्यो, यह लड्डू कहँ पायो ॥
श्री निताइ कह जहँ हम फेंकेउ। तोर दुःख लखि पुनि तेहि आनेउ ॥
अति अद्भुत कह बात विचारी। श्री निताइ महिमा अति भारी ॥
आइ कह्यो श्रीपाद निताई। हम सों माया नाहिं सोहाई ॥
जानहुँ हम तुम ईश्वर अहहू। तब काहे मो कहँ तुम ठगहू ॥
श्री निताइ अति बालस्वभाऊ। माता चरन धरन सो धायउ ॥
माता भागि गई गृह माहीं। अति अगाध प्रभु चरित लखाहीं ॥
सुकृती समुझहिं सो सुख पावहिं। दुष्कृति दोष देइ दुख पावहिं ॥
श्री निताइ निन्दा जे करहीं। गंगा हू तेहि फल नहिं देहीं ॥

वैष्णव के अधिराज हैं, श्री अनन्त भगवान।
शेष महीधर जगत प्रभु, केहि विधि करौं बखान ॥१०॥

जेहि तेहि विधि निताइ मम अहहीं। तासु चरन हिरदय महँ बसहीं ॥
विनती वैष्णव जन सों करहीं। मोरे प्रभु निताइ नित रहहीं ॥
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द जान। वृन्दावन दास प्रभु गुण कियो गान ॥
भाषा महँ कीन्ह्यो व्रजभूषन। वैष्णव पद रज लहौं प्रेमधन ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खंडे नित्यानन्द चरित्र वर्णन नाम दशमोध्यायः ॥

एकादश अध्याय

गौर निताई यहि विधि नितहीं। नवद्वीप लीला बहु करहीं ॥
श्री निताइ बालक सम रहहीं। सकल अलौकिक कर्म सो करहीं ॥
सबहिं देखि अति प्रेम सों बोलहिं। आपुहि आपु नृत्य करि गावहिं ॥
हँसहिं बहुत अरु वाद्य बजावहिं। स्वानुभाव आनँद हुंकारहिं ॥

लखि निताइ श्रद्धा सब करहीं। अति अपूर्व लखि सब आदरहीं ॥
अतिसै प्रबल गंग कर धारा। वर्षा महँ बहु लहर अपारा ॥
बहुत जन्तु तेहि महँ तब रहहीं। श्री निताइ काहू नहिं डरहीं ॥
निर्भय होइ पौंड़हिं जल माँहीं। देखि लोग सब अचरज खाहीं ॥
तदपि निताई जल महँ पौंड़हिं। शेष भाव गंगा महँ डोलहिं ॥
समुझत नहिं कोउ अति भय पावहिं। हाय हाय कहि प्रभु गोहरावहिं ॥

प्रेमानन्दहिं जबहिं प्रभु, मूर्छागत ह्वै जाहिं।
रहहिं अचेत कयक दिन, समुझि सकै को ताहि ॥१॥

प्रभु चरित्र अति अगम अपारा। को अस कवि जो वरणै पारा ॥
एक दिना प्रभु जहाँ विराजहिं। श्री निताइ आए तेहि स्थानहिं ॥
बाल्यभाव महँ हँसत सदाहीं। वसन हीन नयनन जल जाहीं ॥
करि हुंकार सदा यह कहहीं। "मेरे प्रभु निमाइ नित अहहीं ॥"
हँसे गौर प्रभु देखि दिगम्बर। परम ज्योतिमय रूप मनोहर ॥
निज मस्तक कर वस्त्र उतार्यो। तुरत गौर प्रभु तेहि पहिरायो ॥
दिव्य गन्ध तेहि अंगहिं लेप्यो। वनमाला तेहि के गल डाल्यो ॥
आसन पर सन्मुख बैठाई। करत स्तुती प्रभु गौर निमाई ॥
सकल भक्त हर्षित होइ सुनहीं। दोउ प्रभु लखि हर्षित अति होहीं ॥
"सत्य नाम तव नित्यानन्दा। नित्यानन्द रूप जिमि चन्दा ॥

आनन्दमय तव रूप यह, रामरूप गुणखान।
भजनहिं केवल कर्म तव, और कछू नहिं जान ॥२॥

भोजन शयन सकल तव कर्मा। भजन छाँड़ि नहिं कछु तव धर्मा ॥
समुझि सकै को यहि जग तुमहीं। तुम जहँ रहहु कृष्ण तहँ रहहीं" ॥
श्री चैतन्य प्रेम रस माँहीं। करहिं कहहिं प्रभु मानत ताहीं ॥
गौर निताई सन पुनि कहेहू। "निज कौपीन एक मोहिं देहू ॥
यह इच्छा बड़ मम मन माहीं।" अस कहि लीन एक तेहि पाँहीं ॥
बहुत भाग तेहि कर प्रभु कीन्हा। एक एक भक्तन कहँ दीन्हा ॥
प्रभू कहेउ, "मस्तक महँ बाँधउ। यह प्रसाद सब सो बड़ जानउ ॥
श्री निताइ परसाद प्रभावा। विष्णु भक्ति पावत मन भावा ॥
श्री निताइ महँ पूर्ण विराजत। कृष्ण शक्ति निश्चय हम भाषत ॥
कृष्णहि कर द्वितीय तनु जानहु। संगी सखा बन्धु सब मानहु ॥

श्री निताइ को चरित सुनु, अति अगम्य सब पाँहि।
सब जग के रक्षक अहैं, मित्र सबहि के आहिं ॥३॥

कृष्ण प्रेम मय सब व्यवहारू। सेवत इनहिं जाय भव पारू ॥
श्री निताइ सेवा जे करहीं। कृष्ण भक्ति निश्चय सो लहहीं ॥
यह कौपीन शिरहि महँ बाँधेउ। प्रेम सहित यहि पूजा करेऊ" ॥
प्रभु आज्ञा सुनि वैष्णव सबही। बाँधेउ शिर महँ सोइ तत्क्षणहीं ॥

प्रभू कहेउ सब काहू सुनहू। "श्री निताइ चरणोदक लेहू॥
पान करब पादोदक जोई। कृष्ण भक्ति पैहैं जन सोई॥"
प्रभु आज्ञा सुनि कै सब काहू। चरन पखारेहु भरे उछाहू॥
पियहिं चरण जल नाहिं अघाहीं। श्री निताइ निज सुधि महँ नाहीं॥
गौर वैठि सन्मुख सब जन के। पादोदक बाँटत मन भरि के॥
करि कै चरणोदक कर पाना। मत्त प्राय सब भए सुजाना॥

"हरि हरि" कहि कोउ कहत है, धन्य भए हम आज।
"भव बन्धन छूटेउ सकल", सुनि भा सुखी समाज॥४॥

अति हर्षित होइ भाषत कोऊ। "कृष्ण दास निश्चय हम भयऊँ॥"
"सु प्रभात" कोउ कहत सराही। मीठो कहि कोउ पियत अघाही॥
"अजहूँ मुँह मिठास नहिं जाई।" आनँद मगन कहत हर्षाई॥
पादोदक निताइ कर सुनहू। अमित प्रभाव कहाँ लगि कहहूँ॥
पान करत सब भए अधीरा। चञ्चल मति कोउ धरत न धीरा॥
नृत्य करहिं गावहिं कोउ हँसहीं। प्रेम मगन कोउ भुइँ पर गिरहीं॥
कोउ हुंकार करहिं कोउ गर्जहिं। प्रेमानन्द नृत्य करि गावहिं॥
करत भए पुनि उठि कै सबही। महा कृष्ण-संकीर्तन तबहीं॥
करि हुंकार गौर प्रभु उठि कै। कीर्तन करन लगे मनभरिके॥
श्री निताइ सुनि कै उठि धाए। नृत्य करत दोउ प्रभु मन भाए॥

चहुँ दिशि घेरे भक्तगण, मध्य गौर दोउ भाइ।
करहिं नृत्य लखि भक्त सब, मन महँ अति हर्षाइ॥५॥

कोउ काहू शरीर पर गिरहीं। कोउ काहू कहँ कसिकै धरहीं॥
चरन धूलि कोउ कोउ कर लेहीं। गला पकड़ि कोउ रोदन करहीं॥
बहुत भाँति कोउ रूप बनावहिं। प्रभुहू को किछु भय नहिं मानहिं॥
प्रभू भृत्य सब साथहिं नाचहिं। आनँद मगन हरी कहि बोलहिं॥
गौर निताई कीर्तन करहीं। एक संग सब लखि सुख लहहीं॥
श्री निताइ अति सुख सों नाचहिं। पृथ्वी कंपित तेहि पद तालहिं॥
प्रेम रसहि महँ मत्त निताई। भक्तन सँग नाचत हर्षाई॥
यह लीला कर अन्त न भाई। वर्णत वेद ताहि मन लाई॥
यहि विधि दिन भरि गौर गोपाला। नृत्य कीन्ह आनन्द विशाला॥
पुनि बैठे भक्तन संग जाई। तीन तालि निज हाथ बजाई॥

प्रभु सब सन अति प्रेम सों, "कहेउ सुनहु मम बात।
नित्यानन्द स्वरूप कर, भक्ति करहु दृढ़ तात॥६॥

इन महँ श्रद्धा जे जन करहीं। करहिं प्रीति हम सों सोइ जनहीं।
इनको चरन देव सब पूजहिं। ब्रह्मा शिव सेवा तेहि चाहहिं॥
यहि ते करहु प्रीति सब इनसों। द्वेष करेहु जनि कोऊ प्रभु सों॥
मोर भक्त होइ इनहिं न मानत। मेरो सो प्रिय नहिं सब जानत॥

इन कर वायु जासु तनु लगिहैं। कृष्ण भक्ति निश्चय सो पैहैं" ॥
प्रभू वचन सुनि सब अति हर्षे। जय जय कहि लोचन जल वर्षे ॥
भक्ती सों लीला यह सुनहीं। गौर चरन निश्चय तेहि मिलहीं ॥
श्री निताइ कर चरित अपारा। जेहि देखेउ सोइ समुझेउ सारा ॥
प्रभु प्रभाव जानेहु तेहि सवही। श्री चैतन्य भक्त जे अहही ॥
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान। वृन्दावनदास कियो प्रभु गुन गान ॥

वृजभूषण भाषा महँ, कीन्ह्यो सोइ मतिमंद।
कृपा करहु प्रभु दीन पर, हरहु सकल दुख द्वंद्व ॥७॥

॥ इति श्री चैतन्यभागवते मध्यखण्डे नित्यानन्द प्रभाव वर्णनं नाम एकादशोध्यायः ॥

द्वादश अध्याय

जै जै श्री गौरांग प्रभु, महाप्रभू श्रीगौर।
श्रीकृष्ण-चैतन्य प्रभु, श्री निमाइ भजु गौर ॥१॥

नवद्वीप महँ प्रभु विश्वम्भर। यहि विधि लीला करत मनोहर ॥
सब जन लीला देख न पावत। पूरव सम निमाइ कों देखत ॥
प्रभु आवेश न कोउ लखि पावै। प्रभु चाहै जेहि ताहि दिखावै ॥
भक्तन संग रहत प्रभु जवहीं। प्रेम भक्ति महँ मत्त सो रहहीं ॥
वाहर होत सो भाव लुकावहिं। श्री निमाइ पंडित सब जानहिं ॥
एक दिना अति हर्षित होई। श्री निताइ हरिदास सों कहई ॥
"सुनहु निताई अरु हरिदासा। मम आज्ञा दोउ करहु प्रकासा ॥
प्रति घर घर तुम दोऊ जाई। यह भिक्षा माँगहु सब ठाईं ॥
"कृष्ण कहहु अरु कृष्णहि भजहू। कृष्णहि केवल मन मह गुनहू ॥
यहि ते अधिक न कछु तुम कहेहू। नहिं काहू कहँ बोलन देहू ॥

दिन बीते मोसन कहेहु, दिन भर की सुधि आय।
जे नहिं भजिहैं कृष्ण कहँ, हम मारब तेहि जाय" ॥२॥

वैष्णव गण सुनि प्रभु की वानी। भए मगन मन महँ सुखमानी ॥
प्रभु आज्ञा कोउ मेट न सकहीं। नाम प्रचार करन दोउ चलहीं ॥
प्रभु आज्ञा निताइ शिर धरहीं। जे यह नहिं मानहिं सो मरहीं ॥
श्री अद्वैतहिं जे जन भजहीं। गौर न मानि नरक सो गिरहीं ॥
आज्ञा सुनि घर घर दोउ जाई। प्रभु उपदेश कहत हर्षाई ॥
"भजहु कृष्ण अरु कृष्णहिं सुमिरहु। बोलहु कृष्ण सदा सुख लहहु ॥
कृष्णहि सबके प्रान अधारा। कृष्णहि जीवन धन परिवारा ॥
ऐसे कृष्ण भजहु सब जाई। जीवन व्यर्थ न खोवहु भाई" ॥

यहि विधि कहत सकल गृह जाहीं। नदिया नगर माँझ सब पाहीं ॥
संन्यासी कहँ लखि सब काहू। भोजन हित कह भरे उछाहू ॥

श्री निताइ हरिदास तब, कहत सबहि समुझाइ।
"हमरो भिक्षा नाम है, भजहु कृष्ण मन लाइ" ॥३॥

यही कहत दोउ जन चलि जाहीं। जे सुकृती ते अति हर्षाहीं ॥
अति विचित्र सुनि इन कर बानी। निज निज मन सब कहत बखानी ॥
"कहब कहब", कोउ कोऊ कहहीं। "पागल ये सब" कोऊ बकहीं ॥
"मन्त्र दोष सों पागल भयहू। काहे हम कहँ पागल करहू ॥"
गौर नृत्य देखन जे गयऊ। द्वार बंद देखन नहिं पायउ ॥
तिनके गृह जब ए दोउ गमनहिं। "मार मार" कहि के उठि धावहिं ॥
भव्य भव्य जन पागल भयऊ। श्री निमाइ सब लोग बिगाड़ेउ ॥
चोर दूत कोऊ जन कहहीं। वेश बदल घूमत प्रति घरहीं ॥
भक्त लोग यहि विधि नहिं घूमहिं। नाम प्रभू कर नहिं गोहरावहिं ॥
पुनि ऐहैं बाँधव हम सबहीं"। ऐसे दुष्ट वचन सब कहहीं ॥

सुनि के ऐसे वचन कहँ, हँसत दोउ मन माहिं।
प्रभु आज्ञा बल दोउ जन, भय मानत कछु नाहिं ॥४॥

सकल दिवस यहि विधि दोउ घूमहिं। समाचार सब प्रभुहिं सुनावहिं ॥
एक दिना मारग महँ आयउ। दस्यू सम मद्यप जन दोऊ ॥
ये दोउ दुष्ट चरित बड़ अहहीं। अति पापी हिंसा नित करहीं ॥
मतवाला सम दुर्जन भारी। भय पावत लखि के नरनारी ॥
विप्र होइ सब करत कुकर्मा। मद्य मांस सेवत तजि धर्मा ॥
कोतवाल नदिया कर अहहीं। डाका चोरी निशि दिन करहीं ॥
दुःख देहिं जाकहँ धरि पावहिं। दूरहिं ते इन कहँ सब देखहिं ॥
ताही समय निताई देखेउ। गला पकड़ि झगरत दोउ पायउ ॥
कबहु दोउ मीठे स्वर बोलहिं। बाल पकड़ि दोउ कबहूँ झगरहिं ॥
विप्र होइ सब नाशेहु इनहीं। मन्द बचन मुख सों सब कहहीं ॥

सदा मद्य सेवन करत, कहत न वचन सँभार।
पाप कौन जो नहिं कियो, बच्यो न कोऊ द्वार ॥५॥

सकल पाप कीन्हेउ इन दोऊ। वैष्णव निन्दा केवल छाँड़ेउ ॥
रातदिना विषइन सँग रहहीं। यहि ते निन्दा कबहुँ न करहीं ॥
वैष्णव निन्दा जे जन करहीं। सकल धर्म करि तबहू मरहीं ॥
संन्यासी यदि निन्दा करई। मद्यप सो बड़ पापी अहई ॥
मद्यप कर उद्धार सदाहीं। निन्दक कर भल कबहूँ नाहीं ॥
विद्या पढ़ि कोउ निन्दा करहीं। श्री निताइ कर, सो जन मरहीं ॥
जगा मधा आपस महँ लड़हीं। श्री निताइ हरिदास सो लखहीं ॥
श्री निताइ लोगन सों पूछेउ। "कौन जाति अस काहे भयऊ" ॥

लोग कहेउ, "अगाह्य ये अहहीं"। "मात पिता बड़" सब जन कहहीं ॥
"उत्तम कुल महँ जनम सोहावा। दोष कछु कुल महँ नहिं आवा ॥

धर्म छाँड़ि कै दोउ जन, पाप करत दिन रात।
विप्र सकल इन कहँ तज्यो, मानहु प्रभु मम बात ॥६॥

दुष्टन संग चहूँ दिशि फिरहीं। इन कहँ लखि सब काहू डरहीं ॥
पाछे गृह महँ आग लगावैं। लूट लेइँ अरु बहु दुख देवैं ॥
इन सों पाप बच्यो नहिं कोई। मद्य मांस भक्षण कर सोई ॥"
सुनि निताइ दुःखित अति भयऊ। तेहि उद्धार करन मन लयऊ ॥
पतित उधारन गौर पधारे। अस पापी हम कतहुँ न पाए ॥
भक्तन ढिग प्रभु करत प्रकासा। बाहर नहिं कोउ कर विश्वासा ॥
विन प्रभाव देखे को मनिहै। प्रभु यदि इन दोऊ अपनैहै ॥
प्रभु प्रभाव कहँ सब जन लखिहै। तब हम निश्चय दास कहैहैं ॥
इन दोउन मुख नाम कहाऊँ। गौर दरश इन दोउ कराऊँ ॥
मदिरा मत्त रहत जेहि भाँती। नाम रटैं तेहि विधि दिन राती ॥

मोर प्रभूकहि, यदि दोऊ, नयनन नीर बहाहिं।
सार्थक नाम प्रचार मम, गौर शरण जब जाहिं ॥७॥

जे जन इनकी छाया छुइकै। गंगा स्नान कियो दुख करिकै ॥
ते सब जन इनहीं कहँ देखी। मानहि निज कहँ धन्य विशेखी ॥
धन्य होब हम तबही भाई। सकल परिश्रम मम होइ जाई ॥
श्री निताइ गुन अगम अपारा। पतित त्रान हित प्रभु अवतारा ॥
हरीदास सों तब प्रभु कहहीं। "इन कर दुर्गति देखहु तुमहीं ॥
विप्र होइ उलटो व्यवहारू। कतहुँ नाहिं इन कर निस्तारू ॥
जे सब यवन तुमहिं धरि धारयो। तिनकर हित तुम मनहिं विचारयो ॥
इन कर भल यदि मन सों चाहहु। तब उद्धार होव दोउ जानहु ॥
तव संकल्प प्रभू सब मानत। निज मुख प्रभू कह्यो हम जानत ॥
प्रभु प्रभाव सब काहू जनिहै। यदि उद्धार दोउ जन ह्वैहै ॥

अजामील उद्धार कहँ, गावत वेद पुरान।
प्रत्यक्षहिं अब सब लखै, जानै सकल जहान" ॥८॥

हरीदास सुनि मनहिं विचारत। श्री निताइ कर तत्व सो जानत ॥
"दोउ उद्धार भए" सो समुझेहु। श्री निताइ सों पुनि सो भाषेहु ॥
"तुम जो चहिहौ प्रभु सोइ करिहैं। निश्चय प्रभु इन कहँ उद्धरिहैं ॥
हम कहँ तुम काहे भरमावहु। मोर परिक्षा पुनि पुनि करहू" ॥
हँसि निताइ तेहि गले लगायहु। अति प्रसन्न होइ वचन उचारेहु ॥
"प्रभु आज्ञा सों हम सब देहीं। इन सों सोइ मन्त्र अब कहहीं ॥
"सब कोउ कृष्ण भजहिं" प्रभु कहेउ। तेहि महँ पापी निश्चय समझहु ॥
नाम प्रचार दोउ हम करहीं। नाहिं भजै तो प्रभु सन कहहीं" ॥
तिन सों नाम कहन हित तबही। चले दोउ जन तासु निकटही ॥
साधुलोग सब करत निवारन। उनके निकट जाहु जनि दोउ जन ॥

संन्यासी मानत नहीं, पापी जनमे दोउ।
विप्र धेनु मारत सबै, जाहु निकट जनि कोउ ॥६॥

यदि समीप तुम तिनके जैहौ। उनके कर निज प्राण गँवैहौ ॥
भय सों दूर रहत हम सबही। साहस करि तुम जात निकटही ॥"
तदपि चले दोउ तिनके पासा। कहत कृष्ण उर अधिक हुलासा ॥
निकट जाइकै तिनसों कहेऊ। "कृष्ण कृष्ण तुम कृष्णहि कहऊ ॥
कृष्ण पिता माता धन सबही। प्रभु अवतार सबहिं हित लेहीं ॥
भजहु कृष्ण सब छाँड़ि कुकर्मा। विप्र होइ किमि करहु अधर्मा ॥"
वचन सुनत देख्यो दोउ तिनहीं। क्रोध भरे नयनन सों तबहीं ॥
संन्यासी को भेष निहारो। तदपि न कछु मन माँझ विचारी ॥
"धरु धरु" कहि धाए दोउ भाई। भक्त दोउ तब चले पराई ॥
ठाढ़ रहहु तुम भागहु काहे। अस कहि पकड़न हित दोउ धाये ॥

पाछे से धावत दोऊ, सन्मुख ए दोउ जायँ।
"मानेहु नहिं" यह सब कहत, देखि लोग दुखपाय ॥१०॥

पाषंडी सब मन महँ हँसहीं। उचित दंड विधि इन कँह दीन्हीं ॥
"रक्षा करहु कृष्ण" कोउ कहहीं। सुकृती बुध ब्राह्मण जे अहहीं ॥
अस कहि सो सब जाहिं पराई। पकड़हु कहि धाए दोउ भाई ॥
पकड़ि न सकत मत्त दोउ अहई। श्री निताइ हरिदास सों कहई ॥
"वैष्णव भल ए दोऊ भयउ। प्राण बचै तौ सब कछु मानउ ॥
कह हरिदास, 'नीक अब कहऊ। मोर प्राण तव कारण गयऊ ॥
मद्यप कँह उपदेशहिं दीन्हें। उचित दंड हम दोऊ लीन्हे ॥
प्राण बचै तब हम भल जानैं।" अस कहि दौरि चले भय मानै ॥
चले जाहिं प्रभु अति हर्षाई। पाछे दस्यू आवत धाई ॥
स्थूल शरीर दौरि नहिं सकहीं। तबहूँ दस्यु दौरि कै चलहीं ॥

दस्यु कहहि, "तुम जाहु कँह, नहिं बचिहौ मम पाहिं।
जगा मधा जानेहु नहीं, धरौं तोहिं छिन माहिं" ॥११॥

ऐसे वचन सुनत दोउ जाहीं। राखहु कृष्ण कहत मन माँहीं ॥
"चलि न सकहुँ" अस कह हरिदासा। "चञ्चल सँग पायहु बड़ त्रासा ॥
यवन लोग सों कृष्ण बचायेहु। तोर बुद्धि सों प्राण गँवायेहु ॥"
श्री निताइ कह "हम नहिं चञ्चल। नाम प्रचार हेतु प्रभु बिह्वल ॥
राजा सम आज्ञा सो करई। पंडित हम समुझत नहिं सोई ॥
गौर कह्यो प्रति घर घर जाई। हरीनाम बाँटहु हर्षाई ॥
आज्ञा प्रभु कर नहिं कोउ सुनई। चोर लबार हमहिं सब कहई ॥
आज्ञा बिनु माने नहिं चलई। आज्ञा पालन सों यह होई ॥
प्रभु कर दोष न मानत कोऊ। हम कँह दोषी काहे कहऊ ॥"
यहि विधि बात करत जन दोऊ। दस्युन पाछे आवत देखेउ ॥

दस्यू दोउ मदिरा पिए, सुधि बुधि गई हिराइ।
आपस मँह झगरन लगे, मारग गए भुलाइ ॥१२॥

कँह आए हम सो नहिं जानहिं। इन कँह देखि लोग सब भागहिं॥
श्री निताइ पाछे पुनि देखेउ। दस्युन कँह तहँ नहिं सो पायेउ॥
अति प्रसन्न तब दोऊ मन भाए। श्री विश्वम्भर के गृह आये॥
महाप्रभू बैठे गृह माँहीं। कहत कथा सुन्दर सब पाहीं॥
सुन्दर बदन मदन मन मोहै। घुँघराली अलकैं अति सोहैं॥
बैष्णव सकल चहूँ दिसि राजत। कृष्ण कथा प्रभु सबहिं सुनावत॥
ताही समय निताई आए। प्रभु कँह सब वृत्तांत सुनाए॥
"अति अपूर्व मद्यप दुइ पाए। लोग कहत ये द्विज के जाए॥
कृष्ण नाम उपदेशहु तिनहीं। मारन हित धाए दोउ तबहीं॥
प्रभु की कृपा जियत दोउ आए।" सुनत गौर अतिसै दुख पाए॥

प्रभू कह्यो, "वे कौन जन, उनको है का नाम।
ब्राह्मण होइ काहे करत, ऐसे खोटे काम" ॥१३॥

प्रभु सन्मुख श्रीवास गोसाईं। कहीं सकल तिन कथा बुझाई॥
"ब्राह्मण सुत ये दोऊ भाई। तिनकों नाम जगाइ मधाई॥
जन्म भयो नदिया पुर माँहीं। मद्य पियत निशि वासर जाहीं॥
संग दोष बिगड़े दोउ भाई। बड़ पापी सब जन दुखदाई॥
डरत इनहिं नदिया पुरवासी। वरणि न सक इनके गुणरासी॥"
प्रभू कहेउ "जानेउ भल उनहीं। यहिं आवैं काटौं हम तिनहीं॥"
श्री निताइ कह, "काटौ तुमही। ते दुइ रहत न जैहौं कबहीं॥
बहुत बड़ाई कीन्हे तुमही। प्रथमहिं कृष्ण बोलावहु उनहीं॥
धार्मिक सकल कृष्ण तौ कहहीं। सदा पाप ये दोऊ करहीं॥
भक्ति देइ उद्धारहु इनहीं। "पातकि पावन" जानौं तबहीं॥

हमहिं तारिकै सुनहु प्रभु, पायेहु सुयश महान।
ये दोऊ जब तारिहौ, जानब सकल जहान" ॥१४॥

हँसि करि श्री विश्वम्भर कहेऊ। "जासु कुशल तुम मनहिं विचारेउ।
तुरत भयो उद्धार दुहुन को। मिल्यो दरस तब जब ही तिनको॥
कृष्ण कुशल सब तिनकर करिहैं। तोर मनोरथ पूरन ह्वै हैं॥"
सुखी भए सुनि सब प्रभु बानी। जय जय कहत भए सुखमानी॥
अब उद्धार भयो दोउन को। अस विश्वास भयो सबही को॥
श्री अद्वैत सों कह हरिदासा। "गुप्तमन्त्र हम करहिं प्रकासा॥
चञ्चल सँग प्रभु मोहिं पठावत। रहेउ कहाँ हम सो कत धावत॥
वर्षा ऋतु गंगा मँह पौड़हिं। कुम्भी पकड़न कँह तँह धावहिं॥
हाय हाय कहि तबहिं पुकारहिं। सुनैं नहीं गंगा मँह पौड़हिं॥
गंग किनारे आवैं जबहीं। लरिकन कँह मारत हैं तबहीं॥

डंडा लै आवत तबहिं, तिन सबके पितु मात।
हाथ जोड़ि समुझाहिं सब, ह्वै प्रसन्न तब जात ॥१५॥

दधि घृत ग्वालन को लै भागहिं। हमहिं पकरि मारन सब चाहहिं ॥
सो युग सम यह युग नहिं अहहीं। कन्या लखि ब्याहन कँह कहहीं ॥
बैल पीठ पर चढ़ि शिव कहई। गौ कर दूध पान सो करई ॥
मना करौं मानै सो नाहीं। गारी दै तुमको सो कहही ॥
"तुमरो श्री अद्वैत गोसाईं। हम कहँ उनकर डर कछु नाहीं ॥
गौर प्रभू जेहि ठाकुर कहई। हमरो सो कछु कर नहिं सकई ॥
ठाकुर सन हम कछु नहिं कहहीं। आज प्राण रक्षा प्रभु कीन्हीं ॥
महामत्त मारग मँह दोऊ। पड़े रहे देखत सब कोऊ ॥
हरीनाम उपदेशहु तिनकों। क्रोध भरे धाए मारन कों ॥
प्राण लेइ हम चले पराई। प्रभू कृपा रच्छा हम पाई ॥"

हँसि कह श्री अद्वैत तब, उचित कहेउ तुम तात।
मद्यप कहँ मद्यप मिल्यो, बनि गइ सारी बात ॥ १६ ॥

तीनों मद्यपमिलि एक ठाईं। कीर्तन करब सबहिं सुखदाई ॥
भक्त होइ तुम किमि अस भाषहु। श्री निताइ कँह तुम भल जानहु ॥
सब कँह पागल करब निताई। प्रभु कर चरित वेद सब गाई ॥
भली भाँति हौं जानत अहऊँ। दोउ उद्धार होब तुम समुझहु ॥
दुइ एक दिन भीतर ही देखेहु। निज गोष्ठी महँ दोउ कहँ पेखेहु ॥
यहै कहत अद्वैत गोसाईं। भए क्रोध वश जन सुखदाई ॥
अटपट वचन कहन सो लागे। श्री हरिदास सुनत सुख पागे ॥
सब भक्ती हम शोषण करिहैं। केहि विधि नाचैं सो हम लखिहैं ॥
कल दोउ मद्यप कहँ यहिं लइहौं। भक्ति देइ कीर्तन करवैहौं ॥
गौर संग कीर्तन दोउ करिहैं। जानि लेउ दोउ यहिं चलि अैहैं ॥

कोध देखि अद्वैतकर, हँसि सोचत हरिदास।
शुद्ध भए मद्यप दोऊ, अब नाहीं कछु त्रास ॥ १७ ॥

श्री अद्वैत बचन को बूझै। श्री हरिदास बचन सब समुझै ॥
जेहि कर जस मति सो तेहिं मापी। समुझत उलटो जग संतापी ॥
*करत गदाधर निन्दा सोई। मरत सोई अति दुःखित होई ॥
पत्त एक वैष्णव कर लेई। दूसर कर निंदा जो करई ॥
करि अपराध मरत सो तबहीं। वृथा पाप सिर पर सो लेहीं ॥*
ये दोउ मद्यप चहुँ दिशि फिरहीं। साधु संत कोऊ नहिं गिनहीं ॥
गौर स्नान जेहि घाटहिं करहीं। आए दोउ सोइ स्थान निकटहीं ॥
डेरा दीन्ह तहाँ हर्षाई। मद्यप दुष्ट सबहिं दुखदाई ॥
चिन्तित बहुत भए सब जन जब। निशि महँ कोउ न जाइ इकलो तब ॥
दस पंद्रह जन मिलि कै जाहीं। तदपि सशंक रहत मन माहीं ॥

प्रभु गृह निकटहिं रहत दोउ, कीर्तन सुनि हर्षाहिं।
सोइ बिधि ताली देइके, मद्यप दोउ सुख पाहिं॥ १८॥

कीर्तन सुनत रात्रि महँ जागहिं। वाद्य सकल कीर्त्तन महँ बाजहिं॥
मदिरा मत्त गान सुनि नाचहिं। दूरहिं ते कीर्तन सुनि पावहिं॥
सुनि कै नाचहिं अरु मद पीयहिं। जबलौं कीर्तन होय सो गावहिं॥
कीर्तन सुनि उठिके पुनि नाचहिं। मदिरा मत्त कछू नहिं जानहिं॥
गौर देखि प्रभु सन सो कहहीं। गान करावहु हम सब सुनहीं॥
मंगल चंडी गीत करावहु। हम सब सुनिकै अति सुख पावहु॥
हम देखन चाहैं सब सोई। द्रव्य देव हम जो व्यय होई॥
दुर्जन लखि प्रभु कछु नहिं कहहीं। और लोग सब दूर पराहीं॥
नगर घूमिकै नित्यानन्दा। रात्री मँह आवत सुखकंदा॥
धरेउ दोउ मद्यप तेहि जाई। कौन कौन बोले दोउ भाई॥

श्री निताइ तब तेहि कह्यो, गौर भवन हम जाहिं।
नाम कहा पूछत भए, प्रभु अवधूत बताहिं॥ १६॥

बाल्य भाव महँ मत्त निताई। मद्यप सों बोले हर्षाई।
दोउ उद्धार करन प्रभु चहहीं। सोइ कारन आए निशि तहहीं॥
सुनत मधाई क्रोधित भयऊ। मटुकीं लै प्रभु कहँ सो मारेऊ॥
रुधिर बहन मस्तक सों लागेउ। गोविन्द गोविन्द प्रभु तव सुमिरेउ॥
देखि जगाई दुःखित भयऊ। पुनि मारत प्रभु ताहि निवारेउ॥
हाथ पकरि भ्राता सों कहेऊ। निर्दय कहहु कहा तुम कीन्हेउ॥
परदेसी कहँ कहुँ को मारै। कीन्ह काज तुम बिना बिचारै॥
संन्यासी मारन सों कहहू। कहा लाभ तुम कहँ कछु भयहू॥
गौर निकट पुरजन तब जाई। समाचार सब कहे बुझाई॥
सब भक्तन सँग ठाकुर आये। तुरत तहाँ कछु बेर न लाये॥

श्री निताइ के अंग पर, गिरत रक्त की धार।
हँसत निताई मध्य में, दोउकर कुशल विचार॥ २०॥

रक्त देखि अति क्रोधित होई। "चक्र चक्र" प्रभु मुख सों कहई॥
तुरत चक्र प्रभु सन्मुख आवा। जगा मधा लखि कै भय पावा॥
श्री निताइ तब प्रभु समुझायो। मारन नहिं जगाई को दीन्ह्यो॥
रक्त बहेउ कछु दुख नहिं हमहीं। भिक्षा देहु दोउ जन मोहीं॥
दुःख नहीं कछु प्रभु स्थिर होऊ। सुनत वचन प्रभु हर्षित भयऊ॥
'रक्षा कीन्ह जगाई' सुनतहिं। गले लगायहु गौर जगाइहिं॥
प्रभु जगाइ सों तब यह कहेहू। कृष्ण कृपा तुम पर अब होहू॥
श्री निताइ कर रक्षा कीन्हेउ। सुनहु आज तुम मो कँह कोनेउ[1]॥
जो चाहउ सो मो सन माँगउ। प्रेम भक्ति हम तुम कहँ दीन्हेउ॥
श्री जगाइ कर बर सुनि सबहीं। जय जय कहनलगे सब तहहीं॥

---

१. खरीदना।



जगाइ-मधाई उद्धार

रूप चतुर्भुज गौर को देखेउ। शंख चक्र अरु गदा विलोकेउ ॥
कमल हाथ मँह लखि हर्षायेउ। प्रेम पुलकि मूर्छित होइ गिरेऊ ॥
तेहि उर पर प्रभु चरनन राखेऊ। हर्षि जगाई चरनन धरेऊ ॥

पृष्ठ–२०६

श्री जगाइ सन जबहिं प्रभु, कहेउ भक्ति तोहि दीन्ह।
मूर्छित होइ सो भुइँ गिरेउ, प्रेम मगन प्रभु चीन्ह ॥ २१ ॥

गौर कहेउ, तुम उठहु जगाई। देखहु मोहिं नयन भर भाई ॥
प्रेमभक्ति निश्चय तोहि दीन्हेउ। सुनत बचन सो प्रभु कहँ देखेउ ॥
रूप चतुर्भुज गौर को देखेउ। शंख चक्र अरु गदा बिलोकेउ ॥
कमल हाथ महँ लखि हर्षायेउ। प्रेम पुलकि मूर्छित होइ गिरेऊ ॥
तेहि उर पर प्रभु चरनन धरेऊ। हर्षि जगाई चरनन धरेऊ ॥
प्रभु अमूल्य चरनन कहँ पाई। प्रेम मगन नयनन जल छाई ॥
अति अपूर्व श्री गौर बिलासा। समुझै सोइ जेहि गौर प्रकासा ॥
एक जीव दुइ देहीं दोऊ। पुण्य पाप एक ठाईं रहेऊ ॥
गौर कृपा जगाइ पर कीन्हेउ। मति मधाइ कर तुरतहि बदलेउ ॥
तुरत निताइ बसन सो छाँड़ेउ। गौर चरण मस्तक रखि कहेऊ ॥

"दोउ पाप एक साथ ही, कीन्हे गौर सुजान।
काहे हमहिं बिसारेऊ, दीनबंधु भगवान् ॥ २२ ॥

करहु अनुग्रह हम पर साईं। नाम लेब हम प्रभु हर्षाई ॥
मम उद्धार करहु प्रभु तुमहीं। दीनदयालु तुमहिं सब कहहीं ॥"
प्रभू कहेउ, "नहिं तोहि उबारौं। श्री निताइ कर रुधिर बहायो ॥"
तब मधाइ कह, "अस जनि कहऊ। अपनो धर्म प्रभू किमि छाँड़उ ॥
असुर सकल प्रभु तुम कहँ मारे। काहे तुम उन कहँ उद्धारे ॥"
"तव अपराध बड़ो", प्रभु कहेऊ। 'श्री निताइ मस्तक पर मारेउ ॥
हमते बड़ निताइ कर देही। मानउ सत्य बचन मम एही" ॥
"सत्य कहेहु यदि प्रभु मोहिं पाहीं। तुमहि बतावहु हम कहँ जाहीं ॥
सब उपाय प्रभु तुमरे पासा। धर्म थापि नाशहु यम त्रासा ॥
जगन्नाथ अब कहहु उपाई। जेहि बिधि सकल दुःख मम जाई ॥"

"कीन्हे बड़ अपराध तुम," बिहँसि कहेउ प्रभु ताहिं।
"गहहु निताई के चरन, तोर दुःख मिटि जाहिं" ॥ २३ ॥

प्रभु आज्ञा सुनि तुरत मधाई। परेउ निताई चरनन जाई ॥
अति अमूल्य धन प्रभु कर चरना। धरेउ मधाई भवभय हरना ॥
महिमा जासु रेवती जानत। चरण धरत सबही दुख भागत ॥
श्री निताइ सन तब प्रभु कहेऊ। "कृपा करहु तव चरनन परेऊ ॥
आपु अंगसों रुधिर बहायउ। शरण तिहारे अब सो आयउ" ॥
श्री निताइ कह, मोहिं का कहऊ। तुम समर्थ चाहहु सो करऊ ॥
हमरो पुण्य कछुक यदि होई। सब मधाई कहँ दीन्हेऊ सोई ॥
मम अपराध कछुक जनि गिनहू। तोर मधाइ कृपा तुम करहू ॥
क्षमा कियो हँसिकै प्रभु बोलेहु। तब मधाइ कहँ हृदय लगायहु ॥
प्रभु आज्ञा सुनि हृदय लगायो। सब बन्धन तेहिकर प्रभु नास्यो ॥

सब शक्तीयुत सो भयो, लहिकै गौर सनेह।
श्रीनिताइ प्रविशे तबहिं, श्री मधाइ के देह ॥२४॥

दोउ उद्धार भए यहि विधि ही। हाथ जोरि अस्तुति दोउ करहीं ॥
"पाप करेहु जनि अब हौं कहऊँ"। 'कबहुँ न करिहैं' अस दोउ कहेहु ॥
तब प्रभु कह "सुनु दोऊ भाई। सत्य कहहुँ तुम सन मनलाई ॥
तुमरो पाप सकल जो अहहीं। और करेहु जनि तौ हम लेहीं ॥
तुमरे मुख सों भोजन करिहैं। तब शरीर महँ हम सुनु रहिहैं ॥"
प्रभु के वचन सुनत दोउ भाई। आनँद सों तिन मूर्छा आई ॥
गौर कृपा मन निर्मल भयऊ। प्रेम मगन दुख दारिद गयऊ ॥
प्रभु आज्ञा भक्तन कँह दीन्हेउ। "इन कँह भवन सबहि लै चलऊ ॥
कीर्तन करब एक सँग सबही। दुर्लभ फल पैहैं दोउ जनही ॥
सबसे उत्तम इन कहँ करिहैं। इनकर यश सब काहू गैहैं' ॥

इनहिं परसि कै लोग जे, न्हायो गंगा माहिं।
अब इन कहँ गंगा समुझि, चलिहैं इनकी छाँहिं ॥२५॥

श्री निताइ इच्छा बलवाना। करौं सोइ जो इनहिं सोहाना ॥"
सब वैष्णव दोउ भ्रातहिं लेई। प्रभु गृह भीतर आन्यो सोई ॥
सब वैष्णव कँह तबहिं सँभारा। द्वार बन्द तब कीन्ह विचारा ॥
अन अधिकारी जन नहिं आवै। प्रभु आज्ञा विनु दरश न पावै ॥
आसन पर बैठे प्रभु जाई। श्री निताइ एक ओर सोहाई ॥
प्रभू गदाधर दूसरि ओरा। सन्मुख श्री अद्वैत विभोरा ॥
चहूँ ओर सब वैष्णव सोहत। श्री हरिदास रमाई राजत ॥
पुंडरीक विद्यानिधि साईं। गंगादास और गरुड़ाई ॥
वक्रेश्वर पंडित द्विजराजा। श्री निवास शेखर महराजा ॥
श्री चैतन्य कार्य सब जानहिं। यहि तें प्रभु के मन अति भावहिं ॥

औरो बहु वैष्णव तहाँ, बैठि रहे प्रभु पास।
जगा मधा तेहि संग में, निरखत प्रभु सुखरास ॥२६॥

जगन्नाथ माधव दोउ भाई। प्रभु निरखत नयनन जलछाई ॥
कंप पुलक सब होवन लागे। "हरि हरि" कहि महि लोटन लागे ॥
गौर चरित कोउ बूझि न सकई। दस्यू कहँ प्रभु वैष्णव करई ॥
परम तपस्वी न्यासी जनहीं। पाषंडी इन कहँ प्रभु कहहीं ॥
प्रभु लीला अमृत सम अहई। जो मानै सो हरि पद लहही ॥
जो सन्देह करै यहि माहीं। निश्चय नरक माँझ सो जाहीं ॥
जगा मधा दोउ अस्तुति करहीं। भक्त सहित प्रभु ताही सुनहीं ॥
सरस्वती प्रभु आज्ञा पाई। जिह्वा पर उनके सो आई ॥
श्री चैतन्य निताइ प्रकाशा। देखेउ दोउ एकत्र विलासा ॥
मति अनुरूप दरश दोउ पावा। अस्तुति करत दोउ मनभावा ॥

इनकी स्तुति जे जन सुनैं, कृष्ण भक्ति सो पाय।
प्रेम सहित अस्तुति करैं, सुनै भक्त समुदाय ॥२७॥

"जय जय महाप्रभु जय विश्वम्भर। जय नित्यानन्द पद्मावती कुँअर ॥
जय निज नाम प्रचारक साईं। प्रभु सेवारत जयति निताई ॥
जय जगन्नाथ मिश्र के नन्दन। जै निताइ चैतन्य प्रेमधन ॥
जै शचि सुअन जै करुणा सागर। जय निताइ सद्-गुण के आगर ॥
विष्णुप्रिया पति प्रभो दयामय। जय निताइ सद्-गुण के आलय ॥
जै प्रभु जय सब तुमरे काजा। जय निताइ वैष्णव अधिराजा ॥
जयति चतुर्भुज जय गिरिधारी। जय निताइ भक्तन हितकारी ॥
श्री अद्वैत प्राणधन गोरा। जय निताइ प्रभु जन मन चोरा ॥
गदाधर-प्राण जय मुरारि ईश्वर। जय हरिदास बासुदेव प्रियकर ॥
बहु पापी उद्धारेहु तुमही। अति अद्भुत जानत सब जनही ॥

हम दोउ पापी तरन ते, बहु यश व्याप्यो तोर।
कबहूँ अस कीन्ह्यो नहीं, प्रभु दयालु सिरमौर ॥२८॥

अजामील उद्धारेहु सहजहिं। मम उद्धार बड़ो सब जानहिं ॥
कहहुँ सत्य कछु स्तुति नहिं करहूँ। अजामील अधिकारी रहेहू ॥
कोटि ब्रह्म वध यदि कोउ करई। नाम लेत सो तुरतहिं तरई ॥
प्रभु कर नाम अजामिल लीन्हा। अवशि पार चाहौ तेहि कीन्हा ॥
नाम प्रताप तरत सब जनहीं। वेद पुरान शास्त्र सब कहहीं ॥
शास्त्र वचन पालन हित साईं। प्रभु अवतार लेहु जग आई ॥
यदि उद्धार करहु नहिं तिनहीं। वेद वचन मिथ्या सब होहीं ॥
हम तुम्हरे शरीर दुख दीन्हा। तदपि उधार मोहिं प्रभु कीन्हा ॥
अब प्रभु निज मन करहु विचारी। हम दुइ महँ अन्तर कत भारी ॥
अजामील लीन्ह्यो तब नामा। देखेहु विष्णुदूत सुखधामा ॥

तुम कहँ सन्मुख पाइके, मारे हम प्रभु तोहिं।
दरशन दीन्ह्यो दया करि, पारषद सँग प्रभु मोहिं ॥२९॥

हमरे हित प्रभु परगट होई। दीन्ह चतुर्भुज दरसन सोई ॥
यह सब बात गुप्त करि राख्यो। पूर्ण प्रगट भइ सब जग जान्यो ॥
वेद वाक्य सब दृढ़ करि दीन्ह्यो। शेष वरणि सब जगयश लीन्ह्यो ॥
सकल गुप्त गुण परगट भयऊ। "निर्लक्ष्य उद्धार" यहि जग कहेऊ ॥
राक्षस गण कहँ यदि प्रभु कहऊ। लड़ि कै गति सब तामस पायऊ ॥
करहु विचार प्रभू सब बाता। सब नरेन्द्र देखेउ तोहि ताता ॥
क्षत्रिय धर्म तुमहिं सों पूछेउ। भय सों तुमहि निरन्तर सोचेउ ॥
तदपि द्रोह तुम सन सब कीन्हे। वंश समेत सबहिं हति दीन्हे ॥
देखत तुमहि प्राण सो त्यागेहु। कौन महाजन तिन कह स्पर्शेहु ॥
सज्जन लोग देखिकै हमहीं। गंगास्नान करत सब जनहीं ॥

सब सों सुनु बड़ अति अहै, यह महिमा प्रभु तोर।
जानि गए तोहि लोग सब, छिप न सकहु कोउ ओर ॥३०॥

महाभक्त गजराज पुकार्यो। चरन शरन लखि ताहि उबार्यो ॥
अघ बक आदि सकल जे निशाचर। तजि शरीर पायेउ गति वनचर ॥
लिखेउ पुरान माँझ सब सुनेऊ। मम उद्धार नयन सों देखेउ ॥
सब पातकि जेहि तुम उद्धारेहु। कछुक हेतु सब मँह तुम पायहु ॥
निज करुणा सों हम दोउ तारेउ। महापातकी दोऊ उबारेउ ॥"
कहत कहत दोउ रोअन लागे। प्रभु लीला लखि सब सुख पागे ॥
अति अपूर्व लखि वैष्णव सबही। हाथ जोड़ अस्तुति सब करहीं ॥
"जो अस्तुति मद्यप दोउ कीन्हेउ। अति ही विलक्षण सुनि सुख लहेउ ॥
प्रभु करि कृपा शक्ति तेहिं दीन्हेउ। तव इच्छा को कह, को बुझेऊ" ॥
प्रभू कहेउ, "सेवक यह दोऊ। मद्यप नहिं अब यह सब समुझउ ॥

सब मिलि कै इन दोउन पर, करहु अनुग्रह तात।
जन्म जन्म भूलैं नहीं, हम कँह ये दोउ भ्रात ॥३१॥

यह अपराध जाहि कर कीन्हेउ। छमा करहु सब आशिष देऊ" ॥
प्रभू वचन सुनि दोऊ भाई। सब कर चरन धरत हर्षाई ॥
आशिर्वाद दीन्ह सब कोऊ। निर अपराध भए जन दोऊ ॥
प्रभू कहेउ, "अब दोऊ उठहू। मोर दास अब तुम दोउ भयहू ॥
मोर स्तुती तुम दोउ जो कीन्ही। सत्य सकल कछु मिथ्या नाहीं ॥
यहि शरीर सों ऐसो, कबहूँ। पावत नहिं गति कोउ जन सुनहू ॥
केवल कृपा निताई सुनऊ। सुर दुर्लभ गति पायहु दोऊ ॥
तुमरो पाप सकल हम लीन्हा। लखहु प्रत्यक्षहि हम जो कीन्हा ॥'
दोउ शरीर मँह पातक नाहीं। यहै बुझावन हेतु गोसाईं ॥
कृष्णाकार भए प्रभु तहहीं। देखि सबहि विस्मित भे तबहीं ॥

भक्तन सों तब गौर हरि, पूछेउ अति हर्षाई।
"मोहि देखहु किमि कहहु सब," सुनि सब गए चुपाइ ॥ ३२ ॥

श्री अद्वैत तुरत तब कहेहू। गोकुल चन्द्र समानहि लखहू ॥
श्री अद्वैत वचन सुनि हर्षेउ। हरि हरि हरि सब लोगन कहेउ ॥
"दोउ पातक सों काला देखहु। कीर्तन करहु," प्रभू तब भाषेहु ॥
निन्दक पँह पातक सब जैहैं। वैष्णव निन्दा जो जन करिहै" ॥[१]
सुनि प्रभु वचन सबहि हर्षाई। कीर्तन करन लगे सुख पाई ॥
गौर निताई कीर्तन करहीं। चहुँ दिशि वैष्णव हरि हरि कहहीं ॥

१— निन्दकाः शूकराश्चैव सफलं निर्मितं हरेः।
शुद्धयन्ति शूकरा ग्रामं साधून शुद्धयन्ति निन्दकाः ॥

निन्दकों तथा सूअरों की रचना भगवान ने की। सूअर गाँव की शुद्धी करते हैं और साधू लोग निन्दकों की शुद्धी करते हैं ॥

नाचत श्री अद्वैत गोसाईं । जेहि हित यह अवतार सोहाई ॥
जग उद्धार भयहु जेहिं कारन । जै जै गौर कृपा के भाजन ॥
करताली दै कीर्तन करहीं । नृत्य करहिं अति सै सुख लहहीं ॥
प्रभु कर भय काहू नहिं मानहि । अँगसों अंग मिलाइ कै नाचहिं ॥

गृह भीतर सों बधू सँग, निरखि शची सुख पाय ।
आनँद सागर में मगन, नयनन सों जल जाय ॥ ३३ ॥

प्रभु प्रकाश लखि सब हर्षाहीं । प्रेम मगन सुधि बुधि कछु नाहीं ॥
लक्ष्मी जेहिके सँग भय पावहि । मद्यप सुख सों तेहि सँग नाचहिं ॥
गौर उबारेउ मद्यप दोऊ । वैष्णव निन्दक नरक पठायउ ॥
निन्दा सो कछु धर्म न होई । पाप बढ़ै जानै सब कोई ॥
यहिते निन्दा नहिं कोउ करई । साधु महाजन जे जन अहई ॥
दुइ दस्युन प्रभु साधु बनाई । करत कीर्त्तन सब मन लाई ॥
प्रभु बैठे तब मगन प्रेम मँह । घेरि प्रभू बैठे वैष्णव तँह ॥
धूलि घूसरित सब अँग सोहैं । झल मल झलकत सब मन मोहैं ॥
गौर वर्ण तबही प्रभु भयऊ । हँसि करि प्रभु तब सब सन कहेऊ ॥
इन दोउ कँह पापी जनि समुझउ । इनकर पाप हमहिं सब लीन्हेउ ॥

सबके देही मँह हमहिं, बोलहिं डोलहिं खाँहिं ।
होत पात जब देह को, तब हमहूँ चलि जाहिं ॥ ३४ ॥

अल्प दुःख सो जीव कराहत । मोहि बिन जरत कछू नहिं भाषत ॥
अहंकार सों हम हम बोलत । तेहिते जीव दुःख को पावत ॥
जो कछु कीन्ह एई दोउ भ्राता । कीन्हेउ हमहिं मिटायहु ताता ॥
यहै समुझि इन कँह सब कोऊ । आपन सम इन कँह सब समुझउ ॥
मम आज्ञा सब कोउ सुनहू । इन कँह भोजन सब जन देहू ॥
जो जन इन कँह भोजन देहैं । अति प्रसन्न हरि तेहि पर ह्वैहैं ॥
कोटिन घट मधु हरिहि समर्पै । सोइ फल होत इनहिं कछु अर्पै ॥
इन दोउ कर परिहास जे करिहैं । सोइ अपराध सों ते मरि जैहैं ॥
प्रभू वचन सुनि सब अति हर्षैं । आनन्द मगन नयन जल वर्षै ॥
करहि प्रणाम दोउ कँह सबही । प्रभु प्रसन्न होइ सब सन कहहीं ॥

सुनहु भागवत लोग सब, चलहु गंग के तीर ।
धाए सुनि प्रभु के वचन, प्रविशे निर्मल नीर ॥ ३५ ॥

अतिहि मगन कीर्तन सुख माहीं । शिशु सम चञ्चल चरित सोहाहीं ॥
महाभव्य अरु वृद्ध सकल जन । शिशु सम चञ्चल सदा मुदितमन ॥
विष्णुभक्ति कर लक्षण येही । निर्मल मन छल छिद्र न तेही ॥
गंगास्नान महोत्सव भारी । कीर्तन के अन्तहि सुखकारी ॥
प्रेम मगन सब भरे उछाहू । प्रभु अरु भृत्य न समुझेहि काहू ॥
प्रभु सब वैष्णव पर जल डालहिं । सहि न सकहिं सब हँसिकै भागहिं ॥

जेहि के सँग प्रभु कौतुक करहीं। कछु क्षण मँह भागत सो जनहीं॥
प्रभु अद्वैत निताई कबहीं। हरिदास श्री बासहु लड़हीं॥
मुकुन्द गर्भ सदाशिव आई। लड़त मुरारि गोविन्द अघाई॥
पुरुषोत्तम सञ्जय गरुड़ाई। श्री धर काशीश्वर हर्षाई॥

बुद्धिमंत विद्यानिधी, गंगादास अरु राम।
शुक्लाम्बर जगदीश अरु, माधवसुत गुणग्राम॥ ३६॥

प्रभुभक्तन कर पार न पावहुँ। इनके नाम कहाँ लगि गावहुँ॥
यहि विधि खेल सकल मिलि करहीं। हारत जीतत सबही रहहीं॥
गौर गदाधर दोउ मिलि खेलहिं। श्री निताइ अद्वैतहु लड़हीं॥
१ श्री अद्वैत नयन लखि तहहीं। श्री निताइ जल फेंक्यो तबहीं॥
खोलि न सकत नयन दुख पावा। महाक्रोध करि वचन सुनावा॥
नित्यानन्द कीन्ह मोहिं काना। यहि मद्यप कँह को यहिं आना॥
श्री निवास पंडित मुनु भाई। जाति पाँति सब दीन्ह बहाई॥
अवधूतहिं कँह गृह मँह राखत। कँह सों सो आयो नहिं जानत॥
शची सुअन कछु भल नहिं करई। अवधूतहिं के सँग सो रहई॥
नित्यानन्द कहेउ, "का बकहू। हारि गए झगड़ा किमि करहू॥"

गौरचन्द्र तबहीं कह्यो, "एक बार मँह नाहिं।
तीनबार जब खेलहू, मानब हम तब ताहिं॥ ३७॥

पुनः भिड़े कौतुक मिस दोऊ। एक देह दुइ भागहि भयऊ॥
लड़त परस्पर कोउ नहिं जीतत। एक बार जीतत पुनि हारत॥
समय पायकै चतुर निताई। मार्यो जल नयनन मँह धाई॥
दुःख पाइ अद्वैतहि कहई। "यह मद्यप हमरो बध करई॥
संन्यासी यह नाहीं अहई। अवधूतहि यहि कँह को कहई॥
संन्यासी किमि द्विज कँह मारत। भलो भाँति हम सबही जानत॥
पश्चिम मँह यह घर घर जाई। खायो भात परम हर्षाई॥
इनकर कुल अरु जाति को जानत। पिता मातु कछु नाहिं बतावत॥
गुरू कौन कोउ जानत नाहीं। भेष बदल विचरत जग माहीं॥
पहिरत खात सबहि मिलि जाई। अवधूतहि बस नाम कहाई॥"

श्री निताइ कर स्तुति करहिं, छल सो श्री आचार्य।
हँसत निताई श्रवण सुनि, गण समेत सुख पाय॥ ३८॥

सबहि सँहारब दोष न हमहीं। अस कहि जल मँह कूदे तबहीं॥
आचारज कर क्रोधहिं देखी। सकल भागवत हँसत विशेखी॥
क्रोधहिं मिस सब तत्व बखानत। सुनत वचन सब अटपट लागत॥
यहि कर मर्म न बूझत कोऊ। मानहिं भिन्न एक हैं दोऊ॥
एकहि पूजत और न मानत। बृथा दुःख सोई जन पावत॥
गौर कृपा जेहि ऊपर होई। वैष्णव वचन बूझि सक सोई॥

बहुरि निताइ अचारज दोऊ। पुनि जल केलि करत सब कोऊ।
गौर प्रेम मँह मत्त दोउ जन। गंगा मँह विचरत आनन्द मन॥
यहि विधि कीर्तन शेषहिं नितहीं। गंगा स्नान करत सब जनहीं॥
यह लीला कोउ देखि न सकहीं। गुप्त रूप देवन सब लखहीं॥

करि गंगा अस्नान तब, सकल भक्त गण साथ।
हरि हरि कहि तब घाट पर, आए द्विजकुलनाथ॥ ३६॥

माला चन्दन सब कहँ दीन्हेउ। भोजन हित सबही गृह गयऊ॥
दोउ भाइन कहँ सबहि समर्पेउ। आपन माला दोउ जन दीन्हेउ॥
प्रभु लीलाकर अंत न भाई। आदि अंत वेदन सब गाई॥
प्रभु गृह आइ चरण कहँ धोयउ। तुलसी कँह प्रणाम प्रभु कीन्हेउ॥
भोजन हित बैठे सुख पागे। मातु प्रसाद धरेउ प्रभु आगे॥
सब देवन कँह भोग लगाई। भोजन कीन्ह परम हर्षाई॥
मुख शुद्धी तब कीन्ह गोसाईं। शचीमातु यह लखि हर्षाई॥
परमानन्द मगन मन माता। बधू संग निरखत प्रभु गाता॥
भाग्यवान आई जग माता। अति अपार महिमा वरदाता॥
मुख सों "आई" जो जन कहिहैं। तासु प्रभाव सकल सुख पैहैं॥

श्रीमुख लखि कै पुत्र कर, मगन प्रेम रस माँहि।
जानत नहिं हम हैं कहाँ, तन की सुधि कछु नाँहिं॥ ४०॥

चले शयन हित गौर गोपाला। बिदा कीन्ह सब देव कृपाला॥
ब्रह्मा शिव सनकादिक देवा। आइ करहिं सब प्रभु की सेवा॥
देवन को कोउ देख न सकहीं। जब लौं प्रभू कृपा नहिं करहीं॥
प्रभु बैठे सुख सों गृह माही। कोउ अनुचर आयो प्रभु पाहीं॥
"बैठहु इहाँ" गौर तेहि कहेऊ। औरहु बहुत देव गण आयउ॥
"ब्रह्माशिव आँगन मँह लोटहिं। इन कँह कोउ जन देखि न पावहिं॥
हाथ जोरि सब भक्तन कहईं। त्रिभुवन तव सेवा नित करईं॥
हम कँह शक्ति कहाँ तेहि देखैं। तुम्हरी कृपा होइ तब निरखैं॥
गुप्त कथा प्रभु की अति अद्भुत। सुनत जाहिं सब सिद्धी प्रस्तुत॥
यहि महँ कछु संदेह न भाई। अजभव करत प्रभू सेवकाई॥

यहि विधि प्रभू उबारेहू, जगा मधा दोउ भाइ।
सुखी कियो प्रभु सबहि कँह, रह्यो जगत यश छाइ॥ ४१॥

सब उद्धार होब जग माहीं। वैष्णव निन्दक केवल नाहीं॥
वैष्णव निन्दा जो कोउ करई। शंकर समहू तबहू मरई॥[1]
भक्तन कर निन्दा जो करई। जैहै नरक ग्रंथ सब कहईं॥
कृष्ण नाम सब पाप नसावत। वैष्णव अपराधी कँह नासत॥

१—(तथाहि भा० ५-१०-२५)

महद्विमानात् स्वकृताद्धि मादृङ् नङ्क्ष्यत्यदूरादपि शूलपाणिः॥
बड़े लोगों का अपमान करने से शिव जी के समान समर्थ व्यक्ति का भी नाश हो जाता है॥

पद्मपुराण वचन एक अहई। मानत ताहि भक्ति सो लहई ॥¹
दुइ दस्यू उद्धार जो सुनई। गौर उद्धार करब जन सोई ॥
ब्रह्मदैत्यपावन गौरांग जय जय। करुणासागर प्रभु परम सदय ॥
सहजकरुणा सिंधु महा कृपामय। दोष न देखत प्रभु दयामय ॥
ऐसे प्रभु विन रहै जो प्राना। परमायू कारण हम जाना ॥
तदपि कृपा प्रभु हम पर करहू। तोर नाम हम निशि दिन रटहूँ ॥

हमरे प्रभु सँग गौर हरि, बैठहिं जहँ दोउ भाय।
सेवा में हम नित रहैं, और न कछू सोहाय ॥ ४१ ॥
श्री चैतन्य कथा मँह, आदि अंत कछु नाहिं।
प्रभु लीला वर्णन करैं, सुनै भक्त जे आहि ॥ ४२ ॥
भक्त सहित वंदन करौं, गौर चरण मन लाय।
मम अपराध गिनौ नहीं, प्रभु तुम सरल सुभाय ॥ ४३ ॥
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
वृन्दावन दास कियो प्रभु लीला गान ॥ ४४ ॥
भाषा मँह ताही मियो, वृजभूषण मन लाय।
गौर कृपा अब कीजिए, भक्तन होहु सहाय ॥ ४५ ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे जगाई मधाई उद्धार वर्णन नाम द्वादशोऽध्यायः ॥

त्रयोदश अध्याय

जै जै श्री गौरांग प्रभु, महा प्रभू श्री गौर।
श्री कृष्ण-चैतन्य प्रभु, श्री निमाई भजु गौर ॥ १ ॥

ब्रह्मा शिव आदिक सब देवा। नितही आइ करहिं प्रभु सेवा ॥
बिन आज्ञा कोउ देखि न सकहीं। प्रभु सेवत अतिसै सुख लहहीं ॥
दिन भर प्रभु लीला सब देखहिं। सोवहिं प्रभु तब सब गृह गमनहिं ॥
दुइ दस्यू उद्धारहिं देखी। कहत जात उर हर्ष विशेखी ॥
'बड़ी दया प्रभु के उर माहीं। अस जन उद्धारेहु क्षण माहीं ॥
आज भरोसा बड़ प्रभु दीन्हा। अवशि पार जैहौं दृढ़ कीन्हा ॥"

१—तथाहि (पद्मपुराणे ब्रह्मखंडे २५।१४)

सतां निन्दा नाम्नः परममपराधं वितनुते।
यतः ख्यातिं यातं कथमु सहते तद्विगरिहाम् ॥

भक्तों की निन्दा भगवन्नाम के निकट बड़ा भारी अपराध है कारण कि भक्तों के द्वारा ही नाम का महात्म्य जाना जाता है। इसी हेतु नाम भक्तों की निंदा कैसे सहन करेगा ॥

यहि विधि बात करत सब कोऊ। आनँद मगन देव सब चलेऊ॥
यमहू नित प्रभु के गृह आवहिं। गौर चरित आँखन सों देखहिं॥
चित्रगुप्त सों यम तब पूछेहु। उन दोउन कर पाप बतबाहु॥
चित्रगुप्त बोलेहु, सुनु राजा। व्यर्थ परिश्रम सों का काजा॥
शत शत कायस्थहु ददी, कहैं तासु, सब पाप।
तबहुँ न सुनि सकिहौ प्रभू, जो दीन्ह्यो जग ताप॥ १॥

इन कर पाप दूत नित कहहीं। लेखक पूरो लिखि नहिं सकहीं॥
इतनो अधिक पाप सो करहीं। लिखत लिखत लेखक सब मरहीं॥
दूत सदा सब पाप बखानहिं। लिखि न सकहिं दूतन कँह मारहिं॥
दूत कहहिं हम कहँ किमि मारहु। मम कर्तव्य यहै तुम जानहु॥
लेखक गण सबही नित लिखहीं। नहीं लिखै तो काम न चलहीं॥
पर्वत सम लिखि राख्यो सबहीं। इनके हित हम रोअत रहहीं॥
केहि विधि सहब यातना भारी। छिन में प्रभु सब ताहि निवारी॥
आज्ञा देई डुबावहुँ सबहीं"। सुनत वचन यम अति सुख लहहीं॥
अस महिमा यम कबहुँ न देख्यो। दोउ उद्धार देखि सुख पायो॥
परम वैष्णव सब कछु जानत। धर्म को मर्म जो वेद बखानत॥
चित्रगुप्त के वचन सुनि, भए मगन सुधि नाहिं।
कृष्णा वेशहिं महँ तुरत, मूर्छि गिरे रथ माँहि॥ ३॥

धातु सकल शरीर मँह नाहीं। चित्रगुप्त लखिकै बिलखाहीं॥
कीर्तन करत देव सब जाहीं। दोउ उद्धार समुझि मन माँही॥
शिव विरञ्चि नारद सब गावहिं। दोउ उद्धार कथा कहि नाचहिं॥
कोउ काहू सन मर्म न भाषहिं। क्रंदन करत प्रेमवश डोलहिं॥
रथ मँह यम अचेत लखि सबही। रुके सकल तँह हरि हरि कहहीं॥
विस्मित भए न जानत अहहीं। चित्रगुप्त तब सब सन कहहीं॥
कृष्णावेश जानि सब काहू। हरी कहत सब भरे उछाहू॥
उठे नाम सुनि हर्षित होई। हाथ उठाइ नृत्य सो करई॥
सब देवन मिलि कीर्तन करहीं। कृष्णावेश यमहु मन देहीं॥
यम को नृत्य देखि सब हर्षहिं। शिव विरञ्चि नारद सब नाचहिं॥
सावधान होइ अब सुनहु, अतिहि गुप्त यह बात।
देवन मिलि कीर्तन करत, सब कँह अति हि सोहात॥ ४॥

श्री राग

नाचहिं धर्म राज, छाँड़ि कै सकल काज, कृष्णप्रेम सब भूली।
सुमिरहि श्री चैतन्य, बोलहि धन्य धन्य, पतित पावन प्रभु कहई॥ १॥
हुंकार गर्जन, सपुलक महा प्रेम भाव को अन्त न पाई।
विह्वल होय यम, करत है क्रंदन, सुमिरि जगाइ मधाई॥ २॥

यम के गण सब, देखत यम को, मगन प्रेम रस माहिं।
चित्रगुप्त भगवान, कृष्ण प्रेम मूर्तिमान, भूली सुधि बुधि ताहि॥ ३॥

नाचे प्रभु शंकर, ह्वै कै दिगंबर, कृष्ण-प्रेम-सुधिनाहिं।
वैष्णवअग्रगण्य, सब कँह करत धन्य, राम नाम कहि तारत॥ ४॥

प्रेम भरै नाचै, जटाहू नाहिं बाँधे, निज प्रभु महिमा देखि।
कार्तिक गनेश नाचे, शिव जी के पाछे पाछे, प्रभु करुणा अवरेखि॥ ५॥

नाचत चतुरानन भक्ति जाको प्राणधन, लिए सकल परिवार।
कश्यप कर्दम दक्ष, मनु भृगु आदि सब, प्रेम न हृदय सँभार॥ ६॥

महा भगवान सब, कृष्ण रस महामत्त, भक्ती कँह दृढ़ मानै।
ब्रह्मा कँह घेरि, नाचै सब मिलि, प्रभुकरुणा उर आनै॥ ७॥

देवर्षि नारद नाचै ब्रह्मा के पाछे पाछे, बहत नयन सों नीर।
प्रभु यश गावत, वीणा हू न जानत, अतिसै प्रेम अधीर॥ ८॥

चैतन्य के प्रिय भृत्य, शुकदेव करै नृत्य, शुक महिमा सब जानै।
लोटत भुइँ मँह, जगाइ मधाइ कहि प्रभु जेहि बहु सम्मानै॥ ९॥

नाचै इन्द्र सुरेश्वर, महावीर वज्रधर आपुहिं लघु करि मानत।
सहस्रनयन सों, अश्रु बहत है, मुनि को श्राप बखानत॥ १०॥

प्रभु महिमा लखि, इन्द्र देव बड़ सुखी, लोटहि भुइँ मँह जाई।
कहाँ गयो वज्र आदि, किरीट कुंडल हार, गावत प्रेम बधाई॥ ११॥

चन्द्र सूर्य पवन, कुबेर वह्नि वरुण, लोक पाल सब नाचत।
सबही कृष्ण भृत्य, कृष्ण कहि करत नृत्य, कृष्ण सुयश सब भाषत॥ १२॥

नाचै सब देव गण, अति हर्षित मन, छोट बड़ कछु नहिं जानै।
सकल देव मिलि, नाचत थेइ थेइ प्रेमहि सर्वस मानै॥ १३॥

नाचै प्रभु भगवान, अनन्त आदि नाम, गरुड़ लिए निज संग।
सकल वैष्णवराज, जग के पालनहार, नाचत भरे उमंग॥ १४॥

अजभव नारद, शुक आदि देव सब, अनन्तहिं घेरि सब नाचैं।
गौरचन्द्र अवतार, ब्रह्मदैत्य उद्धार, सहस्र मुखहिं सों भाषैं॥ १५॥

कोउ हँसै, कोउ रोवै, कोउ देव मूर्छित होइ जाइ।
कोउ कहै जय जय, धन्य गौर चन्द्र जय, धन्य जगाइ मधाइ॥ १६॥

नृत्य गीत कोलाहल, कृष्ण रस सुमंगल, भरयो सकल आकाश।
महा जय जय ध्वनि, अनन्त ब्रह्माण्ड सुनि अमंगल भयो सब नाश॥ १७॥

सत्य लोक आदि सब, उठिल मंगल ध्वनि स्वर्ग मर्त्य भरयो पाताल।
ब्रह्मदैत्य उद्धार, भाषहिं सब जन, प्रकट गौरांग ठकुराल॥ १८॥

यहि विधि महाजन, भागवत देवगन, प्रेम मगन गृह जाय।
गौर सुयश सब, निज मुख भाषत, और कछू न सोहाय॥ १९॥

जय जग मंगल, प्रभु गौर चन्द्र, जय सर्व जीव लोकनाथ।
उद्धार्‌यो करुणाकरि, ब्रह्मदैत्य यहि विधि जय जय जय जगन्नाथ ॥ २० ॥
जय जय श्री चैतन्य, संसार तारक धन्य, पतित पावन धन्य बाना।
श्री चैतन्य नित्यानन्द, प्रभु अरु भक्त वृन्द वृन्दावनदास गुन गाना ॥ २१ ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते वृजभूषणदास कृतभाषा अनुवाद मध्यखंडे यमराज संकीर्तन नाम त्रयोदशोध्याय ॥

चतुर्दश अध्याय

जै जै श्री गौरांग प्रभु, महाप्रभू श्री गौर।
श्री कृष्ण चैतन्यप्रभु, श्री निताइ भजु गौर ॥ १ ॥

यहि विधि नवद्वीप विश्वम्भर। अद्भुत लीला करत विप्रबर ॥
गौर चरित लखिहू नहिं चीन्हत। जलमहँ चंद्र मीन नहिं देखत ॥
गौर कृपा सों दोऊ भाई। भक्त रूप विचरत हर्षाई ॥
कृष्ण नाम दोऊ नित जपहीं। लक्ष नाम दोउ नेम सों लेहीं ॥
मन मँह दुखित सदा दोउ रहहीं। कृष्ण कृष्ण कहि क्रंदन करहीं ॥
कृष्ण प्रेम लहि प्रभु आराधहीं। कृष्ण प्रेममय सब जग देखहि ॥
प्रथमहि पाप सकल जो कीन्हेउ। सुमिरि ताहि रोअत मिलि दोऊ ॥
"पतित पावन गौर" पुनि पुनि कहहीं। गौर गौर कहि क्रंदन करहीं ॥
भोजन शयन कछू नहिं भावै। कृष्ण भजन मँह रैन बितावैं ॥
गौर कृपा दोउ ऊपर करहीं। भक्तन सहित दरश नित देहीं ॥

प्रभु सम्मुख ही बैठके, भोजन तिन्हैं कराय।
तब हुँ लहत संतोष नहिं, हृदय बहुत दुख पाय ॥ २ ॥

जो दुख दीन्हेउ प्रभु निताई। सोइ सुमिरि दुख करत मधाई ॥
यद्यपि निताइ क्षमा तेहि कीन्हेउ। तदपि मधाइ शान्ति नहिं पायउ ॥
"श्री निताई अँग रक्त बहायउ"। यह कहि विकल बहुत सो भयऊ ॥
"श्री निमाइ विहरत जेहि देही। धिक्‌धिक् धिक् मारेउ हम तेहीं" ॥
यहै सुमिरि मुर्छित ह्वै जाई। तेहि कहँ और न कछू सोहाई ॥
श्री निताइ बालक आवेशहिं। नदिया महँ घूमत मन मानहिं ॥
परमानन्द मगन मन माहीं। श्री निताइ लखि सब हर्षाहीं ॥
एक दिन प्रभू अकेले देखेउ। तुरत मधाइ चरण गहि रहेऊ ॥
नयनन जल सो चरनन धोयेउ। श्री निताइ सो विनती कीन्हेउ ॥
"विष्णु रूप तुम पालन करहू। सहस फनन पर पृथ्वी धरहू ॥

भक्ति रूप तुमहौ प्रभू, देव धरत तव ध्यान।
जेहि चाहौ तेहि करत हौं, भक्ती को तुम दान ॥ ३ ॥

तुम सम प्रिय प्रभु गौर न कोई। प्रभु आदर तुमरो बहु करई॥
तव प्रसाद सो गरुड़ गोसाइ। कृष्णहिं सेवत अति हर्षाई॥
सहस मुखहिं तुम हरि गुण कहऊ। भक्ति श्रेष्ठ सबसों अस भाषउ॥
नारद तव यश निशि दिन कहई। तुमरो सर्वस गौर गोसाईं॥
कालिन्दी भेदन तव नामा। तुमसों जनक लहेउ सब ज्ञाना॥
सर्व धर्म मय पुरुष पुरातन। आदि देव तोहि कहत पुरानन॥
जगतपिता योगेश्वर तुमही। महा धनुर्धर लछिमन तुमही॥
पाषंडिन कहँ मारत तुमहीं। गौर कार्य जानत सब तुमहीं॥
रसिकन के आचार्य गोसाईं। तुम कहँ सब सेवत मन लाई॥
देविहिं तोहिं सेवेहु मन लाई। जगत बंद्य भइ जग सुखदाई॥

महाभक्त तुम गौर के, भक्तो के अवतार।
गौर शक्ति युत तुम प्रभू, तुमहिं करो भवपार॥ ४॥

तव पद छाया सबही चाहत। प्रभु सेवा महँ तुम मन लावत॥
सेवहु प्रभु कहँ सब विधि तुमहीं। "प्रभु सर्वस धन" तुम कहँ कहहीं॥
प्रभु के एक मात्र तुम अहऊ। प्रभु के सब अवतार कहावउ॥
पतितन कहँ तुमही उद्धारहु। पार्षडिन कहँ तुमही मारहु॥
वैष्णव कर रक्षा नित करहू। वैष्णव धर्म सबहि सन कहहू॥
तुमरी कृपा सृष्टि सब होई। सेवा नित श्री रेवति करई॥
महारुद्र ह्वै क्रोधित होई। तीनहु लोक भस्म तुम करई[1]॥
सब कछु करि तुम कछु नहिं करहू। जगन्नाथ हृदय मँह धरहू॥
अति कोमल सुख विग्रह तुम्हरो। जेहि पर शयन करत प्रभु हमरो॥
सोइ श्री अँगपर हम प्रभु मारेउ। मोहिं सम अधम नाहिं जग कोऊ॥

पारवती आदिक सकल, देवी पूजत तोहि।
सोइ श्री अँग कहँ दुखदियो, क्षमा करहुप्रभु मोहिं॥ ५॥

प्राण समान शिवहु तोहि पूजत। तोहि सुमिरत भव बंधन छूटत॥
रुधिर बहायो हम सोइ अंगहिं। धिक् धिक् मोहि कहा हम भाषहिं॥
चित्रकेतु जेहि अंगहि सेई। भक्तराज पद पायो सोई॥
सौनकादि ऋषि सेवा कीन्हा। बंधन मुक्त भए प्रभु चीन्हा॥
जरासंध नासेउ क्षण माहीं। धन्य हमहि कछु बिगड़ेउ नाहीं॥
करि अपमान तोर प्रभु सुनऊ। रुक्मी प्राण क्षणहिं मँह तजेऊ॥

---

१ तथाहि श्री विष्णुपुराणे (२।५। १६)

कल्पान्ते यस्य वक्त्रेभ्यो विषानल शिखोज्वलः।
संकर्षणात्मको रुद्रो निष्क्राम्यति जगत्रयम्॥

अर्थ— कल्प के अन्त में शेष भगवान के मुख से विषानल की ज्वाला निकल कर संकर्षण - स्वरूप रुद्र के समान तीनों लोक को ग्रास कर लेती है॥

ज़गत जाहि कँह पूजन करई। हम पापी तेहि अंगहि हनई ॥
इन्द्रजीत तुम सन लड़ि मरेऊ। द्विविद नाश सोइ कारण भयऊ ॥
श्रो सुत तुमहिं देखि नहिं उठेऊ। भस्मीभूत तुरत सो भयऊ ॥
दुर्योधन करि तब अपमाना। मरेउ सवंश जगत सब जाना ॥

दैवयोग सों भक्त जन, रहे संग तेहि ठाहिं।
तुमरो कारन जानि कै, गए सबहि तोहि पाहिं ॥ ६ ॥

कुन्ती भीष्म युधिष्ठिर आदी। अर्जुन सब परमारथ वादी ॥
इनके कथनहि सो पुर पायो। भक्त महात म सब जग गायो ॥
तव अपमान करत सोइ नासत। हमरो कहा दशा नहि जानत ॥"
कहत कहत भा प्रेम अधीरा। हृदय चरण धरि, कंप शरीरा ॥
भुइ मँह परेउ दीन की नाई; । विनती करत बोल नहि जाई ॥
"चरण धरत तुमरो प्रभु जोई। ताकर नाश कबहुँ नहिं होई ॥
पतित उधारन हित प्रभु आयउ। यह अवतार याहि हित लीन्हेउ ॥
शरणागत कँह तुमहि उबारहु। तुम मधाइ के जीवन जानहु ॥
जय पद्मावति सुअन प्रभु जय जय। जय निताइ प्रभु तुम्हरी जय जय ॥
क्रोधरहित आनन्द निधाना। क्षमा करहु दीनन धन प्राना ॥

महा पातको सुनहु प्रभु, हौं कृतघ्न अति नीच।
क्षमा करहु अपराध सब, हम भवसागर बीच" ॥ ७ ॥

श्री निताइ सुनि आरत बानी। हर्षि कहेउ तेहि अति सन्मानी ॥
"उठहु मधाइ दीनता त्यागहु। तुम हमरे निज दास कहावहु ॥
तव शरीर महँ मम परकाशा। काहे तुम कँह होत निराशा ॥
पितहि यदी शिशु मारै कबहूँ। पिता दुःख पावत नहिं सुनहू ॥
तेहि विधि तब प्रहार सुनु अहई। अति प्रसन्न हम तुम सों कहई ॥
स्तुती तोर यह जे जन सुनिहैं। मोर भक्त सो निश्चय होइहैं ॥
मोर प्रभू कर तुम प्रिय अहहू। तिलहू मोर दोष जनि गुनहू ॥
श्री चैतन्य भजत जो जनही। प्राणहु तें प्रिय मोहिं सो अहहीं ॥
हम उद्धार करैं सोइ जनहीं। यह निश्चय जानहु तुम मनहीं ॥
मोहि भजत अरु गौर न भजई। तेहि कारण मोहि बहु दुख होई ॥

ताहि दुःख सो सोइ जन, पावत क्लेश अपार।
गौर द्रोह सों कबहुँ नहिं, जाइ सकै भवपार ॥ ८ ॥

अस कहि तेहि आलिंगन कीन्हा। सकल दुःख तेहि कर हर लीन्हा ॥
धरि कै चरण मधाई कहई। "एक निवेदन मम प्रभु अहई ॥
सकल जीव हिरदय तुम बसहू। बहुत जीव हिंसा हम कीन्हेउ ॥
जेहि कँह मारेउ तिन्हैं न चीन्हों। क्षमा करैं किमि जेहि दुख दीन्हो ॥
तेहि कर हम अपराधो होइहैं। हम पर कृपा सो केहि विधि करिहैं ॥
यदि हम पर प्रसन्न प्रभु अहऊ। यहि कर कछु उपाय मोहिं कहऊ" ॥

प्रभू कहेउ, "हम कहत उपाऊ। गंगाघाट स्वच्छ तुम करऊ॥
सुख सों लोग करब असनाना। तुम्हरो तब होइ है कल्याना॥
गंगा की सेवा सो भाई। तब अपराध नाश ह्वै जाई॥
बड़ो भाग्य सेवा जो करहू। दीन वचन सब सन तुम कहहू॥

क्षमा करहिंगे लोग सब, ह्वै प्रसन्न मन माँहि।
मिटिहै सब अपराध तब, सत्य कहौं तव पाहि" ॥ ६ ॥

सुनत वचन प्रभु कर अति हर्षेउ। बहु प्रदक्षिणा प्रभु कर कीन्हेउ॥
मुख सों कृष्ण कृष्ण सो कहई। नयनन सों अविरत जल बहई॥
गंगाघाट स्वच्छ सो करई। देखि सकल अति आनँद लहई॥
सबहिं मधाइ करत परनामा। लहि अशीस भए पूरन कामा॥
"जो अपराध कीन्ह हम भारी। क्षमा करहु मोहिं दीन विचारी॥"
ऐसो वचन कहत सब पाहीं। दीन वचन सुनि सब हर्षाहीं॥
देखेउ क्रंदन करत मधाई। सबही नयनन नीर बहाई॥
गोविन्द कर सुमिरन सब करई। सब वृतान्त जानि सो कहई॥
"श्री निमाइ पंडित भल भाई। इनहिं सुधारेउ जन दुखदाई"॥
अति विस्मित होंइ सब जन कहहीं। नर निमाइ पंडित नहिं अहहीं॥

समुझत नहिं निन्दा करत, पापीजन हैं जोइ।
निश्चय हरि को दास वह, कहत सत्य हम सोइ॥ १० ॥

कीर्तन करत सत्य सो भाई। निन्दक सकल नष्ट ह्वै जाई॥
इन दोउ कर जो बुद्धि सुधारेउ। वह ईश्वर निश्चय हम कहऊँ॥
अथवा ईश शक्ति सो धारत। सत्य वचन हम सब सन भाषत॥
प्राकृत मनुष निमाई नाहीं। प्रगट भई, सब लखि हर्षाही॥
अति अद्भुत करनी यह कीन्ही। निज महिमा परगट करि दीन्ही"॥
यहि विधि नदिया वासी कहहीं। निन्दक सन काहू नहिं मिलहीं॥
अति कठोर तप करत मधाई। ब्रह्मचारी पदवी सो पाई॥
गंगातीर सदा सो रहई। हाथ कुदारि स्वच्छ सो करई॥
प्रभु की कृपाचिन्ह है अबहीं। घाट मधाइ सबहि जन कहहीं॥
यहि विधि कीर्ती दुहुँ कर होई। गौर सुयश गावत सब कोई॥

मध्य खंड की कथा जिमि, अमृत को एक खंड।
गौर उबारेउ इनहिं को, दोऊ अति पाषंड॥ ११॥
सबके कारण गौर प्रभु, गुप्त सकल यह बात।
चरित सकल जो प्रभु कियो, हृदय धरहु सब तात॥ १२॥
श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु नित्यानन्द जान।
वृन्दावनदास कियो प्रभु गुनगान॥
वृजभूषण भाषा किय जान॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे जगाई मधाई चरित्रवर्णनं नाम चतुर्दशोध्यायः॥

पंचदश अध्याय

जै जै श्री गौरांग प्रभु, महाप्रभू श्री गौर।
जै जै श्री चैतन्य प्रभु, भजहु निताई गौर ॥ १ ॥

यहि विधि नवद्वीप विश्वम्भर। संकीर्तन प्रभु करहिं निरन्तर ॥
द्वार बंद करि रात्री माँही। कीर्तन करहिं बहुत सुख पावहिं ॥
और लोग कोउ जान न पावै। केवल भक्त लोग तँह आवै ॥
श्री निवास के गृह प्रभु गोरा। नृत्य करहिं प्रभु प्रेम विभोरा ॥
गृह भीतर श्रीवास की सासा। छिप बैठी नहिं लेत उसासा ॥
बैठी एक कोने मुँह ढाँपी। दौरी से शिर कँह सो तोपी ॥
भाग्यहीन किमि दर्शन पैहै। प्रभुकर नृत्य न तेहि लखि परिहै ॥
नृत्य करत प्रभु कह सब पाहीं। "मन उल्लास आज किमि नाहीं" ॥
अंतर्यामी प्रभु सब जानत। तबहुँ नहीं कोऊ सन भाषत ॥
बहुरि नृत्य करि पुनि प्रभु कहहीं। आज उमंग होत नहिं मनहीं ॥

गृहभीतर है कोउ जन, छिपकर देखत मोहिं।
यहिते मन उल्लास नहिं, सत्य कहौं हम तोहिं ॥ २ ॥

सुनि श्रीवास बहुत दुख पायो। गृह मँह ढूँढ्यो कोउ नहिं देख्यो ॥
अन्य कोउ नहिं प्रभु सन कहेऊ। भक्त सकल कीर्तन आरंभेउ ॥
अति उल्लास भरे प्रभु नाचहिं। कहहिं बहुरि हम सुख नहिं पावहिं ॥
आजु अनुग्रह हरि को नाहीं। समुभत हम याही मन माहीं ॥
सकल भक्त जन सुनि दुख पायेउ। भिन्न और कोउ नहिं यहि ठाँऊ ॥
हम सन भा अपराध कहत कोउ। तेहिते प्रभु सुख लहत न देखेउ ॥
सुनि ठाकुर पंडित गृह गयऊ। देखेउ सास तहाँ छिपि रहेऊ ॥
प्रभु दुख लखि तेहि क्रोध विशेषी। काँपन लगे ताहि तँह देखी ॥
आज्ञा देइ बाहर सो कीन्हेउ। यह वृत्तांत कोउ नहिं जानेउ ॥
प्रभु आनन्द सो नाचन लागे। मगन भक्त सब अति सुख पागे ॥

"अब उल्लास भयो मोहिं", कह्यो प्रभू सब पाहिं।
श्री निवास सोचत मनहिं, अब काहू यहिं नाहिं ॥ ३ ॥

तब ठाकुर श्री वास उदारा। नृत्य करत मन प्रेम अपारा ॥
कृष्ण कृष्ण कहि कीर्तन करहीं। भयउ कोलाहल सुनि नहिं परहीं ॥
गौर निताई कीर्तन करहीं। वैष्णव सकल मोद मन भरहीं ॥
देखि को सकै गौर कर लीला। बड़ भागी सोइ सब गुण शीला ॥
प्रभु करि कृपा दिखावै जोई। यह अधिकार देइ कोइ कोई ॥
यहि विधि कीर्तन प्रतिदिन करहीं। दरश न पाव अन्य कोउ जनहीं ॥
नृत्य करत एक दिन प्रभु कहहीं। "मन उल्लास होत नहिं अहहीं" ॥

कछु अपराध भयो मोहिं पाहीं। तेहितें सुख पावहुँ हम नाहीं ॥
निज स्वभाव अद्वैत गोसाईं। गौर भिन्न कोउ जानत नाहीं ॥
गौर सिंहासन पर जब बैठहिं। सबके शिर निज चरणहिं अर्पहिं ॥

निज ऐश्वर्य प्रकाशहीं, जबहीं गौर गोपाल।
प्रभु लखि श्री अद्वैत तब, मन महँ होत निहाल ॥ ४ ॥

"आवहु नाड़ा" प्रभु तेहि कहेऊ। तुम मेरे बड़ दास हि अहऊ ॥
अति हर्षहिं सुनि प्रभु की बानी। गौर तत्व काहू नहिं जानी ॥
तुरतहि सब कर चरनन धरहीं। क्रदन करत प्रभू अस कहहीं ॥
"कृष्ण कृष्ण तुम मेरे जीवन"। विदरत हृदय सुनत प्रभु क्रदन ॥
दास्य भाव महँ अस प्रभु कहहीं। ईश्वर भाव तबहिं तजि देहीं ॥
पूछत जिमि कछु जानत नाहीं। "सत्य कहहु पूछत सब पाहीं ॥
चञ्चलता यदि हम कछु कीन्हेउ। कृष्णहिं मोर प्राणधन जानउ ॥
जन्म जन्म के तुम मम भ्राता। कृष्ण दास हम जानहु ताता ॥
अन्य कछू यदि हम सुनु कहेऊ। हम सों सत्य सकल तुम भाषेउ" ॥
भयसों सकल मौन ह्वै रहहीं। साहस नहिं प्रभु सों कहि सकहीं ॥

यहि बिधि जब आज्ञा करहि, छुइ सक चरणहि सोय।
भाव सदा बदल्यौ करै, बूझि सकै नहिं कोय ॥ ५ ॥

वैष्णव देखि तुरत प्रभु उठहीं। चरन धूलि तेहि कर प्रभु लेहीं ॥
यहिते वैष्णव सब दुःख लहही। तब प्रभु तेहि आलिंगन करही ॥
गुरु समान अद्वैतहिं मानहि। यहिते आचारज दुख पावहिं ॥
सन्मुख सेवा करि नहिं सकही। उलटो प्रभु चरण गहि रहहीं ॥
जिन चरनन कहँ नित प्रति ध्यावहिं। तिन चरनन कहँ आँखहिं देखहिं ॥
सेवा करत प्रभू कर चाहहिं। प्रभु सन्मुख सोइ करन न पावहिं ॥
चोरी सों सेवा तब करहीं। भावावेशहि जब प्रभु होहीं ॥
मूर्छित होइ जबहिं प्रभु पड़हीं। जाहिं निकट चरनन के तबहीं ॥
करि दंडवत चरण शिर राखहिं। नयनन के जल सों तेहि धोवहिं ॥
प्रभु चरणन माथे पर धरहीं। कबहू बहु विधि पूजा करहीं ॥

श्री अद्वैतहि करि सकैं, केवल ऐसो कर्म।
यह पद प्रभु तेहि को दियो, जानत है सब धर्म ॥ ६ ॥

सब के अग्रगण्य आचारज। सत्य कहौं यामें नहिं अचरज ॥
'जय अद्वैत', सबहि मिलि कहहीं। महिमा अमित कहा हम लिखहीं ॥
दुष्ट लोग यह मर्म न जानहिं। अर्थ अनर्थ अनेक बखानहिं ॥
एक दिन नाचहि प्रभु विश्वम्भर। तेहि पाछे अद्वैत विप्रवर ॥
मूर्छित प्रभु जानेउ अद्वैतहिं। चरण धूलि लेइ अंग लगावहिं ॥
यह कौतुक सब गौरहि जानत। नृत्य करत प्रभु सुख नहिं पावत ॥
प्रभु कहेउ "हम सुख नहिं पावहिं। केहि अपराध सों हम नहिं जानहिं ॥
कोइ चोर चोरी है कीन्हीं। तेहिते हम सुख नाहीं लहहीं ॥

चरण रेणु कोउ हमरो लीन्ही। सत्य कहहु मुख सों हम कहहीं॥
अंतरयामी प्रभु सब जानहिं। भय सों भक्त कछू नहिं बोलहिं॥

भय सों श्री अद्वैत तब, कहि न सकत कछु बात।
बिना कहेहू नहिं बनत, बोले अति सकुचात॥ ७॥

"चोरहिं सन्मुख यदि ना पावहु। गुप्त रूप तब काम निकासहु॥
चोरी हमही है प्रभु कीन्ही। क्षमा करहु प्रभु अब तुम हमहीं॥
अब न करब यदि तुम अस कहहू"। सुनत वचन प्रभु क्रोधित भयऊ॥
कहेउ प्रभू तब क्रोधित होई। छल सों महिमा तेहि कर कहई॥
"संहारहु तुम सब संसारा। तदपि न कछु मन कीन्ह विचारा॥
केवल शेष बचे हम रहेऊ। हमहिं संहारि सुखी तुम भयऊ॥
संन्यासी, तपसी अरु ज्ञानी। शूलहिं मारि हतहु सब प्रानी॥
निज हित लागि जो तुम पहँ आवत। तिनहिं मारि तुम प्राण निकासत॥
एक महाजन मथुरा वासी। तुमरो चरन गह्यो सुखरासी॥
तुमहिं देखि भक्ती का पायो। निज भक्ती हूताहि गँवायो॥

तासु चरन रज लेइकै, कीन्ह्यो तेहि संहार।
परम पटू संहार में, तुम याही संसार॥ ८॥

भक्तियोग जो सब ब्रह्माण्डहिं। अर्प्यो सकल तुमहिं श्री कृष्णहिं॥
छोटे जन सों चोरी करहू। तिनही मारत नहिं दुख लहहू॥
बहुत बड़े डाकू तुम अहहू। मेरो प्रेम सुखहि तुम हरेहू"॥
सत्य वचन छल सों प्रभु कहहीं। भक्त सकल सुनि आनँद लहहीं॥
"चोरी तुम कीन्ह्यो अब देखहु। हमहू चोरी करबो सीखेहु॥
अब चोरी हम तुमरी करिहैं। तुमहि पकड़ि अब नाच नचैहैं"॥
अस कहि श्रीअद्वैतहिं धरई। चरण धूलि तेहिकर प्रभु लेई॥
गौर बली अद्वैत न जीतहिं। चरण तासु प्रभु सिर पर राखहिं॥
श्री अद्वैत चरण उर राख्यो। प्रेम भरे तब वचन उचार्‌यो॥
"देखहु चोरहिं बाँधेउ हमहीं। कहाँ जाय बचिकै सो अबही॥

चोर बहुत चोरी करत, तबहुँ न पावत पार।
हम गृहस्थ एक बार मँह, करत सबै उद्धार॥ ९॥

श्री अद्वैत कह्यो, सच बोलहु। तुम गृहस्थ हम अबही जानेहु॥
प्रान देह मन बुद्धि तुम्हारी। मारब यदि तब कौन सँभारी॥
सुख दुख के तुमही प्रभु दाता। तुम बिन और न कोउ जग त्राता॥
नारदादि प्रभु तुम पहँ जाहीं। चरन धूलि लै मारहु ताहीं॥
सेवकहू कहँ यदि संहारेहु। कह, करै सो तुमहि बिचारहु॥
काटहु शिर तबहूँ नहिं कहई। तुमरे शिक्षक को जग अहई॥
तबहू प्रभु यह उचित न करहू। तुम खेलहु दुख हम कहँ देहू॥
जो चाहहु सोई प्रभु करहू। मारहु चाहे जियावहु मोहू"॥

विश्वम्भर अद्वैत सों कहहीं। भक्ती के भंडारी तुमहीं॥
यहि तें तव चरनन हम सेवहिं। जेहि सेवत सब भक्ती पावहिं॥

चरन धूलि तव लेइकै, जे लेपहिं निज गात।
कृष्ण भक्ति सो पावहीं, पूर्ण भक्त ह्वै जात॥ १०॥

तुमहि दिए बिन भक्ति को लहहीं। हम तुम्हरे यह दृढ़ करि कहहीं॥
तुम हमको बेंचहु तँह बिकहीं। सत्य वचन हम तुमसों कहहीं॥
अति सै कृपा गौर की देखी। भक्तन मन आनन्द विशेखी॥
बहुत प्रशंसा मन महँ करहीं। "धन्य अचारज" सबहीं कहहीं॥
तुम यथार्थ महँ प्रभु कहँ सेवेहु। कोटि मोक्ष यहि सम नहिं समुझहु॥
यह प्रसाद शंकर नहिं पायहु। जो प्रभु श्री अद्वैतहिं दीन्हेउ॥
भाग्यवान हम सब अति भारी। ऐसे भक्त चरण रजधारी॥
ऐसे भक्त जनहिं कँह कोउ। मानहिं नाहिं दुष्टजन सोऊ॥
जो सब कथा भई सोइ काला। भक्त सकल सुनि होत निहाला॥
मानत नाहिं सो सब दुख पावहिं। कर्म दोष सों नरकहिं भोगहिं॥

"हरि हरि" कहि कै तब उठे, विश्वम्भर भगवान।
चहुँ दिशि घेरे भक्त गण, गावत प्रभु गुण ज्ञान॥ ११॥

ब्रह्मानन्द मगन आचारज। तेहि लखि सबके मन अति अचरज॥
महामत्त आनँद मँह फूले। नृत्य करत अपने पौ फूले॥
दाढ़ी पकड़ि गर्जना करहीं। भृकुटि चढ़ाइ मोद मन भरहीं॥
"जय कृष्ण गोविन्द गोपाल वनमाली। सब मिलि गावहिं दै करताली॥
श्री निताइ अतिशै ह्वै विह्वल। श्री चैतन्य समानहिं चञ्चल॥
गिरन न पावै भुइँ पर कबही। महाबली सो प्रभु कहँ धरही॥
गौर नृत्य को वर्णै पारा। भावावेशहि भाव अपारा॥
सरस्वती सह प्रभु बलरामहि। गावत सोइ प्रभु पूरण कामहि॥
कबहूँ मूर्छा कबहूँ कम्पन। तृण ले कबहुँ करैं बहु क्रंदन॥

छिन उदास छिन मँह हँसत, श्वाँस लेति छिन माँहि।
महाभाव को अंत नहिं, बूझि सकै को ताहि॥ १२॥

छिन महँ वीरासन सों बैठहिं। अट्टहास करि प्रभु तब गर्जहिं॥
भाग्य लिखो जो सो सब पावत। प्रेम मगन वैष्णव प्रभु ध्यावत॥
सन्मुख शुक्लाम्बर कहँ देखेउ। गौर अनुग्रह तेहि पर कीन्हेउ॥
शुक्लाम्बर कर चरित सुहावा। वर्णन करौं जो सब मनभावा॥
नवद्वीप मँह तेहि कर वासा। धर्म परायण भक्ति प्रकासा॥
चीन्ह न सकै ताहि कहँ कोई। शांत स्वभाव मृदुल चित सोई॥
भिक्षा नवद्वीप मँह करई। झोली काँधे लै सो फिरई॥
कृष्ण कृष्ण कहि गृह गृह घूमत। कृष्ण कहत अँसुअन झरि लावत॥
भिक्षुक सबही जानत तेही। परम दरिद्र ताहि सब कहहीं॥
भिक्षा मँह जो कछु सो पावै। कृष्णहि भोग लगाइ कै खावै॥

मगन रहत हरि भजन में, दुःख लेश नहिं जान ।
हरि हरि कहि डोलत फिरत, करत जगत कल्यान ॥ १३ ॥

गौर कृपापात्रहिं को चीन्हे । कृपा करैं जेहि पर सो जानै ॥
पूर्व रह्यो जिमि भक्त सुदामा । शुक्लाम्बर तिमि पूरण कामा ॥
गौर कृपा तेहि पर अति कीन्हीं । कीर्तन महँ तेहि कहँ रख लीनी ॥
झोली काँधे लै सो नाचत । तासु नृत्य लखि सब सुख पावत ॥
बैठे प्रभु ईश्वर आवेशहिं । शुक्लाम्बर प्रभु सन्मुख नाचहिं ॥
शुक्लाम्बर लखि गौर कृपामय । "आवहु आवहु कह्यो दयामय ॥
तुम दरिद्र सेवक हौ मेरे । जन्म जन्म के मम प्रिय चेरे ॥
सकल देइ भिक्षा कर आवहु । तुमरो द्रव्य सदा हौं चाहहुँ ॥
नहिं तुम देउ तो बल करि खाऊँ । पुरी द्वारिका महँ तुम जानउ ॥
बिसरि गयो कमला जब हमरो । पकर्यो-हाथ देत तोहिं सबरो ॥"

अस कहि झोली महँ प्रभु, हाथ डालि ही दीन्ह ।
लै निकालि तंडुल कछू, मुख महँ सो धरि लीन्ह ॥ १४ ॥

बड़े प्रेम सों प्रभु सोइ खावै । शुक्लाम्बर लखि कै दुख पावै ॥
शुक्लाम्बर प्रभु सन तब कहेऊ । सर्वनाश मेरो प्रभु कीन्हेउ ॥
"यहि महँ खूद कना बहु अहई" । सुनि प्रभु बिहँसि ताहि सन कहई ॥
खूद कना तव मोहिं अति भावै । प्रेम हीन मोहिं कछु न सोहावै ॥
प्रभु स्वतंत्र भक्तन के जीवन । तंडुल खात को करै निवारन ॥
करुणा लखि प्रभु की सब कोई । प्रेम मगन सब क्रंदन करई ॥
परमानन्द मगन सब होई । कीर्तन करन लगे सब कोई ॥
बाल बृद्ध सब मिलि कै नाचहिं । एक एक कँह गले लगावहिं ॥
कोउ कहें प्रभु मोहिं न छाँड़उ । निज चरनन महँ प्रभु मोहि राखउ ॥
शुक्लाम्बर भूमी महँ लोटत । प्रभु शुक्लाम्बर सों इमि भाषत ॥

शुक्लाम्बर अब सुनहु मोहिं, तव हिरदय मम बास ।
भोजन जो कछु तुम करहु, सोई मेरो ग्रास ॥ १५ ॥

भिक्षा हित जब नगरहिं जावहु । तुमरो संग रहत हम जानहु ॥
भक्ती वितरण हित सुनु भाई । यह अवतार भक्त सुख दायी ॥
जन्म जन्म के तुम मम दाता । रहहु सदा तुम मेरे पासा ॥
प्रेम भक्ति मम प्राणहि जानहु । सो हम तुम कहँ दीन्ह बिचारहु ॥
शुक्लाम्बर कर वर सुनि सबही । हरि हरि मिलि कै सबही कहही ॥
कमलापति कर सेवक होई । घर घर भिक्षा माँगत सोई ॥
यहि कर भेद कौन जन बूझै । भाग्यवान कोउ कोऊ समुझै ॥
दस घर माँगि द्रव्य जो लावै । लक्ष्मी पति सो भोग लगावै ॥
विधि विधान सों भोग लगावै । तबहिं प्रभू सोइ द्रव्यहिं पावै ॥
लिख्यो पुरानन महँ यह अहई । बिना विधी प्रभु ग्रहण न करई ॥

भक्त निकट विधि नहि चलत, प्रत्यक्षहिं सब जान।
शुक्लाम्बर तंडुल सुनहु, तेहि करिहै परमान ॥ १६ ॥

भक्ति है सब विधि कर प्राना। विधि प्रति शोध भक्ति नहि जाना ॥
यहि ते दुख पावत जे अहहीं। महा मूर्ख ते दुःख बहु सहही ॥
विधि कर मूल भक्ति बुध कहहीं। भक्त निकट प्रभु परगट करहीं ॥
शुक्लाम्बर मुद्रा नहिं कीन्ह्यो। स्वयं प्रभू कँह सो नहि दीन्ह्यो ॥
तदपि प्रभू खायो सो लेई। प्रेम भक्ति वश प्रभु नित अहई ॥
विषयी यह सब मर्म न जानहिं। नैनहीन वैष्णव नहिं चीन्हहिं ॥
लखि दरिद्र वैष्णव जे हंसहीं। व्यर्थ तासु पूजा सब अहहीं[१] ॥
भक्त अकिंचन प्रभु अति भावै। गौर जगत कह यहै दिखावै ॥
शुक्लाम्बर तंडुल आख्याना। भक्ति मिलत जे सुनत सुजाना ॥
श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द चाँदजाना। वृन्दावन दास कियो प्रभुयश गान ॥

॥ इति श्री चैतन्यभागवते मध्य खंडे शुक्लाम्बर तंडुल भोजन नाम पंचदशोऽध्यायः ॥

षोड़श अध्यायः

मध्य खंड की कथा है, अमृत को एक खंड।
याहि प्रेम से जो सुनै, दूर होय पाखंड ॥ १ ॥

यहि विधि नवद्वीप प्रभु गोरा। कीर्तन करत भक्त मन चोरा ॥
गुप्त रूप कीर्तन प्रभु करहीं। भक्तन कँह आनन्द बहु देहीं ॥
जबहीं नगर भ्रमण प्रभु करहीं। मदन समान सबहिं लखि परहीं ॥
व्यवहारिक गण प्रभु इमि देखहिं। दंभ रूप जिमि धरे शरीरहिं ॥
विद्यावल प्रभु कर सब देखी। पापंडिन उर त्रास विशेखी ॥
शास्त्र व्याकरण प्रभु सब जानहिं। भट्टाचारज कहँ नहिं मानहिं ॥
अपने रंग प्रभु घूमत फिरहीं। गुप्त रूप भक्तन सँग रहहीं ॥
पाषंडी सब प्रभु सों कहहीं। "पंडित सुनहु कहत अस सबही ॥
तब हित राजा आज्ञा आयउ। निशि मँह कीर्तन छिपि कै करऊ ॥
देखि सकत नहिं सब दुःख पावैं। तुमरो सबहि अनिष्ट मनावैं ॥

---

१. तथाहि (भा० ४।३१।२१)

न भजत कुमनीषिणां स इज्यां हरिरधनात्मधन प्रियो रसज्ञः।
श्रुत धन कुल कर्मणां मदैर्य विदधति पापमकिञ्चनेषु सत्सु ॥

जो कोई विद्याधन और पद के घमंड में अकिञ्चन भक्त लोगों का अनादर करते हैं, भगवान श्री हरि उन दुर्बुद्धि लोगों की पूजा ग्रहण नहीं करते। कारण कि अकिञ्चन भक्तों के भगवान ही एकमात्र सर्वस्व धन हैं। वह प्रभू को छोड़ दुनिया की किसी वस्तु से सम्बन्ध नहीं रखते। केवल एक मात्र श्री हरी को ही अपना सर्वस्व (सब कुछ) जानते हैं।

सत्य भयहु सब कर बचन, झूठ कहहुँ नहिं तात।
सुहृद समुझि तुम सों कह्यो, मानहु हमरी बात ॥ २ ॥

प्रभू कहेउ, "तुम सब सच भाषउ। राजा कर दरशन हम चाहउ।
अल्प वयस सब विद्या पायउ। तेहि तैं तर्क करै नहिं काऊ ॥
मो कँह खोजै अस कोउ नाहीं। कोउ खोजै मोहिं हम तँह जाही" ॥
कहेउ पर्षड़िन, सुनहु गोसाईं। राजा यवन अहै दुखदाई ॥
कीर्तन सो सुनि है तब पाहीं। नहिं विचार करि है सुनुताही" ॥
प्रभू पर्षड़िन कछु नहिं समुझहिं। निज मन्दिर आए प्रभु तुरतहिं ॥
प्रभू कहेउ, "मोहिं अति दुःख भयेऊ। आज पर्षडिन सों संभाषेउ।
कीर्तन करहु दुःख सब भागै"। अस कहि नृत्य करन प्रभु लागे ॥
चहूँ ओर भक्तन सब गावत। पुनि भक्तन सों प्रभु इमि भाषत ॥
"आजु प्रेम अनुभव नहिं करहूँ। कारण कवन न जानत अहहूँ ॥

पार्षडिन सों नगर मँह, भई कछुक एक बात।
कारन सोइ वा अपर कछु, छमहु मोहिं सब भ्रात" ॥३॥

भृकुटि चढ़ाइ अचारज नाचत। महापात्र अद्वैत कहावत ॥
"केहि विधि प्रेम होइ", सो कहेऊ। "हम सोख्यो सोइ प्रभु तुम सुनऊ ॥
हम अरु वास प्रेम नहिं पावउ। तेली माली लेइ तुम गावउ ॥
आपु प्रेम को दास निताई। हम सब कहहु तो बाहर जाई ॥
हम सब प्रेम योग्य नहिं सुनऊ। भंडारी अवधूत बनायेउ ॥
हम कँह प्रेम योग नहिं देहौ। सोखब प्रेम कछू जनि कहिहौ" ॥
गौर प्रेम मँह मत्त गोसाईं। कहा करै अरु कहै न जानइ ॥
कृष्ण भक्ति महिमा सो कहई। भक्ति महात्म बढ़ावत रहई ॥
भक्ति प्रभाव बड़ो जग कहहीं। बेंचै भक्त जहा तँह विकहीं ॥
बेंचि सकै प्रभु कँह जो भक्तहि। का बड़िबात सो अटपट बोलहि ॥

मान बढ़ावत हैं सदा, भक्तन कर श्री गौर।
दण्ड अनुग्रह गौर को, बूझि सकै नहिं और ॥४॥

कीर्तन मगन गौर नहिं बोल्यो। नृत्य करत अद्वैत सोहायो ॥
श्री अद्वैत वचन सुनि गोरा। उत्तर दीन्ह न गौर किशोरा ॥
द्वार खोलि बाहर प्रभु भागे। श्री निताइ प्रभु के सँग लागे ॥
हरीदास तेहि पाछे आए। प्रभु के संग चले दोउ धाए ॥
प्रेम शून्य तनु कर का काजा। करि विचार मन मँह द्विजराजा ॥
कूदि पड़े गंगा मँह जाई। भक्तन हूँ कूदे तँह धाई ॥
प्रभु कर केश निताई पकरयो। हरीदास चरनन धरि लीन्ह्यो ॥
दोउ पकरि प्रभु बाहर लाए। प्रभू कहेउ, "तुम काहे आए ॥
प्रेमहीन तनु काहे राखउ। काहे तुम दोउ मोहिं निकासेउ ॥"
सोच विकल काँपत जन दोऊ। श्री निताइ सन तब प्रभु कहेऊ ॥

"मोर केश काहे धरेउ, अबहिं बतावहु मोहिं।"
श्री निताइ तब इमि कहेउ, "कहा कहौं अब तोहिं ॥५॥

मरन हेतु तुम काहे गयऊ।" वचन सुनत तब प्रभु इमि कहेऊ॥
"बड़ विह्वल तोहि जानत अहऊँ। 'क्षमहु सकल' तब अग्रज कहेऊ॥
'जेहि कँह दंड देइ तुम सकहू। तेहि हित प्राणहिं काहे तजहू॥
सेवक तोहिं कहँ यदि कछु कहेहू। तेहि कर जीवन तुम किमि लेहू॥'
प्रेम स्वरूप निताई अहई। प्रेम नदी नयनन सों बहई॥
सदा गौर सेवा महँ रहई। गौर नाम निसि दिन प्रभु लेई॥
श्री चैतन्य प्राणधन सर्वस। निज सेवा सों कियो गौर वस॥
गौर कह्यो तुम दोऊ सुनऊ। "काहू सन तुम कछु जनि कहेऊ॥
प्रभु नहिं देखेहु याही कहेऊ। मम आज्ञा सों याही भाषेउ॥
हम छिप कर यक ठाईं रहिहैं। कोउ सन यह वृतान्त न कहिहै" ॥

ऐसो कहिके तबहिं प्रभु, नन्दन के गृह जाय।
प्रभु आज्ञा सों दोउ जन, गृह मँह रहे लुकाय ॥६॥

भक्त सकल प्रभु कँह नहिं देखी। शोक विकल उर दुःख विशेखी॥
प्रभु विरह कातर अति होई। क्रंदन करन लगे सब कोई॥
बोलहिं नहिं कछु चुप ह्वै रहहीं। श्री अद्वैत शोक बहु करहीं॥
गौर विरह क्षण युग सम जाहीं। करि उपवास रहे गृह माहीं॥
निज निज गृह सब भक्तन गये। गौर चरण हृदय मँह लाये॥
नन्दन के गृह तब प्रभु आयउ। विष्णु सिंहासन ऊपर बैठेउ॥
नन्दन लखि अति मंगल हर्षेउ। माथ नवाइ दंडवत कीन्हेउ॥
नूतन वस्त्र तुरत सो लायो। भींगो वस्त्र गौर तजि दीन्ह्यो॥
अर्घ देई माला पहिरायो। बहु प्रसाद प्रभु सन्मुख राख्यो॥
चन्दन प्रभु श्री अंग लगायो। ताम्बूलादि गौर कँह अर्प्यो॥

भक्त पदारथ प्रेम सों, खात गौर हर्षाइ।
सेवा सों प्रभु दुःख सब, गए भूलि सुख पाइ ॥७॥

भाग्यवान नन्दन अति हर्षहिं। प्रेम भरे ताम्बूल खियावहिं॥
प्रभू कह्यो, "नन्दन तुम सुनहू। आजु लुकाइ हमहिं तुम राखहु" ॥
नन्दन कहहि, "कार्य बड़ दुष्कर। कहाँ लुकैहौं प्रभु जग भीतर॥
हृदय माँझ प्रभु छिप नहिं सकेउ। भक्त प्रगट तहँ तुमको कीन्हेउ॥
क्षीर सिंधु मँह छिपि नहिं पायउ। कहाँ छिपावहुँ तुमहिं बतावउ" ॥
नन्दन वचन सुनत प्रभु हर्षे। कीर्तन मँह सब रात्रि बिताये॥
नन्दन आचारज बड़भागी। गौर पदारविन्द अनुरागी॥
कृष्ण कथा मँह रात बितायो। क्षण मँह सो कछु जान न पायो॥
प्रभु प्रभात लखि हृदय विचारेउ। श्री अद्वैत बहुत दुख पायेउ॥
दंड अनुग्रह सब प्रभु करई। श्री नन्दन सों तब प्रभु कहई॥

"केवल श्रीवासहिं सुनहु, लै आवहु मोहि पाँहि।
नन्दन सुनि तुरतहि उठे, श्री निवास गृह जाइ॥ ८॥

श्री निवास तुरतहिं संग आए। गौर निरखि नयनन जल छाए॥
गौर कह्यो चिन्ता कछु नाहीं। सदय होइ पुनि पूछत ताहीं॥
"श्री अद्वैत अहै किमि कहहू।" श्री निवास तब प्रभु सों कहेहू॥
"पुछहु कुशल कहा हौं कहहू। जीवित हैं सोई तुम जानहु॥
कल उपवास कीन्ह प्रभु सुनऊ। जर जर देह शेप तुम समुझउ॥
प्रेमपात्र तुमरो है सोई। भक्तन कर रक्षा प्रभु करई॥
अन्य लोग यदि प्रभु कछु कहई। भक्त लोग काहे दुख सहई॥
सबके जीवन धन प्रभु तुमहीं। बड़ो कष्ट पायो कल सबहीं॥
दण्ड बहुत हम सब प्रभु पायेहु। दीनबन्धु अब प्राण बचावहु॥"
सुनि श्री वास वचन प्रभु हर्षेउ। श्री अद्वैत भवन तब चलेऊ॥

प्रभु देखेउ आचार्य कँह, मनमलीन अति ताहि।
अपराधी सम मनहु कोउ, मुर्छि पड़ेउ सुधि नाहिं॥ ९॥

प्रभु बल गर्वित बोलत जाहीं। दंड पाइ कछु कहि सक नाहीं॥
प्रभु करि कृपा ताहि सन कहेऊ। उठहु अचारज हम कँह देखउ॥
लज्जा सों अद्वैत न बोलहिं। मन मँह गौर चरन कँह ध्यावहिं॥
पुनि प्रभु कहेउ, "उठहु आचारज। करहु सकल तुम अपनो कारज॥"
"भलो काज प्रभु मोहिं करायेहु"। असकहि आचारज पुनि बोलेहु॥
ऊपर सों आदर मोहिं देही। अहंकार उपजावहु मनही॥
दुर्गति मोर करावहु तुमहीं। कहा कहौं हम अनुचर अहहीं॥
सब कँह दास्य भाव तुम देहू। मोहिं आदर करि राग बढ़ावहु॥
दंड अनुग्रह सब तुम करहू। कहहु और अरु मन कछु धरहू॥
प्राणदेह सब मम प्रभु तुमहीं। दुःख देहु स्वामी निज जनहीं॥

दास्य भाव प्रभु मोहिं अब, देहु कृपा करि नाथ।
चरन शरन राखहु सदा, तब हम होहिं सनाथ॥ १०॥

प्रभु विश्वम्भर सुनि मृदु बाता। बोले प्रभु भक्तन सुखदाता॥
"सुनु अद्वैत बात तोहि कहऊँ। व्यवहारहि मँह तुम यह देखउ॥
मन्त्री जब राजा ढिग जावै। सकल लोग निज बात बतावै॥
मन्त्री सब राजा सों कहई। आज्ञा लै सब अर्थहि देई॥
द्रव्य लेइ सब काम चलावै। निज कुटुम्ब कँह सुखी बनावै॥
जे मन्त्री कर आदर करई। राजाज्ञा सों ताही हनई॥
सब अधिकार सचिव कँह देई। राजा सुख सों निज गृह रहई॥
यदि अपराध सचिव कछु करई। राजा दंड ताहि कँह देई॥
यहि विधि कृष्ण जगत के राजा। शिव ब्रह्मा कर तेहि कर काजा॥
सृष्टि करन शक्ती तेहि अर्पेउ। समय पड़े दंडहु तेहि पायेउ॥

ब्रह्मा देवी देव सब, कृष्ण दंड सब पाय।
सेवक कर दोषहु प्रभू, क्षमा करत हर्षाय॥ ११॥

लखि अपराध कृष्ण यदि कोऊ। दंड देइ, धन धन जन सोऊ॥
जन्म जन्म को दास है सोई। कृष्ण दंड सों अति सुख होई॥
उठहु स्नान करि पूजा करहू। लै प्रसाद चिन्ता सब तजहू॥
प्रभू वचन सुनि सब दुख गयऊ। अति हर्षित आचारज भयऊ॥
दंड दास कर सुनि सुख पावा। "प्रभु करहु जो तुमहिं सोहावा॥
करताली दै नाचन लागे। श्री अद्वैत प्रेम रस पागे॥
प्रभुआश्वासन सुनि सब हर्षे। आनँद मगन नयन जल वर्षे॥
पूर्व विरह सब काहू भूले। श्री हरिदास निताई हर्षे॥
यह आनन्द मइ प्रभु लीला। देखेहु कोउ नहिं कोउ गुण शीला॥
गौर प्रेम को पात्र गोसाईं। यह कोउ अल्प बात जग नाहं॥

दास नाम को अल्प करि, मानहु नाहिं सुजान।
अल्प भाग्य सों कबहु नहिं, दास करैं भगवान॥ १२॥

मुक्त होइ सब बन्धन नासा। तब होइ सकै कृष्ण को दासा॥
भाष्यकार यह व्याख्या करहीं। मुक्त सकल श्रीकृष्णहिं भजहीं॥

तथा चोक्तं भाष्यकृद्भिः:—

मुक्ता अपि लीलया विग्रहं कृत्वा भगवंतं भजन्ते॥

अर्थ—मुक्त पुरुष लोग अपनी इच्छा से शरीर धारण कर भगवान का भजन करते हैं।

मुक्त लोग सब धरि लीला तनु। कृष्ण भजहिं अस कहत वेद सुनु॥
कृष्ण भक्त जग जे जन अहहीं। कृष्ण शक्ति धारण सब करहीं॥
यदि अपराध भक्त कोउ करई। श्री हरिदंड देत हैं सोई॥
इन भक्तन कहँ कोउ कोउ जन जब। मानहिं लघु अरु निंदहिं तेहि सब॥
ए सब दुष्कृति जानहु ताही। सब वैष्णव कँह मानत नाहीं॥
सबके प्रभु श्री गौर गोसाईं। मानत नहिं सोइ जन दुखदाई॥
शुद्ध भक्त कबहूँ नहिं सोई। गर्दभ सम अट पट सो कहई॥
"हम रघुनाथ भाव", मँह भोरा। मानत नहिं सो प्रभु श्रीगोरा॥

सृष्टी स्थिति अरु प्रलय की, शक्ति धरैं बलराम।
गौरदास होइ सोरहत, श्री निताइ गुणधाम॥ १३॥

सब जग को जो धारण करई। गौरदास होइ सोऊ रहई॥
कहा बात औरन की तबहीं। मिथ्या शठ सब इत उत कहहीं॥
जय हलधर जै प्रभू निताई। तुम्हरी कृपा भक्ति हम पाई॥
तव प्रसाद सों हम कछु लिखहीं। तुम्हरी कृपा गौर हम भजहीं॥
यहै भरोसा दृढ़ मन मेरे। सदा रहैं हम प्रभु के चेरे॥
श्री चैतन्य निताई ध्यावौं। वृन्दावन प्रभु यश कछु गावौं॥
श्री चैतन्य चरण मन दीन्हें। बृजभूषण भाषा मँह कीन्हें॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवत मध्यखंडे भक्त-माहात्म्य-कीर्तनं नाम षोड़शोऽध्यायः॥

सप्तदश अध्याय

जय जग मंगल गौर प्रभु, हृदय विराजहु आय।
ध्यान धरहु तब पद कमल, मोहि यहै मनभाय ॥ १ ॥
नित्यानन्द स्वरूप के, तुमही सर्वस प्रान।
भक्तन के प्रिय जयति जय, धरौं तुम्हारो ध्यान ॥ २ ॥
भक्ति सहित श्री गौर हरि, जय जय बोलहु भाई।
गौर कथा जो जन सुनै, भक्ति सोइ जन पाइ ॥ ३ ॥

यहि विधि नवद्वीप विश्वम्भर। लेत कृष्ण को नाम निरंतर ॥
मध्य खंड की कथा सोहाई। लक्ष्मी बनि नाचै हरिराई ॥
एक दिना प्रभु सब सन कहेऊ। विधिवत नृत्य करब हम सुनऊ" ॥
बुद्धिमंत अरु सदाशिवहिं सन। निकट बोलाइ कह्यो प्रभु निजमन ॥
"सकल साज तुम साजहु जाई। शंख काचुली जो मन भाई ॥
साड़ी वस्त्र आभरन सबहीं। सबहीं साज सजावहु अबहीं ॥
रुक्मिनि रूप गदाधर धरिहैं। ब्रह्मानन्द सखी बनि रहिहैं ॥
श्री निताइ मम बूढ़ी बनिहैं। हरीदास सब लोग जगैहैं ॥
नारद रूप वास जू धरिहैं। श्री रमाई स्नातक है रहिहैं" ॥
"दीप लेब हम," कह श्रीमानहिं। "कौन प्रधान," अचारज पूछहिं ॥

"सिंहासन शोभित करत, गोपीनाथ कृपाल।
मुख्य पात्र सोई अहै", बोले गौर गोपाल ॥ ४ ॥

बुद्धिमंत तुम शीघ्रहि जावहु। मोर नृत्य लगि साज सजावहु" ॥
आज्ञा शिर धरि दोउ जन तबहीं। गृह कँह चले हर्ष अति मनहीं ॥
तुरत चँदोआ सुंदर काढ्यो। वस्त्र आदि सब साज सजायो ॥
बुद्धिमंत सब साज लेइकै। प्रभु के आगे धरयो आनिकै ॥
देखि सकल प्रभु अति सुख पावा। सब वैष्णव कँह निकट बुलावा ॥
"नृत्य करब हम प्रकृति स्वरूपा। इन्द्रियजित देखब सोइ रूपा ॥
मंदिर भीतर सोइ जन जैहै। इन्द्रिय जीत सकत जो जनहै" ॥
लक्ष्मी रूप गौर प्रभु नाचब। सुनि हर्षित अति भए लोग सब ॥
प्रभू वचन सुनि सब दुःख पावा। श्री अद्वैत कहेउ अति भावा ॥
"आज नृत्य दर्शन नहिं करिहौं। हम अजितेन्द्रिय नहि तँह जैहौं" ॥

"मोर दशा सोई अहै", कह्यो वास प्रभु पाँहि।
वचन सुनत श्री गौर हरि, हर्षे अति मन माँहि ॥ ५ ॥

प्रभू कह्यो, "यदि नहि कोउ अैहै। काके संग नृत्य हम करिहैं ॥
सर्वेश्वर लखि कै सब पाहीं। प्रभु कहेहु "कछु चिंता नाहीं ॥

आज योगेश्वर सबही होइ हौ। हमहिं देखि कोउ मोह न पैहौ" ॥
सुनि श्री वास अचारज हर्ष। भक्त सकल लोचन जल बर्ष ॥
सब भक्तन संग प्रभु विश्वम्भर। शेखर गृह तब चले विप्रवर ॥
आई¹ चली वधू निज लेई। गौर नृत्य देखन हित सोई ॥
निज वैष्णव गणकर परिवारा। गौर नृत्य सुनि हर्ष अपारा ॥
चली सकल आई संग लागी। पुण्यवती ते सब बड़ भागी ॥
चन्द्रशेखर कर भाग्य अपारा। प्रभु जेहि गृह लीला विस्तारा ॥
बैठि गौर तब सब सन कहहीं। निज निज साज सजावहु सबहीं ॥

बार बार अद्वैत कह, हम कँह कहा रजाय।
"चाहहु जो," प्रभु तेहि कहेउ, सुनि हर्ष द्विजराय ॥ ६ ॥

आनन्द मगन कछू नहि जानहिं। भृकुटी चढ़ाइ चहुँ दिशि नाचहिं ॥
श्री अद्वैत परम सुख पावहिं। महाविदूषक सम सो नाचहिं ॥
महा कृष्ण कोलाहल भारी। नृत्य करत सुधि देह बिसारी ॥
शुभारंभ कीर्तन कर कीन्हा। श्री मुकुन्द करताली दीन्हा ॥
"गोपाल गोविन्द रामकृष्ण नरहरी"। कहत सबै मिलि बोल "हरिहरी" ॥
सर्व प्रथम हरिदासहि आए। गलमुच्छा मुख पर छवि छाए ॥
बड़ी पाग शिर अति ही सोहै। धोती कमर कसे मन मोहै ॥
दंड हाथ सब सन सो कहेऊ। "सावधान सब काहू रहेऊ ॥
लक्ष्मी रूप नृत्य अब करिहै। गौर प्रभू सब कर मन हरिहै ॥
हाथ छड़ी चहुँ दिशि सो घूमत। कृष्ण कृष्ण कहि सब सों बोलत ॥

"कृष्ण भजहु हे भाई सब, सेवहु कृष्ण सुजान।
कृष्ण कृष्ण मुख सो कहहु, यहै सार जग जान" ॥ ७ ॥

मगन होइ हरिदास पुकारत। हरिदास सो हँसि सब पूछत ॥
"तुम को अहहु कहाँ ते आए"। सुनि हरिदास सबहि समुझाए ।
"कोतवाल हम स्वर्ग के भाई। कृष्ण कृष्ण कहि सबहि जगाई ॥
तजि बैकुंठ प्रभू यहि आए। प्रेम भक्ति बाटन मन लाए ॥
लक्ष्मी वेश नृत्य प्रभु करिहैं। लूटहु प्रेम-भक्ति प्रभु बटिहैं" ॥
यहि कहि मोछ हाथ सों ऐंठत। श्री मुरारि को अंग दरेरत ॥
कृष्ण प्रेम मँह मगन दोउ जन। कहहि कृष्ण को नाम सबहि सन ॥
नारद रूप धरेउ श्री वासा। अति प्रसन्न उर अधिक हुलासा ॥
सभा माँझ आए हरि बोलत। दाढ़ी स्वेत दीर्घ अति सोहत ॥
तिलक सर्व अंग बीणा बाजै। कुश। हाथ चहुँ दिशि छवि छाजै ॥

श्री रमाइ आसन लिए, और कमंडल हाथ।
तेहि पाछे आवत भए, दोउ जन एकहि साथ ॥ ८ ॥

दीन्ह बिछाई रमाई आसन। नारद बैठे तँह हर्षित मन ॥
नारद लखि सबही सुख पाए। स्वयमहिं नारद मानहुँ आए ॥

* १—श्री शची माता।

श्री अद्वैत कहेउ नारद सन। "को तुम यहि आयहु केहि कारन"।
कह श्रीवास, "सुनहु मम बाता। नारद नाम जगद् विख्याता॥
कृष्ण नाम निसि दिन हम रटहीं। भ्रमण विश्व मँह चहुँ दिशि करहीं॥
श्री बैकुंठ गयउ हम भाई। कृष्ण दरश हित अति हर्षाई॥
सुनेहु कृष्ण नदिया मँह आए। शून्य सकल बैकुंठहि पाए॥
नहिं परिवार न कोऊ जनहीं। यहि ते रहि न सकेउ हम तहहीं॥
यहि कारन इतहो हम आए। सभा देखि तव अति सुख पाए॥
लक्ष्मी वेश आज प्रभु धरिहैं। करिकै दरश धन्य हम होइहैं"॥

परम मनोहर वचन सुनि, मगन भए सब कोइ।
नारद सम कछु भेद नहि, रूप रंग सब सोइ॥ ६॥

तैसहि चरित वचन कह तैसहिं। नारद लखि सबहीं जन हर्षहिं॥
पतिव्रता गन सबही लेई। आई देखहिं हर्षित होई॥
मालिनि सों माता तब पूछेहु। "का यह पंडित हम सों कहउ"॥
"निश्चित सोइ" मालिनि तब कहेउ। माता सुनि अतिही सुख पायउ॥
परम वैष्णवी माता अहई। भक्तो रूप धरे सब कहई॥
नारद रूप देखि अति हर्षा। मुर्छित भइ आनन्द विशेषी॥
धातु सकल शरीर मँह नाहीं। दशा देखि यह सब बिलखाहीं॥
धीरज धरि सब नाम सुनावहिं। कृष्ण कृष्ण कानहिं मँह भाषहिं॥
गोविन्द सुमिरि आइ तब उठहीं। धरहि ताहि पै धरि नहि सकहीं॥
यहि विधि घर बाहर सब कोई। क्रंदन करहि मगन मन होई॥

गृह भीतर गौरांग प्रभु, धरत रुक्मिनि वेश।
मगन भए सोइ भाव मँह, प्रभु रुक्मिनि आवेश॥ १०॥

रुक्मिनि सम प्रभु आपुहि गिनहिं। नयनन के जल सो प्रभु लिखहीं॥
भूमि पत्र अगुली सों लिखहीं। भाव विभोर श्लोक प्रभु पढ़हीं॥
श्री भागवत श्लोक जे अहहीं। रुक्मिनि लिख्यो प्रभू सोइ कहहीं॥
सप्त श्लोक सोइ कर सुन भावा। कृष्ण मिलै जो यहि मनलावा॥
भुवनसुन्दर तव गुण सुनि काना। अंग ताप सब दूर पराना॥
तोर दरश ते सब निधि मिलही। भक्ति भाव सों जो तोहि लखही॥

(तथाहि भा० १०।५२।३७)

श्रुत्वा गुणान् भुवन सुन्दर श्रृण्वतांते
निर्विश्य कर्ण विवरैर्हरतोऽगतापं।
रूपं दृशां दृशिमतामखिलार्थ लाभं
त्वय्यच्युता विशति चित्तमपत्रपंमें॥

अर्थ—हे भुवन सुन्दर, आप के गुणों को सुन कर शरीर के सब ताप दूर हो जाते हैं। ब्रह्मा ने जिसको आप के देखने योग्य आँख दी है वह आप का दर्शन कर सब कुछ पा जाता है। हे अच्युत, हमारा मन भी आप के गुणों को सुन कर, लज्जा को छोड़ कर आप के चरणों का आश्रित हो गया है।

अच्युत सुनहु तोर यश सुनेउ। ह्वै निर्लज्ज तोहि मन दीन्हेउ ॥
कुलवति को यहि जग महँ अहई। काल पाइ जो तोहि नहि भजई ॥
विद्याकुल धन रूप अरु धामा। सकल विफल तुम बिन घनश्यामा ॥
मोर धृष्टता क्षमहु मुरारी। सब तजि आयहु शरण तुम्हारी ॥

यहि ते वरेहु चरन युग, तुम्हरो श्री गोपाल।
तुमही अर्पेहु देह हम, तुम सबके प्रतिपाल ॥ ११ ॥

निज पत्नी करि करु मोहिं दासी। जिमि प्रभु होय न तव उपहासी ॥
करिकै कृपा शरण मोहि लीजै। निज चरणन सेवा मोहि दीजै ॥
प्रभु की वस्तु अयोग्य न पावै। सिंह भाग कुक्कुर नहिं खावै ॥
व्रत अरु दान कीन्ह हम जोई। पूजेहु अच्युत दृढ़ मन होई ॥
तबहि गदाग्रज मम पति होहू। यह वर प्रभु मागे मोहिं देहू ॥
शिशूपाल कँह दूर भगावहु। मोर मनोरथ तुम प्रभू पुरवहु ॥
मोर विवाह दिवस प्रभु जानहु। एक दिवस पूर्वहि तेहि आयहु ॥
गुप्त रूप तुम पुर मम रहेऊ। सैन्य आदि सब पीछे राखेऊ ॥
जरासंघ आदिक सब हनहू। निज भुज बल प्रभु हम कँह हरहू ॥
दर्प प्रकाश समय यह अहई। लेहु बचाइ सत्य हम कहई ॥

बिना बंधु मारे प्रभू, हरहु मोहि यदुराय।
सोइ उपाय हम कहत हौं, सुनहु ताहि मनलाय ॥ १२ ॥

निज विवाह पहले दिन हमहीं। देवी पूजन जैहैं सबहीं ॥
सोइ अवसर प्रभु हम कँह हरहू। बंधु न मारि क्षमा तेहि करहू ॥
चरन धूलि जेहि कर शिव चाहत। देव सकल जेहि अंग मँह लावत ॥
सोइ धूलि यदि प्रभु नहि दैहौ। व्रत करिकै हम तनु कहँ तजिहौं॥
जब लौ तोर चरन नहिं पैहौं। यहि विधि प्रान तजत हम रहिहौं ॥
कृष्ण निकट द्विज अबहीं जावहु। समाचार सब ताहि सुनावहु" ॥
इमि रुक्मिनि आवेशहिं गोरा। बोलत वचन भक्त मन चोरा ॥
प्रभू वचन सुनि सब अति हर्षहिं। सोइ भाव हृदय मँह आनहिं ॥
नयन नीर पुलकित सब अंगा। प्रेम प्रवाह बहत जिमि गंगा ॥
चन्द्रशेखर गृह यह सुख होई। चहुँदिशि 'हरि हरि' कह सब कोई ॥

"जाग" "जाग" बोलत सदा, श्री हरिदास सुजान।
श्री निवास नाचत अहै, नारद सम सुखमान ॥ १३ ॥

प्रथम प्रहर यह कौतुक भयउ। दूसरे पहर गदाधर आयउ ॥
"सुप्रभात" सखि करि निज आगे। बृद्धा एक चलत तेहि लागे ॥
हाथ छड़ी काँखें मँह डाली। अल्प वस्त्र पहिने सो आली ॥
ब्रह्मानन्द बड़ाई बनेऊ। स्वयं बड़ाई मानहु आयउ ॥
हरीदास पूछेउ तब इन सों। "तुम सब कहाँ चलेउ, कहु हमसों" ॥
श्री निवास कहँ केहि को वनिता। कह बड़ाई पूँछहु किमि वार्ता ॥
श्री निवास कह "उचित न पूछब"। हाँ कहि माथ हिलायो सोइ तब ॥

गंगादास कह्यो, "कँह रहिहौ"। कह बड़ाइ "तुम स्थानहि देइहौ" ॥
गंगादास कहेउ, "तुम सबहीं। पूछहु जनि भागहु तुम सबहीं" ॥
श्री अद्वैत कहेउ, "का पूछहु। माता सम पर नारी जानहु ॥

हमरे ठाकुर कँह सुनहु, नृत्य गीत बहु भाय।
धन पावहुगे बहुत सब, नचवावहु मनलाय ॥ १४ ॥

श्री अद्वैत वाक्य सुनि हर्षेउ। नृत्य गदाधर तुरत आरंभेउ ॥
परम प्रेम सों नाचन लागे। रमावेश मँह अति सुख पागे ॥
समय उचित सब संगी गावहि। प्रेम नृत्य लखि सब सुख पावहिं ॥
नयननीर विह्वल अति होई। हरि हरि कहन लगे सब कोई ॥
भयउ गदाधर प्रेम स्वरूपा। बहत नयन सों नदी अनूपा ॥
पृथ्वी सिक्त तहां सब भयउ। धन्य सोथल नयनन जल सींचेउ ॥
प्रभू गदाधर निश्चय अहहीं। कृष्ण प्रकृति, सबही जन कहहीं ॥
"श्री बैकुंठ धाम कर सुनऊ। मम परिवार गदाधर जानउ" ॥
बार बार विश्वम्भर कहेउ। यहै वचन निश्चय करि जानउ ॥
जो गावत जो देखत अहहीं। प्रेम मगन नयनन जल बहहीं ॥

हरि हरि सब वैष्णव कहत, अति आनन्द मन माँहि।
गौर प्रसाद मगन सब, तन की सुधि हू नाँहि ॥ १५ ॥

कृष्ण कृष्ण सब काहू कहई। महा कोलाहल चहुँ दिशि होई ॥
नृत्य करत माधव सुत तहहीं। कृष्ण प्रेम मय भा सब जनहीं ॥
ताही समय[१] प्रभू विश्वम्भर। आद्य शक्ति कर वेश मनोहर ॥
कीन्ह प्रवेश सभा मँह तबही। श्री निताई आगे तेहि चलही ॥
धरेउ बड़ाई रूप निताइ। वृद्धा सम टेढ़े सो जाई ॥
एक ओर वैष्णव सब रहेउ। जय जय ध्वनि सबही जन कीन्हेउ ॥
कोउ नहि चीन्ह सकेउ विश्वम्भर। परम अलक्षित वेश मनोहर ॥
अहै बड़ाई नित्यानन्दा। तेहि पाछे हैं प्रभु सुख कन्दा ॥
यहै चिन्ह सबही जन जानत। तेहिते प्रभुहि चीन्ह सुख पावत ॥
वेश देखि कोउ भेद न पायउ। मानहु कमला स्वयं पधारेउ ॥

जनक नन्दिनी जानकी, किंवा गंगा माइ।
पारबती किंवा मनहु, दरश देन हित आइ ॥ १६ ॥

वृन्दावन निधि मानहु आई। श्री राधिका भक्त सुखदाई।
मनहिं विचार करत सब लोगहिं। प्रभुहि-न चीन्ह मोह कँह पावहि ॥
जन्महिते जे प्रभु कँह देखेउ। नहि पहिचान सकेउ प्रभु सोऊ ॥
और कहा माता नहिं चीन्हेउ। लक्ष्मी आयउ सब सन कहेउ ॥
महायोगेश्वरि आई तनु धरि। भक्ति स्वरूप भए जनु श्री हरि ॥
शंकर हू प्रभु रूप निहारी। पायउ मोह कहा नर नारी ॥

---

* १—तीसरे पहर।

गौर अनुग्रह सो वैष्णव जन। मोहे कोउ नहिं जिमि प्राकृति जन ॥
कृपा दृष्टि प्रभु सबहिं बिलोकेउ। जननी सम सब काहू देखेउ ॥
मानहुँ जननी नभ ते आई। प्रभू निरखि सब सुधि बिसराई ॥
श्री अद्वैत आदि सब कोउ। प्रेम मगन तन सुधि सब भूलेउ ॥

जगत जननि के भाव मँह, नाचत गौर किशोर।
गावत अनुचर गीत सब, जै जै नन्द किशोर ॥ १७ ॥

कौन प्रकृति के भावहिं नाचत। कोउ नहि बूझि सके सो पावत ॥
"आए कृष्ण" गौर जब कहहीं। रुक्मिनी भाव कहत सब जनहीं ॥
आनन्द धारा नयनन बहही। गंगा सदृश सकल जन कहई ॥
भावा वेशहि जब प्रभु हँसहीं। चण्डी भाव सकल जन कहहीं ॥
झुकि झुकिके जबही प्रभु नाचहिं। रेवति भाव सकल जन भाषहिं ॥
क्षणहिं कहहि, "माता ब्रज चलहू"। गोपी भाव कहत सब काहू ॥
विरासन सों छिन मँह बैठहिं। योगेश्वरि सम सबही देखहिं ॥
प्रभु की शक्ति सकल जे अहही। रुक्मिनी रूप सकल प्रभु धरही ॥
यहि मिस प्रभु शिक्षा जग दीन्हेउ। शक्ती कर आदर सब करउ ॥
कृष्ण शक्ति जेती जग अहहीं। कृष्ण भक्ति पूजत तेहि लहहीं ॥

देव द्रोह किन्हे सुनहु, श्री कृष्णहिं नहिं भाय।
गन सह पूजा करन ते, भक्ति सकल नर पाय ॥ १८ ॥

प्रभु जो सिखवहिं सो सच अहई। परम अभागी सो नहि गहई ॥
सर्व शक्ति कर धरि कै रूपा। विश्वम्भर नाचत अनुरूपा ॥
एसो नृत्य कोउ नहि देखेउ। परम मनोहर लखि सुख पायउ ॥
जो देखत जो सुनत जो नाचत। प्रभु संग - प्रेम मगन होइ गावत ॥
सबके नयनन सों जल बहई। नदी वेग सों मानहु चलई ॥
शक्ति वेश प्रभु गोरा नाचहिं। प्रेम भरे भक्तन सब देखहिं ॥
कंप स्वेद अरु पुलक अपारा। नयनन सों वह जल की धारा ॥
मूर्ति मती भक्ती जनु गोरा। प्रेम मगन सबकर मन भोरा ॥
नित्यानन्द हाथ धरि नाचत। गौर-भाव-बहु भाँति बतावत ॥
दीप लिए श्री मानहि डोलत। सावधान हरिदास पुकारत ॥

प्रभु निताइ ताही समय, गिरे मुर्छि भुइ माँहि।
साज बाज सब दूर करि, कृष्ण रसहि सुख पाँहि ॥१९॥

श्रीं निताइ के गिरतहि सवहीं। प्रेम बिकल रोअत सब जनहीं ॥
इत उत प्रेम बिवश सब बोलहिं। गौर प्रेम-मय होइ सब नाचहिं ॥
गला पकड़ि कोउ कोउ कर गावहिं। कोउ के चरनन पर कोउ लोटहिं ॥
गोपीनाथ गोद लेइ तबहीं[1]। गौर सिंहासन उपर उठहीं ॥
हाथ जोड़ि सन्मुख सब लोगू। दरशन करहिं पाइ शुभ योगू ॥
"करहु मोर स्तुति", प्रभु अस कहेउ। जननी भाव सकल जन बूझेउ ॥

१. चौथे पहर।

तेहि अनुरूप अस्तुति सब करहीं। प्रेम मगन प्रभु ताही सुनहीं॥
देवी अरु लक्ष्मीस्तव पढ़हीं। निज मति कोउ चंडी स्तुति कहहीं॥
जय जय जगत जननि महामाया। दुःखित जीव कँह देहु पद छाया॥
जय अनन्त ब्रह्माण्ड अधीश्वरि। युग युग धर्म राखहु अवतरि॥

तुम्हरी महिमा है सकल, ब्रह्मा विष्णु महेश।
बरणि सकै को तोर यश, पार न पायो शेष॥ २०॥

जगत स्वरूपा देवी तूही सर्व शक्ती। तूही श्रद्धा, दया लज्जा तूही विष्णु भक्ति॥
तव मूर्ती सब विद्या अहहीं। सब प्रकृती कर शक्ती तुमहीं॥
सकल विश्व मँह व्यापहु तुमहीं। माता तव यश को कहि सकहीं॥
जगत हेतु तुम वेदन कहई। देवहु तव यश नहिं कहि सकई॥
सर्वाश्रय तुम जीवहिं बसहू। तुम आद्या अविकारा अहहू॥
परमा प्रकृति और नहिं कोई। जगत अधार वेद अस कहई॥
पृथ्वी रूप जीव कँह पालहु। जल होइ जीवन सब कर राखहु॥
सुमिरत तोहि छूटै भव बन्धन। पाप ताप सबही करु खंडन॥
लक्ष्मी रूप साधु गृह राजहु। काल रूप सों दुष्टन मारहु॥
सृष्टी कर रक्षा तुम करहू। जो न भजै पावै दुःख सुनहू॥

वैष्णव कर श्रद्धा तुही, उदय सकल जग माँहि।
राखहु जननी शरण में, यहै भक्त सब चाहि॥ २१॥

माया मँह डूबत संसारा। तुमही सबके राखन हारा॥
जगत उधारन हित तुम आवहु। दुःखित जीव कँह दास बनावहु॥
ब्रह्मादिक वंदन सब करही। तोहि सुमिरत सिद्धी सब लहहीं" ॥
दण्ड प्रणाम सबहि जन करहीं। पुनि पुनि श्लोक बहुत विधि पढ़हीं॥
"शरण लीन्ह हम सब तव माता। कृपा करहु तुम सब वर दाता॥
यहि विधि सबहिं निवेदन करहीं। हाथ उठाइ हरी हरि कहहीं॥
पतिव्रता गृह भीतर रोवहिं। आनन्द मगन नयन जल वर्षहिं॥
चन्द्रशेखर गृह आनन्द भारी। भक्तन सब तनु दसा बिसारी॥
ताही समय निशा अवसानी। आनन्द मगन कोउ नहिं जानी॥

अरुणोदय लखि सबहिं कोउ, दुःखित भए मन माँहि।
कीर्तन शेषहि जानिकै, जहँ तहँ सब बिलखाहिं॥२२।

चमकित होइ इत उत सब देखहिं। निशि बीती लखिकै दुःख पावहिं॥
कोटिन पुत्र वियोग सों भारी। दुःख भयो सब हृदय मझारी॥
क्रोध भरे अरुणोदय देखहिं। प्रभु की कृपा बच्यो सो भागहिं॥
विरही हृदय प्रेम नित रहही। यह लीला तेहि ते प्रभु कीन्ही॥
प्रेम विरह सब भक्तन रोवहिं। पतिव्रता गण भुइ मँह लोटहिं॥
शचीमातु के चरनन परहीं। विष्णु भक्ति क्रंदन सब करहीं॥

शेखर भवन प्रेम मय भयउ। कृष्ण भक्ति लक्षण सब निखेंउ ॥
सर्वस धन वैष्णव कर क्रंदन। प्रेम भक्ति कर याही लक्षण ॥
कृष्ण चरित भक्तन सब जानत। प्रेम भरे इमि वचन उचारत ॥
"अरे रात्रि तू किधौं नसानो। कृष्ण प्रेम सों वञ्चित कीनो" ॥

दुःखित देखि वैष्णव सकल, कीन्ह कृपा भगवान।
मातृभाव उपजेउ सबै, निरखहिं गौर सुजान ॥२३॥

गौर, "वत्स" कहि सबहिं बोलायो। गोदी लै स्तन पान करायो ॥
कमला पारवती नारायनि। गौर प्रगट सब जग की जननि ॥
गीता वचन सत्य प्रभु कीन्हेउ। माता पिता पितामह भयउ ॥

तथाहि (गीता ६।१७)
"पिताऽमस्य जगतो माताधाता पितामहः ॥"

भाग्यवान जे भक्तन अहहीं। प्रभु स्तन पान सबहिं जन करहीं ॥
दूध पियत सब बिरह मिटायउ। मगन प्रेम रस महँ सब भयउ ॥
प्रभु लीला कर अन्त न अहई। आदि अन्त केवल सब कहई ॥
महाराज राजेश्वर गोरा। सकल विश्व कर प्रभु चित चोरा ॥
नदिया मँह अस उत्सव कीन्ह्यो। सकल विश्व कँह धन कर दीन्ह्यो ॥
स्थूल सूक्ष्म जो कछु जग अहई। सब श्री गौर रूप बुध कहई ॥
इच्छा मय प्रभु नर तनु धरहीं। सकल विश्व कँह दर्शन देहीं ॥

इच्छा सों सृष्टी करहिं, इच्छा सों संहार।
इच्छामय श्री गोर प्रभु, व्यापि रहे संसार ॥२४॥

प्रभु इच्छा सब कोउ पालत। इच्छा मय बहु रूपहि धारत ॥
प्रभु स्वरूप सब सत्य सुहावा। जीवहिं तारन भेष बनावा ॥
यह नहिं समुझि मूढ मति कोउ। प्रभु कँह गोपी कह जन सोउ ॥
अद्भुत गोपी नृत्य दिखावा। वेद पुरान तन्त्र सब गावा ॥
सुनहिं प्रेम सों जो यह लीला। कृष्ण भक्ति पावत गुणशीला ॥
नित्यानन्द बड़ाइ भयउ। लक्ष्मी रूप जबहिं प्रभु धरेउ ॥
जब सोइ रूप गौर प्रभु धरहीं। तेहि अनुरूप निताई बनहीं ॥
गोपी रूप जबहिं प्रभु लीन्हेउ। तबहि निताइ बड़ाई भयउ ॥
यहि को समुझि सकै नर सोई। गौर कृपा जेहि उपर होई ॥
श्री निताई कँह कहु को चीन्है। अल्प भाग्य नहि कोउ पहिचानै ॥

किंवा योगी हैं प्रभू, श्री निताइ गुणखान।
किंवा ज्ञानी, भक्त हैं, सबहिं करत अनुमान ॥२५॥

निज निज मत सब कोउ भाषत। गौर निताई हृदय विराजत ॥
मोरे हृदय निताइ चरना। रहहु सदा जो भवभय हरना ॥
एतेहू पर जो निन्दा करही। लात हनब शिर पर तेहि हमहीं ॥
अमृत सम यह कथा सोहाई। मध्य खंड की जानहु भाई ॥

जेहि मँह प्रभु धरि लक्ष्मी रूपा। नृत्य कीन्ह हरि परम अनूपा ॥
भक्ति सिखावन हित प्रभु नाचेउ। स्तन पियाइ आशा सब पूरेउ ॥
श्री आचारज गृह के माँही। अद्भुत तेज लखेउ सब जाहीं ॥
सात दिना लगि तेज निरन्तर। चन्द्र सूर्य विद्युत सों दुष्कर ॥
पूण्य श्लोक सब दर्शन करहीं। नयन उघारि देखि नहिं सकहीं ॥
लोग कहहिं का कारन अहई। देखत ही आखैं दोउ फूटई ॥

वचन सुनत वैष्णव हंसहि, भेद कहत कछु नाहि ।
प्रभु माया अति सै गहन, लखी काहि पै जाहि ॥२६॥
अति अचिन्त्य लीला करत, श्री चैतन्य कृपाल ।
सर्द शक्ति सों विहरहीं, नदिया मँह गोपाल ॥२७॥
सुनहु सुनहु सब भक्तगण, गौर चरित्र महान ।
मध्यखंड मँह कीन्ह प्रभु, जँह तँह कृपा निधान ॥२८॥
श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु, श्री निताइ गुणखान ।
बृन्दावन वर्णत अहै, प्रभु लीला उर आन ॥२९॥
नागरि भाषा मँह कियो, तेहि कँह भूषणदास ।
गौर भक्त के हेतु सोइ, हरि लीला सुखरास ॥३०॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे श्री गौरांगस्य गोपिका नृत्य वर्णनं नाम सप्तदशोध्यायः ॥

अष्टादशोध्यायः

जै विश्वम्भर गौर प्रभु, सब वैष्णव के नाथ ।
भक्ति देइ सब जीव कँह, भक्तन करहु सनाथ ॥१॥

यहि विधि नवद्वीप प्रभु राजहिं। लीला करहिं भक्त कोउ निरखहिं ॥
भक्तन के गृह गृह प्रभु जाहीं। संग गदाधर लीला करहीं ॥
आनन्द सो परिपूरन भावहिं। सकल बिश्व कृष्णहिं मय देखहिं ॥
भावावेश माँझ सब रहहीं। सकल काज तजि कीर्तन करहीं ॥
सब सो बड़ आचार्य गोसाईं। महामत्त सम रहत सदाईं ॥
अगाध-चरित कीर्तन मय देही। गौर प्रेम मय गौर सनेही ॥
श्री चैतन्य भक्त सब कहहीं। महाभक्त आचारज अहहीं ॥
गौर सकल वैष्णव आदरहीं। श्री अद्वैतहिं बड़ करि गिनहीं ॥
यहि ते दुःख आचारज पावत। मन मँह बहुत भाँति सो सोचत ॥
गौर मोहि बहुतहि दुःख देहीं। मोर चरन प्रभुता तजि धरहीं ॥

हम तेहि रोक सकौं नहिं, प्रभु अति ही बलवान ।
बल सों मेरो लेत है, चरन धुलि सुभमान ॥२॥

भक्ती को बल है मम पासा। भक्तिहि सब पूरब मम आसा॥
भक्ती सों जीतब हम प्रभुहीं। मोहिं अद्वैत सिंह सब कहहीं॥
माया चूर्ण करौं हम सबहीं। भृगुहि जीत सुख पायो तेहीं॥
भृगु सम शिष्य बहुत मम अहहीं। प्रभुहि क्रोध उपजाइब हमहीं॥
क्रोध मोहिं पर प्रभु अस करिहैं। केश पकड़ि प्रभु हम कँह मरिहैं॥
भक्ति प्रचार हेतु अवतारा। भक्ति न मानब यहै विचारा॥
भक्ति न मानन ते प्रभु ऐहैं। केश पकड़ि प्रभु शासन करिहैं॥
यह विचार दृढ़ करि आचारज। आए गृह प्रभु कोउ एक कारज॥
शान्तीपुर प्रभु निज गृह आए। हरीदास को निज संग लाए॥
निज विचार पूरन प्रभु कीन्हा। ज्ञान कथा में मन सो दीन्हा॥

भावावेशहिं मत्त होइ, कहत ज्ञान की बात।
योगवाशिष्ठहिं कहत प्रभु, करत भक्ति पर घात॥३॥

ज्ञान बिना भक्ती कछु नाहीं। सब कर प्राण ज्ञान जग माहीं॥
सर्व शक्ति मय ज्ञानहिं जानउ। बूझहिं नहिं मूरख जन कोउ॥
विष्णु भक्ति दर्पण सम बूझउ। ज्ञान नेत्र निश्चय करि मानउ॥
चक्षुहीन दर्पण किमि देखै। ज्ञान सत्य सब शास्त्रन भाखै॥
पढ़ि सब शास्त्र यहै हम पायहु। ज्ञान सत्य, निश्चय सब जानहु॥
श्री हरिदास बात सब बूझत। श्री अद्वैत चरित सो समुझत॥
हंसहि बहुत सुनिकै प्रभु वानी। प्रभु चरित्र बूझै को प्रानी॥
भक्त सकल सुनिकै सब बूझहिं। मूरख अर्थ अनर्थ बखानहिं॥
भक्त कल्पतरु गौर किशोरा। सदा भक्त कर प्रभु चित चोरा॥
श्री अद्वैत भाव प्रभु जानेउ। एक दिवस घूमन हित निकसेउ।

श्री निताइ को संगलै, घूमत प्रभु चहुँ ओर।
निज सृष्टी देखत अहैं, भक्तन के चित चोर॥४॥

ब्रह्मा निज कँह धन्य विचारत। हमरी सृष्टि आज प्रभु देखत॥
युगल चन्द्र सम दोऊ घूमहिं। मति अनुरूप लोग सब देखहिं॥
देव सकल प्रभु दर्शन करहीं। युगल चन्द्र लखि मन मँह गुनहीं॥
पृथ्वी सम स्वर्गहिं कँह समुझहिं। चन्द्र भूमि पर लखि सुख पावहिं॥
नर समान सब आपुहि मानहि। चन्द्र प्रभाव देव भए मनुषहिं॥
युगल चन्द्र लखि सबहिं विचारहिं। युगल चन्द्र नहिं स्वर्ग विराजहिं॥
कोउ देव अस वचन उचारहिं। मूल एक दूसर प्रतिबिंबहि॥
कहेउ कोउ हम जानत अहहीं। विधि दुइ भाग चन्द्र करि दीन्हीं॥
कोउ विचारि बहुरि अस कहई। पिता पुत्र एक रूपहिं अहई॥
एक चन्द्र स्वयमहिं सब जानहु। चन्द्र सुअन बुध दूसर मानहु॥

निश्चय नाहीं करि सकै, वेदहु प्रभु को रूप।
देव कहा जो कहि सकै, प्रभु को रूप अनूप॥५॥

यहि विधि नगर भ्रमत दोउ भ्राता। गौर निताई जन सुखदाता॥
श्री निताइ सन प्रभु इमि कहेउ। आचारज गृह शीघ्रहि चलउ॥
अति चञ्चल दोऊ प्रभु अहहीं। प्रेम भरे शान्तीपुर चलहीं॥
गंग निकट मारग मँह तहहीं। पत्नी संग साधु एक रहही॥
कुटी देखि श्री गौर सुजाना। श्री निताइ सो कह भगवाना॥
केहि कर कुटी कहहु को अहई। "साधूएक", कहेउ, "तँह रहहीं"॥
चलहु तहाँ, कहि प्रभु तँह गयउ। संन्यासिन्ह प्रणाम प्रभु कीन्हेउ॥
मोहन मूर्ति मदन सम रूपा। संन्यासी लखि रूप अनूपा॥
हर्षित होइ अशिस सो दीन्हेउ। "स्त्री धन विद्या सब कछु होउ॥
गौर कहेउ यह उचित न बाता। "कृष्णभक्ति पावहु" कहु ताता॥

कृष्ण भक्ति आशिस सुनहु, अक्षय अव्यय मान।
और सकल मिथ्या अहै, निश्चय मन मँह जान॥ ६॥

हंस कर संन्यासी पुनि कहई। नीक कहत उलटो यह गुनई॥
है प्रसन्न "धनवर" हम दीन्हा। उलटो द्विज निन्दा मम कीन्हा॥
सुनहु विप्र सन्यासी कहेउ। "आशीर्वाद मोर किमि निन्देउ॥
जन्म लेइ जो सुख नहि कीन्हा। सुन्दर स्त्री जो संग नहि लीन्हा॥
जीवन व्यर्थ अर्थ बिन जानहु। "धनवर" कँह तुम किमि नहि मानहु॥
पइहौ विष्णु भक्ति यदि तुमहीं। धन बिनु का खैहौ कहु हमहीं॥
हंसे वचन सुनि गौर सुजाना। यहि विधि जग उपदेशेउ ज्ञाना॥
भक्ति बिना मिथ्या सब अहई। संन्यासी सों पुनि प्रभु कहई॥
"भाग्य माँझ जो लिखा गोसाईं। निश्चय सो मिलिहै मोहि भाई॥
धन संतति सब काहू चाहत। पुनि काहे सो जीवन खोअत॥

ज्वर कोऊ चाहत नहीं, पीड़ा किमि सो देय।
कर्म दोष भोगत सबै, बूझत नहि यह सोय॥ ७॥

विषय सुखहि जग बड़ करि मानत। तेहिते स्वर्ग पुरान बखानत॥
शास्त्र जीव पर करुणा करिकै। कहेउ उपाय सुनहु मन भरिकै॥
धन संतति हित कहेउ उपाउ। जपहु नाम अरु गंग नहावउ॥
वेद मर्म काहु नहि बूझत। भक्ति छोड़ि माया मन लावत॥
तेहि ते लोग करत है सोइ। तेहि प्रभाव भक्ति मन होई॥
अच्छो बुरो देखु मनमाहीं। कृष्ण भक्ति सो बड़ कछु नाहीं॥
यहि विधि प्रभु शिक्षा जग देई। भक्ति योग सब कर हित होई॥
गौर कहत जो सब सच अहई। पर निन्दा बड़ अघ सब कहई॥
हँसत साधु सुनि प्रभु की बानी। यह द्विज पागल हम अनुमानी॥
मंत्र दोष सों पागल भयऊ। सन्यासी संग गृह तजि दयऊ॥

संन्यासी तबही कहेउ, उलटो जग व्यवहार।
शिशु सन्मुख मूरख भयउ, नहि कोउ बूझन हार॥ ८॥

सब तीर्थन हम यात्रा कीन्हा। काशी गया आदि करि लीन्हा ॥
अच्छो बुरो हमहि नहि जानत। यह बालक अब हमहिं सिखावत ॥
श्री निताइ तब हँसि कै कहहीं। "तब महिमा हम जानत अहहीं ॥
बालक सम विवाद जनि करहू। मोहि लखि छमा ताहि कँह करहू" ॥
निज स्तुति सुनि संन्यासी हर्षेउ। भोजन हित तब प्रभु सन कहेउ ॥
जाहु काज लगि हम दोउ जनही। देउ कछुक खावब हम सबहीं ॥
संन्यासी कह यहै नहावहु। भोजन करि तुम दोउ जावहु ॥
पापी तारन हित अवतारा। रहे दोउ प्रभु तेहिके द्वारा ॥
गंग नहाइ स्वस्थ्य प्रभु होई। फलाहार हित आए तहई ॥
भोग लगाइ प्रसादहि पावत। संन्यासी हर्षित होइ देखत ॥

संन्यासी मदिरा पियत, वाम पथहि सोमान।
श्री निताइ सो कहत सोइ, कछु आनन्द[1] करुपान ॥

कछु आनन्द आनहु तुम लेइहौ। तुम सम अतिथि कहाँ हम पइहौ ॥
श्री निताइ बहु देशहि घूमेउ। संन्यासी मद्यप सोइ जानेउ ॥
श्री निताइ सन पुनि पुनि कहई। प्रभु निशेध ताही कँह करई ॥
सुन्दर रूप प्रभू कर देखी। सन्यासी पत्नी अति हर्षी ॥
एक टक देखत प्रभु की ओरा। सुन्दर रूप देखि मन भोरा ॥
निज पति कँह निशेध सो करई। भोजन समय कहा तुम कहई ॥
गौर निताई सो तब पूछेउ। आनन्द कहा साधु तोहि कहेउ ॥
श्री निताई प्रभु सो तब कहेउ। मदिरा कँह संन्यासी पूछेउ ॥
"विष्णु, विष्णु" कहि प्रभु तब उठेउ। करि आचमन तहाँ ते भागेउ ॥
गंगा माँझ कूदि दोउ पड़ेउ। शान्तीपुर की ओर सिधारेउ ॥

मद्यपहू पर करत है, कृपा गौर भगवान।
निन्दक संन्यासी हनहि, तेहि कर यहै प्रमान ॥ १० ॥

संन्यासी होइ मदिरा पीवत। स्त्री संग करत पाप नहि मानत ॥
तदपि प्रभू तेहिके घर गयउ। बातहि मँह तेहि धर्म सिखायउ ॥
करि विश्राम प्रसादहि लीन्हा। तेहि उद्धार लागि सब कीन्हा ॥
यहि जन्महि वा अन्यहि होउ। तेहि कर हित निश्चय सब भयउ ॥
निन्दक संन्यासी जे अहहीं। तिन कँह प्रभु दर्शन नहि देहीं ॥
काशी मँह संन्यासी रहहीं। प्रभु दर्शन पायो नहि तिनहीं ॥
शेष खंड मँह जब प्रभु काशी। भ्रमन गए तँह प्रभु सुखराशी ॥
प्रभु आगमन सुनेउ सब कोउ। संन्यासी सब हर्षित भयऊ ॥
बड़ो महाजन सबही कहहीं। बड़े भाग अब दर्शन करहीं ॥
संन्यासी सब अति बड़ ज्ञानी। वेदान्ती पंडित जग जानी ॥

---

१. मदिरा

बड़े यशस्वी सबहि जन, काशी करहिं निवास।
ब्रह्म बखानत है सबहिं, हरि मँह नहिं विश्वास ॥११॥

यही दोष ते सब गुण गयउ। भक्ति मार्ग जानत नहिं कोउ ॥
अन्तरयामी प्रभु सब जानेउ। तेहि ते दर्शन नाहीं दीन्हेउ ॥
रामचन्द्र के मठ मँह रहेउ। काशी मँह दुइ मास बितायउ ॥
विश्वरूप के चौरहि काला। दिन दुइ पूर्वहि गौर गोपाला ॥
गुप्त रूप सों काशी त्यागेउ। संन्यासी सब पाछे सुनेउ ॥
गौर गए दर्शन नहिं पायउ। निन्दा सो सब बुद्धि गवाँयउ ॥
तिनके मन कछु त्रास न भयउ। तेहि पर अटपट कह सब कोउ ॥
"हम सब बड़ संन्यासी अहहीं। हम सों भेट न कीन्ह्यो तेहीं ॥
एकहि आश्रम के हम सबहीं। गयउ दरश दीन्हे बिन हमहीं ॥
छाड़ि धर्म निज दिन दुइ लागो। विश्वरूप चौरहि कँह त्यागो ॥

भक्ति हीन जे जन अहैं, उलटो बोलत जाहिं।
शिवहू निन्दक लोग की, पूजा मानत नाहिं ॥१२॥

काशी मँह निन्दा जे करहीं। शंकर दंड ताहि कँह देहीं ॥
शिव अपराधी जे जन अहहीं। हरि द्रोही तिन कँह बुध कहहीं ॥
गौर कृपा तिन पर सब करिहैं। वैष्णव निन्दक कँह तजि देहैं ॥
मद्यप गृह प्रभु भोजन कीन्हा। वेदान्तिन कँह दरस न दीन्हा ॥
गौर दंड कँह जो नहि डरहीं। जन्म जन्म बहु दुःख सो सहहीं ॥
ब्रह्मा शिव आदिक सब देवा। करहिं गौर पद की सब सेवा ॥
सोइ गौर पद जेहि न प्रतीती। व्यर्थ तासु सब कह अस नीती ॥
यहि विधि प्रभू दोऊ चलि जाहीं। आनन्द मगन गंग जल माँहीं ॥
श्री गौरांग करहिं हुंकारा। सोऽहं सोऽहं वचन उचारा ॥
मोहिं जगाई नाड़ा यहि आन्यो। अब ज्ञानी बनि भक्ति लुकायो ॥

तेहि कर शासन करब हम, भलीभाँति सो आज।
प्रत्यक्षहि देखब सबहिं, तब बनिहै मम काज ॥१३॥

केहि विधि ज्ञान योग सो रखिहै। मम सन्मुख कछु बस नहि चलिहै ॥
गर्जि गर्जि प्रभु यहि विधि बोलहिं। श्री निताइ अति सै सुख पावहिं ॥
गंगा मँह दोऊ जन पौड़हिं। क्षीर समुद्र प्रभू जिमि राजहिं ॥
श्री अद्वैत भक्ति बल जानेउ। मन मँह भल होइहै अनुमानेउ ॥
क्रोध भरे मम ढिग प्रभु आवत। यहै समुझि बड़ ज्ञान बखानत ॥
गौर भक्त कर अद्भुत लीला। को समुझै प्रभु बिन गुण शीला ॥
गंगा पथ आए दोउ भाई। क्रोध भरे श्री गौर गोसाई ॥
देखेउ श्री अद्वैतहि जाई। ज्ञान बखानत अति मन लाई ॥
हरीदास प्रभु चरनन धरेऊ। अच्युत चरन बंदि सुख पायऊ ॥
मन ही मन सीता ठकुरानी। कीन्ह प्रनाम जोरि जुग पानी ॥

प्रभु कर भावहिं देखि के, चिन्तित भइ मन माँहि ।
कोटि सूर्य सम तेज अति, देखि सकै कोउ नाँहि ॥१४॥

भए सभीत देखि नर नारी । क्रोध सहित प्रभु कहेउ पुकारी ॥
नाड़ा कहउ मोहि समुझाई । ज्ञान भक्ति मँह को बड़ अहई ॥
कह अद्वैत ज्ञान बड़ सुनहू । ज्ञान बिना भक्ती किमि करहू ॥
ज्ञान बड़ो सुनतहि प्रभु गोरा । क्रोध भरे देखेउ तेहि ओरा ॥
आसन पर ते तेहि धरि घींचेउ । निज कर सों प्रहार प्रभु कीन्हेउ ॥
पतिव्रता सीता ठकुरानी । सर्व तत्व जानत अकुलानी ॥
बूढ़ो विप्र कृपा प्रभु करहू । कारन कवन बात मम सुनहू ॥
छाड़हु अबहि सोचु मन माँहि । होइ है यदि कछु तौ भल नाहीं ॥
श्री निताइ सुनि कै अति हंसहो । श्री हरिदास स्मरण हरि करहीं ॥
क्रोध भरे प्रभु कछु नहिं सुनेऊ । श्री अद्वैत सों पुनि प्रभु कहेऊ ॥

"सोइ रहेउ सुख सों सुनहु, क्षीर सिंधु के माँहि ।
सुनु नाड़ा तव कारणहिं, उठि आयहुँ यहि ठाँहि ॥१५॥

भक्ति प्रकाशन हित मोहि आनेहु । ज्ञान मार्ग तुम सबहि सिखावहु ॥
भक्ति लुकावन यदि तुम चाहहु । केहि कारन तुम मोहि प्रकाशेहु ॥
तव इच्छा हम पूरन करहूँ । कौतुक करि तुम मोहिं दुःख देहू" ॥
श्री अद्वैत छाड़ि कै तबहीं । द्वार बैठि निज तत्वहि कहहीं ॥
"सुन नाड़ा तुम जानत अहहू । कंसासुर कँह हमहीं हनेऊ ॥
ब्रह्मा शंकर अरु सब देवा । करत मोर सब काहू सेवा ॥
मिथ्या वासुदेव हम मारेउ । भस्मसात बाराणसि कीन्हेउ ॥
रावन को निज बाणेहि मारेउ । बाणासुर कर बाहू काटेउ ॥
नरकासुर अतिहो दुःख दीन्हेउ । चक्र सों मारि सुखी जग कीन्हेउ ॥
वाम हाथ गोवर्धन धारयो । पारिजात स्वर्गहिं ते आन्यो ॥

महाराज बलि को छल्यो, सुयश रह्यो जग छाइ ।
हिरनकशिपु मारयो हमहिं, भक्तहि लीन्ह बचाई" ॥१६॥

यहि विधि निज ऐश्वर्य प्रकाशहिं । सुनि अद्वैत बहुत सुख पावहिं ॥
दंड पाइ अद्वैत गोसाईं । ताली देइ विनती बहु करईं ॥
"निज अपराध योग फल पायउ । प्रभु भल कीन्ह तनिक मँह छाड़ेउ ॥
प्रभु महिमा हम सब कछु जानेउ । निज कृत कर्म योग्य फल पायउ ॥
यहि ते भक्त बहुत सुख पावत । तुम्हरेहि बल काहू नहि मानत" ॥
अस कहि मगन होइकै नाचहिं । प्रेम भरे इत उत प्रभु डोलहिं ॥
आँख चढ़ाइ प्रभू सन कहहीं । "कहाँ गई मम पूजा सबहीं ॥
करिकै कपट मोर स्तुति करहू । कहाँ गयो मम आदर कहहू ॥
दुर्वासा नहि जाहि भुलायहु । जासु प्रसाद अंग मँह लायहु ॥
पदधूली भृगु कर हम नाहीं । राखेउ हृदय मानि बड़ ताहीं ॥

शुद्धदास अद्वैत हम, तुम्हरो दीन दयाल।
तव प्रसाद पावौं सदा, प्रभु तुम बड़े कृपाल ॥१७॥

तव उच्छिष्ट प्रभावहिं सुनहू। तव माया को कछु नहिं गुनहू ॥
दीन्ह दंड मोहि तजि सब माया। राखहु शरण देहु पद छाया ॥"
भक्ति सहित अस कहि अति हर्षेउ। प्रभु पद शिर धरि चरनन पड़ेउ ॥
प्रभु उठाइ तेहि हृदय लगावा। नयनन के जल सो नहवावा ॥
श्री अद्वैत भक्ति कँह देखी। श्री निताइ उर हर्ष विशेखी ॥
श्री हरिदास बहुत सुख पायउ। सीताठकुरानी अति हर्षेउ ॥
नयनन सों सबके जल बहई। प्रेम मगन कोउ कछु नहि कहई ॥
दासी दास सबहि मिलि रोवहि। भुई मँह श्री अच्युत प्रभु लोटहिं ॥
कृष्ण प्रेममय सब गृह भयउ। हरि हरि सुमिरि सबहि सुख पायउ ॥
श्री अद्वैत मारि विश्वम्भर। लज्जित मन मँह भयउ विप्रवर ॥

ह्वै प्रसन्न अद्वैत पर, देत ताहि वर दान।
"सुनहु ध्यान दे मम वचन, मोहि अपनो जिय जान ॥ १८ ॥

तुमरो आश्रय जो कोउ करिहै। पशु पक्षी आदिक जो होइहै ॥
यदि अपराध मोर कछु करिहैं। तबहु प्रसन्न हम तेहि पर रहिहैं" ॥
प्रभु वर सुनि आचारज हर्षे। चरन पकड़ि लोचन जल वर्षे ॥
अति विनीत पुनि वचन उचारे। "सत्य सत्य प्रभु वचन तुम्हारे ॥
एक प्रतिज्ञा मम सुन लीजै। मोहि पूजि यदि तुमहिं न पूजै ॥
सेइ मम भक्ति ताहि संहारे। मानहु प्रभु यह वचन हमारे ॥
तुम्हरो चरन जाहि नहि भावै। सो अति मूढ मोहि नहि पावै ॥
तुमरो द्वेश न हम सहि सकहीं। चाहे वह जन कोऊ रहही ॥
पुत्र मोर अथवा मम दासा। काटौं तव द्रोही कर नासा ॥
करिकै द्रोह तुमहि सों कोई। पूजै अन्य देव कँह सोई ॥

सोइ देव तव द्रोह सों, करत ताहि कर नाश।
मन सो हम नाही कहत, शास्त्रन करत प्रकाश। १९ ॥

काशिराज को सुन सब जानत। मरयो सुदक्षिण शास्त्रन भाषत ॥
शिवहि सुदक्षिण बहु आराध्यो। ह्वै प्रसन्न शिव तेहि वर दीन्ह्यो ॥
ह्वैहै सुफल मनोरथ सबहीं। करहु यज्ञ मन दृढ़ करि तुमहीं ॥
वैष्णव द्रोह कबहु जनि करिहौ। सोइ द्रोह तव प्राणहि हनिहौ ॥
शिव को गूढ़ वचन नहि समुझ्यो। विधिवत यज्ञ करन सो लाग्यो ॥
यज्ञ कुंड सो अति विकराला। प्रगट्यो त्रिशिर रूप जनु काला ॥
तीन हाथ अरु चरन विशाला। माँगहु वर सो कह तत्काला ॥
राजा कह्यो द्वारिका जारहु। महाशैव सुनि अति दुःख पायहु ॥
समुझेहु काज सिद्धि नहि कबही। गयउ द्वारिका पुर सो तबहीं ॥
चक्र द्वारिका रक्षा करई। धायो ताहि देखि कै सोई ॥

भय सों भाग्यो त्रिशिर तब, मन मँह अतिहिं डराय।
स्तुती करत अतिदीन ह्वै, परयो चरन अकुलाय ॥ २० ॥

दुर्वासा तव महिमा जानत। शिव ब्रह्मा सबही प्रभु मानत ॥
वैष्णव तेज निकट सो सबहीं। बचि न सकै कोउ अस बुध कहहीं ॥
प्रभू सुदर्शन की जै होई। दूजो शंकर कह सब कोई ॥
महाचक्र जै वैष्णव ताता। मारहु शठ, भक्तन सुख दाता" ॥
ह्वै प्रसन्न स्तुति सुनि सो कहेउ। जारहु राजसुतहिं जहँ होउ ॥
महाभयंकर सुनि सो चलेउ। राज सुतहि जारन हित धायउ ॥
तुमहि छाड़ि शिव पूजा कीन्हेउ। तेहि कर यज्ञ ताहि तेहि जारेउ ॥
तेहि ते प्रभु हम तुम सो कहई। तुमहि छाड़ि जो हम कँह भजई ॥
निश्चय हम मारब जन सोई। तुमही प्राणनाथ मम अहई ॥
तुमही मातु पिता सब मेरे। जीवन धन सर्वस प्रभु हमरे ॥

तुमहि छाड़ि कै जोइ जन, पूजहि मोहि मन लाय।
काटौं शिर हम ताहि कर, यहै लाभ सो पाय ॥ २१ ॥

सत्राजित सूर्यहि आराध्यो। वर कँह पाइ बहुत सुख पायो ॥
तुमहि न मानि मरे दोउ भाई। सूर्य वरहि कछु काम न आई ॥
बलदाउ कर शिष्यहि होई। दुर्योधन कुल सह सब मरई ॥
हरिनकशिपु ब्रह्मा वर पायो। भक्त द्रोह ताही कँह नाश्यो ॥
सिर चढ़ाइ रावन शिव पूज्यो। वैर ठानि तुम सों सब खोयो ॥
सबके ईश्वर मूल सबहि के। सर्वाराध्य तुमहि हम सबके ॥
प्रभुहि छाड़ि जो दासहिं भजई। सोइ दास निश्चय तेहि हनई ॥
तुमहि त्यागि शिव आदिक पूजहि। मूल काटि पल्लव सों सींचहि ॥
देव यज्ञ द्विज अरु सब धर्मा। सबके मूल तुमहि सुनु मर्मा ॥
जो जन तुमरो भजन न करई। तेहि कर पूजा हम नहिं गिनई ॥

श्री अद्वैत वचन सब, महातत्व सम जानि।
सुनत गौर हुंकार करि, बोले अति सुखमानि ॥ २२ ॥

निज परतिज्ञा सब सन कहईं। "भक्त छाड़ि जो मोहि कँह भजई ॥
खंड खंड सो मो कँह करई। तेहिकर पूजा मम अंग दहई ॥
भक्तन कर जो निंदा करई। नाम कल्पतरु तेहि संहरई ॥
जीव चराचर सब मम दासा। परहिंसक कर होइहै नासा ॥
निज सो बड़ो तुमहिं हम मानत। तुमहि जो छाड़ै सोइ दुःख पावत ॥
अनिन्दक कर निन्दा करई। सन्यासी होइ नरकहि पड़ई" ॥
हाथ उठाइ गौर पुनि कहई। सकल विश्व उपदेशहिं देई ॥
"निन्दा तजि श्री कृष्णहि बोलहु। पर निन्दा कबहूँ जनि भाषहु ॥
निन्दा तजि जो कृष्णहि बोलत। सहजहि में सो हम कँह पावत" ॥
गौर वचन सुनि कै सब भाई। जय जय जय बोले हर्षाई ॥

गौर चरण दोउ हृदय धरि, रोवहि श्री अद्वैत।
तेहि उठाय उर लायऊ, सुख सों कृपा निकेत॥२४॥

पृथ्वी नयनन जल सों सींचहिं। श्री अद्वैत मगन मन रोवहिं॥
श्री अद्वैत चरित को बूझै। अति सै गूढ़ वचन को समुझै॥
श्री अद्वैत वचन जो समुझत। ईश्वर सम हम ताही मानत॥
श्री निताइ अद्वैत सो जबहीं। होत कलह सब काहू सुनहीं॥
परमानन्द विषय सो अहहीं। समुझय यदि कोऊ जन तेही॥
विष्णु वैष्णव वाक्य अरु कर्मा। अति अगम्य कोउ बूझ न मर्मा॥
प्रभुकी कृपा बूझि सक कोई। जेहि पर कृपा करत है सोई॥
यहि बिधि और भयउ संवादा। श्री निताई अद्वैत विवादा॥
प्रभु भक्तन सन भइ जो बाता। जान निताइ भक्त सुखदाता॥
श्री निताइ सब सन सोइ कहई। सहस वदन सों वर्णन करई॥

सावचेत छिन मँह भयउ, सुन्दर गौर गोपाल।
हँसि के श्री अद्वैत सो, पूछेउ तबहि कृपाल॥२५॥

"किछु चञ्चलता का हम कीन्हा"। "किछु विशेष नहिं", उत्तर दीन्हा॥
श्री निताइ सन पुनि प्रभु कहेऊ। "यदि अपराध कछू हम कीन्हेउ॥
क्षमा करेहु हम कँह सब जनहीं"। सुनत वचन बिहँसे जन सबहीं॥
महासती सीता ठकुरानी। माता कहि जेहि गौर बखानी॥
गौर कहेउ, "माँ पाक बनावहु। प्रभु प्रसाद हम अबही पाँवहु॥
अद्वैतादि भक्त सब साथा। गंग नहान चले द्विज नाथा॥
स्नान कथा प्रभु की अति पावन। गृह आए भक्तन मन भावन॥
धोइ चरन तबहीं विश्वम्भर। पूज्यो कृष्ण प्रेम सो द्विजवर॥
श्री अद्वैत प्रभुहिं शिर नायो। श्री हरिदास अचारज वंद्यो॥
श्री निताइ कौतुक लखि हंसही। धर्म सेतु तीनो प्रभु अहहीं॥

गौर निरखि अद्वैत कँह, धरेउ चरन पर माथ।
हरि हरि कहि कै प्रभु उठे, धर्‍यो ताहि कर हाथ॥२६॥

श्री निताइ कँह प्रभु संग लेई। भोजन हित बैठे सब कोई॥
तीनहु कर स्वभाव अति चञ्चल। बाल स्वभाव निताई विह्वल॥
दूर बैठि हरिदासहु जेवहिं। प्रभु लीला निज नयनन देखहिं॥
श्री हरिदास शक्ति सब धरहीं। प्रभु लीला सो सब लखि सकहीं॥
भाग्यवान सीता बड़ अहही। हरी सुमिरि परिवेशन करहीं॥
तीनहु ठाकुर भोजन करहीं। द्विय अन्न, पायस, घृत सबहीं॥
हँसत निताइ देखि अद्वैतहि। एक वस्तु दुइ भागहिं देखहिं॥
भोजन पूर्ण भयउ कछु रहेउ। श्री निताई अति चञ्चल भयउ॥
चावल सकल धरहि मँह छींटेउ। हाय हाय कहि गौर पुकारेउ॥
क्रोधित होइ अद्वैत गोसाई। श्री निताई कर तत्व बखानहि॥

"जाति नाश कीन्हेउ सकल, यहै निताई आज।
मद्यप को संग भयो है, भलो बनो सब काज ॥२७॥

गुरु नाहि इन कर है कोई। संन्यासी केवल सब कहई ॥
कहाँ जन्म निश्चय नहि अहई। कौन जाति कोउ कहि नहि सकई ॥
चीन्हत नहि कोउ इत उत भ्रमही। मरत जीव सम झूमत चलही ॥
व्रज में गृह गृह खायहु भाता। इहाँ भयउ ब्राह्मण कर साथा ॥
सुनु हरिदास सत्य हम कहई। सर्वनाश यह मद्यप करई[1]" ॥
श्री अद्वैत वस्त्र सब फेक्यो। ताली देइ नाचन सो लाग्यो ॥
यह लखि गौर निताई हँसई। श्री निताइ दुइ अंगुलि दिखावई ॥
श्री अद्वैत क्रोध कछु नाहीं। शुद्ध हास्यमय सब जन कहहीं ॥
हँसत वृद्ध बालक सब कोई। कीन्ह आचमन स्वस्थहि होई ॥
अति प्रसन्न सबही जन मिलई। प्रेम सों मिलि आलिंगन करई ॥

श्री निताई अद्वैत सन्, वाक् युद्ध जो होय।
प्रेम भरो जानौ सोई, केवल कौतुक सोय ॥२८॥

प्रभु विग्रह कर दोउ हाथा। प्रेम भरे दोऊ प्रभु साथा ॥
हरि लीला वश कौतुक करई। बालक सम वैष्णव जन रहई ॥
श्री अद्वैत घरहि यहि भाँती। कीर्तन करत रहहिं दिन राती ॥
बलदाउ यह सब कहि सकहीं। अन्य कोउ कहु केहि विधि कहहीं ॥
बलरामहि की कृपा सो जानत। सरस्वती हरि लीला गावत ॥
भक्तन के मुख सों सोइ भाषत। हरि लीला भक्तन मन भावत ॥
हरि लीला कर क्रम नहि जानौं। जेहि तेहि विधि हरि चरित बखानौं ॥
गौर भक्त पद वंदन करहूँ। यह अपराध मोर सब छमहूँ ॥
कछु दिन आचारज गृह रहेऊ। नवद्वीप प्रभु पुनि चलि आयऊ ॥
श्री निताई आचारज लीन्हे। हरीदास आए रस भीने ॥

तीनहु प्रभु आगमन सुनि, हर्षित अति सब कोइ।
आए सब प्रभु दरश हित, प्रेम मगन मन होइ ॥२६॥

चन्द्र वदन लखि ताप नशावा। चरन वंदि नयनन जल छावा ॥
विश्वम्भर प्रभु सबके जीवन। प्रभु कीन्ह्यो सब कर आलिंगन ॥
प्रभु के निज विग्रह सम सबही। भक्त प्रधान सबहिं जन अहहीं ॥
कीन्ह प्रणाम सबहिं अद्वैतहिं। जेहि हित गौर लियो अवतारहिं ॥
आनन्द मगन भए सब कोई। कृष्ण कृष्ण सब काहू कहई ॥
पुत्र देखि हर्षित अति माता। बधू संग पुलकित सब गाता ॥

---

१. "जातिनाश"-जात्याभिमान त्याग। "मद्यप"-प्रेममदिरा पान कर उन्मत्त "गुरु नाहि"-ईश्वर ही सबके गुरु हैं। इनका कौन गुरु। कहाँ जन्म-ईश्वर आदि पुरुष है। सर्वनाश-प्रेम की नदी में जातिमान कुल शील सबको यह बहाव देंगे। अर्थात् संसार की माया का नाश कर देंगे।

सहस वदन यह सब कहि सकहीं। जन्म जन्म मेरे प्रभु अहहीं ॥
ब्राह्मण, द्विज विप्रहि जिमि एकहिं। तिमि निताई बलदाउ न भेदहिं ॥
श्री अद्वैत भवन सब लीला। गौर कीन्ह जो सब सुख शीला ॥
सुनै चरित जो यह मन लाई। गौर चरन पावत सुख दाई ॥

गौर निताइ चरन कर, धारि हृदय मँह ध्यान।
वृन्दावन वर्णन करत, गौर चरित रसखान ॥३०॥
वृजभूषण तेहि कँह कियो, भाषा मँह अनुवाद।
गौर भक्त के हेतु सोइ, शचि सुन्दर सम्वाद ॥३१॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्य खंडे अद्वैत गृह विलास वर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥

उनविंश अध्यायः

गौर सिंह की जय कहहु, शची सुअन द्विजराज।
सर्व ताप हर चरन युग, नदिया के मह राज ॥ १ ॥
जयति गदाधर नाथ की, जै जै गौर किशोर।
गौर चरन मँह मति रहै, माँगौ यह कर जोर ॥ २ ॥

यहि विधि भक्त सकल प्रभु देखी। नाचत उर आनन्द विशेखी ॥
गावहिं हँसहिं प्रेम सो सबहीं। यहि विधि प्रभु नित कीर्तन करहीं ॥
भक्त सहित प्रभु कीर्तन करहीं। आनन्द मगन मोद मन भरहीं ॥
एक दिवस श्री गौर निताई। श्री निवास गृह मँह दोउ भाई ॥
बैठि रहे आनन्द सो तहई। श्री मुरारि प्रभु चरनन परई ॥
पाछे श्री निताइ पद बंद्यो। हाथ जोड़ि प्रभु सन्मुख बैठ्यो ॥
गौर मुरारिहि अति सै मानहिं। प्रेम सहित प्रभु तेहि सन भाषहिं ॥
सुनहु मुरारि सत्य हम कहऊ। यह व्यवहार उचित नहिं कीन्हेऊ ॥
तुम बड़ छोट न हृदय विचारेउ। प्रथम प्रणाम मोहि तुम कीन्हेउ ॥
जो कोऊ यह बात न जानहिं। कहा सिखैहो तुम सोइ लोगहिं ॥

व्यवहारहु मँह उचित नहिं, तुम काहे अस कीन्ह।
श्री मुरारि कर जोड़ि कर, प्रभु कँह उत्तर दीन्ह ॥ ३ ॥

केहि विधि प्रभु जानब हम बाता। जोई करावहु करौं सो ताता ॥
तुम प्रेरक सबके उर अहऊ"। सुनत विहँसि प्रभु तेहि सन कहेऊ ॥
"नीक कहेउ तुम निज गृह जाउ। जानब कालि बात मम मानउ "॥
प्रभू वचन सुनि भय कछु पायउ। हर्ष सहित निज वासहिं आयउ ॥
शयन कीन्ह निज मंदिर जाई। स्वप्न एक देखेउ सुखदाई ॥
मल्लवेश श्री नित्यानन्दा। आगे चले प्रभू सुखकन्दा ॥

महानाग कर छत्र विराजै । श्री हल मुसल हाथ मँह राजै ॥
हल धर सम निताइ कँह देखेउ । तेहि पाछे विश्वम्भर आयउ ॥
मोर पंख मस्तक पर सोहत । स्वपनहि मँह प्रभु हँसि कै बोलत ॥
हम कनिष्ट तुम देखु मुरारी । अपने मन तुम करहु विचारी ॥

स्वप्न माँझ दोउ प्रभु हँसत, श्री मुरारि तन हेरि ।
शिक्षा देइ दोउ प्रभु गए, मति तेहि की दइ फेरि ॥ ४ ॥

श्री मुरारि उठि क्रंदन करहीं । नित्यानन्द नाम सो लेहीं ॥
महासती श्री गुप्त की घरनी । चकित विलोकत पति की करनी ॥
कृष्ण कृष्ण मुख सों सो कहई । आनन्द मगन नयन जल बहई ॥
श्री निताई प्रभु अग्रज बूझेउ । यहै समुझि प्रभु के गृह गयउ ॥
प्रभु कँह बैठे देखेउ सोई । श्री निताइ दक्षिण दिशि राजइ ॥
प्रथम निताई वंदन कीन्हा । पाछे गौर चरन रज लीन्हा ॥
हँस कर श्री विश्वम्भर कहेउ । "कहेहु मुरारि काहे अस कीन्हेउ" ।
"जेहि विधि प्रभू करावहु करउ" । श्री मुरारि प्रभु सन अस कहेऊ ॥
शुष्क पात जिमि पवन सो चलई । जीव कर्म तव बल सो करई ॥
प्रभू कहेउ तुम मम प्रिय अहऊ । यहि ते गुप्त बात तोहि कहेउ ॥

गौर मुरारी सन कहत, सकल तत्व समुझाय ।
प्रभुहि गदाधर देत है, बीड़ा अति हर्षाय ॥ ५ ॥

"दास प्रधान मुरारी अहही" । प्रभू वचन अश सब सन कहहीं ॥
अस कहि निज चर्बित तांबूलहि । मन प्रसन्न करि दियौ मुरारिहि ॥
हाथ जोड़ि सो तुरतहि लीन्हेउ । पान खाइ बहुतहि सुख मानेउ ॥
प्रभू कहेउ तुम कर कँह धोवहु । श्री मुरारि मस्तक मँह पोछेहु ॥
प्रभू कहेउ तव जाती गयउ । मम उच्छिष्ट अंग तव लागेउ ॥
इहै कहत श्री गौर गोपालहि । भयो तुरत ईश्वर आवेशहिं ॥
दांत बजाइ कहन सो लागेउ । "ध्यान देइ सब काहू सुनउ ॥
काशी मँह परकाशानन्दा । स्वामी बड़ो एक स्वच्छन्दा ॥
हम कँह खंड खंड सो करई । सोइ वेदांत पढ़ावत अहई ॥
हमरो विग्रह सो नहिं मानत । कुष्ट करायहु तबहु न सोचत ॥

मोरे अंग मँह बसत है, अस ब्रह्मांड अनेक ।
ता कँह मिथ्या कहत है, नहिं समुझत खल नेक ॥ ६ ॥

सत्य मुरारी तुम सन कहऊ । तुम मेरे प्रिय दासहि अहऊ ॥
मम विग्रह को जो नहि मानै । ताकर नाश अवशि सव जानै ॥
ब्रह्माशिव मम विग्रह सेवहिं । देव सकल हम कँह नित पूजहिं ॥
जो अंग परशि सती तरि जाहीं । मिथ्या किमि तेहि कँह शठ कहहीं ॥
सत्य सत्य हम तुम सन कहहूँ । सत्य हमहु मम दासहु सुनहूँ ॥
मोर दास कर दासहु जोई । सोऊ सत्य पुरानन कहई ॥

सत्य मोर सब लीला अहई। मोर स्थान सब सत्यहि भजई॥
इन कँह मिथ्या जो कोउ कहई। खंड खंड सो मो कँह करई॥
जो यश सुनत अविद्या नाशै। पापी जन मिथ्या सोइ भाषै॥
जो यश सुनत शिवहि सुख पावत। होइ दिगम्बर सुख सों नाचत॥

शेष सहस मुख सों सुनहु, मम यश गावन जात।
शुक नारद गावत सदा, कबहूँ नाहि अघात॥ ७॥

वेदहु चारो मम यश गावत। जो यह पुण्य कीर्ति नहि मानत॥
सुनहु गुप्त सो मोहि न पावत। मम अवतार को सो नहि जानत॥
गुप्त लक्ष्य करि गौर सुजाना। जगहि सिखावत श्री भगवाना॥
'मम विग्रह सेवक अरु स्थाना"। सबहि सत्य मम बचन प्रमाना॥
अपुनो तत्व आपुही सिखवहि। नाश होइ जो यहि नहि मानहिं॥
सावचेत क्षण मँह प्रभु भयउ। पुनः अकिञ्चन-वर लखि परेउ॥
"भाई" कहि गुप्तहिं आलिंगेउ। बहुत स्नेह करि तेहि सन कहेउ॥
"सत्य कहहु तुम बड़ प्रिय मोही। शुद्ध दास मेरो हम कहहीं॥
नित्यानन्द तत्व तुम जानेहु। बड़े भाग्य सों दर्शन पायहु॥
श्री निताइ सन द्वेश जे करहीं। हम कँह सो नर प्रिय नहि लगहीं॥

गुप्त जाहु गृह आपने, मोहि प्रसन्न अति जान।
श्री निताइ महिमा अमित, भयहु सकल तोहि ज्ञान"॥ ८॥

प्रभु के कृपा पात्र अति गुप्तहिं। यह पद हनूमान बस पावहिं॥
हर्षित श्री मुरारि गृह गयउ। उर धरि गौर निताई दोउ॥
प्रेम मगन तन की सुधि नाहीं। खल खल हँसत कहत कछु जाहीं॥
भोजन करिहौं कहत मगन मन। सती अन्न दीन्हेउ सोई छन॥
विह्वल गौर प्रेम मँह बोलहिं। "खाउ खाउ" कहि अन्नहि फेकहि॥
घृत लगाइ ग्रासहि मँह फेकहि। "खाउ कृष्ण" केवल सोभाषहिं॥
पति व्यवहार देखि स्त्री हँसई। अन्न आनि पुनि पुनि सो देई॥
परम भक्त गुप्तहि सब कहई। गुप्त घरनि जानत सो अहई॥
कृष्ण कृष्ण गुप्तहि सन कहई। सावधान तिन कँह सो करई॥
अन्न मुरारि दियो जो सबहीं। प्रभु निश्चय खायो सो तहहीं॥

गुप्त वचन मेटत नही, गौर कबहुँ यह जान।
जेतो भोजन देत सोइ, खात सबहि सुखमान॥ ९॥

प्रात प्रभू गुप्तहि गृह आयो। गुप्त मगन आनन्द मँह बैठ्यो॥
प्रभू देखि सो वन्दन कीन्हा। बैठन हित आसन प्रभु दीन्हा॥
चरन बन्दि कर सो कह कर जोरी। "करहुँ कवन विधि अस्तुति तोरी॥
भवन पवित्र कीन्ह केहि कारन"। "भयउ अजीर्ण", कहेउ जगतारन॥
कारण कवन अजीरन भयउ। कवन द्रव्य प्रभुभोग लगायउ॥
हँसि कह प्रभु, "तुम जानत नाहीं। खाउ खाउ कहिके मम पाहीं॥

फेकेउ अन्न तुमहि कल जबहीं। तव पत्नी जानत है सबहीं॥
देइहौ तुम निश्चय हम पैहीं। तुम औषधि पाचन कर करिहौ॥
भयउ अजीर्ण तव अन्नहि खाई। जल सो नाश होइ सो जाई॥
तोर अन्न सो अनपच भयउ। औषधि तोर जलहि हम जानउ॥

श्री मुरारि जल पात्र को, अस कहि लीन्ह उठाई।
भक्ति रसहिं सो पूर्ण सोइ, पियत अतिहि हर्षाई॥ १०॥

निरखि गुप्त प्रभु कृपा अघाई। भए अचेतन अति हर्षाई॥
क्रंदन करहिं प्रेम वश भक्तहिं। जिमि प्रभु, भक्ति, दास हू तैसहि॥
भक्ति योग वश सबही भयउ। गौर प्रसाद भक्ति सब पायउ॥
श्री मुरारि के दास अरु दासी। पायहु प्रभु प्रसाद सुखराशी॥
नदिया कर पंडित जे अहहीं। प्रभु प्रकाश देखेउ नहि तिनहीं॥
विद्याधन सों कछु नहि होई। वैष्णव कृपा भक्ति जग लहई॥
वैष्णव कर जो दास अरु दासी। सर्वोत्तम सो वेद प्रकाशी॥
यहि विधि श्री मुरारि पर नित्यहि। कृपा करहि श्री गौर गोपालहि॥
श्री मुरारि कर चरितजे सुनहीं। परम प्रेम मय भक्ती लहहीं॥
एक दिवस श्री वास के अगना। करन लगे श्री गौर गर्जना॥

भए चतुर्भुज तबहि प्रभु, शंख चक्र कर दोउ।
गदा पद्म कर मँह लिए, लखि हर्षे सब कोउ॥ ११॥

"गरुड़ गरुड़" कहि बोलन लागे। श्री मुरारि आए रस पागे॥
वैनतेय के भावहिं भोरा। गए गुप्त जँह प्रभु श्री गोरा॥
गरुड़ हमहि श्री गुप्तहि कहेउ। गरुड़ गरुड़ प्रभु पुनि पुनि भाषेउ॥
"हम किंकर तव" गुप्तहि कहेउ। "हमरोवाहन", प्रभु हँसि बोलेउ॥
हां हां हां श्री गुप्तहि कहई। "गयउ भूल जब प्रभु कँह लेई॥
पारिजातहित स्वर्गहि गयउ। आनेहु वृक्ष प्रभु सुधि करहू॥
बान पुरहि हम तोहि लै गयउ। स्कंद मयूरहिं काटत भयउ॥
मोर स्कंध पर प्रभु तुम बैठउ। कहहु कवन ब्रह्मांडहि चलउ"॥
गुप्त स्कंध बैठे भगवाना। देख भक्त सब अति सुखमाना॥
गुप्त मगन आंगन मँह फिरहीं। जय जय कार सती सब करहीं॥

महाप्रेम सो भक्त सब, हरि हरि कह सब कोई।
नयन नीर पुलकित तनू, मगन प्रेम रस होई॥ १२॥

कोउ कहै यह रूप न बिसरै। परम हर्ष सों कोउ एक कापैं॥
ठाकुर मोर भलो कोउ कहई। आनन्द सों सब मिलि कै नाचइ॥
"जय मुरारि वाहन विश्वम्भर"। हाथ उठाई कहहिं उचे स्वर॥
कांधे पर झूमहि विश्वम्भर। गुप्त भ्रमहिं आगन के भीतर॥
नदिया मँह यह कौतुक होई। दुष्कृति जन कोउ देख न सकई॥
धन कुल मान सो प्रभु नहिं मिलई। भक्ती सो केवल कोउ लहई॥

जन्म जन्म जो प्रभु आराध्यो। तेहि कर दासहि दर्शन पायो॥
बड़े भाग जो दर्शन पावा। अन्य लोग कँह जाइ सुनावा॥
तद्दपि पाप वश सो नहि मान्यो। आगे चलि के प्रभु पहिचान्यो॥
मध्य खंड मँह यह प्रभु लीला। गुप्त स्कंध बैठे गुण शीला॥

प्रभु प्रधान सेवक गरुड़, यह सब काहू जान।
सदा प्रभू के संग रहत, प्रति अवतार प्रमान॥१३॥

हरि लीला कर अवधि न आई। आदि अंत केवल मुनि गाई॥
ह्वै सुस्थिर प्रभु उतरे तबही। गुप्तहु गरुड़ भाव कँह तजहीं॥
गुप्त कथा यह कोउ कोउ जानहि। गुप्त स्कंध बैठे भगवानहि॥
अति सै कृपा गुप्त पर करई। देखि भक्त सब हरि हरि कहई॥
धन्य मुरारि सफल तव भक्ती। प्रभु कँह लेहु धन्य तव शक्ती॥
पुण्य कथा अति गुप्त की अहई। को जानै जो इत उत करई॥
बैठ मुरारि दिवस एक गुनई। प्रभु अवतार - स्थिति सो गिनई॥
सांगोपांग प्रभू जब ताईं। यहि अवतार रहै महि छाईं॥
हम निज गमन की बात विचारैं। को जानै प्रभु का करि डारैं॥
लीला रचहि तुरत सो नाशहिं। कृष्ण चरित कर पार को पावहिं॥

जेहि सीता हित रावनहि, मारयो प्रभु करि क्रोध।
काहे त्याग्यो कुँवरि को, होत न मनहि प्रबोध॥१४॥

यादव गन प्रभु प्रान समाना। सन्मुख मरत न कछु उर आना॥
यहि ते जब लौं प्रभु अवतारा। तजौं देह हम यहै विचारा॥
तजौं देह याही मन भावा। जब लौं प्रभु अवतार सोहावा॥
यह विचार दृढ़ करि मन ही मन। आन्यो एक कटार सोइ छन॥
हर्षित अति सब कारज करिहौं। रात्री मँह हम देही त्यजिहौं॥
अंतर्यामी प्रभु सब जाना। आए तुरत गौर भगवाना॥
गुप्त चरन वंदन तव कीन्हा। प्रभु बैठन हित आसन दीन्हा॥
बैठि प्रभू कह कथा सोहाई। कृष्ण चरित सब ही मन भाई॥
बड़े प्रेम सों गुप्तहि कहेउ। गुप्त वचन मम पालन करउ॥
गुप्त कहेउ यह देह तुम्हारी। प्रभू कहेउ, तुम कहउ विचारी॥

गुप्त कहेउ, "प्रभु सत्य है", सुनि कह प्रभु तेहि पाहिं।
"मोहि कटारी देहु तुम,", कहेउ कान मँह ताहि॥ १५॥

जो कटारि निज मारन हेतू। धरेउ लुकाइ सोइ मोहि देहू"॥
गुप्त सुनत अति दुःखित भयउ। 'हाय', 'हाय', कहि प्रभु सन कहेउ॥
"मिथ्या कथा कहेउ को तोही"। प्रभू कहेउ, नहि जानत मोही॥
कहब कोउ तबही हम जानब। कहब बात सब तब तुम मानब॥
जानौ जेहि कटारि तोहि दीन्हो। राखेहु जहाँ सोउ हम जानो"॥
अंतर्यामो प्रभु सब जानहि। वर भीतर सो ताही आनहि॥

प्रभू कह्यो; "यह का तुम करहू। कौन दोष मोहि छाड़न चहहू॥
तुम जैहो तब केहि संग हमही। करिहौ लीला हम यह सबही॥
तुम कँह यह शिक्षा को दीन्हेउ। तुम हम कँह यह भिक्षा देउ॥
पुनि अस कर्म कबहु नहि करिहौ। मोर वचन यह कबहुँ न लघिहौं॥
श्री मुरारि कँह गौर प्रभु, उर सों लीन्ह लगाई।
हाथ उठाइ कै तासु कर, निज शिर राख्यो लाई॥ १६॥
शपथ तोहिं जो पुनि अस करउ। सत्य वचन तुम हम सन कहउ'॥
श्री मुरारि प्रभु चरनन पड़ेउ। नयन नीर पद पंकज धोयउ॥
धन्य मुरारि चरन धरि रोवहिं। उर लगाइ प्रभु असुअन सींचहि॥
प्रभु अति कृपा गुप्त पर करहीं। सोइ कृपा शिव अज भव चहहीं॥
देव गौर सो भिन्न न भेदा। देव अभिन्न कृष्ण कँह वेदा॥
शेष रूप होइ पृथ्वी धारहि। ब्रह्मा बनि सब सृष्टी पालहि॥
शिव होइ गौर जगत संहारहिं। आपन स्तुति निज मुख सो भाषहिं॥
भिन्न न भेद देव मँह कोई। सकल देव चैतन्यहि सेवई॥
गौर नाम यदि पक्षी कहहीं। सत्य सोउ हरिधाम को लहहीं॥
सन्यासी यदि गौर न मानहिं। जन्म जन्म के खल सोइ अंधहि॥
रहहिं तपस्वी वेश मँह, खल गण सदा लुकाय।
तिमि निन्दक तपसी सकल, दुराचार मन लाय॥ १७॥
निन्दक तपसी खल नहि भेदा। निन्दक बड़ यह कह सब वेदा॥

तथाहि श्री मन्नारदीये—

प्रकटं पतितः श्रेयान य एकों यात्यधः स्वयम्।
बकवृत्तिः स्वयं पापः पातयत्यपरानपि॥ १॥
हरन्ति दस्यवोऽकूयां विमोह्यास्त्रै नृणां धनम्।
पावित्रै रति तीक्ष्णाग्रैर्वानैरेवं वकव्रताः॥ २॥

अर्थ

जो मनुष्य प्रकाश रूप से पतित है, वह अच्छा है। क्योंकि वह अकेले आप ही नरक में जाता है। किन्तु जो बकुला के समान नकली भक्त है, वह बहुत से लोगों को पापी बना देता है॥१॥

डाकू लोग अकेले में विविध अस्त्रों से डरवाकर लोगो का धन लूटते हैं। बकुला भक्त लोग अपना ढोंग फैलाकर लोगों को मोहित कर उनका सर्वस्व लूट लेते हैं॥२॥

संन्यासी दर्शन सब जाहीं। हरि निन्दा सुनि कै दुःख पाहीं॥
बैष्णव निन्दा जे जन सुनहीं। सकल पुण्य तिनकर क्षय होहीं॥
जन्म जन्म सो बहु दुःख पावहिं। वेद पुरान सकल असभाषहिं॥
दुष्ट एक वारहि जन मारै। बहुत जन्म निन्दक संहारै॥
हरि वैभव यह सब संसारा। निंदा सुनि हरि कर संहारा॥
निन्दा तजि जे कृष्णहि भजई। निश्चय हरि उद्धारै तेई॥
चार वेद पढ़ि हरि नहि मानत। जन्म जन्म नरकहिं सो पावत॥
पढ़ि भागवत मूर्ख जन कोउ। श्री निताइ मानत नहि सोउ॥
निश्चय नाश तासु कर होई। हरि हरि कहत भक्त जन रहई॥

नवद्वीप में गौर कर, भयउ दिव्य परकाश।
निन्दक जन नहिं मानहीं, प्रभुकर सत्य विलास ॥१८॥

श्री चैतन्य चरन जे मानहिं। तेहि कर संग सदा हम पावहिं ॥
अष्ट सिद्धि युत जन कोउ होई। गौर चरन रति यदि नहि होई ॥
देखौ नहि मुख सोइ पापी कर। हीन पुण्य सो खल कर किंकर ॥
गौर मुरारिहि धीरज देई। गवने निज गृह प्रभु सब लेई ॥
एसो श्री मुरारि कर भावा। सब जानत तेहिकर प्रभावा ॥
श्री निताइ मुख सों सब सुनेउ। सब वैष्णव कर तत्व सो कहेउ ॥
जन्म जन्म पति मोर निताई। जासु प्रसाद भक्ति रज पाई ॥
जय जय जगन्नाथ के नन्दन। तोर निताई मम जीवन धन ॥
मोर निताई जीवन गोरा। यहै भरोसा दृढ़ मन मोरा ॥
श्री कृष्ण चैतन्य भजहु निरंतर। श्री निताइ मेरे उर अंतर ॥

श्री वृन्दावनदास कछु, गायो गौर चरित्र।
वृजभूषण भाषा कियो, गौर चरित्र पवित्र ॥१९॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे मुरारि गुप्त प्रभाव वर्णनं नाम उन्नविंश अध्यायः ॥

विंश अध्यायः

जय जय नित्यानन्द प्रान विश्वम्भर।
जय गदाधर पति अद्वैत ईश्वर ॥
जय श्री निवास हरिदास प्रियंकर।
जय गंगादास वासुदेव के ईश्वर ॥
भक्त गोष्ठी सहित गौरांग जय जय।
चैतन्य कथा सुनेते भक्ति लाभ होय ॥

यहिं विधि नवद्वीप विश्वम्भर। श्री निताई अरु संग सब सहचर ॥
एक दिन नगर भ्रमण प्रभु करहीं। संग भक्त सब प्रभु के रहहीं ॥
सार्वभौम के पिता जो रहेउ। लोग विशारद जेहि कँह कहेउ ॥
तेहि के बाड़ा मँह प्रभु गयऊ। देवानन्द विप्र जँह रहेऊ ॥
परम शांत द्विज मोक्ष विलासी। ज्ञानवंत तपसी गुणराशी ॥
रहेउ उदासी जन्म सो अतिही। श्री भागवत पढ़ावै सबही ॥
श्री भागवत व्यास सब कहई। तदपि भक्ति को लेश न अहई ॥
भक्ति हीन कारण सो सोई। मर्म अर्थ कछु कहि नहिं सकई ॥
अहै योग्यता तेहि के माही। केहि अपराध सो जानत नाही ॥
श्री कृष्णहि अपराध सो जानै। भक्त कृपा केवल प्रभु मानै ॥

दैवयोग सो गौर प्रभु, मारग सो सोइ जाहि।
व्याख्या प्रभु तेहिकर सुन्यो, भक्ति गंध जहँ नाहि ॥१॥

अंतर्यामी प्रभु सब जानत। भक्ति महत्व न व्याखहि पावत ॥
प्रभु करि क्रोध सबहिं सन कहेऊ। कवन अर्थ खल कहत सो सुनऊ ॥
श्री भागवत अर्थ नहि जानै। अर्थ अनर्थ अनेक बखानैं ॥
श्री भागवत कहन को याही। नहि अधिकार कहौं सब पाहीं ॥
हरि को रूप भागवत जानहु। लियो कृष्ण अवतार सो मानहु ॥
जो भागवत सोइ श्री कृष्णहि। एक रूप देखन मँह अलगहिं ॥
भक्तो सो केवल कोउ समुझै। भक्ति हीन नहि कोऊ बूझै ॥
शास्त्र कहहिं यह प्रेम स्वरूपा। शास्त्र दधी यह मक्खन रूपा ॥
श्री शुक मथि कै याहि निकाल्यो। सोइ परीक्षित सुख सो पायो ॥
मेरो प्रिय श्री शुक सब जानत। भक्ति तत्व याही मँह भाषत ॥

मोर दास, हम और यह, ग्रंथ भागवत एक।
तीनों मँह कछु भेद नहिं, समुझ मूढ तजि टेक" ॥२॥

श्री भागवत तत्व प्रभु कहेउ। क्रोध भरे प्रभु सब सन भाषेउ ॥
सुनि सब वैष्णव अति सुख लहेउ। पुनि प्रभु इमि भक्तन सों कहेउ ॥
भक्तिहीन जन जो यहि कहई। सोइ अधम कछु तत्व न जानई ॥
भक्तिहीन यह खल नित कहही। फाड़ौ पुस्तक यहि कर अवही ॥
पुस्तक फाड़न हित प्रभु जाहीं। भक्त सकल प्रभुधरि कै राखहि ॥
सब बुध गूढ भागवत कहई। विद्या तपसों नहि कोउ बूझई ॥
हम भागवत शास्त्र सब बूझत। जो यह कहत सों नाही समुझत ॥
श्री भागवत स्वयं हरि अहई। यहै भावना जेहि उर बसई ॥
भक्ति भाव सो सोइ बूझइ। भक्ति बिना नर उलटहि कहई ॥
सब गुन देवानन्दहि बसई। ऐसो पंडित नहि कोउ अहई ॥

एसो पंडित हू जबहिं, अर्थ अनर्थ बखान।
औरन कहँ तब का कहहुँ अर्थ सोई किमि जान ॥३॥

पढ़ि भागवत मूर्ख जन कोउ। श्री निताइ मानत नहि सोउ ॥
यहि विधि प्रतिदिन प्रभु विश्वम्भर। भ्रमहि नगर लीन्हे सब अनुचर ॥
श्री पंडित ठाकुर संग लेई। एक दिना प्रभु घूमत रहई ॥
नगर अंत महँ मद्यप रहहीं। भ्रमन करत प्रभु पहुचें तहहीं ॥
मद्य गंध प्रभु तहवाँ पायउ। स्मरण वारुणी कर तब भयउ ॥
श्री बलराम भाव महँ तबही। भए प्रभु बिसरी सुधि सबही ॥
करि हुंकार प्रभू अस कहई। "चलहु तहाँ" पुनि पुनि सोभाषई ॥
प्रभुहि निवारण कर श्रीवासा। प्रभू कहेउ सुनहू हरिदासा ॥
"मनिहौ सकल नियम का हमही"। श्री निवास प्रभु वर्जन करही ॥
"जगत पिता तुम," कह श्रीवासा। प्रभु समर्थ तुम जगत निवासा ॥

नित्य धर्ममय रूप तुम, पार न पावै कोइ।
तव लीला को समुझि सक, अति अगम्य है सोई ॥४॥

यदि तुम मद्यप के गृह जैहौ। "गंगा कूदि प्रान हम देहौ" ॥
भक्त वचन प्रभु टारि न सकहीं। वास वचन सुनि कै प्रभु कहहीं ॥
प्रभू कह्यो जो तुम नहि चहिहौ। मानि वचन तव हम नहि जहिहौ ॥
यह कहि राम भाव प्रभु त्यागेहु। भक्त वचन प्रभु के मन भायहु ॥
महामत्त सम मारग चलही। प्रभू निरखि हरि हरि सब कहही ॥
कोउ कहै पंडित भल अहहू। नृत्य गीत मँह नित रत रहहू ॥
हरि हरि कहि सबही मिलि नाचहि। मद्यप गण हर्षित होइ धावहि ॥
मद्यपगण हू हरि हरि कहहीं। वैष्णव दर्शन कर फल लहहीं ॥
मद्यप कँह लखि कै प्रभु हँसही। प्रभु प्रभाव श्री वासहु लखहीं ॥
मद्यप हू प्रभु लखि सुख पावहिं। संन्यासी केवल प्रभु निन्दहि ॥

श्री चैतन्य चन्द्र कहँ, जो खल मानत नाहिं।
कौनहु जन्मेउ नाहि सोइ, सुख पावत जग माँहि ॥४॥

गौर दरश जो काहू पावा। होइ कोउ हम तेहि शिर नावा ॥
मद्यप पर करि कृपा गोसाई। निज सुख विहरहि गौर निताई ॥
देवानन्दहि तेहि क्षण देखेउ। महा क्रोध सों तेहि ते कहेउ ॥
देवानन्द पूर्व बिनु जाने। श्री निवास अपमान सो कीने ॥
सोइ अपमान प्रभू उर आवा। वैष्णव निन्दा प्रभु नहि भावा ॥
भक्ति प्रचार जबहि नहि रहेउ। प्रेम भक्ति कँह नहि कोउ जानेउ ॥
भागवत हू यदि कोउ पढावै। भक्ति भाव तेहि मँह नहिं पावै ॥
देवानन्द सोई समय पढावत। श्री भागवत शिष्य बहु आवत ॥
संन्यासी सम नियम सो रहई। पंडित बड़ो लोग सब कहई ॥
श्री निवास एक दिन तहँ गयउ। श्री भागवत सुनन सो लागेउ ॥

अहै भागवत प्रेममय, सुनि हर्षेउ श्रीवास।
बहन लगेउ जल नयन सो, छाड़त दीरघ श्वास ॥६॥

विद्यार्थीगण समुझि न सकहीं। विघ्न पड़ो पढनो मँह कहहीं ॥
पढ़ न सकहि हम इनके कारन। क्रंदन कर श्रीवास मगन मन ॥
श्री चैतन्य प्रेम की मूरति। परम भागवत हरि चरणन रति ॥
रुकत न क्रंदन तेहि कर देखेउ। सब बालक एक युक्ति विचारेउ ॥
पकड़ि ताहि बाहर सब कीन्हेउ। देवानन्द कछुक नहिं बोलेउ ॥
भक्ति शून्य गुरु तथा शिष्य गन। उठि सोचहि श्रीवास दुःखित मन ॥
अति हि कष्ट सो निज गृह गयउ। अंतरयामी प्रभु सब जानेउ ॥
देवानन्द देखि मन आयउ। क्रोध भरे तेहिते प्रभु कहेउ ॥
देवानन्द सुनहु हम कहही। श्री भागवत पढावहु जबहीं ॥
श्री भागवत सुनन तव ठाहीं। श्री निवास आयहु तव पाही ॥

श्री निवास के दरश को, तरसत है सब कोई ।
सुरमुनि कोउ पावत नहीं, बड़े भाग सों होइ ॥७॥

केहि अपराध सों ताही पकड़यो। शिष्यन सो गृह बाहर कीन्ह्यो ॥
कृष्ण प्रेम सों यदि कोउ रोवहि। गृह बाहर करनो तोहि सोहहि ॥
यद्यपि तुम भागवत पढावहु। कोउ जन्मेउ तेहि अर्थ न जानउ ॥
परिपूरण यदि कोउ बूझै। प्रेम तबहि तेहि हृदय उपजै ॥
प्रेमपूर्ण भागवत पढाई। बूझेहु कछु नहि तुम तेहि भाई ॥
देवानन्द सुनेउ प्रभु वचना। लज्जा सों मुख नीचे कीना ॥
क्रोध भरे अस कहि गृह गयउ। दुखित देवानन्दहु चलेउ ॥
भाग्यवान बड़ पंडित अहई। वाक्य दंड जेहि कँह प्रभु देई ॥
श्री चैतन्य दंड जेहि देई। महासुकृति नर सोई अहई ॥
प्रभु कर दंड पाइ जो मरई। सुरपुर गमन करत नर सोई ॥

श्री चैतन्य दंड जो, ग्रहण करै हर्षाय ।
सोइ दंड सों सब तरै, भक्ति योग सो पाय ॥८॥

जो चैतन्य दंड नहि मानहि। यम कर दंड सोइ नर पावहिं ॥
श्री भागवत तुलसि अरु गंगा। भक्त लोग चारहु हरि अंगा ॥
कृष्ण चतुर्धा विग्रह अहहीं। नित्य सिद्ध सब काहू कहही ॥
आदि अन्त लीला मँह नाहीं। जेहि तेहि भाँति कहहिं हम ताहीं ॥
श्री चैतन्य दास पद वंदौ। मम अपराध न कछु उर आनौ ॥
मध्य खंड की कथा सोहाई। सुनत कथा सब मल बहि जाई ॥
श्री चैतन्य परम प्रिय भाई। श्री निताइ सब जेहि शिर नाई ॥
प्रभु कबहू हम कँह नहि तजिहै। सेवक जानि सदा संग रखिहै ॥

श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु, नित्यानन्द जान ।
वृन्दावनदास प्रभु, लीला कियो गान ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे देवानन्द वाक्य दंडो नाम विंशोऽध्यायः ॥

इक्कीसवाँ अध्यायः

जय जय शची-सुत श्री कृष्ण चैतन्य ।
कृष्ण नाम बाटि गौर जग कियो धन्य ॥
जय जय गौरचन्द्र कृपा के सागर ।
जय शची जगन्नाथ नन्दन सुन्दर ॥

यहि विधि नदिया प्रभु विश्वम्भर। विहरत संग निताइ गदाधर ॥
वाक्य दंड पंडित कँह देई। गृह आए प्रभु सब कँह लेई ॥

देवानन्द निज गृह कँह गयउ। दुष्ट संग सों द्विज दुःख पायउ॥
देवानन्द साधु चित रहेऊ। प्रभू सों एक वचन नहिं कहेऊ॥
वैष्णव कृपा गौर कँह पावै। भक्ति बिना जप तप नहिं भावै॥
वैष्णव कर अपराध जो करई। भक्त होइ कछु लाभ न लहई॥
हम न कहौं यह शास्त्र प्रमाना। स्वयं कह्यो श्री गौर सुजाना॥
प्रथमहि शची मातु अकुलाई। वैष्णव कर अपराध सो करई॥
सोइ अपराध प्रभू निरवारयो। दियो प्रेम संसार सिखायो॥
अति सुन्दर यह कथा जो सुनई। सब अपराध नाश ह्वै जाई॥

एक दिवस श्री गौर प्रभु, निज प्रकाश हित आय।
विष्णु सिंहासन पर स्वयं, बैठे अति हर्षाय॥१॥

निज मूर्ति अरु शिला सोहाई। राखि गोद बोले हर्षाई॥
"कलियुग मँह हम कृष्ण नरायन। हमहि राम मारयो जेहि रावन॥
मम निद्रा आचारज नाश्यो। प्रेम भक्ति बाटन हम आयो॥
हे अद्वैत सबहि वर माँगहु। सुनु श्री वास लेहु जो चाहहु"॥
महाप्रकाश लखि नित्यानन्दा। धरयो छत्र शिर परम अनन्दा॥
वास गदाधर पान खियावहिं। चमर लेइ सब भक्त डोलावहिं॥
भक्ति योग प्रभु सब कँह बाटहिं। मागत जो सोई वर पावहिं॥
कोउ कहै मम पिता दुष्ट मति। शुद्ध करहु तेहि सुनहु जगत पति॥
गुरु प्रति कोउ शिष्य प्रति कोऊ। कोउ पुत्र पत्नी कह कोऊ॥
भक्त वचन प्रभु सब सच करहीं। हँस करि प्रेम भक्ति वर देहीं॥

श्री निवास तबहीं कहेउ, "हे प्रभु गौर गोसाई।
शची मातु कँह देहु प्रभु, प्रेमभक्ति हर्षाई"॥२॥

प्रभू कह्यो, "अस कबहु न कहिहौ। तेहि कँह प्रेम भक्ति नहि देहौं॥
वैष्णव कर अपराध सो कीन्हेउ। तेहि ते प्रेमभक्ति नहि दीन्हेउ"॥
वक्ता महा वास जू कहेऊ। "अब प्रभु मरन सबहि कर भयऊ॥
जेहि के गर्भ प्रभू अवतरेउ। काहे ताहि भक्ति नहिं अर्पेउ॥
सब को जीवन आई अहई। जगत मातु सब काहू कहई॥
माया तजि प्रभु भक्ती देहू। पुत्र होई किमि दोषी कहहू॥
भक्त निकट यदि दोषी कहहू। तदपि कृपा प्रभु तेहि पर करहू"॥
प्रभू कहेउ, "हम मार्ग बतावहु। सोइ दोष हम कबहु न टारहु॥
वैष्णव कर अपराध जो करई। सोइ वैष्णव ता कँह सक हरई॥
दुर्वासा अपराध जो कीन्हा। अंबरीश कँह बहु दुःख दीन्हा॥

जानहु तुम केहि भाति सों, दूर भयो संताप।
श्री अद्वैतहि कटु वचन, मातु कहेउ करि दाप॥३॥

श्री अद्वैत क्षमा यदि करई। प्रेम भक्ति निश्चय सो लहई॥
चरन धूलि तेहि कर शिर लावै। निश्चय कहौं भक्ति सो पावै"॥

श्री अद्वैत निकट सब गयऊ। समाचार तेहि सन सब कहेऊ॥
सुनि अद्वैत स्मरन हरि करई। करि विनती सब सन सो कहई॥
मम जीवन सब चाहहु लीन्हा। गौर प्रभू कौ जन्म जो दीन्हा॥
मोर मातु सो निश्चय मानहु। तेहि कर चरन धूलि हम पावहु॥
तुम सब तासु प्रभाव न जानहु। भक्ति स्वरूपिनि सती सो मानहु॥
ऐसो वचन कह्यो किमि सबहीं। आई कहत तरत सब जनहीं॥
गंगा सम कछु भेद न मानहु। मातु यशोदा देवकि समुझहु"॥
आई तत्व कहत अद्वैतहि। गिरे मुर्छि सुधि नाहि शरीरहिं॥

समय देखि कै मातु तब, आई गृह के द्वार।
चरनधूलि लीन्हेउ तुरत, धर्‌यो शीश बहु बार॥४॥

परम वैष्णवी अद्भुत भक्ती। गौर गर्भ राख्यो अस शक्ती॥
चरन धूलि जबही सो लीना। विह्वल होई गिरी सुधि हीना॥
जय जय जय सब वैष्णव कहई। मगन भए नयनन जल बहई॥
मातु प्रभाव नाड़ा सुधि नाहीं। गौर चरण निरखत मन माँहीं॥
श्री अद्वैत परम अनुरागा। शची मातु सुधि बुधि सब त्यागा॥
दोउ प्रभाव सो दोऊ विह्वल। हरि हरि कहि सब करहिं कोलाहल॥
सिंहासन ऊपर प्रभु हँसहीं। ह्वै प्रसन्न माता सों कहहीं॥
"विष्णु भक्ति पायहु तुम अबहीं। तव अपराध दूर भा सबहीं"॥
श्री मुख वचन सुनत सब काहू। हरी कहत सब भरे उछाहू॥
शिक्षागुरु श्री गौर सुजाना। जननी मिस उपदेशेउ ज्ञाना॥

वैष्णव के अपराध सों, सावधान जग कीन।
शंकर सम यदि कोउ करै, भोगत सो मति हीन॥४॥

शास्त्र सकल पुनि पुनि यहि कहई। जो नहि मानै सो दुःख सहई॥
शची मातु जेहि कँह सब जानी। वैष्णव अपराधी प्रभु मानी॥
वस्तु विचार सो कछु नहि अहई। तदपि गौर अपराधी कहई॥
यहि अद्वैत कहत किमि भाई। द्वैत कह्यो माता दुःख पाई॥
सोइ कथा अब वर्णन करहू। सावधान होइ सब कोउ सूनहू॥
यहि प्रसंग मँह सुनहु सुजाना। विश्व रूप कर चरित बखाना॥
विश्वरूप प्रभु अग्रज अहई। कामदेव सम सो लखि परई॥
सर्व शास्त्र पंडित मति धीरा। नित्यानन्द अभेद शरीरा॥
इनकर व्याख्या बूझि को सकई। शिशू भाव जननी संग रहई॥
जगन्नाथ एक दिन हर्षाई। पंडित सभा चले द्विजराई॥

विश्वरूप संग मिश्र के, लखि हर्षे सब कोई।
हरेउ चित्त प्रभु सबहि कर, चकित सबहि मन होई॥५॥

एक गुरु तब तेहि सन पूछेउ। कहा पढऊ "तुम हम सन कहउ"॥
विश्वरूप तेहि उत्तर दीन्हेउ। 'किछु किछु सकल शास्त्र हम पढ़ेउ'॥

शिशू समुझि कछु काहू न कहेऊ। मिश्र दुखित मन मँह अति भयउ ॥
चलेउ काज करि मिश्र पुरन्दर। मारेउ पूत्र मार्ग मँह द्विजवर ॥
"पुस्तक नाम कहेउ तुम नाहीं। अहंकार अति तव मन माहीं ॥
तुमहि मूर्ख समुझेउ सब कोउ। सभा माँझ अपमान करायउ" ॥
सुतहिं डाँटि द्विजवर गृह गयउ। विश्वरूप मन माँझ विचारेउ ॥
पंडित सभा बहुरि सो आयउ। अति हर्षित होइ सब सन भाषेउ ॥
हम सो कछु पूछेउ नहि तुमहीं। पितु सों दंड दिवायहु हमहीं ॥
तुम सब जो चाहहु सो पूछहु। सुनि शिशु बाक्य एक जन बोलेहु ॥

सुनहु शिशू कह एक जन, पढ़ हु तुमहि जो आज।
ताहि बखानहु कछुक तुम, सुनिहैं सकल समाज ॥ ७ ॥

एक सूत्र प्रभु तबहिं बखाना। सुनि हर्षित होइ सब सुख माना ॥
कहेउ सबहिं तुम ठीक बखानेउ। प्रभू कहेउ तुम कछु नहि बूझेउ ॥
खंडन तुरत ताहिकर कीन्हेउ। अति विस्मित सबही सुनि भयउ ॥
यहि विधि तीन बार तेही खंडेउ। पुनि ताही कँह स्थापित कीन्हेउ ॥
परम सबुद्धि अहउ तुम भाई। अस कहि सबहिं प्रशंसत जाई ॥
माया मुग्ध तत्व नहिं बूझेउ। विश्वरूप यहि विधि तँह रहेउ ॥
भक्ति शून्य सबही कँह देखी। पावत दुख मन माँझ विशेखी ॥
सब मद मत्त बिशय मँह रहहीं। कृष्ण सुयश कबहू नहिं कहहीं ॥
निज उत्सव मँह व्यय बहु करहीं। कृष्ण भजन मँह मन नहि धरहीं ॥
अध्यापक सब तर्क बखानहिं। कृष्ण-भक्ति कोऊ नहिं जानहिं ॥

यदि शिष्यन कँह कोउ जन, श्री भागवत पढ़ाय।
भक्ति बखानै नाहिं सों, ज्ञानहि सबहि बताय ॥ ८ ॥

विश्वरूप सबही पँह जाहीं। भक्ति न सुनि अतिही दुःख पाहीं ॥
कृष्ण शक्ति मय पूर्ण विराजहिं। श्री अद्वैत सकल जन जानहिं ॥
सोइ समय नदिया पुर माँही। श्री अद्वैत कहहि सब पाही ॥
कृष्ण भक्ति को पूर्ण स्वरूपा। कृष्ण भक्ति वर्णत द्विज रूपा ॥
योग वशिष्ठ पढावत सबहीं। भक्तीमय व्याख्या प्रभु करहीं ॥
कृष्ण भक्ति तेहि मँह प्रभु कहही। अति सै अगम सबहि जन सुनही ॥
नदिया मँह सबही जन मानत। सर्व श्रेष्ठ वैष्णव तेहि जानत ॥
चहुँ दिशि विश्वरूप दुःख लागत। श्री अद्वैत निकट सुख पावत ॥
निरवधि रहहि अचारज संगा। करहि सदा सब सन सत संगा ॥
तासु अनुज अति रूप मनोहर। चपल निमाई अलकैं सुन्दर ॥

माता सुत सों इमि कहत, भ्राता पँह तुम जाउ।
भोजन हित ताही कहेउ, तुरतहि तेहि लै आउ ॥ ९ ॥

मातु वचन सुनि तुरतहि धाए। श्री अद्वैत भवन प्रभु आए ॥
श्री अद्वैत भक्त संग राजत। श्री वासादि भक्त सब सोहत ॥

गौर कहेउ भोजन हित चलहू। मातु बोलायहु, हँसि कर कहेहू॥
गौर निरखि सब मोहित भयउ। रूप अनूप विलोकन लागेउ॥
मोहित होइ अद्वैत गोसाई। निरखहिं प्रभु मुख अति हर्षाई॥
यहि विधि प्रति दिन मातु बोलावहिं। श्री गौरांग नित्य तँह आवहिं॥
गौर निरखि अद्वैत विचारहिं। हरे मोर मन शिशु भल लागहिं॥
कृष्णहिं केवल मम मन हरई। यहै मोर प्रभु मन अस कहई॥
प्रभु अन्तर्यामी सब जानहिं। देखत ही प्रभु तुरतहिं भागहिं॥
विश्वरूप आचारज संगहि। रहहिं सदा माया सब त्यागहिं॥
आदि खंड मँह सब कही, लीला अति विस्तार।
विश्वरूप प्रभु की तहाँ, देखहु सबहि विचार॥ १०॥
श्री निताई को धरे कलेवर। शेष अंग प्रभु रूप मनोहर॥
ईश्वर की इच्छा सो जानउ। विश्वरूप सन्यासी भयउ॥
श्री शंकरारण्य नाम सो लीन्हेउ। दंड लेइ सोई चलि गयउ॥
शची मातु अति दुःखित भयउ। मन मँह बैठि विचारन लागेउ॥
श्री अद्वैत मोर सुत लीन्हेउ। घर बाहर सोइ तेहि कीन्हेउ॥
भय वश कहै न मन दुख भारी। वैष्णव कर अपराध विचारी॥
गौर देखि सब दुःख विसारेउ। गौर मातु सेवा वश कीन्हेउ॥
गौर प्रकाश कीन्ह जेहि अवसर। आचारज संग रहहि निरन्तर॥
सब सुख छाड़ि गौर प्रभु दीन्हेउ। लक्ष्मी तजि कीर्तन मन रमेउ॥
श्री अद्वैत घरहि प्रभु रहई। माता यह लखि चिन्ता करई॥
"यहै पुत्र मेरो लियो, श्री अद्वैत गोसाई"।
वचन बहुरि सो इमि कह्यो, मन मँह अति दुःख पाई॥११॥
"श्री अद्वैत कहै को इनहीं। यह तो द्वैत बड़ो हम कहहीं॥
चन्द्र समान एक सुत मेरो। गृह बाहर कीन्ह्यो करि भोरो॥
यहै पुत्र को रहन न देइहै। हम अनाथ गृह मँह का करिहैं॥
श्री अद्वैत जगत उपकारी। भा विधि वाम मोहि संहारी"॥
यहि अपराध गौर मन माँहीं। तेहि ते भक्ति देत नहिं ताहीं॥
आज काल जे जन बड़ बोलहिं। वैष्णव कर निन्दा जो भाषहिं॥
कछु दिन मँह निश्चय फल पैहैं। यम को दंड जबहि तेहि मिलिहैं॥
शिक्षा गुरु श्री गौर बतायहु। जननी मिस सब लोग सिखायहु॥
वैष्णव कर अपराध न करहू। नाहित दुख पाउब सब सुनहू॥
प्रभुकर आज्ञा जे नहिं मनिहैं। रौरव नरक माँझ सो पड़िहैं॥
यहै कथा कर हेतु अब, सुनहु सबहि मन लाय।
जाहि हेतु श्री गौर प्रभु, जग कँह दियो दिखाय॥१२॥
भूत भविष्य सबहि प्रभु जानहि। दुष्ट इश सबही कँह मानहि॥
श्री अद्वैत को कोउ कोउ जनहीं। कृष्ण स्वयं तिनही कँह कहहीं॥
वैष्णव कर सो वचन न मानहिं। उलटो झगड़ो तिनसों ठानहिं॥
जो अद्वैतहि वैष्णव कहई। ताहि पकड़ि मारन सो चहई॥

इन कँह श्री अद्वैत न मानहिं। इनकर कथा न मन मँह लावहिं॥
श्री विश्वम्भर सब कछु जानहिं। पापंडी बहु मार्ग चलावहिं॥
श्री अद्वैतहि कृष्णहि कहहीं। जो नहि माने तिन कँह हनहीं॥
सब वैष्णव कर बचन न मानत। आपन नूतन मार्ग निकासत॥
जो अद्वैतहि वैष्णव कहहीं। तिन कँह शठ मारन कँह चहहीं॥
श्री अद्वैत तिनहिं सब त्यागेहु। सावधान सब लोगन कीन्हेउ॥

प्रभु सर्वज्ञ शिरोमणी, जानहि जग को बात।
निन्दक जन बहु होइहैं, करिहैं बहु उत्पात॥१३॥

यहि मिस जननिहि दंड दिखायो। सावधान सब भक्तन कीन्ह्यो॥
वैष्णव निन्दा जो कोउ करिहै। तेहिकर रक्षा कबहु न होइहै॥
जेहि के आश्रय निन्दक रहिहै। सब काहू नरकहि मँह जहिहै॥
बड़ अधिकारी तिन कँह त्यागहिं। क्षुद्र सकल रौरव मँह भोगहिं॥
गौर दंड को बूझन हारा। जननी मिस सब कँह उद्धारा॥
जो अद्वैत न वैष्णव कहहीं। मरै सोइ यम दंड सो सहहीं॥
गौर महाप्रभु जग के ईश्वर। बड़ो भाग जो तेहिकर अनुचर॥
श्री निताइ जेहि ईश्वर कहई। गौर गौर जो निशिदिन भजई॥
जासु कृपा सब वैष्णव चीन्हत। जासु कृपा सब निन्दा नाशत॥
जासु कृपा भक्ती उर उपजत। जेहिकर सेवक कोउ नहि निन्दत॥

गौर सुयश गावत सदा, गौरहि जेहि के प्रान।
श्री निताइ सेवक सहित, सेवहि गौर सुजान॥१४॥

बड़े भाग सों यहि जग माहीं। श्री निताइ सेवा कोउ पाहीं॥
गौर प्रकाश निताई अहही। प्रभुकर बड़ो भाई सब कहही॥
विश्वरूप कर कथा जे सुनहीं। श्री निताइ सेवक ते बनहीं॥
विश्वरूप अरु नित्यानन्दा। एक रूप हरि गौर गोविन्दा॥
शची मातु अरु सकल महाजन। जानत यहै तत्व सब हरिजन॥
जै निताई जै शेष महीधर। हरि शैया अति परम मनोहर॥
तुम बिन श्री चैतन्य को पावै। तुमरी कृपा गौर जग भावै॥
श्री निताइ कँह जे नहि भजहीं। जीवन कर सुख सो नहि लहहीं॥
कब मम भाग होब सुनु भाई। देखिहौ नयनन गौर निताई॥
धन्यभाग भक्तन संग देखहु। अपनो जन्म सुफल करि मानहु॥
हमरे प्रभु कर प्रभु श्री गोरा। बड़ो भरोसा प्रभु चित चोरा॥
वंदौ श्री अद्वैत के चरना। तेहि के प्रिय सब भव भय हरना॥

श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु, श्री निताई प्रभु गौर।
दास वृन्दावन कछु कह्यो, प्रभु लीला यहि ठौर॥१५॥
वृजभूषण भाषा कियो, भक्तन हित तेहि जानि।
कृपा करहि सब भक्त जन, दास आपनो मानि॥१६॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे शची देव्या वैष्णवापराध खंडनं नाम एकविंशतितमोऽध्यायः॥

द्वाविंश अध्याय

जय जय श्रीकृष्ण चैतन्य गुन निधि।
जय विश्वम्भर जय देवन के विधि॥
जय जय नित्यानन्द प्रिय द्विजराज।
जय श्री गौडीय भगत समाज॥

यहि विधि लीला प्रभु नित करहीं। लोग सकल सो देखि न सकहीं॥
प्रति दिन आनन्द नदिया होई। स्वयं गौर बहु लीला करई॥
प्रिय निताई संगही मँह रखई। भक्त सहित निज नामहि लेई॥
निशा भाग मँह कीर्तन करई। भक्त बिना कोउ तँह नहि रहई॥
गौर-शक्ति महिमा बड़ अहई। त्रिभुवन कोउ तेहि लाघि न सकई॥
मुँह पीछे कोउ निंदा करही। यम घर निश्चय जाउब तेही॥
कोउ कहत, "कलियुग को वैष्णव। पेट भरन हित यह सब उत्सव॥
हाथ पाव बाधउ" कोउ कहही। गंगा मँह फेकउ मिलि सबही॥
कोउ कहै निश्चय जानहु सब। यह निमाई सब नगर उजाड़व॥
कीर्तन देखन कँह सब चाहहिं। भय याही सो सबहि दिखावहिं॥

कीर्तन प्रभु को किमि लखै, भाग्य हीन नर जाई।
वृथा चातुरी करत सो, निंदक रहे भुलाई॥१॥

गौर मगन कीर्तन मँह रहही। चित्त जगत कर शोधन करही॥
देखि न सकत लोग दुःख पावहि। हमहि अभागी कहिके रोवहि॥
भक्त निकट कोउ विनती करही। "दरशन हमहि करावहु" कहही॥
"प्रभु सर्वज्ञ" भक्त सब जानहि। यहि ते काहू बात न मानहिं॥
बाल ब्रह्मचारी एक अहई। नदिया नगर माँझ सो रहई॥
परम तपस्वी साधू सोई। केवल दुग्ध पान सो करई॥
प्रभु कीर्तन देखन सो चहई। द्वार बन्द सो देखि न सकई॥
श्री निवास सो प्रतिदिन कहई। तोर कृपा बिन दरसन होई॥
गृह भीतर निज सँग लै चलउ। प्रभु दर्शन तबही हम पावउ॥
लोचन सफल करौं हम जाई। धन्य होब विनती सुनु भाई॥

प्रति दिन सो विनती करै, श्री निवास सो जाइ।
दिवस एक उत्तर दियो, मन मँह अति हर्षाई॥२॥

"भलीभाँति जानत हम तुमही। साधु ब्रह्मचारी तुम अहही॥
फलाहार केवल तुम करहू। पर उपकार सदारत रहहू॥
प्रभु दर्शन के तुम अधिकारी। प्रभु आज्ञा नहि करहु विचारी॥
छिपि कै बैठेहु अस तेहि कहेउ। संग लिवाय ताहि सो चलेउ॥
गृह भीतर छिपि बैठ्यो जाई। नृत्य करत प्रभु अति हर्षाई॥
चौदह लोक को पति जो अहई। भक्तन संग कीर्तन सो करई॥
कृष्ण मुरारि मुकुन्द वनमाली। गावत सब मिलि दै करताली॥

संग निताई गदाधर लेई। भक्त घेरि प्रभु कीर्तन करई॥
श्री अद्वैत मगन मन होई। चहुँ दिशि घूमइ अति सुख लहई॥
प्रेम मगन सबही सुधि नाही। कीर्तन करहिं गौर जेहि ठाहीं॥

हरि हरि केवल सुनि परत, अरु प्रभु कर हुँकार।
भाव आदि को कहि सके, सात्विक सकल विकार॥३॥

विश्वम्भर सर्वज्ञ गोसाई। जानत विप्रलुक्यो यहि ठाई॥
वारवार विश्वम्भर कहई। प्रेम योग मोहि काहे न होई॥
गृह भीतर कोउ का अहई। सत्य कहहु हम बुझि न सकई॥
भय सो श्री निवास तब बोलेउ। पाषंडी भीतर नहिं कोउ॥
बाल ब्रह्मचारी द्विज अहई। पाप रहित फलहार सो करई॥
केवल दुग्ध पान सो करई। तव दर्शन इच्छा बड़ सोई॥
गृह भीतर छिपि के है सोई। सत्य वचन मानहु हम कहई॥
सुनत क्रोध सो प्रभु इमि कहेउ। गृह बाहर अबही तेहि करउ॥
तेहि मँह (शक्ति) कौन अस अहई। मोर नृत्य देखन सो चहई॥
दूध पियन सो भक्ति न होई। भक्ति बिना सो किमि मोहि लहई॥

दोउ भुजा उठाय के, अँगुली प्रभू दिखाय।
दूध पियन सो नहि कोउ, कबहूं मोहि कँह पाय॥ ४॥

मोरे शरण नीच यदि आवै। वह हमरो होइ मोहि कँह पावै॥
सन्यासी यदि शरण न लेवै। पापी सो मो कह नहि भावै॥
वानर गोप कवन तप कीन्ह्यो। गज आदिक मो कँह सो पायो॥
राक्षस सकल बड़ौ तप करही। देखहु कहा लाभ सो लहहीं॥
पय पीवन सों मोहि न पावै। करिहौ नाश देखु यहि स्थाने॥
भय सो द्विज बाहर चलि गयउ। मन मँह बहुत विचारत भयउ॥
बड़े भाग्य दर्शन हम पायउ। जस कीन्ह्यो तैसोफल चाखेउ॥
अद्भुत नृत्य अपूरव क्रंदन। अपराधी हम जय शचीनन्दन॥
सेवक सम तेहि बुद्धि अहई। प्रभु कर दंड दास सब सहई॥
यहि विधि सोचत द्विग चलि गयउ। अंतर्यामी प्रभु सब जानेउ॥

करुणा सागर गौर प्रभु, निकट बोलायो ताहि।
चरण कमल तेहि शीशपर, राखेउ प्रभु हर्षाई॥ ५॥

प्रभु तेहि कहेउ बात यह समुझाउ। तप कर गर्ब कबहु नहि करउ॥
सर्व श्रेष्ठ हरि भक्ती जानहु। प्रभू वचन सुनि अनि सुख पायहु॥
हरि-हरि सब भक्तन तब कीन्हा। करि दंडवत चरणमन दीन्हा॥
श्रद्धा करि यह कथा जे सुनही। गौरचरन पावब सो जनही॥
द्विज पर कृपा प्रभू अति कीन्हा। आनन्द सो कीर्तन मन दीन्हा॥
सोइ विप्रपद वंदन करहूँ। दंड पाइ जो भक्ती लहेहू॥
यहि विधि निशि मँह कीर्तन करही। अन्य कोउ जन देखि न सकही॥
मन मँह दुःखित लोग सब होहीं। पापंडी जन निन्दा करहीं॥

बुद्धि हीन निन्दक जे पापी। देखहिं नहिं सो जग परितापी॥
केवल निन्दा सो सब करहीं। कीर्तन कर सो दरश न लहहीं॥

इन दुष्टन के कारणहि, श्री गौरांग दयाल।
भले लोग हू कँह नहीं, दरशन देत कृपाल॥ ६॥

कृष्ण भक्त जो लोगन अहही। अति निर्मल हृदय सब करही॥
कहहि सकल दृढ मति कर सबही। यदि हमरे मन भक्ती अहही॥
दरश देब प्रभु निश्चय हमही। कीर्तन करब गौर संग सबहीं॥
एक नगर वासी पुनि कहई। नयन भरहि देखब हम सबही॥
जगत उधारन हित द्विजराजा। नदिया प्रगट हमरे काजा॥
घर-घर नगर-नगर प्रति द्वारहि। कीर्तन करब सुनहु सब लोगहि॥
भाग्यवान सब नगर निवासी। प्रति अवतार रहहिं सुखरासी॥
पंडित जन सब निन्दा करही। प्रभू सुयश सो देखि न सकहीं॥
दिन मँह नगर निवासी सबही। प्रभु दर्शन हित आवहि घरही॥
नूतन द्रव्य कोउ जन लावहि। घृत दधि पुष्पमाल कोउ आनहि॥

दर्शन हित यहि भांति सब, आवहि प्रभु के द्वार।
करहि दंडवत प्रेम सो, मन मँह हर्ष अपार॥७॥

प्रभु आशीष देहि यहि भांति। कृष्ण भजहु सब मिलि दिनराती॥
कृष्ण भक्ति तुम सब कँह होई। मम आशीस सत्य सब अहई॥
प्रभु उपदेश सबहिं कँह करहीं। "महामंत्र हम तुमसो कहहीं॥

हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम, राम राम हरे हरे॥

महामंत्र यह तुमसो कहेहू। घर पर जाइ नियम सो जपहू॥
सर्व सिद्धि तुम सब कँह होइहैं। जपिहै यहि सो सब सुख पैहैं॥
सदा जपहु यहि, विधि नहि कोई। संग लेइ निज जन जो होई॥
निज हाथहि सो ताली देउ। कीर्तन करहु मगन मन होउ॥

हरि हरए नमः कृष्ण यादवाय नमः।
गोपाल गोविन्द राम श्री मधुसूदन॥

तुम सों कीर्तन विधि हम कहेउ। करहु जाइ घर पर जिमि भाषेउ॥
प्रभु मुख मन्त्र सुनत सब काहू। भए मगन उर अधिक उछाहू॥
करि दंडवत जाइ सब घरही। कीर्तन करन लोग सब जनही॥

प्रभु चरन ध्यावहि सदा, नाम जपहि दिन रात।
संध्या मँह कीर्तन करत, मन मँह अति हर्षात॥८॥

निज निज द्वार बैठि सब कोई। करताली दै कीर्तन करई॥
यहि विधि नगर नगर संकीर्तन। लगे करावन श्री शचीनन्दन॥
आलिंगन प्रभु सबकर करईं। कृष्ण भजहु निशिदिन सब जरही॥
प्रभू वचन सुनि सब जन रोवहिं। कृष्ण कृष्ण सब मुख सों भा(२८३)॥

आनन्द मगन लोग सब गावहिं। "रामनरायन" वचन उचारहि॥
शंख मृदंग मजीरा अहही दुर्गोत्सव हित सबके घरही॥
कीर्तन समय सोइ सब लेई। वाद्य बजावै हर्षित होई॥
राम राम हरिनाम उचारहि। ब्रह्मनाम यहि भांति पुकारहि॥
श्रीधर सोइ मारग सो आयो। हरीनाम गावत मन भायो॥

कीर्तन सुनि हर्षित भयो, करन लग्यो सो नृत्य।
प्रेम मगन कछु सुधि नहीं, प्रभुको अति प्रिय भृत्य॥९॥

तेहि कर सुख लखि सब पुरवासी। कीर्तन करन लगे सुखरासी॥
कीर्तन घेरि ताहि कँह करही। प्रेम भरे श्रीधर सुख लहहीं॥
भुइ मँह लोटहि पुनि उठि गिरही। देखि बहिर्मुख जन सब हसहीं॥
कोउ पापी हसिके अस कहही। देखउ भाइ नयन भर सबही॥
फल वेचन वालो मुनि होई। वैष्णव बनि जगको सो ठगई॥
तन नहि वस्त्र नभोजन पावै। भाव भयो अस लोग जनावै॥
एक कहै भिक्षा नहि पावै। कुसमय मँह उत्सवहि मनावै॥
यहि विधि पाषंडी सब कहही। लोग सकल कीर्तन नित करहीं॥
एक दिवस काजी तँह आयो। कीर्तन सुनि क्रोधित है धायो॥
"धाहु धाहु मारहु सब कोउ। करै कहा तब गुरु मोहि सुनउ॥

यह सुनि भागे लोग सब, वस्त्र न सके सम्भार।
जेहि पायो मार्‌यो सोई, भ्रष्ट कियो घर द्वार॥१०॥

काजी अस बोलेउ सब पाहीं। "धर्म प्रचार भयउ यहि ठाहीं॥
पैहो दण्ड कहँउ सब काहू। रात भयउ सबही घर जाहू॥
कीर्तन यदि अब कोउ करिहै। जात लेब निश्चय सो जनिहै"॥
यहि विधि नित सो घूमन लाग्यो। भय सो छिपि सब गृह मँह बैठ्यो॥
निन्दक सब बहु चर्चा करहीं। वचन वज्र सम मुख सो कहहीं॥
"मन मँह हरी नाम सब लेउ। उचे स्वर काहे सब कहउ॥
वेद पुरान त्यागि सब चलउ। तब काहे नहिं तुम सब मरउ॥
जाती कर भयहू नहि करही। अहंकार वश कोउ नहि गिनही॥
बहुत निमाई बोलत रहेउ। काजी आगे सब चलि गयउ॥
श्री निताइ घूमत नित रहही। निश्चय फल पैहै सो अबही॥

उचित बात हम सब कहत, कहहि पषंडी लोग।
नदिया नगरी धन्य है, उपजेउ जँह यह रोग॥११॥

भय सो कोउ कछु उतर न देई। प्रभु पँह जाई कहै सब कोई॥
काजी के भय हम सब काहू। कीर्तन करि न सकौं प्रभु सुनहू॥
सैनिक लै घूमत सो रहई। भय सो नगर तजब सब कोई॥
कीर्तन बंद सुनत प्रभु तहहीं। रुद्र मूर्ति प्रभु भे तत्छनहीं॥
प्रभु हुँकार करत अति भारी। हरि हरि सुमिरत सब नरनारी॥
श्री निताइ सन प्रभु अस कहेउ। "सावधान होइ सब पँह चलउ॥

सकल नगर मँह कीर्तन करिहैं। देखौ सन्मुख को मम ऐहै॥
काजीको घर द्वार जराबहु। राजा कहा करै हम देखहु॥
प्रेम भक्ति वर्षा हम करिहैं। पाषंडिन कँह आज नशैहैं॥
नगर निवासी तुम सब जावहु। आज्ञा मोर सबहि सन भाषहु॥

कृष्ण रहस्य देखब सोई, आजहि मेरे संग।
लै मसाल आवब सबहि, कीर्तन कर बहु रंग॥ १२॥

काजीको घरद्वार नशैहों। तेहि सन्मुख हमकीर्तन करिहौं॥
देखहु कहा करै सो हमरो। सगरो विश्व अहै वश मेरो॥
हमरे रहत कहा भय सबही। भय त्यागहु हम सब सन कहहीं॥
भोजन करि सब दीप बनावहु। संध्या समय सबहि यहि आवहु॥
वचन सुनत सबही गृहधाए। आनन्द मगन सबहि घर आए॥
नृत्य करब श्री गौर निताई। नदिया नगरी मँह सुनु भाई॥
जाकर नृत्य न लखिसक कोइ। आज प्रगट नाचब प्रभु सोई॥
देखन कर प्रभु नृत्य सोहावन। इच्छा करत रहे सबही जन॥
सोइ प्रभु नृत्य नगर मँह करिहैं। हम सब धन्य ताहि लहि पैहै॥
असकहि दीपक सबही बाधत। पिता पुत्र सब निज-निज लावत॥

बड़ो, बड़ो करि बाधही, तैल कलश लै हाथ।
लक्ष-लक्ष जन धावहीं, अपनो दललै साथ॥ १३॥

बड़ बड़ लोग बहुत सो बाध्यो। नदिया नगर दीपमय लाग्यो॥
बाल वृद्ध सबही मिलि आवत। कृष्ण-शक्ति को मर्म न जानत॥
तबहू पापी जन नहि जान्यो। प्रभु महिमा को सो नहि मान्यो॥
प्रभु आज्ञा सो सब पुरवासी। प्रभू निकट आए सुखरासी॥
दीपक लै सबही जन धाए। सकल महाजन प्रभु पँह आए॥
प्रभु आज्ञा सबही कँह दीन्हा। आगे श्री अद्वैतहि कीन्हा॥
सर्व प्रथम आचार्य गोसाई। नृत्य करब सब जन सुखदाई॥
सम्प्रदाय एक तेहि संग गैहै। सकल विश्व कँह पावन करिहै॥
मध्य नृत्य हरिदासहि करिहै। सम्प्रदाय एक तेहि संग रहिहै॥
पुनि पंडित श्री वास जू गैहै। भक्तन संग कीर्तन सो करिहै॥

श्री निताइ दिसि तबहि प्रभु, देख्यो दीनदयाल।
तुरतहि सो प्रभु सन कह्यो, तुमहि न तजब कृपाल॥ १४॥

तुम संग रहबयहै मम काजा। छाड़ब नहि तोहि सुनु द्विज राजा॥
नृत्य करब केहि के बल हमही। जहा प्रभू सेवक तँह रहही॥
श्री निताई नयनन जल देखी। उर लायो आनन्द विशेखी॥
राख्यो निज संग अति हर्षाइ। नृत्य करन लागे सुखदाई॥
तेहि कर मन जहँ सो तहँ नाचत। कोउ प्रभु संग कोउ अनतहि गावत॥
नगर कीर्तन प्रभु कर सुनहू। सुनत जाहि नाशै सब अघहू॥
श्री मुरारि, श्रीवास, गदाधर। गोपीनाथ रमाई श्रीधर॥

श्री मुकुन्द, नन्दन वक्रेश्वर। गोविन्द बासुदेव अरू शेखर ॥
शुक्लाम्बर, नन्दन, जगदीशहि। प्रेम भरे नाचत सब वीरहि ॥
श्री चैतन्य भृत्य बहु अहहीं। पार को पावै केहि विधि कहहीं॥

वेदव्यासहि कहि सकत, गौर भक्त को नाम।
गौर भक्त को अंत नहि, सब कँह करौ प्रनाम ॥१४॥

सांगोपांग अस्त्र अरु भक्तहिं। तिनके संग नाचत प्रभु हर्षहिं ॥
तेहि कर वर्णन को करि सकई। अद्भुत यह अवतारहि अहई ॥
शची सुअन होइ जाहि प्रकाश्यो। कीर्तन करि प्रभु जगत उबार्‍यो ॥
तिलतिल प्रभु उल्लासहि बढ़ई। भा अपराह्न नृत्य अति करई ॥
भक्तन कँह आनन्द अति भारी। प्रेम मगन सब करत विचारी ॥
नगरी मँह नाचत प्रभु गोरा। दुःख हरत सब कर चित चोरा ॥
स्थावर जंगम जीव चराचर। होत पवित्र देखि के द्विजवर ॥
गौर नृत्य सबके मन भावा। गोधूली लखि अति सुख पावा ॥
कोटि कोटि जन प्रभु ढिग आवहिं। श्रीहरि ध्वनि करि गगन कपावहिं ॥
तब हुंकार गौर प्रभु कीन्हा। सुनि कै सब प्रभु पद मन दीन्हा ॥

प्रभु हुंकार सुनत सब, सुखी भए मन माहिं।
दीप जलायो सबहि मिलि, हरि हरि बोलत जाहिं ॥१६॥

लाखहु दीप जले चहुँ ओरा। हरि हरि कहत भए प्रभु गोरा ॥
लोग सकल हरि हरि हरि कहहीं। प्रभु शोभा सब कर मन हरहीं ॥
अति प्रसन्न मन सबकर भयउ। चन्द्र सूर्य मनु भुइ पर आयउ ॥
तारागण शोभा जनु करई। ज्योतिर्मय सब दिशि लखि परई ॥
कृष्ण मनहु ज्योती होई प्रगट्यो। हरि हरि हरि तब गौर उचार्‍यो ॥
सब वैष्णव गन आए तुरतहि। आरंभ्यो कीर्तन सब भक्तहि ॥
घूम घूम कीर्तन प्रभु करहीं। प्रभुसंग सकल भक्त गन फिरहीं ॥
माला चंदन सबके अंगहि। लै करताल सकल जन नाचहिं ॥
सिंह समान पराक्रम सबहीं। चहुँदिशि प्रभु के सब जन रहहीं॥
नृत्य करत प्रभु बाहर आए। हरि हरि कहि सबही जन धाए ॥

श्री मुख दर्शन करत ही, गयो सकल संताप।
हरि हरि बोलत मगन मन, भए सकल निष्पाप ॥१७॥

कोटि काम सम सुन्दर रूपा। उपमा नहि कोउ रूप अनूपा ॥
गौर कृपा कछु वर्णनन करहू। बिना कृपा कछु कहि नहि सकहू ॥
ज्योतिर्मय विग्रह प्रभु अहहीं। स्वर्ण समान अंग सब लखहीं ॥
चंदन चर्चित सब अंग सोहै। घुघराली अलकै मन मोहै ॥
गले मालती माला राजत। मंद हँसत अति ही छवि पावत ॥
मस्तक पर चंदन अति सोहत। कुंकुम बिन्दु मध्य मँह राजत ॥
हाथ उठाइ हरी हरि कहहीं। माला सकल अंग छवि लहहीं ॥
नयनन जल सों सब अंग भीजत। मधुरे स्वर हरि नाम उचारत ॥

स्वर्ण दंड जिमि भुजा उठाए। कनक पुष्प सम पुलक सोहाए ॥
लाल अधर भ्रूभंग मनोहर। सुन्दर दशन विशाल स्कंधवर ॥

यज्ञ सूत्र श्रीअंग पर, अति ही शोभा देत।
पीताम्बर सुविचित्रवर, सबकर मन हरि लेत ॥१८॥

रमानिवास चरन पर करहीं। श्री तुलसीहूँ तहहीं रहही ॥
उच्च नासिका ग्रीव मनोहर। सबसों दीर्घ सुपीत कलेवर ॥
सकललोक प्रभु लखि इमि कहही। पुष्प केश महँ शोभा देही ॥
बहुत लोक चहुँदिशि ते आए। आपन पर कोउ देख न पाए ॥
तदपि प्रभू की कृपा सोहाई। प्रभु दर्शन पावत सब आई ॥
प्रभु श्रीमुख लखि स्त्रीगण सबही। हरि हरि कहि मंगल ध्वनि करहीं ॥
द्वार द्वार कदली अति सोहै। कलश सहित नरियल मन मोहै ॥
घृत को दीप सबहि के द्वारे। दधिदूर्वा अरु धान सवारे ॥
यहि विधि सबके द्वार विराजैं। कौन धन्यो यह कोउ नहिं जानै ॥
नर नारी सब प्रभुसंग चलहीं। प्रेम मगन सब हरि हरि कहहीं ॥

देखि सुअवसर चोर सब, सोचेउ मिलि मन माहिं।
घर घर चोरी करहु सब, यहै कहत सब जाहिं ॥१९॥

चोरेहु निज विचार सब भूलेउ। हरी कहत सब प्रभुसंग धायउ ॥
पुष्प धान मय मारग भयउ। कौन चढ़ावत कोउ नहि जानेउ ॥
स्तुति न समझहुँ यह सब कोई। जहाँ कृष्ण तहँ यह सब होई ॥
श्री भागवत कहत यह बाता। बनी द्वारिका छिन महँ ताता ॥
श्री द्वारिका जबहि यदुराई। जलविहार कीन्ह्यो हर्षाई ॥
लवण समुद्र अमृत सम भयउ। श्रीहरिवंश पुराणहि देखउ ॥
कछु संदेह न कीजै कोउ। सोइ प्रभु नृत्य करत यह जानउ ॥
प्रभु समीप सब मंगल होई। कीर्तन करत चले प्रभु सोई ॥
गंग निकट सो प्रभु चलि जाहीं। हरी भिन्न कछु सुनियत नाही ॥
श्री अद्वैत लोग निज लेई। आगे चले मगन मन होई ॥

चलत भए हरिदास तब, कृष्ण रसहिं लवलीन।
नृत्य करत अति प्रेम सो, गौर चरन मनदीन ॥२०॥

श्री निवास तेहि पाछे चलेउ। कृष्ण कृष्ण कहि धावत भयउ ॥
यहि विधि भक्त चले सब आगे। लोग सकल तिनके सङ्ग लागे ॥
सबके पाछे प्रभु चलि जाही। नृत्य देखि सब लोग सिहाही ॥
मधुर कंठ सबकर अति भयउ। गायक भयउ जो कछु नहि जानेउ ॥
मुरारि गोविन्द रामाई ठाकुर। कीर्तन करत सबहि अति आतुर ॥
प्रभू घेरि सब काहू नाचहि। प्रभू मगन मन सब संग गावहिं ॥
नित्यानन्द गदाधर चलही। दोउ ओर प्रभु के संग रहही ॥
प्रेम सिंधुमहँ दोउजन क्रीडहिं। नृत्य करत प्रभु सब संग डोलहिं ॥

प्रभु दर्शनहित सब जन आवहि । दर्शनकरि प्रभु के सङ्ग धावहि ॥
बहु मसाल चहु ओर सोहाई । अति प्रकाश सब पड़त लखाई ॥

महादीप चहुँ ओर सो, करत सकल तम नाश ।
हरि हरि कहि कै लोग सब, भीतर करत प्रकाश ॥ २१ ॥

नृत्य अपूर्व प्रभूकर देखी । अद्भुत सकल विकार विशेखी ।
आनन्द सो विह्वल सब काहू । प्रेम मगन उर अधिक उछाहू ॥
कबहु धूलिमय प्रभु अंग सोहत । कबहुँ नयन जल तेहि कहँ धोअत ॥
नदिया नगरी भयउ कोलाहल । मन उछाह सब जन अति विह्वल ॥
हरी राम सब मिलि के कहहीं । हरि हरि कहि सब नाचत चलहीं ॥
मिलि दश पांच एक संग नाचहिं । मधुरे स्वर करताल बजावहिं ॥
बहु सम्प्रदाय भयहु यहि रीति । गाव हे यहि विधि सब अति प्रीति ॥
'हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः । गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन" ॥
प्रतिनिधि बनि कोउ एकहि गावत । और लोग सब तालि बजावत ॥
एक हाथ महँ दीप विराजै । तेल पात्र दूजे मँह राजे ॥
बड अद्भुत यह सबही देखहिं । ताली केहि बिधि लोग बजावहिं ॥

नवद्वीप मानहु भयो, पुर वैकुंठ समान ।
भएचतुर्भुजलोग सब, विष्णुहि सम सब जान ॥ २२ ॥

कृष्ण प्रेम महँ विह्वल सबही । मर्म कोउ कछु बूझि न सकही ॥
हाथ चारि भो सोउ नहि जानै । खोयउ स्मृति को तालि बजावै ॥
श्रीबैकुंठ सुखई जो अहई । सो नदिया महँ परगट लखई ॥
नृत्य करत गंगा तट चलहीं । प्रेम भरे कीर्तन सब करहीं ॥
नंद सुअन वंशी कर लीन्हे । अपने वश जेहि विधि जग कीन्हे ॥
तेसेहि कीर्तन करि सब लोका । भूलेहु देह धम अरु शोका ॥
भुइ मँह लोटहि अरु सिर धुनहीं । नाना विधि कोउ कीर्तन करहीं ॥
कोउ कहै काजी कँह कहउ । काटौसिर पावौ यदि सोऊ ॥
पाषंडी मारन कोउ धावत । नाम लेइ कोउ लात चलावत ॥
केतेजनहि मृदंग बजावत । को जानै केते जन गावत ॥

प्रेम वृष्टि कीन्ह्यो प्रभू, नदिया धामहि माहिं ।
तृप्त भए पुरलोग सब, हरि-हरि कहि बिलखाहिं ॥ २३ ॥

शिव अनन्त जो सुख कँह चाहत । नदिया वासी सोइ सब पावत ॥
गंगा तीरे प्रभु चलि जांही । भक्तन संग मगन मन माँही ॥
आनन्द पृथ्वी पर अति भयउ । चहुँ ओर अति आनन्द छायउ ॥
अनाचार कहु देखि न परई । चहुँदिशि मंगलमय सब लखई ॥
गौर प्रभू अति प्रेम सो गावहिं । ताहि घेरि के सबही नाचहिं ॥

तोरे चरन मन लागहु, सारंगधर ।
तोरे चरन मे मन लागहु रे ।

श्री चैतन्य चन्द्र को सुनउ। यहै आदि संकीर्तन जानउ ॥
नृत्य करहि प्रभु भक्त गावहिं। चलत कहाँ सो कोउ नहि जानहिं ॥
लक्ष लक्ष जन हरि-हरि कहहीं। नाद सकल ब्रह्माण्डहि भरहीं ॥
ब्रह्मलोक शिवलोकहिं व्यापेउ। श्री बेकुंठ धाम सो गयउ ॥
कृष्ण सुखहिं पूरन सब भयउ। जेहि सुखकर कोउ अन्त न पायउ ॥

प्रभु दर्शन हित देव सब, आए नदिया धाम।
कीर्तन सुनि मूर्छित भए, गावत प्रभु गुण ग्राम ॥ २४ ॥

कछु छिन मँह चेतन सब भयउ। नरको रुप देव सब धरेउ ॥
भक्तन संग कीर्तन सब करही। ब्रह्मा शिव सनकादिक अहहीं ॥
यम अरु सोम कुवेरहु आए। श्री चैतन्य निरखि हर्षाए ॥
मनुज रूप धरि कीर्तन करही। ब्रह्म सुखहि तृन सम सब गिनही ॥
देव मनुज सब मिलि हरि कहही। महादीप चहुदिशि बहु जरही ॥
कदली वृक्ष सबहि के दुवारे। दधिदूर्वा जल धर्यो किनारे ॥
नदिया कर बैभव अति भारी। अति विशाल गृह दुवार सवारी ॥
सकल जाति के लोक अपारा। संख्या कर नहिं कछुक विचारा ॥
प्रभु अवतार लेव यहि ठाही। ब्रह्मा सो जानेउ मन माही ॥
सब बैभव नदिया महँ राखेउ। आज प्रगट सब काहू देखेउ ॥

स्त्रीगण सब जय जय कहहि, गावहि मंगल गान।
सो वर्णन को करि सकै, अति अपूर्व सब जान ॥२५॥

प्रभु को नृत्य रूप जेहि देखत। मोहित होइ सो धैर्य न धारत ॥
सुनि प्रभु रुदन दीनता देखी। विपई जनहू द्रवहि बिशेखी ॥
'बोल बोल" कहि नाचत गोरा। पुष्प माल सबकर मन चोरा ॥
यज्ञ सूत्र पीताम्बर सोहै। कमल नयन मन सबकर मोहै ॥
धूलि धूसरित सब अंग सोहत। प्रेमधार सब अंग विराजत ॥
प्रभु आगे चन्द्रहु नहि भावै। नासा ते जल अति छवि पावै ॥
घुघराली अलकै को बरनै। अतिविचित्र देख्यो सो जानै ॥
पुष्प मालती प्रभु अति प्यारो। सोइ पुष्प सो अलकहि बाध्यो ॥
"जन्म जन्म प्रभु यह वर देहू। प्रभ कीर्तन सबके मन बसहू ॥
यह वर मांगहि सब पुरवासी। नृत्य करन गमने सुखरासी ॥

नृत्य करत सब भक्त गन, आगे गावत जाय।
तेहि पाछे श्री गौर प्रभु, निरखि सबै सुख पाय ॥ २६ ॥

भक्त मान प्रभु सदा बढ़ावत। भक्त अनुकरण करि सुख पावत ॥
नृत्य करत यहि विधि प्रभु चलहीं। गंगा पथ कीर्तन प्रभु करहीं ॥
श्री बैकुंठ पती जो अहई। नदिया मँह कीर्तन सो करई ॥
चहु दिशि पुणय कीर्ति सब गावहिं। हरी हरी कहि सबहि पुकारहिं ॥
✓ हे मुग्धा, तुम हरि हरि कहहु। सकल ताप गोविन्द कहि हरहु ॥
यह कीर्तन सुनि गोरा नाचहिं। जासु चरण ब्रह्मा शिव पूजहि ॥

पाहिड़ा राग

नाचत विश्वम्भर, बैकुंठ को ईश्वर,
[भागीरथी तीरे तीरे।
जेहि की पद धूली, होइ कुतूहली,
[शिर पर सबहि धरे॥ १॥

(शिव शिव नाचत विश्वम्भर॥ ध्रु०॥
अपूर्व विकार, वहत नयन सो धार,
हुंकार गर्जन करत।
हँसत हँसत, श्री भुज उठाई,
मुख सों हरि हरि कहत॥ २॥

मदन सुन्दर, गौर कलेवर,
दिव्य वास परिधान।
घुघुराली अलकै, माला शोभै,
मानहु काम समान॥ ३॥

चन्दन चर्चित, श्री अंग शोभित,
गले झूले वनमाला।
झूमि के गिरत, थिर नहि रहत,
आनन्द सों शची बाला॥ ४॥

काम शरासन, भ्रू-युग पत्तन,
मस्तक चन्दन विन्दु।
मुकुता दशन, श्री युत वदन,
प्रकृति करुणा सिन्धू॥ ५॥

क्षणहि शत शत, विकार अद्भुत,
कह लौ वरनै कोय।
अश्रु कंप धर्म, पुलक वैवर्ण्य,
ना जानौ कितेक होय॥ ६॥

त्रिभंग सुन्दर बनिकै गोरा,
करसों मुरली बजाय।
मानहु मत्तगज, चलत सहज,
देखत नयन जुड़ाय॥ ७॥

अति मनोहर, यज्ञ सूत्र वर
हृदय उपर राजै।
मानहु अनन्त, होय गुनवंत,
परश सुखहिं विराजै॥ ८॥

नित्यानन्द चांद, माधव नन्दन,
दूहु ओर विराजै।

यत प्रियगण, करत कीर्तन,
हसत लीख सब साजै ॥ ९ ॥
जेहिको कीर्तन, करि अनुक्षण,
शिव दिगम्बर भए।
सोइ प्रभु नाचत, नगर नगर मँह,
कीर्तन करत नए ॥ १० ॥
जोइ कर जोइ केश, जोइ अंग, जोइ वेश,
कमला लालसा करत।
सोइ प्रभु भुइ मँह, लोटत अहही,
सब को मनवा हरत ॥ ११ ॥
लक्ष लक्ष दीप, जगत प्रकाशित,
अति सुख सबही पायो।
सकल ससार हरि हरि बोलत,
और कछू नहि जान्यो ॥ १२ ॥
अपूर्व कौतुक, देखत सब जन,
आनन्द मँह सब डोल।
एक एक कँह, देखत कहही,
बोल भाइ हरि बोल ॥ १३ ॥
प्रभू को भाव, जानत नित्यानन्द,
जब जेहि रुप होय।
गिरत समय, दोउ हाथ पसारि,
निज अंगहि प्रभु लेय ॥ १४ ॥
नित्यानन्द धरि, वीरासन करि,
महा प्रभु छिन बैठहि।
वाम कर सों ताली, देत कुतूहली,
हरि हरि प्रभु बोलहि ॥ १५ ॥
प्रेम भरे, प्रभु कहत आपुही
हमहि देवनारायन।
कंस संहारि, भए कंसारि,
बलिहि छल्यो हम वामन ॥१६॥
सेतु बंध बाध्यो, रावन मार्‌यो,
हमहि राघव राम।
करि हुंकार, कहि तत्व अपुनो,
नाचत नदिया धाम ॥१७॥
बिरलै बूझै तत्व, अचिंत्य महत्व,
छिन मँह कहत आन।

अतिदीन होई, 'प्रभु प्रभु' कहि,
मागहिं भगति दान ॥१८॥
जबहि जो करत, गौरांग सुन्दर,
सकल मनोहर लीला।
अपनो देह, अपनो चरन,
अगुली धरि खेला ॥१९॥

बैकुंठ को ईश्वर, प्रभु विश्वम्भर,
नाचत नदिया माँहि।
श्वेत द्वीप नाम, नदिया ग्राम,
पुराण कहत ताहि ॥२०॥

मजीरा मृदंग, करताल शंख,
बाजत बहुतहि बाजा।
महा हरिध्वनि, होत चहुँदिशि,
शोभित तँह द्विजराजा ॥२१॥

जय जय जय, नगर संकीर्तन,
जय विश्वम्भर नृत्य।
बीस पद गीत, चैतन्य चरित,
जय सब गौर भृत्य ॥२२॥

जेहि ओर देखत, श्री विश्वम्भर,
प्रेम सोई दिशि बरसै।
श्री कृष्ण चैतन्य, नित्यानन्द चाँद,
गावै वृन्दावनदासै ॥२३॥

शिव शिव नाचे विश्वम्भर ॥
अति सुमंगलम् शिवशिवोच्चारणम् ॥

बहुत नगर नदिया मँह अहई। नगर नगर अस उत्सव होई ॥
सकल लोक पति कीर्तन करई। हरि हरि कहि सब जन अनुसरई ॥
भेद अकाश जाय ध्वनि स्वर्गहि। सो सुनि गौर हर्ष अति पावहि ॥
बोल बोल प्रभु पुनि पुनि कहही। अति उल्लास अकाशहि उठही ॥
मत्त सिंह सम झूमत चलही। देखत अति हर्षित सब होहीं ॥
गंगातीर सो मारग अहई। सोइ मारग सो प्रभु चलि जाई ॥
बहुत नृत्य निज घाटहि कीन्हयो। पूनि मधाइ के घाटहिं आयो ॥
बारकोना नागरिया घाटहि। गंग पार होइ गए सिमूलहि ॥
कोटि दीप चहुँदिशि मँह जरई। कोटि कोटि जन हरि हरि कहई ॥
चन्द्र प्रकास अपूर्व करई। दिन वा रात न कहि सक कोई ॥

सकल सुमंगल द्वार सब, शोभा अतिही देत।
केला घट अरु दीप तहँ, सब कर मन हरि लेत ॥२७॥

देव सकल आकाश सो देखहिं। चम्पक पुष्प मल्लिका वर्षहिं ॥
पुष्प वृष्टि पृथ्वी पर होई। भूमि पुष्प मय सब लखि परई ॥
गौर चरन अति कोमल जानेउ। भूमि सुमन मय देवन कीन्हेउ ॥
श्री अद्वैत, वास, हरिदासा। आगे नृत्य करत सब दासा ॥
गौर नृत्य तेहि पाछे करहीं। नृत्य देखि सब जन सुख लहहीं ॥
नृत्य करत प्रभु जँह चलि जाहीं। सकल लोग निजकाज भुलाहीं ॥
लोग सकल प्रभु सन्मुख आवहि। निरखि चन्द्रमुख अति सुख पावहि ॥
करहि दंडवत युगल चरन धरि। नारी गन सब बोलत हरि हरि ॥
स्वामी सुत गृह काज बिसारी। मंगल गान करहिं सब नारी ॥
लक्ष कोटि नदिया पुरवासी। मगन कृष्ण रस मँह सुखरासी ॥

कोउ नाचत गावत कोऊ, हरि हरि बोलत कोउ।
भुइ मँह कोउ लोटत अहै, सुधि बुधि बिसरी कोउ ॥२८॥

मुख सो कोऊ वाद्य बजावै। काधे चढ़ि कोऊ सुख पावै ॥
चरन पकड़ि कोउ कर कोउ रोवै। अन्य चरन नयनन जल धोवै ॥
कोउ दण्डवत और को करई। कोउ अन्य सो झगड़ो ठानइ ॥
हमहि निमाई बोलत कोउ। "जगत उधारन हित हम आयउ" ॥
श्वेत द्वीप को वैष्णव हमही। ऐसे वचन कहत कोउ जनही ॥
श्री वैकुंठ पारषद हमही। प्रेम भरे कोउ जन अस कहहीं ॥
कोउ कहै काजी का करई। मिलै आज मारौ हम सोई ॥
पाषंडी धरिवे कोउ जावै। धरहु धरहु कहिकै अस धावै ॥
वृक्ष डाल पर चढ़ि कोउ बैठत। मिलि कै कोऊ इत उत कूदत ॥
क्रोध करत निंदक पर कोई। डाल काटि फेकै दिशि सोई ॥

पाषंडिन कर काल हम, कहै क्रोध करि कोउ।
शब्द अलौकिक जन कोउ, मुख सो भाखै सोउ ॥२६॥

यमराजहु बाधन कोउ धावै। यम दूतन यह बात सुनावै ॥
हे यमदूत, बात मम सुनऊ। यमराजहु सों तुम अस कहहू ॥
श्री नदिया अवतरेउ कृपाला। बिष्णु स्वयं प्रभु दीनदयाला ॥
कीर्तन करत नगर मँह सोई। हरी नाम वितरत जग अहई ॥
नाम प्रभाव सों यम पद पायो। नाम अजामिलहूँ को तारयो ॥
गौर नाम सब सो कहवायो। बधिरहु नाम सुनत सुख पायो ॥
जीवमात्र सब हरि हरि बोलत। तोर प्रभाव मिथ्यो हम भाषत ॥
चित्रगुप्त सो तुम अस कहऊ। पापीजन कर लेख मिटावउ ॥
नाम प्रभाव सों काशी जानहु। तीर्थ भयउ तुम दृढ़ करि मानहु ॥
श्वेतद्वीप बासी हू गावत। नाम प्रभाव महेशहु जानत ॥

सोइ नाम सुनु सब कोउ, कहत सुनत है आज।
सोइ नाम तुमहू कहउ, छाड़ि और सब काज ॥३०॥

भजहु गौर तजि पर अपकारा। नाहित करब तोर संहारा॥
बहुजन मिलि कै इत उत धावै। काजी कहाँ खोज नहि पावै॥
कीर्तन कह जो जन नहि मानै। आवहि सन्मुख तब हम जानै॥
पाषंडी कहि कोउ जन डोलै। करि हुंकार कोउ हरि बोलै॥
हरि उन्माद वशहि सब कोउ। कहत कहा जानत नहि कोउ॥
पाषंडी यह लखि सब जरही। मनही मन सबही मिलि कहही॥
"प्रभू करै काजी यहि आवै। तबही यह सब शिक्षा पावै॥
यह सब रंग दूर होइ जैहै। कीर्तन कर फल सबही पैहै॥
नृत्य गीत सबही तजि देहै। केला घट सबही लुटि जैहै॥
नाद सुनत काजी जब अइहै। गंगहि कूदि सबहि भगि जैहै॥

सुनहु मोहि कोउ कहै, बाधहु सब कँह जाइ।
काजी ढिग कोऊ कहै, चलहु सबै मिलि भाइ॥३१॥

उकोक है यह ठीक न भाई। कहत कोउ एक उक्ति बनाई॥
कीर्तन मँह सबही घुस जाउ। काजी आवत सबहि सुनाउ॥
भगि जैहै सबही सुनि भाई"। मन मोदक सब यहि विधि खाई॥
गौर भक्त कीर्तन रत अहहीं। पाषंडिन कर कोउ नहि सुनहीं॥
चंदन माल सबहि अंग सोहै। हरि कीर्तन सब कर मन मोहै॥
शेष नगर नदिया जो अहई। नाम सिमुलिया सब जन कहई॥
प्रभू चले सोइ दिशि सब लेई। हरि हरि सुनि सब हर्षित होई॥
करि हुंकार चले द्विज राजा। नयनन मँह जल कत छवि छाजा॥
निर्मल जल नयनन सो बहई। भावहि मँह आकाशहिं उठई॥
श्री निताई रोवहिं मति धीरा। प्रभुहि पकड़ि न सकत सोइ वीरा॥

आनन्द मँह श्री गौर प्रभु, जबहीं मुर्छित होय।
बहुत काल मुर्छित रहै, अचरज कर सब कोय॥३२॥

अस अपूर्व कौतुक लखि सब जन। प्रभु कँह सबही कहहि नरायन॥
कोउ नारद प्रह्लादहु कहही। "नही मनुष्य", कहि कोउ जन चलही॥
निज निज मति सब काहू कहही। तार्किक जन वैष्णव बड़ लखही॥
भक्ति-रसहिं प्रभु सुधि बुधि नाही। हाथ उठाइ हरो हरि कहहीं॥
श्री मुख वचन सुनत सब काहू। बोलत हरि सब भरे उछाहू॥
नृत्य करत जेहि दिशि प्रभु चलहीं। सकल लोग प्रभु के संग लगहीं॥
काजी गृह पथ पर प्रभु चलेउ। काजी कीर्तन नादहि सुनेउ॥
निज जन सो काजी तब पूछेउ। होत कोलाहल कैसो सुनउ॥
का विवाह काहू कर होई। भूत लोग को कीर्तन करई॥
मम आज्ञा उल्लंघन करई। कीधौ कीर्तन कर सब कोई॥

शीघ्र जाइ देखहु सबहि, आइ कहहु मोहिं पाहिं।
पकड़ब हम सब जाइकै, भाग नही यदि जाहिं॥३३॥

काजी वचन सुनत सब धाए। आपन मन्त्र जपत भय पाए ॥
मारहु काजी सब जन कहही। भय सों पगड़ी खोलत सबही ॥
दौड़ सबहि काजी पँह गयउ। चलहु भागि तेहि ते सब कहेउ ॥
कोटि कोटि जन यहि दिशि आवत। संग निमाई पंडित लावत ॥
का करिहै कछु बूझ न पड़ई। लाख लाख दीपक सब जरई ॥
लाख लाख निज मन्त्रहि बोलत। होत कोलाहल मम मन डोलत ॥
द्वार द्वार केला घट पल्लव। मार्ग पुष्प मय होत महोत्सव ॥
मुद्रा पुष्प अरु लावा देखहु। मारग मँह कत पड़ो विलोकहु ॥
वाद्य सुनत दोउ कानहु फारत। नदिया मँह यहि विधि सब धावत ॥
राजा आवन पर नहि कबहू। एसो उत्सव कबहु न भयहू ॥

श्री निमाइ पंडित सुनहु, भावुक बड़ सब माहि।
तेहि पाछे सबही चलत, नृत्य करत जँह जाहि ॥३४॥

नगर निवासिन को जेहि हमही। मार्‍यो कीर्तन हित हम सबही ॥
आज सकल आवत है धाई। "काजी मारहु' वचन सुनाई ॥
अस हुंकार करहि विश्वम्भर। मनहु भूत निज काजहि तत्पर ॥
कोउ कहै बाभन किमि रोअत। नयनन जल सो सब अंग धोअत ॥
कोउ कहै बाभन जो गिरई। लगत चोट ताही सो रोवई ॥
कोउ कहै देखत तेहि ओरा। अति भय सो डरपत मन मोरा ॥
मोहि भक्षन हित मानहु आवत। देखत ही मेरो अंग कांपत ॥
बात बनाई काजी अस कहई। हम अनुमान करत अस अहई ॥
व्याह करन पंडित जनु चलई। लै बरात कोउ दिशि सो जाई ॥
यदि नाही मम आज्ञा मानत। हठ करि अपनो धर्महि पालत ॥

तौ हम नगरी जाइ करि, लइहौ सब कर जाति।
पालब हम निज धर्म कँह, होइ है मेरी ख्याति ॥३५॥

काजी यहि विधि युक्ति विचारत। महा कोलाहल करि सब आवत ॥
सर्व लोक पति प्रभु विश्वम्भर। काजी गृह आवत जगदीश्वर ॥
लक्ष लक्ष जन हरि हरि बोलत। नाद सकल दिशि माँही व्यापत ॥
डर कर काजी लै सब भागत। सर्प डरहि जिमि मूसा धावत ॥
सकल स्थान प्रभु गण सो भरेउ। भय सो कोउ भागि न सकेउ ॥
पाग उतारि कोउ मिलि जाही। कीर्तन करहि डरहि मन माही ॥
जेहि को दाढी सोउ नाचहिं। मुँह नीचो करि कै भय मानहिं ॥
अनगिनती जन को केहि चीन्हत। सुधि नहि तन की हरि हरि बोलत ॥
सबही जन नाचहि अरु गावहिं। सकल भुवन हरि नाम सो पूरहिं ॥
काजी द्वार जाइ विश्वम्भर। कर हुंकार क्रोध सो बहुतर ॥

क्रोधित होइ प्रभु इमि कहेउ, काजी कहां बोलाउ।
माथा काटौ ताहि कर, पकड कोउ लै आउ ॥३६॥

सकल भवन निर्यवनहिं करउ। काल यवन जिमि पूर्वहि मारेउ ॥
द्वार बन्द करि काजी भागेउ। तोड़हु घर प्रभु सब सन कहेउ ॥
प्रभु अन्तर्यामी सब जानत। प्रभु आज्ञा सवही जन मानत ॥
भक्त सकल जन प्रभु आवेशहि। आज्ञा सुनि सबही जन धावहि ॥
कोउ घर कोऊ द्वारहि तोड़त। क्रोध भरे कोउ लातहि मारत।
फल के वृत्त की डारहि तोड़हि। कदली वृत्त उपारि कै फेकहि ॥
पुष्प वाटिका मँह सब जाई। वृत्त उपारि फेकत हर्षाई ॥
पुष्प सहित डालहि लै तोड़हि। हरि हरि कहि सबही जन नाचहि ॥
आम्र आदि फल डारहि तोड़हि। करि हुंकार क्रोध सो बोलहि ॥
एकहु पत्र तहाँ नहिं छोड्यो। बाहर को गृह सवही तोड्यो ॥

"देहु अग्नि", प्रभु तब कहेहु, गृह के भीतर जाई।
सकल लोग संग सो मरै, कोउ नहि निकसन पाई ॥३७॥

घर को घेरि कै आग लगावहु। भागै नहिं कोउ तुम सब देखहु ॥
देखहु वाको नरपति आई। कहा बिगाड़े मेरो भाई।
यम अरु काल मृत्यु सब सुनहू। मम सेवक को दासहि जानहु ॥
हमहि प्रकाश करौ सब देखहि। संकीर्तन हित यह अवतारहि।
जो विरोध कीर्तन कर करई। तेहि मारब निश्चय हम कहई ॥
यदि पापी हू कीर्तन करिहै। तेहि कर खोज सदा हम लेइहै ॥
संन्यासी तपसी अरु ज्ञानी। योगी आदि सकल जन मानी ॥
यदि कीर्तन ये जन ना करिहै। हम इनकर निश्चय संहरिहै ॥
अग्नि देहु सब जनि भय मानहु। सकल यवन हम आजहि मारहु ॥
प्रभु कर क्रोध देखि सब भक्तहि। माथ नवाइ पड़े प्रभु चरणहि ॥

हाथ उठाई के भक्त जन, विनती कर कर जोर ॥
तव प्रधान अंशहि अहै, संकर्षण प्रभु मोर ॥३८॥

तेहि कर क्रोध अकाल न करहू। बात सकल भक्तन की सुनहू ॥
सृष्टि संहार समय जब होइहै। तबै क्रोध संकर्षण करिहै ॥
तासु क्रोध सो रुद्रहि उपजत। छिन मँह सो सृष्टी संहारत ॥
पुनि सो तव शरीर मँह प्रविशै। अंश तोर प्रभु जग कँह नाशै।
करिहौ क्रोध प्रभू यदि तुमही। तौ बचिहै को यहि जग माही ॥
अक्रोध आनन्दमय तुमही। गावत वेद पुराणनन सबही ॥
वेद वाक्य मेटहु प्रभु नाही। क्रोध न सहि सक कोउ जगमाही ॥
सृष्टि स्थिति अरु प्रलय जो होई। केवल तव लीला जग अहई ॥
काजी को अपमान तो कीन्ह्यो। यदि पुनि करे तो ताहि संहारयो ॥
जय विश्वम्भर राज राजेश्वर। लोकनाथ प्रभु श्री गौर सुन्दर ॥

अनन्त शयन जय जयति प्रभु, रमाकान्त जगदीश।
स्तुति करि भक्तन तव कहेउ, प्रभु तुम सब के ईश ॥ ३६ ॥

हाथ उठाई भक्त स्तुति करहीं। सकल महंत प्रभू पद पड़ही ॥
दास वचन सुनि कै प्रभु हँसेउ। हरि कहि तुरत तहाँ ते चलेउ ॥
दंड देइ काजी प्रभु फिरेऊ। कीर्तन मगन सकल जन चलेउ ॥
शंख ताल मृदंग मजीरा। राम कृष्ण गावत सब वीरा ॥
काजी को गृह तोड़ि सबहि जन। हरि कहि नृत्यत चले मुदित मन ॥
पाषंडी उदास सब भयऊ। वैष्णव रंग देखि जरि मरेऊ ॥
जय मुकुन्द जय जय वनमाली। गावत सब बाजत करताली ॥
सकल नगरवासी जय कहहीं। प्रेम सिंधु मँह सब जन बहहीं ॥
कोउ नहि जानत को कँह नाचत। कहवाँ जात कौन दिशि धावत ॥
नृत्य करत भक्तन सब चलहीं। पाछे नृत्य गौर प्रभु करहीं ॥

ब्रह्मा शिव कीर्तन करत, नृत्य करत श्री गौर।
जगदीश्वर श्री गौर हैं, देवन के सिर मौर ॥४०॥

या मँह कछु संदेह न मानहु। निज मुख श्री गौरांग बखानेहु ॥
लक्ष लक्ष जन संग विश्वम्भर। शंख बनिकपुर गए विप्रवर ॥
अति आनन्द नगर मँह भयउ। हरि हरि कहि सब वाद्य बजायउ ॥
पुष्प सकल जन वर्षन लागे। नृत्य करत विश्वम्भर आगे ॥
चहुँ दिशि दीप जरत अति सुन्दर। कीर्तन करत तहां विश्वम्भर ॥
द्वार द्वार केला घट नरियल। हरि कहि नारी करत कोलाहल ॥
तन्तु वाय पुर प्रभु तब गयउ। हरि हरि कहि नाचत सब भयउ ॥
हरि हरि कहत सकल जन गावहि। हरी नाम सुनि प्रभु सुख पावहिं ॥
श्री धर के गृह प्रभु तब गयउ। टूटो मड़ई प्रभु तँह पायउ ॥
तेहि के द्वार जबहि प्रभु आयउ। लौह पात्र तहवां एक देखेउ ॥

तेहि के आंगन गौर प्रभु, नृत्य करत सुखमान।
देख्यो जल को पात्र तँह, गौर चन्द्र भगवान ॥ ४१ ॥

भक्त प्रेम प्रभु चहत दिखाई। पात्र सोइ प्रभु लियो उठाई ॥
पान कियो जल अति हर्षाई। करै निवारण अस को भाई ॥
"मर्यो मर्यो" कहिं श्रीधर बोलत। "मोहि मारन मेरे गृह आवत ॥
अस कहि श्रीधर मूर्छित भयउ। "शुद्ध भयउ हम" प्रभु अस कहेउ ॥
आज कृष्ण भक्ती हम पाई। पियहु तोर जल अति हर्षाई ॥
कहत कहत प्रभु नयनन झरई। वैष्णव जल सों भक्ती होई ॥
जन शिक्षा हित जगत सिखावत। हरि हरि कहि भक्तन सुख पावत ॥
भक्त वत्सलता प्रभु कर देखी। भयहु सबहि आनन्द विशेखी ॥
निताई गदाधर रोअन लागे। श्री अद्वैत वास सुख पागे ॥
गंगादास हरिदासहु रोवहि। वक्रेश्वर मुरारि कछु बोलहि ॥

श्री शेखर गोविन्द अरु, काशीश्वर मतिमान।
प्रेम को क्रंदन सब करत, जगदीशहु श्रीमान् ॥ ४२ ॥

जगदानन्द, गर्भ, शुक्लाम्बर। श्री गरुड़ाइ भक्त परमेश्वर॥
नयनन सो जल सबके बहई। हाथ उठाइ के सबही कहई॥

"गौर कृष्ण हैं ठाकुर मेरे, प्रभु अनाथ के नाथ।
प्रभु हम सब तुमरे शरण, तुम हौ दीनानाथ॥

कहा भयउ श्रीधर के घरही। प्रभु लीला कोउ जान न सकहीं॥
गौर चरित सब नयनन देख्यो। प्रेम भक्ति पूरण परकाश्यो॥
कृष्ण कृष्ण कहि सब कोउ गावहि। काज सिद्धि लखि प्रभु सुख पावहि॥
भक्तन की महिमा सब देखेहु। प्रभु की कृपा भक्त पर जानेहु॥
लौह पात्र को जल सब कोउ। पान कियो आदर सो सोउ॥
जल पीवन इच्छा भइ जबही। भयो अमृत सम जल सोई तबही॥
भक्ति बढ़ावन हित भक्तन जल। वैष्णव को सबही कछु निर्मल॥
रत्नपात्र दाम्भिक के पाही। भरो सुगंधित जल तेहि मांही॥

पीवन को तेहि को कहा, देखत नहि प्रभु ताहि।
सेवक को लघु द्रव्यहू, प्रेम भरे प्रभु खाँहि॥ ४३॥

भक्त निकट प्रभु विधि नहि देखत। विन अर्पे प्रभु भोग लगावत॥
अल्प समुझि कै भक्त न देवै। बरजोरी करि प्रभु सो लेवै॥
दीन सुदामा सब कोउ जानत। प्रभु सुख सो सोइ तंडुल पावत॥
अवशेषहु लै प्रभु सुख मानत। शाक युधिष्ठिर सब जग जानत॥
सेवक प्रभु को सब कछु अहइ। माता पिता पुत्र अरु भाई॥
दास बिना प्रभु और न कोई। जो जेहि भाव भजै प्रभु होई॥
दास कृष्ण कँह बेचहु सकई। सेवक वत्सल वेदहु कहई॥
सेवक निकट सदा प्रभु रहहीं। भक्त प्रभाव देख जग सबहीं॥
दास भाव सो कृष्णहि भजहू। दास भाव को लघु जनि गिनहू॥
कृष्ण दास अस नाम जो पावत। भाग्यवान जग मँह सब मानत॥

अल्प भाग सो दास नहि, कबहु करैं भगवान।
दास नाम शिवहू चहत, दास करत कल्यान॥ ४४॥

जे निज धर्म जन्म बहु पालत। हिंसा रहित कपट नहि जानत॥
दास्य भाव जो चिन्तन करई। नारायण कहि प्राण जो तजई॥
मुक्त होइ सब बंध विनाशत। कृष्ण दास पद तब सोइ पावत॥
भाष्यकार यह व्याख्या करई। मुक्त सकल श्री कृष्णहि भजई॥

तथा चोक्तं सर्वज्ञै भाष्य कृभिः—
मुक्ता अपि लीलया विग्रहं कृत्वा भगवंतं भजन्ते॥

कृष्ण समान भक्त सब अहई। भक्त निकट प्रभु हारहु जाई॥
जगत माँझ जो कछु बड़ मानहु। भक्त नाम सो बड़ मत जानहु॥
दास नाम ब्रह्मा शिव चाहत। धरनी धरेन्द्रहु सोइ भावत॥
ए सब ईश्वर तुल्यहि अहई। तदपि भक्त पद मन सो चाहइ॥

श्री अद्वैतहि प्रभु कँह कोई। भक्त नाम सो यदि कोउ कहई ॥
यह सुनि बहु पापी दुःख पावत। कर्म दोष सो नरकहि भोगत ॥

भक्त नाम श्री कृष्ण को, अतिही प्रिय सब जान।
कृष्णचन्द्र बिन भक्त को, यहि जग को पहिचान ॥ ४५ ॥

उदर भरन हित पापी जनही। निज कँह ईश्वर कहि जग ठगही ॥
पशु सम शिष्य बहुत संग लेई। हम रघुनाथ भजौं अस कहई ॥
नश्वर देह लेइ कै कोई। माया वश ईश्वर हम कहई ॥
सबके प्रभु है श्री शची नन्दन। देखहु शक्ति तासु भरि लोचन ॥
इच्छा सो कत वैभव भयउ। कोटि दोष इक संग जरि गयउ ॥
द्वार द्वार को केला बावेउ। पुष्प वृष्टि मग महँ को कीन्हेउ ॥
श्रीधर को जलपान करत ही। प्रेम वृष्टि भइ को कहि सकही ॥
भक्त वत्सलता लखि सब हर्षित। लोटत भुई मँह तनु अति पुलकित ॥
केश न बाधि सकत है कोई। श्रीधर तृण धरि रोअत अहई ॥
ऊँचे स्वर सो हरि हरि कहई। नयनन सों जल तेहि के बहई ॥

कौन सो जल प्रभु पान किय, श्रीधर कहि दुःख पाय।
हाय हाय कहिकै सोई, नयनन नीर बहाय ॥ ४६ ॥

भक्त जलहि पीकर विश्वम्भर। श्रीधर आँगन नाचत द्विजवर ॥
प्रभु कँह घेरि भक्त जन नाचहि। निताइ गदाधर दोउ दिशि राजहिं ॥
देखत श्रीधर कर सौभाग्यहि। शिव विरंचि सब देव सराहहि ॥
धन जन विद्या सो सुनु सबही। कृष्ण न मिलहि कहत बुध अहही ॥
केवल भक्ती सो प्रभु मिलई। भक्ती वश प्रभु नितही रहई ॥
कीन्ह कृपा श्रीधर पर जाई। पियहु तासु जल गौर अघाई ॥
पुनि श्री गौर नगर मँह आए। भक्ती रसहि मगन मन भाए ॥
हरिध्वनि चहू ओर सो होई। सुर पुर सम नदिया पुर लगई ॥
हरी नाम सब काहू कहई। नाम भिन्न कोउ और न बोलई ॥
जेहि सुख मँह नारद शुक विह्वल। नदिया वासी सोइ सुख पागल ॥

सब नदिया मँह गौर प्रभु, नाचत अति हर्षाय।
गादी, डांगा होइ कै, प्रभु निज मारग जाय ॥ ४७ ॥

एक निशा अस कोउ जनि जानउ। गयउ कल्प कत सेइ निशि मानउ ॥
कछु न असम्भव श्री चैतन्यहि। भृकुटि विलास जासु लय होइहि ॥
भाग्यवान यह तत्वहिं जानत। पापी तार्किक कछु नहि मानत ॥
श्री वैकुंठ पती जहँ नृत्यहि। परमानन्द तहाँ सब पावहिं ॥
गर्जन अरु हुंकार प्रेम जल। प्रभु दर्शन करि लहहि जन्म फल ॥
शची चरन वंदन कोउ करहीं। जासु गर्भ सो प्रभु अवतरहीं ॥
पुण्यवंत श्री मिश्र पुरन्दर। नदिया भाग्य सराहहि कोउ नर ॥
स्तुति करि सबही जय जय करही। हरि हरि कहि आकाशहि भरही ॥

देखि गौर सब करहिं प्रणामा। भुइ मँह धरि शिर सब निष्कामा ॥
कृपा दृष्टि प्रभु सबहि बिलोकहि। आनन्द सो हरि हरि सब बोलहिं ॥
प्रभु लीला को अंत नहि, कहत भक्त समुदाय।
आदि अन्त केवल सुनहु, श्रुति पुराण अस गाय ॥ ४८ ॥
जहाँ जौन विधि भक्तन ध्यावहिं। सोइ रूप धरि प्रभु तँह आवहिं ॥

तथाहि (भा० ३-९-११)

यद यद्धिपात उरुगाय। विभावयन्ती
तत्तद्वपु, प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥

अनुवाद

हे प्रभो शास्त्रों में आपके नाना रूप कहे गए हैं। आपके भक्त लोग जिस मुर्ति का ध्यान करते हैं आप उनके सन्मुख उसी रूप से प्रगट होते हैं ॥

आजहु प्रभु सोइ लीला करही। भाग्यवान जन सबही कहही ॥
मध्य खंड की कथा सोहाई। अन्तर मल जेहि सुनत नसाई ॥
भक्त हेतु प्रभु कर अवतारा। प्रभु भक्तन कर है रखवारा ॥
वहुत जन्म जप तप कर कोई। भक्ति विना कछु फल नहि होई ॥
भक्तन की सेवा जो करई। प्रभु भक्ती निश्चय तेहि देई ॥
भक्तन की सेवा बड़ अहई। सकल शास्त्र यह निर्णय करई ॥
आदि देव जय निताइ ठाकुर। जेहि की कृपा भक्ति उपजै उर ॥
श्री निताई बलराम समाना। कह न कोउ यह सब जग जाना ॥
कोउ जन बहु विचार अस कहही। श्री चैतन्य बड़ो प्रिय अहहीं ॥
तेज अंश कोउ कहै, बड़ अधिकारी कोई।
"बूझि न सक", कोउ कहत, बड़ो रूप कोउ होई ॥ ४९ ॥
जो इच्छा जेहि की सो कहई। जीव निताई कँह कोउ बूझई ॥
कोउ भक्त कोउ ज्ञानी लखई। जो इच्छा सोई सब कहई ॥
श्री निताई अरु श्री चैतन्यहि। बहु जन दोउ पृथक करि मानहि ॥
तबहु निताई जीवन मेरो। रहौं सदा मैं उनको चेरो ॥
एतेहु पै जो निन्दा करही। लात हनब हम शिर पर तेही ॥
श्री चैतन्य भक्त जे अहहीं। चरण कमल बंदौ हम सबहीं ॥
श्री अवधूत चन्द्र प्रभु मानहु। श्री चैतन्य कृपा तेहि जानहु ॥
श्री निताइ जब देहि जनाई। तबहि गौर कँह जानब भाई ॥
श्री निताइ अरु गौर गोपाला। राम लखन को रूप कृपाला ॥
श्री निताइ अरु गौरहि मानहु। बलदाऊ अरु कृष्णहि जानहु ॥
नित्यानंद स्वरूप कँह, गौर भक्त सब जान।
गौर भक्ति जानत सोई, करहिं गौर गुण गान ॥ ५० ॥
गौर प्रधान भक्त जे अहहीं। श्री निताई जानत सब तेहीं ॥
आपस में दोऊ प्रभु मानहि। रंग करत दोउ प्रभु को बूझहि ॥

देखि गौर सब करहिं प्रणामा । भुइ मँह धरि शिर सब निष्कामा ॥
कृपा दृष्टि प्रभु सबहि बिलोकहिं । आनन्द सो हरि हरि सब बोलहिं ॥
प्रभु लीला को अंत नहि, कहत भक्त समुदाय ।
आदि अन्त केवल सुनहु, श्रुति पुराण अस गाय ॥ ४८ ॥
जहाँ जौन विधि भक्तन ध्यावहिं । सोइ रूप धरि प्रभु तँह आवहिं ॥
तथाहि (भा० ३–१–११)
यद् यद्धिपात उरुगाय । विभावयन्ती
तत्तद्वपु, प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥

अनुवाद

हे प्रभो शास्त्रों में आपके नाना रूप कहे गए हैं। आपके भक्त लोग जिस मुर्ति का ध्यान करते हैं आप उनके सन्मुख उसी रूप से प्रगट होते हैं ॥

आजहु प्रभु सोइ लीला करही । भाग्यवान जन सबही कहही ॥
मध्य खंड की कथा सोहाई । अन्तर मल जेहि सुनत नसाई ॥
भक्त हेतु प्रभु कर अवतारा । प्रभु भक्तन कर है रखवारा ॥
बहुत जन्म जप तप कर कोई । भक्ति विना कछु फल नहि होई ॥
भक्तन की सेवा जो करई । प्रभु भक्ती निश्चय तेहि देई ॥
भक्तन की सेवा बड़ अहई । सकल शास्त्र यह निर्णय करई ॥
आदि देव जय निताइ ठाकुर । जेहि की कृपा भक्ति उपजै उर ॥
श्री निताई बलराम समाना । कह न कोउ यह सब जग जाना ॥
कोउ जन बहु विचार अस कहही । श्री चैतन्य बड़ो प्रिय अहहीं ॥
तेज अंश कोउ कहै, बड़ अधिकारी कोई ।
"बूझि न सक", कोउ कहत, बड़ो रूप कोउ होई ॥ ४६ ॥
जो इच्छा जेहि की सो कहई । जीव निताई कँह कोउ बूझई ॥
कोउ भक्त कोउ ज्ञानी लखई । जो इच्छा सोई सब कहई ॥
श्री निताई अरु श्री चैतन्यहि । बहु जन दोउ पृथक करि मानहि ॥
तबहु निताई जीवन मेरो । रहौं सदा मैं उनको चेरो ॥
एतेहु पै जो निन्दा करही । लात हनब हम शिर पर तेही ॥
श्री चैतन्य भक्त जे अहहीं । चरण कमल बंदौ हम सबहीं ॥
श्री अवधूत चन्द्र प्रभु मानहु । श्री चैतन्य कृपा तेहि जानहु ॥
श्री निताइ जब देहि जनाई । तबहि गौर कँह जानब भाई ॥
श्री निताइ अरु गौर गोपाला । राम लखन को रूप कृपाला ॥
श्री निताइ अरु गौरहि मानहु । बलदाऊ अरु कृष्णहि जानहु ॥
नित्यानंद स्वरूप कँह, गौर भक्त सब जान ।
गौर भक्ति जानत सोई, करहिं गौर गुण गान ॥ ५० ॥
गौर प्रधान भक्त जे अहहीं । श्री निताई जानत सब तेहीं ॥
आपस में दोऊ प्रभु मानहि । रंग करत दोउ प्रभु को बूझहि ॥

यहि ते एक पक्ष कोउ लेई। दूसर कर निन्दा सो करई ॥
मरत सोइ जन पापी अहई। वृथा पाप निज माथे लेई ॥
सर्व भाव सों कृष्णहि भजई। निन्दा काहू कर नहि करई ॥
उत्तम वैष्णव सोई अहई। एक भाव सों सबही भजई ॥
श्री अद्वैत चरण हम वंदहु। तिनके सेवक कँह हम मानहु ॥
जय श्री गौर भक्त सह कहहीं। सुनत कथा भक्ती सब लहहीं ॥
श्री अद्वैत पक्ष कोउ लेई। करत गदाधर निन्दा सोई ॥
श्री अद्वैत भक्त नहि सोई। अधम नारकी पापी अहई ॥

मधुर कथा श्री गौर की, सुनहु भक्त सब कोइ।
सुनत सुखी जे होत हैं, देखहि प्रभु मुख सोइ ॥

श्री चैतन्य निताई ध्यावौ। वृन्दावन प्रभु यश कछु गावौ ॥
श्री चैतन्य चरण मन दीन्हें। वृजभूषण सेवा गेह कीन्हे ॥

॥ इति श्री चैतन्य भागवते मध्यखंडे श्री काजीदमन तथा श्रीधरजल पान वर्णनं नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥

त्रयोविंश अध्यायः

जय जय गौरसिंह महाधीर।
जय जय शिष्ट पाल जय महावीर ॥
जय जगन्नाथ सुत श्री शचीनन्दन।
जय जय जय पूण्य श्रवण कीर्तन ॥
जय जय श्री जगदानन्द के जीवन।
जय हरीदास काशीश्वर प्राणधन ॥

कृपा सिंधु दीनन हितकारी। सबके प्रभु तुम्हरी बलिहारी ॥
"हम तुम्हरे", अस जो कोउ कहई। तेहि के नाथ होइ तुम रहई ॥
यहि विधि नवद्वीप सुरराया। कीर्तन प्रगट करत मन भाया ॥
हरि कीर्तन मय अस प्रभु रहही। नाम सुनत भूमी पर गिरही ॥
जहाँ तहाँ प्रभु घूमत रहई। नयनन सों जल अविरत बहई ॥
निज जन रक्षा प्रभु कर करही। संग सदा सब प्रभु के रहही ॥
कोउ कारण यदि कोउ हरि कहई। सुनतहि बेसुध होइ प्रभु गिरई ॥
महाकंप, अश्रू, पुलकावलि। सारग सँह लोटहि हरि हरि कहि ॥
प्रभु आवेश दरश कँह पाई। ब्रह्मा निज कँह धन्यहि गाई ॥
सोइ देखत नदिया पुरवासी। धन्य धन्य सब नगर निवासी ॥

मुर्छा प्रभु की देखि कै, सकल भक्त जन आय।
प्रभु को लै गृह कँह चले, हरि हरि कहि सब जाय ॥१॥

Vrindavan Das
Govind Kund, Vrindavan
Nityanandu Baba Ashram

द्वार बंद करि कीर्तन करही । सो सुख कहि न सकत कोउ कबहीं ॥
प्रभुकर भाव समुझि को सकई । अति विचित्र को जान न पावई ॥
कबहु कहहिं 'हम मदन गोपाला' । छिनहि कहहिं हम भक्त कृपाला ॥
गोपी गोपी कोउ दिन जपहीं । कृष्ण नाम सुनि कै प्रभु कहहीं ॥
कौन कृष्ण सो दस्यू अहई । अतिही शठ, लंपट सब कहई ॥
तेहि कर भजन कौन जन करई । स्त्रीकर नाक कान जो हरई ॥
व्याध समान बालि जो मारयो । चोरन कर मोहि भजन न भायो ॥
कृष्ण नाम यदि कोउ जन लेई । तेहि को मारन हित प्रभु चलई ॥
मथुरा मथुरा कबहू जपई । कबहु भूमि पर नख सो लिखई ॥
कृष्ण मूर्ति भुई अंकित करई । ताहि देखि नयनन जल बहई ॥

कबहु कहहि, सुन भाइ सब, देखेहु हम बन एक ।
सिंह, व्याघ्र, भालू तहाँ, जीव जंतु बहु भेक ॥२॥

भक्ति भाव वश अटपट गुनही । दिन कँह रात रातदिन कहहीं ॥
प्रभु आवेश देखि सब भक्तहि । गला पकड़ि सब अश्रु बहावहि ॥
ब्रह्माहू यह दर्शन चाहहि । वैष्णव कर दासहु सोइ पावहि ॥
निज गृह छाड़ि गौर विश्वम्भर । भक्तन गृह प्रभु रहहि निरंतर ॥
स्वस्थ प्रभू कँह कबहू पावहु । सो केवल माता हित जानहु ॥
सुखमय भए भक्तगण सबही । बिना प्रभू कीर्तन सब करही ॥
सब नदिया निताई प्रभु भ्रमहीं । घर घर गौर नाम प्रभु कहहीं ॥
रहहि गदाधर प्रभु संग नितही । श्री अद्वैत भक्त संग भजही ॥
श्री अद्वैत एक दिन घरही । गोपी भावहि नाचत रहही ॥
कीर्तन करत भक्तगण सबही । प्रेम भरे कीर्तन प्रभु करहीं ॥

पुनि पुनि तृणधरि दसन मँह, गिरहि भूमि पर आय ।
लोटहि भुइ मँह प्रेम सों, गावत सब हर्षाय ॥३॥

प्रहर दोइ प्रभु नाचत रहेउ । भक्त सकल गावत थकि गयउ ॥
सब मिलि प्रभु कँह शांत करायउ । घेरि अचारज सबही बैठेउ ॥
कछु स्थिर होई आचारज रहेउ । श्री वासादि स्नान को गयउ ॥
प्रेम आचारज कँह पुनि बाढ़ेउ । श्री वास आँगन लोटन लागेउ ॥
श्री निमाई निज गृह मँह रहेउ । प्रभू अंतर्यामी सब जानेउ ॥
भक्त आर्ति प्रभु पूरण करही । आए प्रभु अद्वैत निकटही ॥
अति दीनता ताहि कर देखेउ । हाथ पकड़ि प्रभु तेहि कर बैठेउ ॥
बैठे प्रभु हरि मंदिर द्वारहि । हँसि कै श्री अद्वैत सों पूछहि ॥
आचारज कहु का तुम चाहहु । कहेउ आचारज, "तुम कँह पावहु" ॥
कहेउ गौर हम सन्मुख अहउ । चाहहु और कहा मोहि कहउ ॥

"सत्य कहेउ", अद्वैत कह, तुम हौ वेद स्वरूप ।
तदपि विभव देखन चहौं, प्रभु हौ मंगल रूप ॥४॥

गौर कहेउ, निज इच्छा कहउ। श्री अद्वैत कहेउ प्रभु सुनउ ॥
अर्जुन कँह जो रूप देखायउ। सोइ रूप प्रभु देखन चाहउ ॥
कहतहि आचारज रथ देखेउ। चहुँदिशि सैन्य बहुत अवलोकेउ ॥
श्री कृष्णहि रथ पर तँह शोभित। चार भुजा सब आयुध संयुत ॥
बहु ब्रह्माण्ड देह मँह देखेउ। चंद्र सूर्य आदिक अवलोकेउ ॥
कोटिन चक्षु बाहु मुख देखई। सन्मुख अर्जुन स्तुति तँह करई ॥
महा अग्नि सम सब अंग बरई। दुष्ट पषंडी तेहि मँह जरई ॥
जो पापी पर निन्दा करई। गौर मुखाग्नि मँह सो दहई ॥
गौर विराट रूप जो अहई। यह देखन कोउ शक्ति न धरई ॥
प्रभु की कृपा अचारज देखेउ। प्रेम अश्रु सो सब अंग भीजेउ ॥

मुख मँह तृण को लेइ कै, माँगत दोउ कर जोरि।
दास बनावहु मोहिं प्रभु, जग से रहुँ मुख मोरि ॥५॥

श्री निताइ आनन्द सों भ्रमहीं। नदिया मँह सब सो हरि कहहीं ॥
"गौर गौर", कहि इत उत फिरहीं। गौर नाम केवल सों जपहीं ॥
प्रभु प्रकाश जान्यो सो सबही। आयो तुरत जहाँ प्रभु अहही ॥
द्वार आइ गर्जन सो लाग्यो। द्वार खोलि प्रभु भीतर आयउ ॥
गौर विराट रुप सो देखेउ। करि दण्डवत चरण पर गिरेउ ॥
गौर कहेउ, "प्रिय उठहु निताई। जानहु मोहि भले तुम भाई ॥
तुम सों प्रीति जोइ जन करिहैं। हम निश्चय तेहिके होइ रहिहैं ॥
तुम अरु श्री अद्वैत में कोई। करै भेद मूरख जन सोई ॥
वह अवतार को मर्म न जानत। मिथ्या ही सब दोष लगावत ॥
शुचि वैष्णव कह सम करि मानउ। भेद भाव तिन मँह जनि आनउ ॥

विश्वरूप लखि दोउ जन, परेउ भूमि हर्षाय।
गर्जन कर कह गौर प्रभु, दर्शन कर सब आय ॥६॥

"देखहु देखहु" प्रभु इमि कहही। "प्रभू प्रभू" कहि दोउ स्तुति करही ॥
विश्वमूर्ति लखि आनन्द भारी। प्रेम विवश तनु दशा विसारी ॥
यह कौतुक सब नदिया होई। तदपि अन्य कोउ देखि न सकई ॥
निज मुख श्री अद्वैतहि कहेउ। जो नहिं मानै पापी सोउ ॥
सर्व महेश्वर गौरहि जोई। मानै नहि पापी जन सोई ॥
हमरे प्रभु कर प्रभू निताई। यहै भरोसा दृढ़ मोहि भाई ॥
सब प्रकाश नदिया मँह होई। भक्त बिना जानै नहि कोई ॥
भक्ति योग धन-धन है भक्ती। कृष्ण स्मरण अरु मन नहि भक्ती ॥
कृष्ण कहत अश्रु जल बहई। तेहि कँह कृष्ण मिलत बुध कहई ॥
धन कुल कछु नहिं यहि संसारा। कृष्ण भजत बिनु सकल असारा ॥

मध्य खण्ड की कथा है, अमृत सम तेहि जान।
सुनत प्रेम सों जोइ जन, पावत भक्ति महान ॥७॥

विश्वरूप की कथा जो सुनई। कृष्णचन्द्र निश्चय तेहि मिलई ॥
च्ञण मँह प्रभु सोइ रूप निवारयो। भक्तन संग निज भवन पधारयो ॥
विश्वरूप लखि दोउ जनही। प्रेम विवश सुधि बुधि नहि तिनही ॥
मत्त विभव दर्शन सुख माहीं। आंगन मँह लोटहिं सुख पाहीं ॥
कोउ नाचत कोउ गावत अहहीं। झूमि-झूमि घूमत दोउ जनहीं ॥
महाकुतूहली दोऊ अहहीं। झगड़ो करन लगे सोइ तबहीं ॥
श्री अद्वैत कह्यो प्रभु पाहीं। "कौन बोलायो तोहिं यहि ठाहीं ॥
मतवालो अवधूत हौ तुमहीं। द्वार खोलि आयो किमि घरहीं।
संन्यासी तुमहीं को कहई। सकल जाति घर खायो तुमहीं ॥
तुमरो जाति अहै को कहई। वैष्णसभा काज नहिं कोई ॥

भागहु झट यहि भवन सों, नहिं होइहै भल तोर।
सुनत निताई इमि कहयो, देखहु अपनी ओर ॥८॥

यदि प्रताप तुम मोहि दिखैहौ। ताकर फल तुम निश्चय पैहौ ॥
बूढ़ो बाभन कर भय नाई। हम अवधूत गौर कर भाई ॥
परम कुटुम्बी तुम संसारी। परम हंस पद हम अधिकारी ॥
हम मारौ तुम बोलि न सकउ। हम सन वृथा गर्व तुम करउ ॥"
सुनि अद्वैत क्रोध सों भरई। होइ दिगम्बर अटपट कहई ॥
"मत्स्य, माँस खावहु तुम सबही। कैसो संन्यासी तुम अहई ॥
वस्त्र उतारि भयउ दिगवासी। वैसेहि तुम यहि जग संन्यासी ॥
माता-पिता कहां तव अहई। कौन देश कहवाँ तुम रहई ॥
कहहु कौन तोहि जानत अहई। चोर आइ यत कौतुक करई ॥"
सब सन्मुख हम शोषण करिहौं। देखत ही तुम सब रहि जैहौं ॥

संन्यासी तेहि कँह कहत, जो कछुहू नहि चाहि।
तुम संन्यासी बनत हौ, तीन वार जो खाहि ॥९॥

श्री निवास पंडित कर जानहु। जात पात कछु नाहीं समुझहु ॥
जो अवधूत धरहि मँह राखत। वर्णाश्रम कँह दूर भगावत ॥
बहु प्रकाश मद्यप कर जानहुँ। ना जानौ कहवां सो आयहु ॥
भत्त प्रेम रस मँह जन दोउ। कलह करहि जँह तँह सब कोउ ॥
यहि मँह एक पत्त कोउ लेई। दूसर कर निन्दा जो करई ॥
तासु नाश निश्चय सुनु होई। मर्म कलह कर जान न सोई ॥
श्री अद्वैत पक्ष कोउ सोई। करत गदाधर निन्दा जोई ॥
श्री अद्वैत दास नहि लेई। अधम नारकी पापी अहई ॥
कलह दोउ ईश्वर मँह होई। को अस जीव जो बूझै सोई ॥
सब वैष्णव कँह एकहिं जानहु। भजौ कृष्ण सबही कँह मानहु ॥

तरत सोइ जन जानहू, भजत गौर मन लाय।
भक्तन की जय जय कहहु, गौर सदा मनभाय ॥१०॥

विष्णू वैष्णव एक है, कहत भक्त समुदाय।
वृन्दावन वरणन कियो, गौर चरित समुझाय ॥११॥

इति श्री चैतन्य भागवते, मध्य खण्डे विश्वरूप—
दर्शनादि-वर्णनं नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः।

———

चतुर्विंश अध्यायः

जय जय सर्वलोक नाथ गौर चन्द्र।
जय धर्म वेद-विप्र संन्यासी महेन्द्र॥
जय शची गर्भरत्न करुणा सागर।
जय नित्यानन्द प्रभू जय विश्वम्भर॥
भक्त गोष्ठी सहित गौरांग जय जय।
सुनत चैतन्य कथा भक्ति लभ्य होय॥

मध्य खंड की कथा सोहाई। भक्ती रस सो पूर्ण बनाई॥
नवद्वीप क्रीड़ा बहु कीन्हा। भक्तन कँह अतिही सुख दीन्हा॥
निरवधि प्रभु हरि कीर्तन करई। निज ऐश्वर्य भक्त दरशावई॥
नृत्य करहि निज नाम आवेशहिं। करि हुंकार हँसत सुख पावहि॥
प्रेम रसहिं लोटहि भुइ माँहीं। धूली मय श्री अंग लखाहीं॥
प्रभु आवेश को अंत न होई। भक्त सकल आनन्द सो देखइ॥
स्वस्थ होइ भक्तन संग बैठहि। कोउ दिन गंगा जाइ नहावहिं॥
कोउ दिन आँगन मँह प्रभु बैठहि। भक्त सकल मिलि स्नान करावहिं॥
जबलौ प्रभू नृत्य तँह करई। पुण्यवती दुःखी जल भरई॥
क्षण एक नृत्य सो दर्शन करई। नयनन सों जल तेहि के बहई॥

पुनि पुनि सों गंगा जलहि, लै आवै हर्षाय।
पाँती पाँती चहूँ दिशि, राखत कुंभ सजाय॥१॥

यह लखि गौर परम सुख पायहु। श्री निवास सों एक दिन पूछेहु॥
प्रतिदिन गंगा जल को लावत। श्री निवास कह दुःखी आनत॥
प्रभू कहेउ, दुःखी जनि कहऊ। सुखी ताहि कँह सबहिं पुकारहु॥
सदा सुखी सो मम चित कहई। भक्तन कर सेवा जो करई॥
प्रभुकर करुणा सुनि सब कोऊ। प्रेम मगन सब अश्रु बहायउ॥
सुखी सबहि बोलन तेहि लागे। दासी बुद्धि न कर कोउ आगे॥
प्रेम सहित जो सेवा करई। निश्चय कृष्ण चरण सो लहई॥
माथ मुडावत सो सुनु कोई। छूटत नहि यमदंड सो सोई॥

कुल धन विद्या सो का होई। प्रेम सो कृष्ण मिलहिं सब कोई ॥
शास्त्र सकल यह तत्व बखानहि। गौर प्रगट यह सबहिं देखावहि ॥

दासी होइ तेहि को मिल्यो, प्रभु प्रसाद जो आज।
अभिमानी जन नहि लख्यो, सब भासुखी समाज ॥२॥

श्री निवास महिमा को कहई। जेहि कर सेवक सब वर लहई ॥
श्री निवास मंदिर प्रभु नाचहिं। कीर्तन करहिं भक्त सुख पावहिं ॥
दैवयोग श्री वास कुमारा। व्याधी सो परलोक सिधारा ॥
आनन्द सों प्रभु कीर्तन करहीं। नारी क्रंदन सों घर भरहीं ॥
पंडित वास तुरत गृह गयऊ। मृत बालक कँह देखत भयऊ ॥
परम गंभीर भक्त अरु ज्ञानी। स्त्रीगण सों बोल्यो मृदु बानी ॥
प्रभु महिमा तुम सबही जानहु। क्षमा करहु तुम सब जनि रोवहु ॥
जेहि कर नाम सुनत नर मरहीं। कृष्णधाम पापी होइ लहहीं ॥
सोइ प्रभु स्वयं नृत्य यहि करहीं। भक्त सकल यश तेहि कर कहहीं ॥
ऐसे समय मृत्यु जेहि पायहु। तेहि हित शोक करन नहि भायहु ॥

कबहू मेरो भाग्य अस, यदि होवै भगवान।
हम कृतार्थ होइ जाइहौ, होइहै मम कल्यान ॥३॥

यदि संसार रीति तुम चाहहु। कछु विलंब कर तुम सब रोवहु ॥
यहै बात यदि कोउ जनिहै। ठाकुर कर सुख यदि चलि जैहै ॥
कलरव सुनि यदि प्रभु सुधि पैहैं। गंगा मँह निश्चय हम जैहैं ॥
वास वचन सुनि सब स्थिर भयऊ। श्री निवास कीर्तन मँह आयउ ॥
आनन्द मँह कीर्तन सो करई। अधिक प्रेम तेहि उर लखि परई ॥
बड़ महिमा पंडित कर अहई। गौर भक्त कर गुण को कहई ॥
गौर नृत्य आनन्द सों करहो। भक्त सकल कीर्तन संग रहही ॥
शनैः शनैः भक्तन सब जानेउ। पंडित पुत्र स्वर्ग को गयउ ॥
तदपि कछू कोउ बोलत नाहीं। दुखी भए सब जन मन माहीं ॥
प्रभु सर्वज्ञ गौर सब जानेउ। भक्तन सो प्रभु पूछत भयउ ॥

चंचल काहे मोर मन, आज होत सुनु भाइ।
पंडित गृह सब कुशल है, तुम सब देहु बताइ ॥४॥

पंडित कहेउ कौन दुःख मोही। मंगल मूल प्रभू जँह होही ॥
सब महंत तव प्रभु सन कहेउ। पंडित पुत्र कथा प्रभु सुनेउ ॥
संभ्रम प्रभु पूछेउ "कब गयउ"। "चारि दंड रजनी जब रहेउ" ॥
आनंद भंग तोर नहि होई। यहिते पंडित कहेउ न कोई ॥
ढाइ पहर भयउ प्रभु सुनउ। श्री वैकुंठधाम सो गयउ ॥
आज्ञा देहु कार्य सब करहू। यहि विधि भक्तन प्रभु सन कहेहू ॥
अद्भुत कथा वास कर सुनेउ। गोविन्द गोविन्द प्रभु तब सुमरेउ ॥
प्रभु दुःखित होइ सब सो कहेउ। एसो संग तजब किमि कहउ ॥

पुत्र शोक मम हित नहि गिनही। भक्तन छोड़ि जाब किमि हमही॥
अस कहि प्रभु क्रंदन बहु कीन्हा। त्याग वचन भक्तन दुःख दीन्हा॥

भक्त सकल चिंता करहिं, का होइहै को जान।
गृह छाड़ब का गौर प्रभु, अब नाहीं कल्यान॥५॥

प्रभु कँह शांत देखि सब कोउ। शिशु सत्कार करन हित चलेउ॥
मृतक पुत्र सो प्रभु इमि पूछेउ। श्री निवास गृह काहे तजउ॥
शिशू कहेउ, "प्रभु नियम तुम्हारा। करै अन्यथा को संसारा॥
मृतक पुत्र प्रभु उत्तर देई। अति अद्भुत देखत सब कोई॥
शिशु बोलेउ, जत दिन यहि देही। आज्ञा रही रहेउ हम तेही॥
तेहि मँह रहि सब भोगहि भोगेउ। समय भयउ अब रहि नहि सकउ॥
आज्ञा जँह तहही अब जावउ। कौन पिता को पुत्रहि मानउ॥
अपनो कर्म सबहिं जन भोगत। तुमरो नियम सबहि जन पालत॥
जत दिन भाग्य रहेउ यहि रहेउ। अन्य पुरी कँह अब हम चलेउ॥
पारषद सहित चरण तव बंदउ। विदा होत कछु दोष न मानेउ॥

अस कहि नीरव सो भयउ, अति कौतुकी कृपाल।
मृषक पुत्र मुख वचन सुनि, भक्तन भए निहाल॥६॥

पुत्र शोक सब कर चलि गयउ। कृष्ण प्रेम हृदय मँह उमगेउ॥
श्री निवास निज जन सब लेई। प्रभू चरन धरि विनती करई॥
प्रभु मम मात पिता सब अहउ। जँह जन्मौ तँह तुमही रहउ॥
कबहु चरन तव भूलहु नाहीं। सदा भक्ति रह चरनन माहीं॥
विनती चारहु भ्राता करही। भक्त सकल चहुँदिशि जय कहही॥
कृष्ण प्रेम मय सबही भयउ। कृष्ण प्रेम सर्वत्रहि व्यापेउ॥
"सुनु श्रीवास", प्रभू इमि कहेउ। जगत चरित तुम जानत अहउ॥
तुम कँह दुःख कबहु नहि व्यापै। तोहि देखै सो दुःख नहि पावै॥
हम निताइ तुमरे सुत दोऊ। मन मँह व्यथा कछू जनि करऊ॥
श्री मुख सों सुनि करुणा वाक्यहि। भक्त सकल जय कहि सुख पावहि॥

सब काहू शिशु लेइ कै, चले गंग के तीर।
क्रिया कीन्ह विधिवत सबहि, पावन निर्मल नीर॥७॥

कृष्ण कृष्ण कहि गंग नहायउ। निज निज गृह सब काहू गयउ॥
वास घरहि विह्वल सब कोई। गुप्त कथा यह जो जन सुनई॥
निश्चय कृष्ण प्रेम तेहि मिलई। वास चरन बंदन हम करई॥
जेहि के सुत श्री गौर निताई। तासु चरन वंदौ सुखदाई॥
अस अद्भुत यहि नगरी होई। भक्त बिना कोउ जान न सकई॥
मध्यखंड सब अद्भुत देखेउ। तत्व ज्ञान मृत मुख कहवायउ॥
संकीर्तन सुख गौर निरंतर। विहरत नदिया मिश्र पुरंदर॥
यहि विधि नदिया मँह श्री गोरा। कीर्तन कर निज जनमन चोरा॥

प्रेम रसहि प्रभु सब कछु तजहीं। हरि पूजा प्रभु नहि करि सकहीं॥
प्रभु नहाइ पूजा पर बैठहि। नयनन के जल सो अंग भीजहि॥

पहिरहि दूसर वस्त्र तब, भीगत पुनि सब जाहिं।
श्री अंग पोछत बहुरि प्रभू, भक्त निरखि सुख पाहिं॥८॥

प्रेम विवश प्रभु पूजि न सकही। गौर गदाधर सो इमि कहही॥
"मोर भाग्य नहि तुमही पूजहु"। यहि विधि प्रभु संसारहि भूलेहु॥
एक दिवस श्री गौर गोपाला। शुक्लाम्बर सो कहेहु कृपाला॥
भोजन आज तोर गृह करिहौं। भय मानहु जनि हम तँह अइहौं॥
बार बार प्रभु तेहि सन कहई। हाथ जोड़ि सो विनती करई॥
भिक्षुक अधम नीच मोहि जानउ। धर्म सनातन हरि तुम अहउ॥
निज चरनन छाया मँह राखहु। माया तजि अपनो करि मानहु॥
गौर कहेउ माया जनि समुझहु। तोर पाक हम निश्चय चाहहु॥
शीघ्र जाइ तुम पाक बनावहु। हम आइब निश्चय तुम जानहु॥
तदपि ब्रह्मचारी भय पायहु। भक्तन सन पुनि जाइ विचारेहु॥

सबहि कहेउ भय किमि करहु, भक्त भिन्न नहि होय।
जो जन ताही भजत है, अति सै मानत सोय॥९॥

तेहि कर अन्न सदा प्रभु खोजहि। विदुर सुदामा सो प्रभु मागहिं॥
निज स्वभाव तिनके गृह खायो। प्रभु स्वभाव भक्तन मन भायो॥
घरहि जाइ तुम पाक बनावहु। भय मन मँह तुम कछु नहि लावहु॥
शुद्ध रूप सो रंधन करहू। बड़ो भाग्य तुमरो का कहहू॥
यह सुनि द्विज निज घरही आयहु। करि कै स्नान काज मँह लागेहु॥
शुची जल तप्त कीन्ह सो प्रथमहि। चावल कदली डाल्यो तामहि॥
बहु विधि सो द्विज रंधन कीन्हेउ। हाथ जोड़ि सो प्रभु कह सुमिरेउ॥
जय जय कृष्ण गोविन्द सो कहई। जै गोपाल गौर सो जपई॥
भक्त पाक लक्ष्मी तब देखेउ। शुभ दृष्टी सो अमृत भयउ॥
करि कै स्नान गौर तँह आए। संग निताइ अरु भक्त सोहाए॥

वस्त्र बदलि प्रभु भक्तकर, अन्न लेत मनभाय।
शुक्लाम्बर कँह देखिकै, हसत गौर सुख पाय॥१०॥

गंगा सन्मुख गृह तेहि भायउ। विष्णु निवेदन सुख सो कीन्हेउ॥
यज्ञ भाग जो भोग लगावहि। सोउ ध्यान मँह कोउ मुनि देखहि॥
तेहि सन्मुख सब भक्तन देखत। अति दुष्कर प्रभु दर्शन पावत॥
हँसि भोजन हित प्रभु तब बैठेउ। दरशन करि सब आनन्द पायउ॥
"उत्तम अन्न" प्रभू हँसि कहेउ। एसो स्वाद कबहुँ नहि पायउ॥
शाक बहुत सुन्दर हम पायउ। विधि विहीन्द तुम केहि विधि कीन्हेउ॥
बंधू बांधव तुम सब मेरे। देह धरौ नहि आन निहोरे॥
अतिसै कृपा द्विजहि पर देखी। भक्तन उर आनन्द विशेखी॥

प्रेम सहित प्रभु भोजन कीन्हा। स्वाद सराहि द्विजहि सुख दीन्हा ॥
भिक्षुक द्विज पर कृपा जो कीन्हा। पापी निन्दक प्रभु नहि चीन्हा ॥

धन कुल विद्या सो नही, पावहु श्री चैतन्य।
भक्ती सो वश होत प्रभु, भक्ती जग मँह धन्य ॥११॥

वेद पुराण सबहि यह भाषहि। प्रेम सो भोजन करि प्रभु बैठहि ॥
अति प्रसन्न प्रभु बीड़ा खायहु। प्रभु प्रसाद सब भक्तन पायहु ॥
ब्रह्मा शिव प्रसाद जो वंदत। भिक्षुक गृह उत्सव सब देखत ॥
श्रीगौरांग खेल सब करहीं। कृष्ण भजन सब भक्तन करहीं ॥
कृष्ण कथा प्रभु सब सन कहेउ। तहही शयन महाप्रभु कीन्हेउ ॥
भक्त सकल तहही सब सोयउ। अद्भुत एक ताहि मँह देखेउ ॥
विजय दास ठाकुर कर दासा। सो देखेउ कछु प्रभु परकाशा ॥
अति सुन्दर पुस्तक सो लिखई। ग्रंथ अनेक प्रभू कँह देई ॥
विजय अखरिया सब कोउ कहई। भक्ति हीन कोउ मर्म न लहई ॥
शयनहि ठाकुर तासु अंग पर। राखेहु हस्त प्रेम सो द्विजवर ॥

विजय अपूर्व अति लखेउ, स्वर्ण स्तंभ सो हस्त।
रत्न आभरण सो भरयो, अंगुलि आदि समस्त ॥१२॥

कोटि सूर्य सम मणि सब चमकइ। सब ब्रह्माण्ड ज्योतिमय देखइ ॥
ज्योतिर्मय सबही कछु देखइ। अति आनन्द विजय मन पावइ ॥
बोलन को सो कछु मुख खोलेउ। गौर हस्त तेहि मुख पर राखेउ ॥
गौर कहेउ, "जब लौ यहि रहहू। काहू सन यह बात न कहहू" ॥
अस कहि विजय देखि प्रभु हँसेउ। करि हुंकार विजय तब उठेउ ॥
सुनि हुंकार भक्त सब उठही। धरहि ताहि पै धरि नहि सकही ॥
भा उन्माद कछुक क्षण तेही। तन्मय होइ मूर्छित सो होही ॥
समुझेउ भक्त विभव कछु देखेउ। प्रभु की ओर प्रेम सो निर्खेउ ॥
प्रभु पूछेउ का विजयहि भयउ। अति हुंकार करन किमि लागेउ ॥
प्रभु कहेउ जानेउ हम सबही। कछु गंगा प्रभाव हम लखहीं ॥

विजय करत अनुराग अति, गंगा पर सब ज्ञान।
अथवा शुक्लाम्बर गृहहि, कृष्ण प्रगट परमान ॥१३॥

अथबा कृष्ण दरस यहि पायउ। जेहिते प्रेम हृदय मँह उमड़ेउ ॥
अस कहि हस्त ताहि पर रखही। भयउ स्वस्थ सब काहू हंसहीं ॥
स्वस्थ होइ जड़वत सो रहेउ। सात दिना यहि विधि सो भ्रमेउ ॥
नहि अहार जल नाही निद्रा। देह धर्म त्यागेहु नहि तंद्रा ॥
घूमत विजय मर्म को जानत। कछु दिन गए स्वस्थ होइ बूझत ॥
शुक्लाम्बर गृह अस रंग होई। तेहि को भाग्य कौन कहि सकई ॥
गौर जासु गृह भोजन करई। भक्तन संग जेहि के गृह रहई ॥
कृपा विजय पर द्विज गृह भोजन। सुनै प्रेम सो लहै भक्ति धन ॥

प्रभु यहि विधि लीला बहु करही। भक्त मनोरथ पूरन करही॥
प्रति वैष्णव गृह यहि विधि जाही। भक्तन सुख पावत मनमाहीं॥

प्रेम रसहि विह्वल सदा, सुन्दर गौर किशोर।
भाव प्रकाशित सब करहि, भक्तन के चित चोर॥१४॥

मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंघहु। बामन कल्कि आदि जो गायहु॥
सकल रूप भक्तन हित धरही। दरश देइ लीला बहु करही॥
पुनि लुकाइ कीर्तन प्रभु करही। हलधर भाव सदा प्रभु रहही॥
महामत्त होइ हलधर भावहि। आनहु मद कहि प्रभू पुकारहि॥
श्री निताइ प्रभु मन सो चलहीं। गंगाजल घटभरि सो देही॥
प्रभु गर्जन हुंकार को वर्णहि। नव द्वीप त्रिभुवन सब काँपहि॥
महाप्रचण्ड नृत्य प्रभु करहीं। धसत भूमि प्रभु जहवाँ गिरही॥
काँपत भूमि मेरु पर्यन्तहिं। नृत्य देखि भक्तन भय पावहिं॥
सब कीर्तन बल्देव को करहीं। आनन्द सों सुनि मूर्छित होहीं॥
महामत्त सम अटपट बोलहि। झूमि झूमि आँगन मँह डोलहि॥

रामभाव प्रकाश मँह, अति सुन्दर सब होइ।
निरखि अघाहि न भक्त जन, प्रेम मगन सब कोइ॥१५॥

मुख की शोभा कहि नहि जाई। पुनि पुनि कहहि निताइ निताई॥
सावचेत यदि कबहू होइहि। "प्राण जाय मम", यह कहि बोलहि॥
"कृष्णहि रक्षा कीन्हेउ" कहेउ। बलदाउ मोहिं मारन आयउ॥
अस कहि मूर्छागत प्रभु होइहिं। दुःख पाय भक्तन सब रोवहिं॥
अद्भुत क्रीड़ा सब प्रभु करहीं। नृत्य करहिं बहुभाव सो लहहीं॥
कबहु प्रकाश विरह अस करही। अद्भुत प्रेम सिंधु जिमि बहहीं॥
हरि हरि कहि अस रोदन करहीं। सुनत हृदय विदीर्ण अति होही॥
अपने रस प्रभु आपहि विह्वल। आपहि भूलि होत अति चंचल॥
कृष्ण विरह जिमि गोपी सबहीं। चन्द्र उदय लखि रोदन करहीं॥
भाव सोइ सब प्रभु आस्वादहि। गला पकड़ि सबकर बहु रोवहि॥

विह्वलता प्रभुकर निरखि, शची मातु गृह माहिं।
रोदन करत अधीर होइ, जगत मातु बिलखाहि॥१६॥

अति अपूर्व भक्ती प्रभू केरी। भक्ति सदा सों हरि की चेरी॥
वरणि न सकत ताहि कवि कोई। मर्मी भक्त जान कछु सोई॥
प्रभु जो भाव जबहि दरशावहि। लीला तेहि अनुरूप दिखावहि॥
गोपी भावहि मँह प्रभु कबहो। "वृन्दावन गोपी," इमि कहही॥
विद्यार्थी कोउ प्रभु पँह आयो। भाव समुझि नहि प्रभु सों बोल्यो॥
पंडित किमि गोपी तुम जपहू। गोपी छाड़ि कृष्ण कँह भजहू॥
गोपी नाम सो पूण्य न होई। कृष्ण नाम जप शास्त्र न कहई॥
मूर्ख लोग प्रभु भाव न बूझहि। गौर कह्यो, "कृष्णहि को बोलहि॥

बिना दोष बाली कँह मारयो। स्त्रीकर नाक कान सो काट्यो ॥
बलि को छलि भेज्यो पातालहि। नाम जपत तेहि को का लाभहिं ॥

असं कहि डंडा लेइ कै, भाव विवश प्रभु होइ।
मारन धायो ताहि को, भाग्यो जिय लै सोइ ॥१७॥

धर धर कहि प्रभु पाछे धायो। भय सों सोई निज घर भाग्यो ॥
प्रभु विद्यार्थी जानत नाहीं। भाव विभोर गौर चलि जाहीं ॥
भक्त देखि तुरतहि उठि धाए। प्रभु को पकड़ि सबहि गृह लाए ॥
सब मिलि प्रभु कँह शांत करायो। विद्यार्थी तब दूर परायो ॥
विद्यार्थिन पँह सो चलि गयउ। थर थर काँपत तेहि कह देखेउ ॥
का कारण सब पूछत तेही। प्राण बच्यो हम तोहि का कहही ॥
श्री निमाइ कँह सबही कहई। बड़ो साधु पंडित सो अहई ॥
देखन कँह तेहि गृह पर गयउ। गोपी नाम जपत तेहि पायउ ॥
गोपी भिन्न और नहि जपई। ताही सन हम याही कहई ॥
कहा करौ पंडित तुम सुनहू। कृष्ण 'जपहु' जो शास्त्रन कहेहू ॥

यह सुनि कै अति क्रोध करि, डंडा कर मे लेइ।
मारन हित धायो तुरत, मोहि भगायो सोइ ॥१८॥

कृष्णहु कँह बहु अटपट कहेउ। हम निज मुख सो नहि कहि सकउ ॥
हरी आज रक्षा मम कीन्हीं। बीती आज सो सब कहि दीन्हीं ॥
महा मूर्ख सब सुनि कै हँसही। जेहि के मन आवै सो कहहीं ॥
कोउ कहै, "वैष्णव बड़ सुनेउ। ब्राह्मण मारन धावत सोउ" ॥
कोउ कहै, "वैष्णव किमि कहहीं। कृष्ण नाम नहिं मुख उच्चरहीं" ॥
कोउ कहै, "बड़ अद्भुत सुनई। वैष्णव केवल गोपी कहई" ॥
कोउ कहै, किमि आदर करई। हम सबका द्विज सुत नहिं अहई ॥
सो ब्राह्मण हम विप्र न अहई। वह मारै हम काहे सहई ॥
राजा नहि मारब किमि सोई। हम सब एक बराबर अहई ॥
पुनि मारन आवै यदि सोई। सहिबो नहिं हम सब सुनु कोई ॥

जगन्नाथ को सुत अहै, नदिया वासी सोइ।
हम का उनसो छोट है, जानत है सब कोइ ॥१९॥

पढै एक संग हम सब कोई। आज गोसाई सो किमि होई" ॥
पापी मिलि सब युक्ती करहीं। अंतरयामी प्रभु सब सुनहीं ॥
एक दिवस प्रभु बैठे अहहीं। चहुदिशि भक्त घेरि प्रभु रहहीं ॥
एक वाक्य प्रभु अद्भुत कहेउ। अर्थ तासु काहू नहिं बूझेउ ॥
"कफहि निवारण हित हम भाई। पीपल चूर्ण कियो सुखदाई ॥
भाग्य विवश उलटो फल भयऊ। बाँढेउ कफ कछु बूझ न सकऊ" ॥
अस कहि अट्टहास प्रभु करहीं। कछु न समुझि भय पायहु सबहीं ॥
श्री निताई प्रभु अंतर समुझेउ। गृह छाड़ब प्रभु सो सब जानेउ ॥

श्रीनिताई व्याकुल होइ सोचहिं। प्रभु धरिहैं संन्यासी रूपहिं ॥
सुन्दर केश दूर होइ जैहैं। भक्तन कँह दारुण दुःख हैहैं ॥

श्रीनिताइ को हाथ धरि, छिन महँ कृपानिकेत।
गयउ एकान्तहि लेइके, बोलेउ करि संकेत ॥ २० ॥

सुनउ निताई मन की कहहू। तारन हित जग आयउ सुनहू ॥
भल तारेउ जग तुम सोइ जानहु। तारन नहिं मारन हित आयहु ॥
हमहि देखि का बंधन छुटिहैं। बंधन और बढ्यो का घटिहैं ॥
मोहि मारन हित जबहि विचारेऊ। तबही दृढ़ बंधन महँ पड़ेऊ ॥
जग हित यह अवतार जो लीन्हा। उलटो अहित सबहि कर कीन्हा ॥
शिखा सूत्र सब कलहि मुड़ावौं। संन्यासी होइ हरि हरि गावौं ॥
जो जन मोहि मारन हित कहही। भिक्षुक होइ जाउब हम तहहीं ॥
संन्यासी लखि कै सब कोई। धरब चरन हसि कै जन सोई ॥
यहि विधि हम उद्धारब सबही। संन्यासी कहँ सब आदरही ॥
संन्यासी कहँ कोउ नहिं मारहिं। संन्यासी कहँ सब कोउ पूजहिं ॥

कल संन्यासी होइकै, जाब सबहि के द्वार।
भिक्षा मागब सबहि सन, करौ जगत उद्धार ॥ २१ ॥

अपने मन की हम तोहि कहऊ। हम निश्चय गृह कहँ कल तजऊ।
तुम कछु दुःख मन महँ जनि मानहु। सबको हित तुम यहि महँ जानहु ॥
आपन स्वीकृत तुम मोहिं देहू। तुमहिं करावहु सो हम करहू ॥
यह अवतार हेतु तुम जानहु। हर्ष सहित मम आज्ञा मानहु ॥
मोहिं निषेध तुम कबहु न करहू। दुखः कबहुँ मन महँ जनि धरहू ॥
यह अवतार भयहु यहि कारन। कहेहु तोहिं हम सब अपनो मन ॥
सुनत निताई प्रभु की बानी। हृदय दुःखित तनु दशा भुलानी ॥
कहा करौ कछु सूझ न परई। जान्यो प्रभू अवश्य यह करई ॥
"तव इच्छ प्रभु" कहेउ निताई। तव इच्छा प्रभु सब मोहिं भाई ॥
तुमहिं विधान देइ को सकई। सोइ सत्य जो कछु तुम कहई ॥

सर्वलोक पालन करहु, सर्वलोक के नाथ।
तुम यथार्थ जानत सबहि, तुम प्रभु दीनानाथ ॥ २२ ॥

जगत उद्धार होब केहिभाँती। जानहु तुम सब सोइ भलिभाँती ॥
तुमरो चरित स्वतंत्रहि अहई। आनन्द मय तुम करब जो होई ॥
तदपि सकल वैष्णव सो कहउ। को का कहत ताहिं तुम सुनउ ॥
तव जो चाहेहु सोइ तुम करउ। तव इच्छा टारै नहिं कोउ ॥
श्रीनिताई कर उत्तर सुनेउ। अति संतोष गौर को भयउ ॥
पुनि पुनि आलिंगन प्रभु करई। प्रेम विवश कछु कहि नहिं सकई ॥
श्रीनिताई संग युक्ति विचारेउ। भक्त समाज गौर प्रभु गयउ ॥
श्रीनिताई सुनि प्रभु की बानी। अतिसै दुःखित देह कुम्हिलानी ॥

स्थिर होइकै पुनि सोचत अहही। प्रभू गए माता किमि रहही॥
केहि विधि काल गवाउब सोई। यह सोचत प्रभु मूर्छित होई॥

माता कर दुःख सोचिकै, श्रीनिताई दुःख पाय।
एकांतहिं प्रभु बैठिकै, रोअत रैन विहाय॥ २२॥

श्रीमुकुन्द के गृह प्रभु गयउ। निरखि गौर अति हर्षित भयउ॥
"गावहु कृष्ण चरित" प्रभु कहेउ। गीत सुनत अति विह्वल भयउ॥
गावहु गावहु प्रभु तेहि कहही। मधुर गीत सुनि हर्षित होही॥
प्रभु सम्बरण भाव तब कीन्हेउ। श्री मुकुन्द सन इमि प्रभु कहेउ॥
"सुनु मकुन्द हम तुम सन कहउ। बाहर जाव यहाँ नहि रहउ॥
गृह छाडब यह निश्चय कीन्हौं। शिखा सूत्र तजि हम चलि जैहौं"॥
प्रभू वचन सुनि व्याकुल भयउ। प्रभू विरह आनन्द चलि गयउ॥
विनती करि प्रभु सन सो कहेउ। यदि दृढ निश्चय प्रभु तुम कीन्हेउ॥
दिन कछु रहि कीर्तन तुम करहू। तब प्रभु करेउ जो कछु तुम चहहू॥
विनती सुनि मुकुन्द की द्विजवर। चले प्रभू जह रहत गदाधर॥

गौर चरण बंद्यों सोइ, प्रभु बोले हर्षाई।
"मोर वचन कछु तुम सुनहु, रहब नाहिं यहिं ठाई॥२३॥

गृह मँह अब हम नाहीं रहिहौं। कृष्ण लागि हम बाहर जैहौं॥
शिखा सूत्र हम सब तजि दैहौं। माथ मुडाइ तीर्थ मँह रहिहौं"॥
सुनत गदाधर अति दुःख पायउ। वज्र पात शिर पर जनु भयउ॥
दुःखित होइ प्रभु सन सो कहेउ। अति अद्भुत तुम बात विचारेउ॥
संन्यासी कँह का हरि मिलहीं। वैष्णव का गृहस्थ नहिं होहीं॥
संन्यासी कँह तुम सब देखहु। शास्त्रन मत नहिं तुमही मानहु॥
शची अनाथ ताहि किमि तजिहौं। प्रथमहि जननी बध शिर लैहौं॥
तुम्हरे बिन मरिहैं हम कहहीं। एक अधार तासु हौ तुमहीं॥
गृह रहि हरि सों प्रेम न होई। गृही लोग कँह सब कोउ चहई॥
गृह छाडन यदि निश्चय चाहहु। जाहु जहाँ तुमरो मन मानहु॥

सब भक्तन गृह जाइकै, यहि विधि कह सब पाहिं।
शिखा सूत्र हम त्यागिहौं, रहिहौं गृह मँह नाहिं॥ २४॥

सुनि कठोर वाणी सब काहू। भए दूखीतउर मिटा उछाहू॥

(रामकिरि राग)

शिखा मुडैहे गौर सुजान।
केश सुमिरि रोअहि दुःखमान॥ (ध्रु०)

कोउ कहै, प्रभु जूड़ा उपर। किमि माला पहिरै है शिरपर॥
प्रभु की वह घुघराली अलकै। प्राण रहहि किमि बिना बिलोकै॥
केश सुगंधि लहब अब नाहीं। अस कहि शिर धुनि कोउ पछिताहीं॥

कोउ कहे प्रभु केशन माही। अवला देइ मलब अब नाहीं॥
हरि हरि कहि कोउ रोदन करही। विपति उदधि मँह सब पचि मरहीं॥

श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान्।
वृन्दावन दास कियो प्रभु लीलागान्॥

पंचविंश अध्याय

जय जय विश्वम्भर श्री शचीनन्दन।
जय जय गौरसिंह पतित पावन॥

यहि विधि सब भक्तन मिलि सोंचहि। प्रभू विरह कातर मन रोवहिं॥
लै संन्यास कहाँ प्रभु जैहैं। प्रभु दर्शन हम कोउ नहिं पैहैं॥
करि संन्यास ग्राम नहि ऐहैं। कहा जाइ प्रभु कहवा रैहैं॥
भक्तन सब विचार बहु करहीं। भोजन शयन त्याग सब दीन्हीं॥
सेवक दुःख प्रभु सहि नहिं सकहीं। होइ प्रसन्न प्रभु सबसन कहहीं॥
प्रभू कहेउ, चिंता किमि करहु। भक्तन संग सदा हम रहहू॥
लै संन्यास तुमहि सब सोचउ। जाब हमहि तजिके सब कोउ॥
एसो जनि समुझहु मन माहीं। एकहु क्षण छाडब हम नाहीं॥
सदा रहहु हम तुमरे संगा। जन्म जन्म प्रति जन्म अभंगा॥
यहि जन्महि जिमि हमरे संगही। रहेहु सदा कीर्तन महँ सबही॥

यहि विधि दूइ अवतार मम, होइहैं कीर्तन हेतु।
करिहौं कीर्तन संग महँ, जगतारन हित सेतु॥ १॥

हम संन्यास जगत हित लेइहौं। तुम सब चिंता कछु जनि करिहौं॥
अस कहि प्रभु उठाइ सब काहू। आलिंगन कीन्हेउ धरि बाहू॥
गौर वचन सुनि कछु स्थिर भए। सबहि प्रबोधि भवन प्रभु गए॥
यह सब कथा लोग सन सुनई। शची हृदय अति व्याकुल होई॥
प्रभु संन्यास शची सुनि काना। होइ व्यथित अतिसै दुःख माना॥
मूर्छित होइ भूमि पर गिरई। नयनन सों जल अविरत बहई॥
गौर समीप जाइ सो कहई। करि क्रंदन विनती सो करई॥

(भटियारी राग)

हमहिं छाड़ि मति जाओ, मति जाओ भइया।
निरखि तोर मुख, हम जीवत हौं, लेत हौं तोर बलैया॥

(गौरांग हे। ध्रु०॥)

कमल नयन तव सुन्दर अंगहिं। बिन देखे बचिहैं किमि प्राणहिं॥
सुन्दर मुख अब हम किमि लखिहैं। वचन अमिय सम हम किमि सुनिहैं॥
श्री अद्वैत आदि तव दासा। श्री निताई है तोर प्रकासा॥

अद्वैगदाधर आदि सब, भक्त सकल सुनु मोहिं ।
गृह रहि तिनके संग महँ, कीर्तन कर सुख होहिं ॥ २ ॥

धर्म सिखावन तब अवतारा । जननी तजि नहिं तत्र निहतारा ॥
धर्म रूप तुम जननी तजिहौं । केहि बिधि धर्म सबहि समुझैहौं ॥
शोक विकल जननी सब कहई । रुद्ध कंठ प्रभु उत्तर न देई ॥
भ्राता तोर मोहिं तजि गयउ । पिता स्वर्ग तुमहू का कहउ ॥
तुमहिं देखि सब दुःख बिसारेउ । यदि तुम गए तो प्राणहिं तजिहउ ॥

(करुण भटियारी राग)

हमरे प्राण गौर हे, सुनहू,
मो अनाथिनी कहँ जनि त्यागहु ।
कीर्तन करहु सबहि लै आंगन,
तोहिं निरखि हम प्राण जुड़ावहु ॥ ध्रु० ॥
तुमरी प्रेम मई दोउ आँखी,
दीर्घ भुजा दोउ देखहु ।
वचन अमृत जनु वर्षत है ॥
विना दीप मेरो घर,
तब अंग प्रभा सों उज्ज्वल ।
चरण कमल मधु वर्षत है ॥
प्रेम शोक महँ शची कहत है, सुनत है गौर हरी,
कौशल्या जिमि राम बुझायहु ।
श्री चैतन्य नित्यानन्द, सुखदाता सदानन्द,
वृन्दावन दास रसगाय ॥

शची विलाप यही विधि करई । ठाकुर ताहि उतर नहिं देई ॥
जननी दुःख प्रभु देखि न सकेउ । गुप्त कथा तेहि सन प्रभु कहेउ ॥
प्रभु कहेउ, माता स्थिर होउ । जन्म जन्म हम तब सुत रहेउ ॥
आपन कथा चित्त दै सुनउ । पृश्नि नाम तुमरो जब रहेउ ॥
रहेउ तोर सुत हम तेहि कालहि । भयउ अदिति पुनि तुमहीं स्वर्गहि ॥

वामन रूप धरेउ तहँ, रहेउ मातु तुम मोर ।
देवहुती पुनि तुम भई, भयउ तबहिं सुत तोर ॥ ३ ॥

कपिल नाम तब हमरो रहेउ । कौशल्या होइ पुनि भुइ आयउ ॥
तव सुत भयउ अयोध्यामाहीं । रामचन्द्र तुम जानत ताही ॥
भयउ देवकी मथुरा तुमही । कंस कैद महँ राख्यो तोही ॥
मातु देवकी तुमही सोई । हम तव पुत्र जान सब कोई ॥
कीर्तन काल बहुरि दुई बारा । मातु शीघ्र सुत होब तुम्हारा ॥
जन्म-जन्म यहि विधि तुम सुनउ । सदा मातु मम तुमही रहेउ ॥

हमरो तुमरो त्याग न कबहूँ। कपट हीन हम तुमसो कहेहू ॥
मन मँह दुःख कबहु जनि लावहु"। गुप्त वचन सुनि धीरज धारेहु ॥
यहि विधि कीर्तन करहि निरंतर। प्रभु इच्छा को बूझै गुरुतर ॥
स्वच्छा मय प्रभु कब का करई। ईश्वर मर्म बूझि को सकई ॥

* संकीर्तन मँह प्रभु सदा, मगन रहै दिन रात।
भक्त रहहि प्रभु संग मँह, भूलि गए सब बात ॥ ४ ॥

प्रभु गृह तजब जाहि दिन सोचेउ। श्री निताई एकान्तहि कहेउ ॥
याही मकर काल सुनु मोही। गृह छाड़ब निश्चय कहु तोही ॥
कटोआ मँह केशव जी रहहीं। सोइ भारती गुरु मम अहहीं ॥
तेहि ते मंत्र लेब हम भाई। संन्यासी बनि घूमब जाई ॥
जननि गदाधर ब्रह्मानन्दहि। चन्द्रशेखर आचार्य मुकुन्दहि ॥
एई पाँचों सन कह यह बाता"। सुनत कथा दुःखित अति भ्राता ॥
श्री निताई इन सन सब कहेउ। प्रेम विवश सब धीरज धारेउ ॥
सेइ दिन प्रभु कीर्तन बहु कीन्हा। भक्तन कँह अतिही सुख दीन्हा ॥
आनन्द सो प्रभु भोजन कीन्हेउ। संध्या समय गंग तट गयउ ॥
कछु क्षण रहि पुनि प्रभु गृह आए। निज आसन बैठे हर्षाए ॥

माला चंदन युत प्रभू, बैठे निज जन पास।
दर्शन हित आवत तहाँ, भक्तन सहित हुलास ॥ ५ ॥

माला चन्दन दोउकर लेई। आए भक्त सबहि हर्षाई ॥
प्रभु आकर्षण सब कँह कीन्हेउ। प्रभु दर्शन हित सबही आयउ ॥
दण्ड प्रणाम प्रभू कँह करही। एक दृष्टि प्रभु शोभा लखही ॥
निज माला प्रभु सब कँह देही। भजहु कृष्ण सब सन प्रभु कहही ॥
कृष्ण कहहु अरु कृष्णहि ध्यावहु। कृष्ण बिना अरु कछु नहिं जानहु ॥
यदि मोहि पर कछु श्रद्धा राखहु। कृष्ण-कृष्ण कहि सब मिलि गावहु ॥
भोजन शयन जागरन काला। भजहु कृष्ण गोविन्द गोपाला" ॥
अस कहि आशिस सब कँह देही। घरहि जाउ हर्षित होइ कहही ॥
यहि विधि बहुत जाइ बहु आवहिं। आनन्द मगन कौन को चीन्हहिं ॥
माला सो प्रभु अंग भरि गयउ। चन्द्र किरण सम शोभा पायउ ॥

लै प्रसाद अति हर्ष सों, हरि-हरि कहि सब जाय।
लौकी लीन्हे हाथ मँह, सुकृती श्रीधर आय ॥ ६ ॥

लखि लौकी प्रभु अति सुख पायहु। पायहु कहाँ प्रभू तेहिं पूछेउ ॥
प्रभु सोचहिं हम तौ चलि जैहैं। यह लौकी हम केहि विधि खैहैं ॥
श्रीधर वस्तु व्यर्थ किमि होई। निश्चय खाब आज हम सोई ॥
भक्त वत्सल प्रभु यहै विचारेउ। ताहि बनावन जननी कहेउ ॥
ताही समय भक्त एक आयउ। दूध लाई प्रभु भेंट चढ़ायउ ॥
प्रभु हँसि के तब जननी कहेहू। लौकी दूध पाक तुम करहू ॥

मातु चली हर्षित अति होई। प्रभू कृपा भक्तन पर करई॥
यहि विधि आनन्द सों प्रभु रहेउ। रात्रि पहर हुइ यहि विधि गयउ॥
भक्तन विदा कीन्ह प्रभु सबही। भोजन पर बैठे प्रभु तबही॥
भोजन करि मुख शुद्धी कीन्हेउ। शयन घरहि, आनन्द सो गयउ॥

योगनिद्रा प्रति दृष्टिकरि, शयन कीन्ह प्रभु जाई।
श्री हरिदास गदाधर, निकटहिं सोए आई॥ ७॥

जानत मातु प्रभू घर तजिहैं। रोअत सो निद्रा किमि अइहै॥
दण्ड चारि रात्री जब अहई। उठेउ गौर सामग्री लेई॥
दोउ भक्त उठे प्रभु संगहि। कहेउ गदाधर हमहू आवहि॥
गौर कहेउ हम संग न लैहौं। एकाकी हम लीला करिहौं॥
प्रभु जात माता सब जानेहु। द्वार आइकै तुरतहिं घेरेहु॥
जननी निरखि प्रभू तहँ बैठहिं। हाथ पकड़ि तेहिं कह समुझावहिं॥
हमरो पालन तुम बहु कीन्हा। मोहिं पढाइकै विद्या दीन्हा॥
अपने मन तुम दुःख मत करहू। हमरे हित तुम बहु दुःख सहेहू॥
प्रति क्षण मम सेवा बहु कीन्हेउ। सो ऋण हम चुकाय नहिं सकेउ॥
ईश अधीन जगत सब अहई। होइ स्वतंत्र कोउ रहि नहिं सकई॥

सोइ संयोग करावहि, पुनि वियोग करवाय।
प्रभु इच्छा को बूझि सक, तुम कहँ को समुझाय॥ ८॥

दिन दश गए कबहुँ हम अइहौं। जाउ अबहिं चिन्ता जनि करिहौं॥
तोर भार मम ऊपर रहिहैं। हम सब देखब शोच न करिहैं॥
हाथ पकड़ि प्रभु पुनि पुनि कहई। "तोर भार मम ऊपर रहई"॥
प्रभु कर बात सकल मां सुनई। उत्तर न देइ नयन जल बहई॥
पृथ्वीस्वरूपा माता जानउ। कृष्ण चरित को जान न पायउ॥
जननी चरण धूलि प्रभु लेई। फेरी करिकै प्रभु चल देई॥
गृह तजिकै प्रभु तुरतहिं चलेउ। सबके हित संन्यासी बनेउ॥
प्रभु संन्यास कथा जो सुनई। सुनत कथा भव बंधन तजई॥
गौर :जात जड़वत भइ माता। चुप बैठी मुख आव न बाता॥
भक्त कछु यह बात न जानहिं। प्रात स्नान करि प्रभु गृह आवहिं॥

प्रभु दण्डवत करन को, आए प्रभु के द्वार।
माता कहँ देखेउ तहाँ, पूछेउ वास उदार॥ ९॥

बाहर क्यों बैठी हौ माता। जड़ प्राय सो कहै न बाता॥
नयनन सो जल अविरत बहई। क्षण महँ सो सब सन अस कहई॥
विष्णु द्रव्य अधिकारी सुनहू। सब वैष्णव हैं सो सब लेहू॥
तेहि को द्रव्य सकल जो अहई। शास्त्र विदित तुम सब कह मिलई॥
तुम मिलि कै तेहि कँह सब लेउ। सकल छाड़ि कै हम चलि जाउ॥
प्रभू गमन सुनि कै नर नारी। भए दुःखित तनु दसा बिसारी॥

भक्तन कर दुःख कहि नहिं सकई। आर्तनाद करि कंदन करई॥
गला पकड़ि के सब मिलि कहही। "कठिन कष्ट श्री गोरा सहही॥"
अस कहि सिरधुनि सब पछिताही। विन देखे प्रभु हम कह जाही॥
केहि हित हम सब जीवन राखउ। वज्रपात विधि काहे कीन्हेउ॥

भुइ मँह लोटत है कोउ, नयनन नीर बहाय।
शांत होत नहिं कोउ जन, रोअत सब कोउ आय॥१०॥

प्रभु कर दर्शन हित जो आवत। महा विरह मँह सोई डूबत॥
करि कै कंदन कह कोउ कोऊ। "प्रभु संन्यास लेन चलि गयउ"॥
शांत भए जबही जन सबही। माता घेरि रहे सब जनही॥
नवद्वीप मँह सब कोउ सुनेउ। प्रभु संन्यास हेतु गृह त्यागेउ॥
आइ सकल देखहें प्रभु घरही। शून्य भवन लखि कै दुःख करही॥
हाय हाय करि रोवत सबही। शोक करहि पापंडी जनही॥
हम पापी अस जन नहिं चीन्ह्यो। सब पछिताइ नयन झर लायो॥
नगर निवासी मिलि सब कहहीं। चन्द्र वदन अब कँह लखि परहीं॥
कोउ कहै घर द्वारहि त्यागहु। योगी बनि कुंडल सब पहिरहु॥
एसे प्रभु सब तजि चलि गयउ। हम सब प्राण रखब किमि बोलउ॥

नदिया वासी जो सुनहिं, शोक विकल सब होइ।
करि विलाप प्रभु गुण सुमिरि, क्रन्दन कर सब कोइ॥११॥

प्रभु जानै को केहि विधि तरिहैं। जग उद्धार कवन विधि होइहैं॥
निन्दा द्वेश करत रह जोईं। अब प्रभु आदर कर जन सोईं॥
सुनु संन्यास कथा प्रभु भाई। सुनत जाहि सब दुःख नशाई॥
गंगा पार होइ प्रभु आयउ। कण्टक नगर सोइ दिन जानउ॥
जेहि जेहि कह प्रभु तहाँ बोलायउ। शनैः शनैः सब कोउ आयउ॥
श्री अवधूत गदाधर शेखर। ब्रह्मानन्द मुकुन्द भक्तवर॥
जहाँ भारती प्रभु तहँ आए। संग भक्त सब परम सोहाए॥
अद्‌भुत दिव्य तेज प्रभु देखी। उठेउ भारती हर्ष विशेखी॥
गौर दण्डवत तिन कँह कीन्हेउ। हाथ जोड़ि विनती बहु भाषेउ॥
करहु अनुग्रह मोहिं पर सुनहू। कृपा आज हम पर तुम करहू॥

कृष्ण भक्ति तुम दे सकहु, कृष्ण तोर मन माहिं॥
कृष्ण दरस हम चहत हौं, देहु कृपा करि ताहिं॥१२॥

अस कहि नयन नीर प्रभु वर्षहिं। करिकै नृत्य सकल मन मोहहिं॥
ब्रह्मानन्द आदि सब गावहिं। निज आवेश मत्त प्रभु नाचहिं॥
अनगिनतिन जन सुनिकै आवहिं। सबही मिलि कै हरि हरि गावहिं॥
मदन समान देखि प्रभु रूपहिं। एक टक प्रभु कँह सबही देखहिं॥
प्रभू नयन जलधारा बहई। अति अद्‌भुत कोउ वरणि न सकई॥
नृत्य करत जलधारा छुटई। सकल लोग तेहिं जल सो भीजइ॥

प्रभु के प्रेम जलहि सब भीजहिं। हरि हरि कहि सबही जन बोलहिं ॥
प्रभू को कम्प स्वेद सब होइहिं। मूर्छा गत होइ भुइ मँह लोटहिं ॥
महा वेग सो भुई पर गिरहीं। देखि लोग सब अति सै डरहीं ॥
अपनो दास्य भाव वश होई। भक्ति याचना सब सन करई ॥

गौर दीनता देखि कै, क्रंदन कर सब कोई।
कथा सुनत संन्यास की, लोग विकल अति होई ॥१३॥

केहि विधि जननी धीरज धार्‌यो। रात कवन विधि ताहिं बितायो ॥
पूण्यवती एसो पति पायो। कौन दोष सो ताहिं गँवायो ॥
सब कर प्राण देख कै विदरहिं। भार्या जननी केहि विधि राखहिं ॥
यहि विधि कहि सबही जन रोवहिं। गौर प्रेममय होइ सब सोचहिं ॥
शांत होइ कै गौर विराजेहु। चहुँदिशि भक्त लोग सब बेठेहु ॥
प्रभु की भक्ति भारती देखेउ। आनन्द मगन स्तुती बहु कीन्हेउ॥
"निज नयनन तव भक्ती देखेउ। ईश्वर भिन्न कतहुँ नहिं जानउ ॥
जगत गुरु तुम निश्चय समुझेहु। गुरु योग्य तव कोउ नहिं जानहु॥
तबहूँ जगत सिखावन कारन। करब मोहिं गुरु तुम जगतारन ॥
कहेउ गौर माया करि बोलहु। दीक्षा देहु कृष्ण कँह पावहु ॥

यहि विधि कृष्ण कथा मँह, प्रात भयो गइ रात।
चन्द्रशेखर सों तब कहेउ, सुनहु तात मम बात ॥१४॥

हम प्रतिनिधि मम तुमहिं बनावउ। बिधिवत् कर्म सकल करवावउ ॥
प्रभु आज्ञा शेखर आचारज। करन लगे बिधिवत सब कारज ॥
शालग्राम सो नाना द्रव्यहिं। आवन लगी आप सब वस्तुहिं ॥
दूध दही घृत चन्दन आदिहिं। पुष्प वस्त्र लाए सब लोगहिं ॥
भोजन द्रव्य बहुत मन भाए। नहिं जानत कोउ को लै आए ॥
आनन्द सों सब हरिहरि बोलहिं। अन्य शब्द कोउ नहिं भाषहिं ॥
तबहिं महाप्रभु अंतरयामी। बेठे मुंडन हित जग स्वामी ॥
नापित सन्मुख बैठेउ जाई। क्रन्दन करहिं सकल जन आई ॥
सुन्दर केश देखि कै रोवइ। हाथ न देइ नाउ दुःख पावई ॥
नित्यानन्द आदि सब भक्तन। दुखित होइ सबही कर क्रंदन ॥

भक्त दशा कोउ का कहै, व्यवहारी जे आहि।
वेहू रोअन सब लगे, पावत दुःख मन मांहि ॥ १५ ॥

करि क्रंदन नारी गण कहेउ। संन्यासहिं काहे विधि रचेउ ॥
देवगणहिं रोअन आकाशहिं। भा विशाद मय सब संसारहिं ॥
प्रभु कारुण्य रसहि विस्तारेउ। शुष्क काष्ठ पाषाणहुँ द्रवेउ ॥
जीव उधारनहित यह कीन्हेउ। साक्षी जग रोअत सब देखेउ ॥
चञ्चल गौर प्रेम रस माँही। अश्रु कंप सब भाव लखाहीं ॥
बोल-बोल कहि के प्रभु उठेउ। हाथ उठाइ कै नाचन लागेउ ॥

गावत भक्त प्रभू स्थिर नाहीं। महाकंप नयनन जल जाहीं ॥
करि हुंकार बोल हरि कहई। क्षौर कर्म केहि विधि सो करई ॥
केहि विधि क्षौर साँझलौ भयउ। गंगा स्नान तबहिं प्रभु कीन्हेउ ॥
प्रभु आसन पर आइ विराजे। द्विव्य ज्योति मय अति छवि छाजे ॥

शिक्षा गुरु श्री गौर प्रभु, गुरुहिं कह्यो समुझाई।
स्वप्न माहिं मोहिं भक्त कोउ, कह्यो मंत्र एक आई ॥ १६ ॥

तुमहिं विचार करहु मन मांही। अस कहि मंत्र कह्यो तेहि पांही ॥
कान मांहिं प्रभु मंत्र सुनायहु। छलसों ताहिं शिष्य निज कीन्हेहु ॥
केशव मन अति अचरज भयउ। महाप्रभू सन तब सो कहेउ ॥
महा मंत्रवर निश्चय जानउ। कृष्ण प्रसाद तुमहिं सो पायउ ॥
तबहिं भारती प्रभु सोइ मंत्रहिं। दियो हर्ष सों प्रभु के कर्णहिं ॥
चहुँ दिशि हरी नाम सब कहहीं। संन्यासी द्विजमनि तब बनहीं ॥
अरुण वसन तबहीं प्रभु पहिरेउ। कोटि काम सम प्रभुलखि पड़ेउ ॥
सर्व अंग मँह चंदन सोहै। गले माल सबकर मन मोहै ॥
दंड कमंडलु हाथ विराजै। आनन्द मगन महा छवि छाजै ॥
वदन चन्द्र सम शोभा पावत। आखन सों असुअन झर लावत ॥

संन्यासी के रुप मँह, प्रभु अति शोभा पाय।
वर्णिसकै नहिं कोउ जन, रुप सबै मन भाय ॥ १७ ॥

सहस्रनाम मँह व्यास बखानेउ। संन्यासी होइहैं हरि जानउ ॥
सत्य वचन प्रभु तिनकर कीन्हा। वैष्णव सकल प्रभू कँह चीन्हा ॥

तथहि (महाभारते दानधर्मे) सहस्रनाम स्तोत्रे-९३-
"संन्यासकृत् शमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम्" ॥

नाम धरन प्रभु कर गुरु चाहहिं। मन मँह सोच करन सो लागहिं ॥
एसो वैष्णव हम नहिं देखेउ। नाम प्रभू कर केहि विधि राखउ ॥
मम इच्छा पूरन तब होइहैं। नाम भारती हम नहिं रखिहैं ॥
भाग्यवान गुरु यहि विधि सोचहिं। शुद्ध सरस्वती जिह्वा आवहिं ॥
शुद्ध नाम तब सोइ पायउ। वक्ष हाथ धरि प्रभु सन भाष्यो ॥
कृष्ण नाम तुम जग कहवायउ। कीर्तन करि चैतन्य करायउ ॥
"श्री कृष्ण चैतन्य" सबही कहिहैं। सकल भुअन कँह पावन करिहैं ॥
वचन सुनत गुरु कर सब हर्षेउ। जय-जय कहि लोचन जल वर्षेउ ॥
चहुँ दिशि सबही हरि-हरि कहहीं। गुरुहिं प्रणाम सकल जन करहीं ॥
तुष्ट भए प्रभु लहि निज नामहिं। श्री कृष्ण चैतन्य सबही जानहिं ॥

करहिं दंडवत भक्त सब, गौर चरण पर आइ।
धन्य प्रभू हित जगत के, चले न्यासि कहवाइ ॥ १८ ॥

गौर कथाकर अवधि न भाई। आदि अन्त केवल सब गाई ॥
गौर सदा यह लीला करहीं। भाग्यवान कँह यह लखि परहीं ॥

और बहुत लीला तँह कीन्हेउ। श्री निताइ सब तत्वहि बूझेउ ॥
तेहि की आज्ञा हम किछु लिखेउ। सब वैष्णव पद वंदन करउ ॥
मम अपराध कछू जनि गिनिहैं। आगे कवि गण वर्णनं करिहैं ॥
प्रभु संन्यास मध्य मँह अहई। गौर मिलै जो याही सुनई ॥
प्रभु संन्यास ग्रहण जो सुनई। कृष्ण प्रेम धन ताहीं मिलई ॥
श्री चैतन्य निताई दोउ। भूलौ नहिं कबहूँ दोउ सुनऊ ॥
भक्त सहित दोउ प्रभू कबहीं। भाग्य होव मम देखिहौं जबहीं ॥
मोर प्रभू कर प्रभु श्री गोरा। यहै भरोसा कछु नहिं थोरा ॥

"हम निताइ कर दास हौं", मुख सों कहिहैं जोइ।
अवसि देखिहैं गौर कँह, लहै भक्ति जन सोइ ॥१९॥

श्री निताइ प्रभु के प्रिय अहहीं। गौर भक्त संग हम नहिं तजहीं ॥
श्री निताइ भक्ती जग बाटहिं। तेहिके होइ भजौ श्री गौरहिं ॥
होइ भवपार भक्ति जो चाहत। श्री निताइ चरनन जो सेवत ॥
कठपुतली जिमि नटहि नचावै। तैसेहिं गौर मोहिं कहवावै ॥
पक्षि अकाश अन्त नहिं पावै। जितनी शक्ति तहाँ लौ जावै ॥
यहि विधि अंत कथा को पावै। मनि अनुरूप सकल जन गावै ॥

श्री कृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
श्री वृन्दावन दास कछु पद युग गान ॥

दोहा—मध्यखंड अनुवाद यह, पूरन किय हम आज।
'वृजभूषण' प्रभु की कृपा, पढ़िहहि संत समाज ॥

॥ इति श्री श्री चैतन्य भागवते मध्य खंडे ॥

॥ श्री चैतन्य संन्यास वर्णनं नाम पंचविंशोऽध्यायः ॥

॥ समाप्तश्चायं मध्यखण्डः ॥

श्री हरिः

Vrindavan Das
Govind Kund, Vrindavan
Nityananda Baba Ashram

श्री चैतन्य भागवत

अन्त्यखंड

प्रथम अध्याय

जय जय श्री कृष्णचैतन्य लक्ष्मी कान्त।
जय जय नित्यानन्द वल्लभ एकान्त॥

जय जय वैकुंठ ईश्वर न्यासी राज।
जय जय जय श्री भक्त समाज॥

जय जय पतित पावन गौरचन्द्र।
हृदय विराजे तव पद-द्वन्द॥

सन्यास लेने के बाद महाप्रभू गुरु के संग कीर्तन करते-करते भक्तों के साथ श्रीकृष्ण की खोज में वन को चले। चन्द्रशेखर आचार्य को वैष्णवों के पास समाचार देने के हेतु नदिया भेज दिया। आचार्य ने आकर गौर विरह कातर भक्तों से समाचार कहा। भक्त लोग दुःख में डूब गए और प्राण त्याग करने का विचार करने लगे। तब आकाश वाणी हुई कि महाप्रभू शीघ्र ही आवेगें और सबके साथ कीर्तन करेंगे। भक्तों ने धीरज धरा। श्री गौर ने राढ़ देश में घूमकर हरिनाम का प्रचार किया। वहाँ से नीलाचल की ओर चले और गंगा के किनारे आए। गंगा की स्तुति किया और स्नान किया। पुनः श्री नित्यानन्द से कहा, "हम फुलिया होते हुए श्री अद्वैताचार्य के घर जायेंगे। तुम नव द्वीप जाकर सबसे समाचार कहो।" श्री नित्यानन्द नवद्वीप जाए और भक्तों से समाचार कहा। श्री शची माता जब से गौर गए उपवास कर रही थी। भक्त लोग विकल थे। सबको समझाकर माता से कहा कि आपका सब भार हम लोगों पर है। आप शोक न करें। हमें भूख लगी है आप पाक बनाकर भोग लगावें। माता ने नैवेद्य बनाकर भगवान को भोग लगाया। भक्तों के साथ श्री निताइ ने प्रसाद लिया। बारह दिन के उपवास के बाद माता ने थोड़ा भोजन किया।

सबने महाप्रभू के पास चलने की तैयारी की। पहिले पाषंडी लोग जो श्री गौर की निन्दा करते थे वे भी चले। गंगा के किनारे इतनी भीड़ हुई कि नौका नहीं मिलती थी। कोई पौड़कर, कोई लकड़ी की नाव बनाकर और कोई केला का पेड़ पकड़कर पार हुए। फुलिया नगर पहुँचकर, प्रभू के गृह के बाहर सब लोग हरिनाम कहने लगे। बड़ा कोलाहल सुन श्री गौर हरि हरि कहते हुए बाहर आए। कोटि कामदेव के समान प्रभू का श्री मुख दर्शन कर सब कोई बड़े प्रसन्न हुए। सबको हरिनाम का उपदेश दे महाप्रभू श्री अद्वैताचार्य के घर शांतिपुर पधारे। महाविरह से कातर श्री अद्वैताचार्य महाप्रभू को देख बालकों के समान रोने लगे और प्रभू के चरण पर गिर पड़े। महाप्रभू ने उनको उठाकर गले से लगा लिया। उसी समय श्री नित्यानन्द शची माता के साथ भक्तों सहित वहाँ पहुँचे। हरी ध्वनि से दिशा गूँज उठी। भक्तों का विरह दूर करने के निमित्त श्री गौर कीर्तन करने लगे। प्रभू के साथ कीर्तन के आनन्द में सब कोई मग्न हो गए। सबको शान्ति मिली।

कीर्तन करते करते श्री गौर विष्णु सिंहासन पर जा बैठे और अपना तत्व प्रकाश करने लगे। प्रभू ने अपने सब अवतारों का वर्णन किया। "हमही कृष्ण, राम और नारायण है। हमी ने सब अवतार धारण किया है। भक्तों की रक्षा हम सदा करते हैं। भक्तों के लिए ही हम अवतार लेते हैं। तुम लोग दुःख मत करो। हम सदा तुम

लोगों के साथ कीर्तन करेंगे। तिलभर भी हम भक्तों को छोड़कर नहीं रहते।" महाप्रभू का वचन सुन भक्तों का दुःख दूर हुआ और शांति मिली। श्री गौर सबके साथ गंगा स्नान को गए। स्नान कर आये और भक्तों के साथ बहुत दिनों पर प्रसाद ग्रहण किया। भक्तों ने महाप्रभू का प्रसाद लूट-लूटकर खाया।

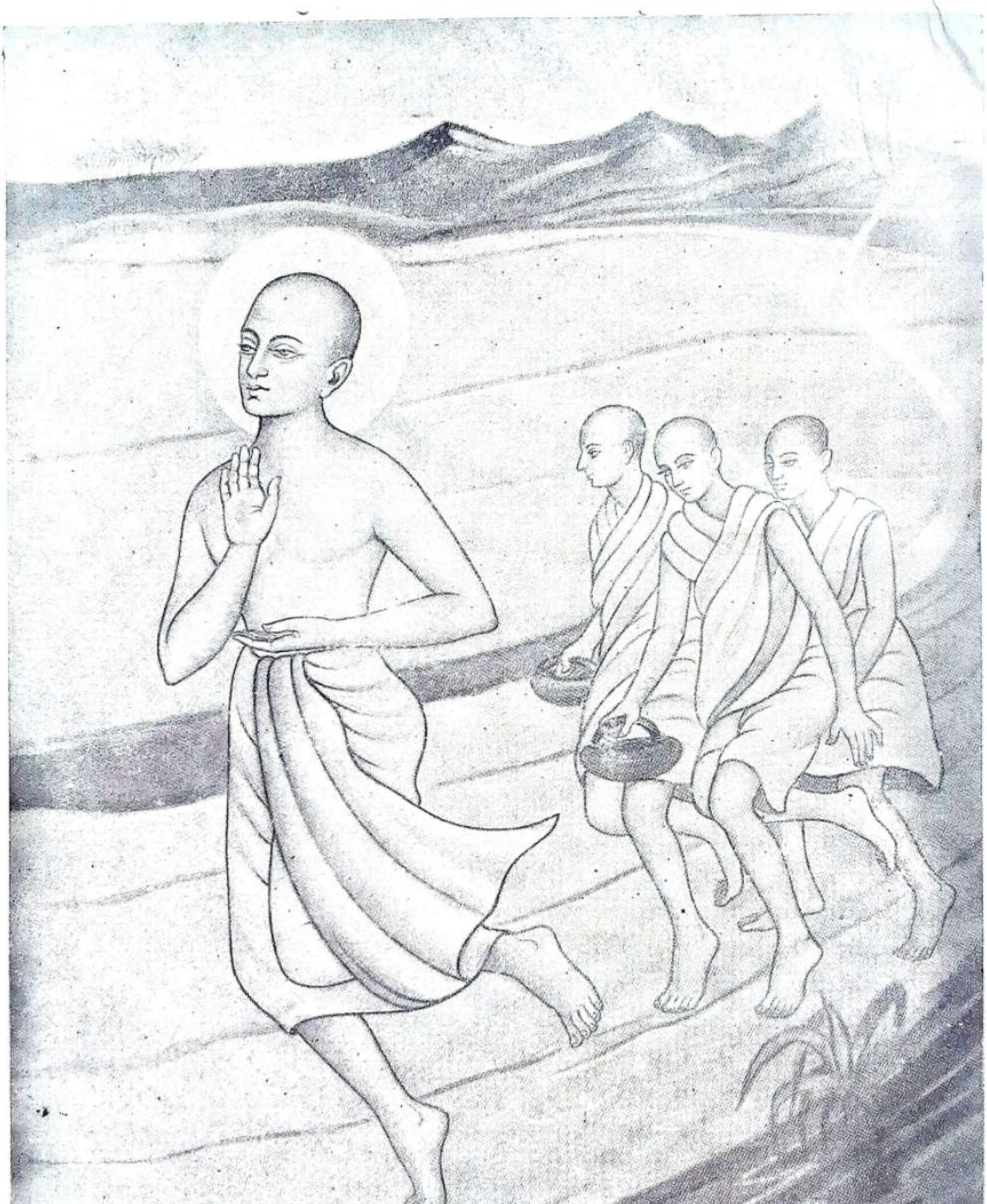
द्वितीय अध्याय

श्री गौर ने भक्तों से कहा, "हम नीलाचल जा रहें है, तुम लोग दुःखमत करो, हम फिर आवेगें। सब कोई घर जाकर हरिनाम का प्रचार और कीर्तन करो।" भक्तों ने कहा, "आपकी जो इच्छा। मार्ग में लड़ाइ हो रही है। टहर कर जाय तो बड़ा अच्छा हो।" प्रभू ने कहा, "हम जायगें।" श्री अद्वैत ने कहा, "आपको कौन रोक सकता है।" मत्त सिंह के समान श्री गौर चले। भक्त लोग भी प्रभू के साथ चले। कुछ दूर जाकर प्रभू ने कहा, तुम लोग चिंता मत करो। हम पुनः आवेगें।" इस प्रकार भक्तों को समझाकर विदा किया।

श्री नित्यानन्द, गदाधर, मुकुन्द, गोविन्द, जगदानन्द और ब्रह्मानन्द साथ में चले। मार्ग में श्री गौर ने पूछा, "साथ में तुम लोग क्या ले आए हो।" सबने उत्तर दिया, "आपकी आज्ञा बिना हम लोगों ने मार्ग के लिए कुछ नहीं लिया है।" उत्तर सुन प्रभू बड़े प्रसन्न हुए और बोले, "तुम्हारा उत्तर सुनकर हमको बड़ा संतोष हुआ। भाग्य में जिस दिन जो लिखा है वह अवश्य मिलेगा। भाग्य में यदि उपवास लिखा है तो राजपुत्र होने पर भी उपवास करना होगा। किसी से झगड़ा हो जाय अथवा ज्वर आजाय तो सब सामग्री रहते हुए भी उपवास होगा। भगवान ने सब जगह अन्न सत्र बनाया है। उनकी कृपा से सब जगह अन्न मिलेगा।" प्रभू चलते-चलते आटिसारा-ग्राम में श्री अनन्त पंडित के घर रात को रहे। वही भिक्षा किया और प्रातःकाल वहाँ से चलकर गंगा के किनारे किनारे छत्रभोग तीर्थ में आए।

यहाँ अंबुलिंग घाटपर जलमयशिवलिंग है। यहाँ स्नान कर शिवजी का दर्शन किया। यहाँ के अधिकारी रामचन्द्र खांने प्रभू को देख बड़े श्रद्धा से दंडवत किया। महा प्रभू ने कहा, "हम जगन्नाथ जी जाना चाहते है।" रामचन्द्र ने उत्तर दिया—"आपकी आज्ञा हम पालन करेगें। लड़ाइ हो रही है। आप कृपाकर यहाँ भिक्षा करें। हम रात्रि में अवश्य कोइ प्रबन्ध करेंगे।" श्री गौर प्रसाद लेने के बाद कीर्तन करने लगे। रात्रि में रामचन्द्र आए और कहा, "प्रभू नौका तैयार है।" "श्री गौर नौका में भक्तों के साथ बैठ गए। नौका चल पड़ी। कीर्तनप्रिय श्री गौर ने मुकुन्द से कीर्तन करने के लिए कहा। कीर्तन होने लगा। मल्लाह ने डर कर कहा, "यहाँ मार्ग में डाकू लोग लगते हैं। उड़ीसा पहुँचकर आप कीर्त्तन करे।" भक्त लोग डर कर चुप हो गए। श्री गौर ने कहा, क्यों डरते हो। यह नहीं देखते कि सुदर्शन चक्र घूम रहा है। चक्र सदा भक्तों की रक्षा करता है। कुछ चिन्ता नहीं। तुम लोग कीर्तन करो।" सब लोग कीर्तन करने लगे। कीर्तन करते करते प्रभू उत्कल देश में प्रयागघाट पहुँचे। बड़े प्रसन्न हो सब कोई उतरे। वहाँ स्नान कर प्रसाद ले आगे बढ़े।

श्री गौर का क्रन्दन और नाम कीर्तन सुन मार्ग में लोग बड़े चकित होते। एक नदी के किनारे घाट पर का दानी प्रभू को देख बड़ा प्रसन्न हुआ। भक्तों से पूछा, "आप लोग कौन हैं।" भक्तों ने कहा "हमलोग अपने गुरू श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभू के साथ नीलाचल जा रहे है।" भक्तों के नेत्र से भी जल बह रहे थे। इस अपूर्व दर्शन को पाकर दानी ने अपने को धन्य माना और सबको बिना पेसा लिए नौका में बैठाकर पार कर दिया। कुछ दिन बाद महाप्रभू सुवर्ण रेखा के किनारे आए। वहा स्नानकर विश्राम किया। इसी स्थानपर श्री नित्यानन्द ने प्रभू का दण्ड तोड़ दिया। श्री गौर बिगड़कर अकेले ही आगे बढ़े और जलेश्वर ग्राम में पहुँचे। वहाँ शंकर जी की आरती हो रही थी। श्री गौर बड़े प्रसन्न हो नृत्य कीर्तन करने लगे। भक्त लोग भी आ गए और कीर्तन करने लगे। जनता यह अपूर्व कीर्तन देख कर बड़ी प्रसन्न हुई। सब लोग कहने लगे स्वयं शंकर ही प्रकट हो कर कीर्तन कर रहे हैं वहाँ से महाप्रभू आगे बढ़े और रेमुना में श्री गोपीनाथ का दर्शन किया।



श्री श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु का जगदीशगमन

यहाँ से महाप्रभू याजपुर ग्राम में आये। यहाँ के सब तीर्थों का दर्शन करके दूसरे दिन कटक पधारे। महानदी में स्नान कर साक्षीगोपाल चले गए। यहाँ से भुवनेश्वर आए शिवजी का दर्शन कर कमालपुर आए। महाप्रभू को यहाँ से श्रीजगन्नाथजी के ध्वजा का दर्शन हुआ। दर्शन करते ही आप विह्वल हो उठे और एक श्लोक पढ़ा। जिसका भावार्थ यह है। "देखो प्रासाद के ऊपर श्रीबालगोपाल हमको देख कर हँस रहे हैं।" यह कहते और भूमि पर गिर पड़ते। इसी प्रकार श्लोक पढ़ते और दण्डवत् करते चले। अठारानाला पहुँच कर महाप्रभू अकेले ही जगन्नाथजी के मन्दिर की ओर चले। मन्दिर में प्रवेश कर श्रीजगन्नाथ का दर्शन किया। दर्शन करते ही भावावेश में आप श्रीजगन्नाथजी का आलिङ्गन करने हेतु दौड़े। बीच में ही विह्वल हो मूर्छित हो गए और गिर पड़े। संयोग से सार्वभौम भट्टाचार्य वहाँ थे। उन्होंने प्रभू को कुछ पहचान लिया और आदर से अपने घर उठा ले गए। भक्त लोग भी प्रभू के पीछे दौड़े-दौड़े आ गए और प्रभू को घेर कर कीर्तन करने लगे। तीनपहर बाद महाप्रभू सावचेत हुए और भक्तों से मिले। सार्वभौम को महाप्रभू ने गले से लगा लिया। स्नान कर महाप्रभू ने उन्हीं के यहाँ भक्तों सहित प्रसाद ग्रहण किया।

तृतीय अध्याय

श्री सार्वभौम के साथ विचार कर उनको कृपा कर अपने षड्भुज मूर्ति का दर्शन देकर कृतार्थ किया। श्री सार्वभौम ने सौ श्लोक से आपकी स्तुति की जो चैतन्य-शतक के नाम से विख्यात है। श्री परमानन्दपुरी, श्री स्वरूप दामोदर तथा और बहुत से गौर भक्त महाप्रभू के पास जगदीश आकर रहने लगे। एक दिन महाप्रभू श्री परमानन्द पुरी के मठ में गए। बात ही बात प्रभू ने सुना कि मठ के कूँए का पानी ठीक नहीं है। श्री गौर ने कूँए में गंगा का आवाहन किया। भक्त लोग हरी-हरी कहने लगे। रात्रि में गंगा देवी ने कूँए में प्रवेश किया। प्रातःकाल सब लोग कूए का पवित्र जल देख बड़े प्रसन्न हुए। श्रीगौर आए और पुरी की बड़ी प्रशंसा की।

कुछ दिन जगदीश में रह कर महाप्रभू गौड़ देशको गए। सार्वभौम के भ्राता विद्यावाचस्पति के घर पर कुछ दिन रहे। यहाँ महाप्रभू के ठहरने का समाचार चारों ओर फैल गया। दर्शन के लिए लोग आने लगे; जनता की अपार भीड़ और हरिध्वनि सुन श्रीगौर बाहर आए और सबको दर्शन दिया। श्रीगौर ने सबको यही उपदेश दिया कि श्रीकृष्ण को भजो, कृष्ण कहो और उन्हीं की लीला का चिन्तन करो। यहाँ से प्रभू कुलिया ग्राम गए। यहाँ बड़ा भारी कीर्तन उत्सव हुआ। यहाँ से प्रभू आगे बढ़े। देवानन्द पण्डित ने परम गौर भक्त श्री वक्रेश्वर पण्डित की बहुत सेवा की और कीर्तन सुना। भक्त के संग से देवानन्द के हृदय में महाप्रभू के प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हुई। महाप्रभू को देख वह उनके चरण पर गिर पड़े। श्रीगौर ने कृपा कर उनको श्री मद्भागवत् की भक्तिपूर्ण व्याख्या कर कथा कहने की आज्ञा दी। महाप्रभू ने कहा—"भागवत् भक्तिमय ग्रन्थ है। भक्ति-रस से भरा है। भक्ति द्वारा ही एकमात्र वह समझा जा सकता है।"

चतुर्थ अध्याय

इस प्रकार सबका उद्धार कर भक्तों के साथ मथुरा की ओर गंगा के किनारे-किनारे चलते-चलते रामकेलि ग्राम में पहुँचे। कीर्तन होने लगा। चारों ओर से जनता आने लगी और कीर्तन करने लगी। संयोग से बंगाल का बादशाह हुसेनशाह निकट ही आ गया। उसके मन में बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हुई। परन्तु उसके अनुचरों को भय हुआ और एक ब्राह्मण को महाप्रभू के पास भेज कर यह संदेशा कहलाया कि कृपा कर अन्यत्र चले जाँय। भक्तों को बड़ा भय हुआ। महाप्रभू भक्तों को भयभीत देख कर समझ गए और बोले—"राजा को क्या सामर्थ्य कि हमको बुलावे। हम जो चाहेंगे वह वही करेगा। बिना हमारी आज्ञा के कोई काम नहीं होता। तुम लोग भय मत करो और कीर्तन करो।" भक्त लोग कीर्तन करने लगे। नवाब स्वयं ही महाप्रभू को कष्ट न हो यह विचार कर राजधानी चला गया।

महाप्रभू कुछ दिन बाद श्री अद्वैताचार्य के घर आए। आचार्य बड़े प्रसन्न हुए और शचीदेवी को बुला भेजा। गौर विरह कातर माता बड़ी प्रसन्न हुई और भक्तों के साथ शान्तिपुर आई। श्रीगौर माता के चरण पर गिर पड़े, स्तुति करने लगे और बोले—"हमको कृष्ण-भक्ति तुम्हारे ही कृपा से मिली है।" माता ने रसोई बनाई और भक्तों के साथ महाप्रभू ने प्रसाद लिया। महासंकीर्तन हुआ।

श्रीमुरारी गुप्त ने श्री राघवेन्द्र सरकार का वर्णन आठ श्लोक में किया था। महाप्रभू ने उनको सामने देख उसको पढ़ने तथा व्याख्या करने के लिए कहा। भक्त लोग सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। महाप्रभू ने श्रीमुरारी गुप्त को रामदास की उपाधि दी। श्रीमुरारि गुप्त श्री हनुमान जी के अवतार थे। इसी समय एक कुष्ठ रोगी आकर महाप्रभू को दंडवत कर रोने लगा और अपना कष्ट निवारण करने के हेतु बहुत विनती करने लगा। श्री गौर ने क्रोधकर उससे कहा, "अरे मूर्ख तूने बहुत वैष्णव निन्दा की है। परम भागवत श्रीवास पण्डित का तूने बड़ा अपमान किया है। वैष्णव की महिमा तू नहीं जानता। वैष्णव श्री कृष्ण के बड़े प्रिय हैं। उन्हीं वैष्णवों की तूने निन्दा की है। तू हमारे देखने योग्य नहीं है।" ब्राह्मण के बहुत विनती करने पर प्रभू ने कहा, "तुम श्रीवास के पास जाओ। वही उद्धार करेंगे।" वह रोगी श्रीवास के पास गया। उनकी कृपा से उसका दुःख दूर हो गया।

महाप्रभू की उपस्थिति में श्री माधवेन्द्र पुरी की पुण्यतिथि पड़ी। श्री अद्वैताचार्य ने बड़े उत्साह से महा-महोत्सव मनाया। कितनी सामग्री आई उसका कुछ ठिकाना नहीं था। महासंकीर्तन हुआ। महाप्रभू ने आचार्य की महिमा वर्णन करते हुए कहा, "इतनी सम्पत्ति मनुष्य के पास नहीं हो सकती। आचार्य स्वयं महेश के अवतार हैं। श्रीकृष्ण ने स्वयं महेश की पूजा कही है।" संकीर्तन के बाद भक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया। असंख्य लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया। पुनः कीर्तन आरम्भ हुआ। जय जय ध्वनि से सब दिशा गूँज उठी। श्री नित्यानन्द, श्री आचार्य तथा श्री हरिदास आदि भक्तों के अपूर्व नृत्य कीर्तन का दर्शन कर जनता कृतार्थ हो गई। श्री माधवेन्द्र पुरी की महिमा महाप्रभू ने भक्तों से कहीं।

पञ्चम अध्याय

श्री आचार्य के घर कुछ दिन रहकर महाप्रभू श्रीवास के घर कुमारहट्ट पधारे। श्रीवास अपने प्रभू को देख निहाल हो गए। श्री गौर ने उनको गले से लगा लिया। श्रीवास जी ने बड़े आदर से सबको अपने घर में रखा। चारों ओर से भक्त लोग आने लगे। श्री पुरन्दर, वासुदेवदत्त, शिवानन्द आदि भक्त आए। महाप्रभू इन भक्तों को अपने से बढ़कर मानते थे। एक दिन महाप्रभू ने श्री वास से पूछा, "तुम कहीं आते जाते नहीं। इतना बड़ा कुटुम्ब कैसे पालन करते हो।" श्रीवास ने तीन ताली बजाई अर्थात् तीन उपवास होने पर गंगा में प्रवेश करेंगे। श्री गौर हँसे और बोले, "तुम्हारे घर सदा लक्ष्मी रहेगी। तुम्हें और श्री अद्वैत को कभी वृद्धावस्था नहीं आवेगी।" श्री राम पंडित से कहा कि बड़े भाई की सदा सेवा करना। यहाँ से श्री गौर पानीहाटी श्री राघवानन्द के घर गए। श्री गौर ने कहा, "तुम्हारे घर आकर हमको बड़ा संतोष हुआ। भक्त लोग आने लगे। श्री गदाधर दास, परमेश्वर दास, रघुनाथ वैद्य आए। श्री राघव से श्री गौर ने श्री नित्यानन्द की महिमा वर्णन की।

यहाँ से महाप्रभू वाराहनगर आए। यहाँ एक भागवत प्रेमी ब्राह्मण को कृतार्थ कर गंगा के किनारे होते हुए कुछ दिन बाद महाप्रभू नीलाचल पधारे। चारों ओर यह शुभसंवाद फैल गया। भक्त लोग आने लगे। महाप्रभू काशी मिश्र के घर रहे। सम्राट प्रतापरुद्र महाप्रभू का आगमन सुन कटक से पुरी आए। महाप्रभू के दर्शन की उनकी बड़ी इच्छा थी। भक्तों से परामर्श करने पर उन लोगों ने छिपकर दर्शन करने की अनुमति दे दी।

संयोग से एक दिन महाप्रभू उद्यान में कीर्तन कर रहे थे। राजा अकेले आए और पेड़ की आड़ में से दर्शन करने लगे। दर्शन कर बड़े प्रसन्न हुए। परन्तु धूलामय उनका अंग तथा नेत्रों का जल और मुख के फेन से लिप्त शरीर को देख कर मन में कुछ शंका हुई। यह सोचते विचारते राजा ने घर जाकर शयन किया। अपने भक्त

को उद्धार करने की प्रभू की इच्छा हुई। राजा ने स्वप्न में श्री जगन्नाथ जी को देखा। श्री जगन्नाथ जी का अंग धूलामय था। नेत्र, नासिका तथा मुख के जल से श्रीअंग भीजा हुआ था। राजा श्री जगन्नाथ जी का श्री चरण स्पर्श करने चले। श्री जगन्नाथ जी ने कहा, "राजन् तुम्हारे अंग में कस्तूरी, चंदन का लेप लगा है। हमारा अंग धूला आदि से लिप्त है। हमको क्यों स्पर्श करते हैं।" उसके पश्चात् राजा ने सिंहासन पर श्री गौर को भी उसी भेष में धूल धूसरित देखा। श्री गौर ने भी वही बात कही। जागने पर राजा को बड़ा दुःख हुआ। राजा ने अपने को बड़ा अपराधी माना और मन ही मन बहुत विनती करने लगे।

महाप्रभू एक दिन बगीचे में भक्तों के साथ कथा वार्ता कर रहे थे। राजा अकेले आए और प्रभू के चरण पर गिर पड़े। राजा के आँखों में जल, शरीर में कंप और रोमांच हो आया और मूर्छित हो गए। भक्ति का चिह्न देखकर महाप्रभू बड़े प्रसन्न हुए और उनके शरीर को स्पर्श कर कहा, "उठो।" प्रभू का स्पर्श पाते ही राजा प्रभू का चरण पकड़ कर रोने लगे। शांत होने पर हाथ जोड़ कर इस प्रकार स्तुति करने लगे—

"त्राहि-त्राहि कृपासिंधु सर्व जीवनाथ।
मुइ पातकी पर करो शुभ दृष्टि पात॥
त्राहि-त्राहि स्वतंत्र बिहारी कृपासिंधु।
त्राहि-त्राहि श्रीकृष्ण चैतन्य दीनबंधु॥
त्राहि-त्राहि सर्व वेद गोप्य रमाकान्त।
त्राहि-त्राहि भक्त-जन-वल्लभ एकान्त॥
त्राहि-त्राहि महा शुद्ध सत्व रुप धारी।
त्राहि-त्राहि संकीर्तन लंपट मुरारी॥
त्राहि-त्राहि अविज्ञात-तत्व गुणनाम।
त्राहि-त्राहि परमकोमल गुणधाम॥
त्राहि-त्राहि अजभव वन्द्य श्री चरण।
त्राहि-त्राहि सन्यास-धर्म-विभूषण॥
त्राहि-त्राहि श्री गौर सुन्दर महाप्रभू।
कृपा कर नाथ, छाड़व नाहि कभू॥"

स्तुती सुनकर श्री गौर बड़े प्रसन्न हुए और "कृष्ण भक्ति हो" कहकर आशीर्वाद दिया। उड़ीसा में जिन भक्त लोगों ने जन्म ग्रहण किया था वह धीरे धीरे आने लगे। श्री प्रद्युम्न मिश्र, श्री परमानन्द महापात्र आदि आए। गौड़ीय भक्त लोग भी आकर प्रभू के पास रहने लगे। एक दिन महाप्रभू ने श्री नित्यानन्द से कहा, यदि तुम भी यहीं हमारे पास रहोगे तो भक्ति धर्म का प्रचार कैसे होगा। तुम भक्ति के दाता हो। तुम गौड़ देश जाओ और हरि-नाम का प्रचार करो।" श्री निताई प्रभू की आज्ञा मान अपने परिकरों के साथ गौड़ देश आए। मार्ग में सब लोग प्रेम में विभोर हो भक्ति का प्रचार करते चले। प्रथम पानीहाट ग्राम में आए और महा संकीर्तन करते हुए देशभर में प्रेमभक्ति का प्रचार करते हुए घूमें। श्री नित्यानन्द ने अलंकार वस्त्रादि धारण कर भक्तों की इच्छा पूरी की। श्री निताई के एक भक्त ने यहाँ के काजी को भी हरिनाम दिया। यहाँ तीनमास रहकर श्री निताई खंडदह ग्राम पवित्र करते हुए सप्तग्राम आए। यहाँ वनिक लोगों का उद्धार कर श्री अद्वैताचार्य के यहाँ शान्तिपुर पधारे।

आचार्य बड़े प्रसन्न हुए। बड़े प्रेम से अपने घर में रखा। कुछ दिन कीर्तन भजन कर श्री नित्यानन्द श्री शची माता के दर्शनार्थ नवद्वीप आए। माता को आज्ञा से आर कुछ दिन नवद्वीप में रहे। प्रभू के शरीर पर अलंकार

आदि देख चोर लोग रात्रि में आए। कई दिन प्रयत्न करने पर भी कुछ न मिला। एक दिन चोर लोगों ने बहुत से वीर पहरा देते हुए देखे। दूसरे दिन वे लोग सो गए। तीसरे दिन आँधी में काँटे के गर्त में गिर पड़े और मरते-मरते बचे। तब प्रभू के शरण में आए। श्री निताई ने उनका उद्धार किया।

छठवां अध्याय

डाकुओं द्वारा अन्य डाकुओं का भी उद्धार कर श्री नित्यानन्द बड़गाछी, दोगाछी और कुलिया ग्राम गए। थोड़े दिन सब स्थान पर रहे। ग्राम-ग्राम घूमकर आपने नाम का प्रचार तथा कीर्तन किया। श्री निताई जहाँ जाते वही संकीर्तन कर भक्ति का प्रचार करते। यदा कदा एश्वर्य्य प्रकाशकर भाग्यवानभक्तों को अपूर्व दर्शन देते। श्री निताई के बहुत से पारषद थे। श्री निताई इनलोगों को देश में घूम-घूम कर नाम प्रचार के हेतु भेजते। श्रीगौरांग का अवशेष प्रसाद पानेवाली श्री नारायणी देवी के गर्भ से श्री वृन्दावनदास उत्पन्न हुए थे। यह भी नित्यानन्द के पारषद थे यही श्री वृन्दावन दास इस ग्रन्थ रत्न श्री चैतन्य भागवत के रचयिता हैं। यह बंगला साहित्य का आदि काव्य है।

सप्तम अध्याय

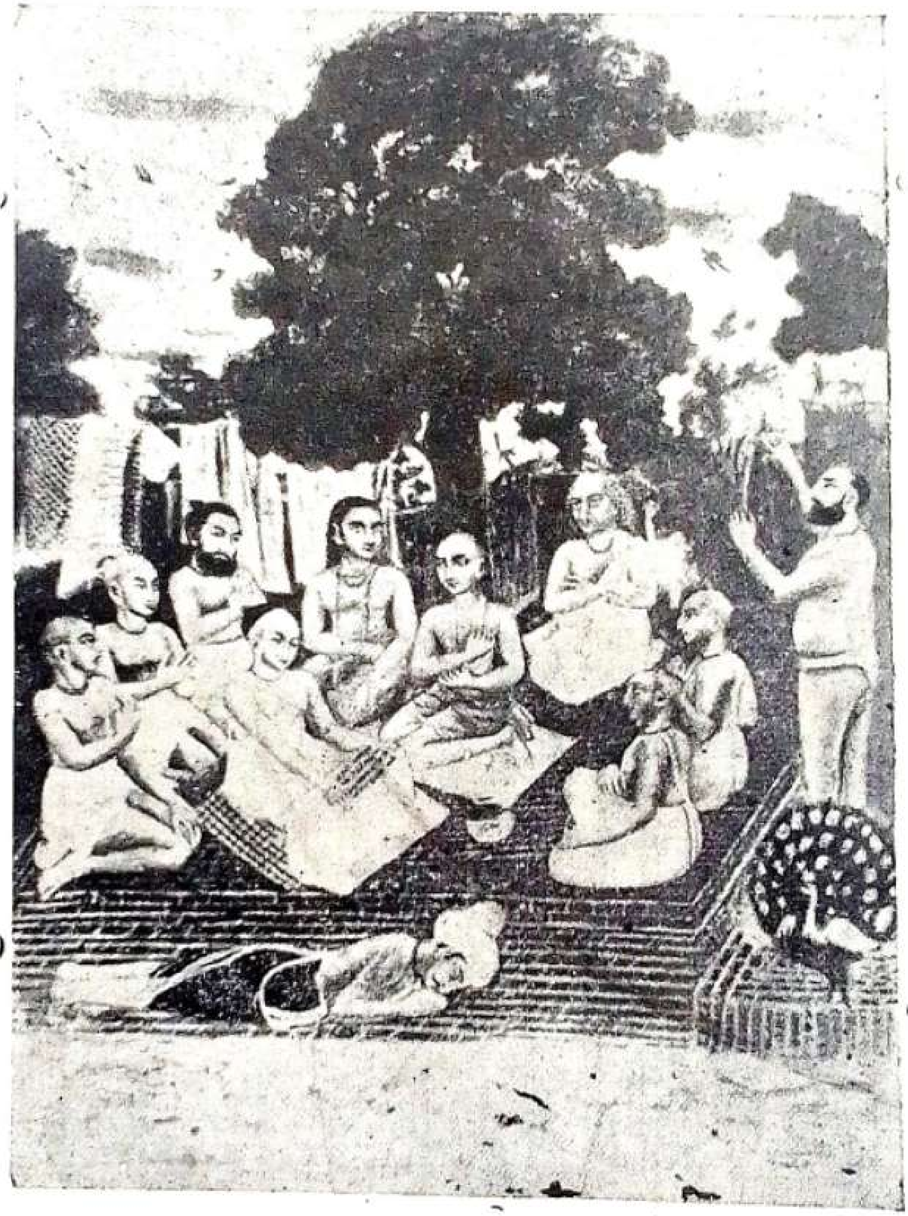
श्री गौरांग के सहपाठी एक ब्राह्मण नवद्वीप में रहते थे। श्री नित्यानन्द को ताम्बूलादि खाते तथा अलंकारादि रेशमी वस्त्र पहिनते देखकर उनको बड़ी शंका हुई। उन्होंने सोचा कि संन्यासी होकर यह ऐसा क्यों करते हैं। यही ब्राह्मण एकबार श्री जगन्नाथ जी के दर्शन के निमित्त नीलाचल गए। वहाँ श्री गौरांग के निकट वह नित्य जाते। एक दिन ब्राह्मण ने श्री गौर से पूछा, 'प्रभो, हमारा एक निवेदन है। श्री नित्यानन्द नवद्वीप जाकर क्या आचरण करते हैं, हम नहीं समझ सकते। संयासी होकर ताम्बूलादि भक्षण करते हैं। अलंकार और पट्टवस्त्रादि धारण करते हैं कृपाकर हमारी शंका दूर कीजिए।'' श्री गौर ने हँस कर कहा, "समर्थ को कोइ दोष नहीं है। वह माया से परे है। शंकर केअतिरिक्त और कोई विष नहीं पी सकता है। श्री भागवत में विस्तार से कहा है। ब्रह्माको काम वश देख मरीचि के छः पुत्र हँसे थे। उनका नाश हुआ। बड़ो का आचरण विधि निशेध के परे है। वह जगत कल्याण के निमित्त सब काम करते हैं। सब कोई उसको नहीं समझ सकता। श्री गौर के वचन को सुनकर ब्राह्मण बड़े प्रसन्न हुए। नवद्वीप आकर श्री नित्यानन्द से क्षमा मांगी भगवान भक्तो के प्रीत्यर्थ सब काम करते हैं ※

अष्टम अध्याय

श्री शची माता से अज्ञा लेकर श्री नित्यानन्द पुनः नीलाचल आए। एक उद्यान में आकर ठहरे श्रीगौर शेष भगवान का आगमन जान गए और जहाँ श्री नित्यानन्द ध्यानावस्था में बैठे थे आए। महाप्रभू निताई की स्तुति करने लगे और उनकी प्रदक्षिणा देने लगे। श्री निताइ उठ बैठे और प्रभू के गले से गले मिले। श्री निताई ने कहा, "आप हमारा उपहास करा रहे हैं। हमारा अलंकार आदि देखकर लोग हँसते है।" श्री गौर ने कहा "तुम्हारा यह

※ यथार्थ में बात यह थी कि श्री गौर के मुख से हरिनाम सुनकर के बालक आदि गृहस्थ लोग हरिनाम जपने लगे। उसमें बहुत से लोग घर छोड़कर बाबा जो बन गए और तीर्थ में जाकर नाम जपने लगे। स्वयं प्रभू का दर्शन कर और श्रीमुख से नाम सुनकर यदि ऐसा भया तो क्या आश्चर्य, यह देख माता-पिता बालकों को हरिनाम नहीं जपने देते, यह समझकर कि यह भी घर छोड़कर चला जायगा। श्री गौर को जब यह समाचार मिला तब श्री निताई को गौड़ देश भेजा। श्री नित्यानन्द ने स्वयं गृहस्थ बन करके सबसे यही कहा कि विरक्त बाबा जी बनने की आवश्यकता नहीं है। गृहस्थ भी हरिनाम जप सकता है। घर मत छोड़ो घर में रहकर हरिनाम जपो और वैष्णवों की सेवा करो। जैसा समय आता है भगवान वैसा करते हैं।

श्री चैतन्य भागवत



श्री जगन्नाथ पुरी में नरेन्द्र सरोवर पर
सपरिकर श्रीगौरांग का श्री गदाधर पंडित द्वारा श्री मद्भागवत श्रवण।
गंभीरा मठ पूरी में जहाँ श्री गौर रहते थे यह प्राचीन चित्र अंकित है।

अलंकार नहीं है। यह नवधाभक्ति के स्वरूप हैं। भक्तों को तुम्हारा दर्शनकर सुख मिलता है। शंकर सर्प के बहाने अनन्त को अपने शरीर पर धारण करते हैं। महात्मा लोग जीवों के कल्याण के हेतु सब कुछ कष्ट सहते हैं। हरि नाम बाटने के हेतु ही यह अवतार है।" इसी प्रकार आपस में बहुत सी बात चीत हुई।

पुनः श्री नित्यानन्द श्री गदाधर प्रभू के पास गए श्री नित्यानन्द श्री गदाधर प्रभू के हेतु गौड़ देश से उत्तम चावल और सूक्ष्म (महान्) वस्त्र ले आए थे। वह उनको देकर, "यह चावल श्री गोपी नाथ को भोग लगाना और वस्त्र श्री ठाकुर जी को पहिराना। श्री गदाधर प्रभू के सेव्य श्री मूर्ति का नाम श्री गोपीनाथ था। श्री गदाधर ने भोग लगाकर श्री गौर को प्रसाद अर्पण किवा। महाप्रभू ने बड़ी प्रशंसा की 'श्रीगौर ने कहा, यह श्री नित्यानन्द का द्रव्य, तुम्हारे हाथ का पाक और श्री गोपीनाथ का प्रसाद है। हमारा धन्य भाग जो हम इसको ग्रहण कर रहे हैं। इसके स्वाद की क्या प्रशंसा करें।" बड़े प्रेम से सब ने प्रसाद लिया।

नवम अध्याय

हर वर्ष की भाँति रथयात्रा के समय नवद्वीप से भक्त लोग नीलाचल को चले श्री अद्वैताचार्य, श्रीवास पण्डित, श्री विद्यानिधि तथा श्री हरिदास ठाकुर आदि सब कोई चले। श्रीगौरांग ने, भक्तों के निमित्त जब सब कोई कटक पहुँचे, महाप्रसाद भेजा, महाप्रसाद ग्रहण कर सब कोई बड़ी प्रसन्नता से आगे बढ़े। श्रीभक्तों के साथ अपने गौड़ीय भक्तों का स्वागत करने के निमित्त श्रीगौर आगे चले। महाप्रभू से मिलकर सबको बड़ा आनन्द हुआ। गले से गले मिलकर कीर्तन करते हुए नगर में आए। मन्दिर से हजारों माला और बहुतसा चन्दन ले आकर भक्तों ने सबको पहनाया और चन्दन माथे में लगाया।

उत्सव के समय श्री गोविन्द देवजी नरेन्द्र सरोवर पधारे। श्रीगौरांग भी भक्तों के साथ जल में उतर पड़े और जल-क्रीड़ा करने लगे। नौका पर तथा जल में दोनों स्थान पर भगवान् का दर्शन कर भक्त लोग कृतार्थ हो गए। सदा से भक्त और भगवान् मिल कर परस्पर लीला करते हैं।

दशम अध्याय

गौड़ीय भक्त लोग महाप्रभू की सब प्रिय भोज्य वस्तुओं को साथ में ले आए थे और बारी-बारी निमन्त्रण कर प्रभू को भोजन कराते थे, अबकी बार वैष्णव गृहणी भी साथ में आई थीं। श्री अद्वैताचार्य ने एक दिन महाप्रभू को निमन्त्रण दिया। महाप्रभू के साथ संन्यासी लोग भी आते थे। महाप्रभू स्वयं साग-भाजी खाते और सब व्यञ्जन उन लोगों को खिला देते थे। आचार्य की यही इच्छा थी प्रभू अकेले आवें और हमारा भोग स्वीकार करें। मध्याह्न के समय एकाएक घोर वृष्टि होने लगी और साथ में पत्थर भी गिरने लगे। कोई घर के बाहर न निकल सका। श्री अद्वैत सब भोग सजा कर श्रीगौरांग का ध्यान करने लगे।

श्री महाप्रभू "हरे कृष्ण हरे कृष्ण" कहते हुए अकेले पधारे। श्री अद्वैत बड़े प्रसन्न हुए और आसन पर प्रभू को बैठाकर भोजन कराने लगे। आचार्य जो परोसते महाप्रभू भोजन करते। आचार्य ने कहा कि आज इन्द्रदेव ने हमारा मनोरथ पूरा किया। महाप्रभू समझ गए और हँसकर कहा, "तुम्हारे सब मनोरथ अवश्य पूरे होते हैं।" नाम प्रचार बढ़ाने के हेतु श्री गौरांग ने यह नियम रखा था कि जो वैष्णव एक लाख हरिनाम नित्य जप करेगा हम उसी के यहाँ भिक्षा करेंगे। भक्त लोग महाप्रभू को भिक्षा कराने के हेतु बड़े उत्सुक रहते थे। अब सब कोई एक लाख हरिनाम नित्य जपने लगे। श्री केशव भारती से एक दिन महाप्रभू ने पूछा, "कृपा कर आप बतावें कि ज्ञान और भक्ति में कौन बड़ा है। भारती ने श्री भागवत आदि का प्रमाण देते हुए बहुत व्याख्या किया। अन्त में उन्होंने भक्ति को बड़ा कहा। महाप्रभू रात दिन कीर्तन में ही मग्न रहते।

एक दिन श्री अद्वैताचार्य ने बड़े प्रसन्न होकर भक्तो से कहा, "आज वह लोग मिलकर आनन्द से श्री गौर अवतार का कीर्तन करें। आज किसी और अवतार का कीर्तन न होगा। हम लोगों के हेतु श्री गौरांग ने अवतार लेकर नाम प्रचार किया। जिस प्रभू ने जगत का उद्धार किया है। आज हम लोग उसी अवतार का कीर्तन करेंगे। भय छोड़कर सब कोई कीर्तन करो। हम नृत्य करेंगे तुम लोग कीर्तन करो।" श्री अद्वैत ने सुराधरा और सब लोग गाने लगे—

श्री चैतन्य नारायण करुणासागर।
दीन दुःखित बंधु, मो पर दयाकर॥

श्री आचार्य के श्री मुख का यह पद है। इसके कीर्तन से सब कुछ मिल सकता है। मंडली बांधकर भक्त लोग गाने लगे—

जय संकीर्तन-प्रिय श्री गौर गोपाल।
जय भक्त जन प्रिय पार्षंडिन को काल॥ २॥

आचार्य पुनः यह पद गाने लगे—

श्री राग

पुलकित चित गाय, सुखे भुइ लोटाय,
देखहु श्री चैतन्य अवतार।
वैकुंठनायक हरि, द्विजरूप अवतरि,
संकीर्तन करत विहार॥
कनक समान कांति, श्री विग्रह शोभित अति,
आजामुलम्बित माला साजे रे।
संन्यासी को रूप धरि, आपन रस विह्वल,
ना जानौ कौन सुख नाचै रे॥
जय जय श्री गौर, सुन्दर करुणा सिंधु,
जय जय वृन्दावन राया रे।
जय जय सम्प्रति नदिया पुरन्दर,
चरण कमल देहु छाया रे॥ ३॥

इसी प्रकार नाना रुप से भक्त लोग श्री गौर-संकीर्तन करने लगे। संकीर्तन की ध्वनि सुन कीर्तन लम्पट श्री गौरांग बड़े प्रेम से आए। महाप्रभू को देखकर भक्त लोग बड़े उत्साह से कीर्तन करने लगे। महाप्रभू सदा दास्य भाव में रहते। उनके सन्मुख किसी का साहस नहीं होता कि ईश्वर कहे। आज आचार्य के बलपर सब कोई महाप्रभू का कीर्तन कर रहे हैं। महाप्रभू अपना कीर्तन सुनकर कुछ संकोच वश हो अपने निवास स्थान को चले गए। भक्त लोग महाप्रभू का दर्शन कीर्तन के मध्य में करते रहे। आनन्द से कीर्तन कर भक्त लोग महाप्रभू के पास आए। महाप्रभू ने श्रीवास पंडित से पूछा, "आज तुम लोग क्या नया कीर्तन कर रहे थे।" श्रीवास पंडित ने कहा, "भगवान जो कहाता है, हमलोग वही कहते हैं। हम लोगों में क्या शक्ति है।" प्रभू ने कहा, "तुमलोग पंडित होकर भी जो कोई अपने को छिपाना चाहता, उसको प्रगट करते हो।" श्रीवास ने अपने दोनों हाथों से सूर्य को ढापना चाहा प्रभू ने पूछा, "यह क्या।" श्रीवास पंडित ने कहा, "प्रभू जिस प्रकार सूर्य को कोइ अपने हाथ से नहीं छिपा सकता, उसी प्रकार हमलोग आपको नहीं छिपा सकते हैं।

उसी समय बाहर बहुत से यात्री आए और "जय श्रीकृष्ण चैतन्य वनमाली, जय जय श्री वैकुंठ विहारी" कह कर कीर्तन करने लगे। श्रीवास ने कहा, "प्रभो, इनको किसने कहा है। सब लोग आपको जान गए हैं। इनको कृपाकर दर्शन दें।" श्री गौर ने बाहर आकर सबको दर्शन दे कृतार्थ किया। भक्तों के साथ आप कीर्तन करने लगे। जनता को आपने हरे कृष्ण मंत्र का उपदेश दिया। भक्तों के साथ इसी प्रकार श्री गौर कृष्ण कथा तथा कीर्तन में सदा मग्न रहते। भक्त लोग चारों ओर प्रभू को घेर कर बैठते और बीच में श्री वैकुंठनाथन्यासी चूड़ामणि विराजते।

ऐसे समय दोनों भाई श्री सनातन और रूप प्रभू के सन्मुख आए और दूर से दंडवत कर और दांतों में तृण धरकर विनती करने लगे—

जय जय महाप्रभू श्री कृष्ण चैतन्य।
जाकी कृपा सो जगत भयो धन्य॥
जय दीनवत्सल जगत् हितकारी।
जय जय परम संन्यासी रूपधारी॥
जय जय संकीर्तन विनोद अनन्त।
जय जय जय सर्व आदि मध्य अन्त॥
स्वयं धन्यो श्री वैष्णव अवतार।
भक्ति देइ उद्धार्‍यो सकल संसार॥

इस प्रकार स्तुति कर कहा, "महाराज आपने जगत् का उद्धार किया। हमको राज मन्त्री बनाकर बड़ा पाप कराया। अब कृपाकर हमारा उद्धार करिए। वैष्णवों का हमको महाप्रसाद जूठन मिले ऐसी कृपा करिए।" महाप्रभू ने कहा, "तुम लोग धन्य हो। सब माया का बंधन छोड़कर भक्ति की इच्छा करते हो। यदि प्रेमभक्ति प्राप्त करने की इच्छा है तो श्री अद्वैताचार्य का चरण पकड़ो। यही भक्ति के भंडारी हैं।" दोनों भाइयों ने आचार्य का चरण पकड़ लिया। आचार्य ने कहा, "महाप्रभू की आज्ञा से तुम दोनों को प्रेमभक्ति प्राप्त हो गई। महाप्रभू ने प्रसन्न होकर कहा, "तुम लोग कुछ दिन यहाँ रहकर मथुरा जाओ और भक्ति शास्त्र का प्रचार करो। हम भी मथुरा आवेंगे। श्री अद्वैताचार्य की अपार महिमा महाप्रभू ने एक दिन श्रीवास पंडित से कहा।

एकादश अध्याय

भक्तों के साथ महाप्रभू नानाप्रकार के भक्ति-सिद्धांत पर विचार करते। एक दिन श्री अद्वैताचार्य से महाप्रभू ने पूछा, "आप कहाँ से आ रहे हैं।" आचार्य ने उत्तर दिया, "श्री जगन्नाथ का दर्शन कर तथा परिक्रमा कर आपके पास आए।" श्री गौर ने कहा, "हार गए।" आचार्य ने कारण पूछा। महाप्रभू ने उत्तर दिया, जितने समय प्रदक्षिणा देते रहे उतने समय भगवान के दर्शन से वञ्चित रहे। हम जब तक श्री जगन्नाथ जी का दर्शन करते हैं, उसी ओर देखते हैं। हमारे नेत्र इधर-उधर नहीं जाते। हम श्री जगन्नाथ के भिन्न और कुछ नहीं देखते।" आचार्य ने हाथ जोड़कर कहा, "आप ही एक मात्र इसके अधिकारी हैं। इस बात में हम आपसे हार मानते हैं।"

श्री गदाधर प्रभू से महाप्रभू श्री भागवत की कथा सुनते। श्री गौर विशेष कर प्रह्लाद चरित और ध्रुवचरित सुनते। बार-बार सुनते। भक्तों का चरित महाप्रभू को विशेष प्रिय था। श्री दामोदर स्वरूप का कीर्तन प्रभू को बड़ा प्रिय था। बड़ा भावमय कीर्तन करते। कीर्तन सुन महाप्रभू भावाविष्ट हो नृत्य करते। एक दिन भावाविष्ट हो प्रभू कूएँ में गिर पड़े। कूएँ में प्रभू हँस रहे थे और भक्त लोग ऊपर रो रहे थे। भक्तों ने बहुत संभाल कर प्रभू को बाहर निकाला।

श्री पुंडरीक विद्यानिधि प्रभू के दर्शनार्थ नीलाचल आए। संयोग से श्री जगन्नाथ के उडनषष्ठी उत्सव का समय था। सबने महाप्रभू के साथ दर्शन किया। इस उत्सव में श्री जगन्नाथ नानाप्रकार के रेशमी कोरा माड़ुआ वस्त्र पहिरते हैं। भगवान के सेवक लोग भी वही वस्त्र पहिरते हैं। दर्शन और कीर्तन कर सब कोई अपने घर गए। श्री पुंडरीक विद्यानिधि ने अपने प्रिय सखा श्री स्वरूप दामोदर से पूछा। "माड़ी लगा कपड़ा भगवान क्यों पहिनते हैं।" श्री स्वरूप ने उत्तर दिया, "यहाँ की यही प्रथा है। लोकाचार में दोष नहीं है।" विद्यानिधि को संतोष नहीं हुआ और हँसते-हँसते घर गए। महाप्रभू सब जान गए। रात्रि में स्वप्न में श्री जगन्नाथ के रूप में विद्यानिधि को दर्शन दिया। विद्यानिधि ने देखा कि बड़े क्रोध से दोनों भाई उनको थप्पड़ मार रहे हैं।

विद्यानिधि प्रभू के श्री चरण पर गिर पड़े और बोले कि मेरा क्या अपराध है। प्रभू ने उत्तर दिया, "तुमने बड़ा अपराध किया है। हमारी और हमारे सेवकों की जाति नहीं है। तुम अपनी जात रखकर अपने घर जाओ। यहाँ क्यों रहते हो।" विद्यानिधि ने बड़ी प्रार्थना कर अपना अपराध क्षमा कराया और कहा, "हमारा धन्य भाग्य, आज हम श्री हस्त के प्रसाद से धन्य हो गए।" सवेरे उठकर उन्होंने देखा कि उनके दोनों गाल फूले हैं। श्री स्वरूप दामोदर से सब वृत्तांत कहकर अपने भाग्य की प्रशंसा की।

समाप्त अन्तखण्ड

इति श्री वृन्दावनदास विरचित श्री चैतन्य-भागवत वृजभूषणदास कृत हिन्दी अनुवाद समाप्त ॥

श्री चैतन्यचन्द्र चरण में समर्पित ॥

परिशिष्ट

श्री सार्वभौम को कृतार्थ कर (तृतीय अध्याय में) श्री गौरांग दक्षिण यात्रा को चले गए। प्रथम गोदावरी के तट पर श्री रामानन्द राय के यहाँ गए। उनके यहाँ कुछ दिन रहकर भक्ति सिद्धांत पर सूक्ष्म विचार किया। वहाँ से मार्ग में हरिनाम कीर्तन तथा प्रचार करते आप श्री रंग जी आए। यहाँ वर्षाकाल में चार महीना श्री वेंकट भट्ट के घर रहे। बालक श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी को उपदेश दिया। यहाँ से नाम प्रचार करते आप श्री रामेश्वर गए। वहाँ महासंकीर्तन कर भक्तों को कृतार्थ किया। वहाँ से चलकर मार्ग में बौद्धों का उद्धार कर पंढरपुर पधारे। श्री विश्वरूप की समाधि पर कीर्तन कर संतुष्ट हुए। आगे बहुत से तीर्थों में घूमते श्री नीलाचल पधारे। चारों ओर संवाद फैल गया। भक्त लोग आने लगे। नदिया के भक्त गण प्रत्येक वर्ष रथयात्रा पर आते थे और चार महीना यहाँ रहकर तब नदिया जाते थे। भक्त लोग भगवान के रथ के सामने महासंकीर्तन करते।

कुछ दिन बाद श्री गौरांग श्री वृन्दावन यात्रा के निमित्त सावन महीने के अन्त में झारखंड के वन मार्ग से जगदीश पूरी से सीधे काशी पधारे। घाटपर तपनमिश्र से भेट हुई। स्नान कर भक्तों के साथ विश्वनाथ, अन्नपूर्णा का दर्शन कर कीर्तन किया। वहाँ से विन्दुमाधव का दर्शन कर आदिकेशव गए। भादों की पूर्णिमा (विश्वरूप क्षौर) के पाँच दिन पहिले आप प्रयाग चले गए। त्रिवेणी में स्नान कर कीर्तन किया। तीन दिन वहाँ रह कर आप उत्तर प्रदेश को पावन करते हुए कार्तिक मास के अन्त में मथुरा पहुँचे। यहाँ स्नानकर जन्म स्थान का दर्शन कर श्री वृन्दावन पधारे।

श्री वृन्दावन में आप सदा महाभावावेश में रहते थे। थोड़ी देर के लिए यदि शांत होते तो पुनः वही भाव धारण करते। मथुरा मंडल के भक्त लोग आपके साथ कीर्तन भजन करते। कृष्णदास ब्राह्मण, राजपूत गुञ्जमाली और भक्त चक्र पाणी प्रधान भक्त थे। श्री गौरांग ने राधाकुंड, श्यामकुंड आदि बहुत से लुप्त तीर्थों का उद्धार किया। भक्तों के आग्रह से आप मकर संक्राति पर प्रयाग आए और दस दिन यहाँ रहकर श्री रूप गोस्वामी को शिक्षा दिया। यहाँ से आप काशी आए। काशी में दो महीना रहे। श्री सनातन गोस्वामी को वैष्णव धर्म के सूक्ष्मतत्व तथा भक्ति के निगूढतत्व की शिक्षा दी। प्रातःकाल तथा सायंकाल को आप गंगा में स्नान करते तथा मंदिरों में दर्शन करते समय महासंकीर्तन कर जनता को हरिनामामृत पान कराकर तृप्त करते। रात्रि में भक्तों को भक्ति धर्म का उपदेश देते। यहाँ संन्यासियों पर जाते समय कृपाकर उनका उद्धार किया। संन्यासियों में प्रकशानन्द सबसे बड़े थे। इन्होंने श्री गौरांग पर बहुत से श्लोक तथा पुस्तकें संस्कृत में रची है। श्री गौरांग के रूपमाधुरी तथा कीर्तन का बड़ा सुन्दर वर्णन है। श्री चैतन्य-चन्द्रामृत आदि कई ग्रंथ रचे हैं। काशी से चलते समय गोप बालक पर कृपा किया और उसके हाथ से लेकर तक्र (मट्ठा) पान किया। वह स्थान अभी भी "चैतन्यवट" (जतनवर) के नाम से विख्यात है। यहाँ श्री गौर की षड़ मुर्ति विद्यमान है। प्रति वर्ष यहाँ उत्सव मनाया जाता है।

काशी से आप सीधे नीलाचल पधारे। आपका आगमन सुन सब लोग बड़े प्रसन्न हुए। रथयात्रापर नवद्वीप से भक्त लोग आए। बड़ा महोत्सव मनाया गया। पूरी में आपने बहुत सी लीलाएँ की और भक्तों को कृतार्थ किया। भक्त लोग जो ग्रंथ लिखते वह सब प्रभू के पास पूरी में भेजते तथा स्वयं ले आकर पढ़ श्री गौर को सुनाते। श्री स्वरुप दामोदर गोस्वामी पहिले उसको पढ़ते और उचित समझकर तब प्रभू को सुनाते भक्ति ग्रंथों का एक

बहुत बड़ा साहित्य तैयार हो गया। इसमें मुख्यतः श्री गौरांग के श्रीमुख से बताई हुई श्रीमद्भागवत की अपूर्व भक्ति पूर्ण व्याख्या है। वर्तमान संस्कृत साहित्य में यह अपना एक प्रधान स्थान रखता है। चौंसठ श्री गोस्वामी ग्रन्थ तथा श्री मुरारिगुप्त का महाकाव्य, श्री अद्वैताचार्य, श्री स्वरुपदामोदर, रायरामानन्द आदि महानुभावों के बहुत से ग्रंथ रत्न संस्कृत में हैं। बंग भाषा का आदि काव्य यह श्री चैतन्य भागवत, श्री इशाननागर का अद्वैतप्रकाश, श्री कृष्णदास कविराज का श्री चैतन्य चरितामृत तथा गोविन्द घोष आदि कवियो की मधुर पदावली बंग भाषा में है। हिन्दी में भी कुछ ग्रंथ "रसिक-विलास" आदि रचे गए थे।

समाप्त

श्री गौर मंत्र

तत्र श्री पार्वती प्रति श्री महादेव वाक्यं यथा

श्री महेश्वर उवाच

युगे युगे तनूं गृह्य हरिरव्ययमैश्वरं ।
चतुर्वर्गप्रदो विष्णुः कलौमानुष विग्रहः ॥
तस्य मंत्रान् प्रवक्ष्यामि कल्पवृक्षानिव प्रिये ।
यानश्रुत्वा मानवो नित्यं नान्यमंत्रं समीहते ॥
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्यऽन्तं गौरांगमुद्धरेत् ।
हृदयस्थो मनुःसोयं गौरांगस्य षड़क्षरः ॥
ममाप्ययं महामंत्रः वाञ्छाधिक फलप्रदः ।
मायादिक तदन्तश्चेन्मंत्रोयं सुरपादपः ॥
अपरं शृणु चार्वंगी मंत्रराजमिमं प्रिये ।
आदौ मायां समुच्चार्य गौरचन्द्रं ततोवदेत् ॥
युक्तं चैव देवेशि ततोमायां समुद्धरेत् ।
एषः सप्ताक्षरो मंत्रः सर्वाभीष्टप्रदायकः ॥
गंगा-गर्भे सरित्तीरे तीर्थस्थाने सुपुण्यदे ।
देवालये पुण्यभूमौ पुरश्चर्या विधीयते ॥
पुरश्चर्यां विना देवी गौरचन्द्रश्च मोक्षदः ।
कृष्ण विद्या हितोदेवि सपर्याविधिरुत्तमः ॥
विशेषं कथयाम्यत्र शृणु देवि प्रियंवदे ।
स्नानान्तं कर्म संपाद्य धौतवस्त्रं विधारयेत् ॥
गोपीचन्दनतोयाभ्यां तिलकं धारयेत् सुधी ।
आचम्य पूर्व दिग्वक्तः संध्या तर्पण कर्मणि ॥
निष्पाद्य भक्तियोगेन गौराङ्गं पूजयेत् प्रिये । इत्यादि

॥ इति ईशान संहिता वचनं ॥

(श्री चैतन्य तत्त्वदीपिका से उद्धृत)

भावार्थ—श्री महादेव श्री पार्वती जी से कहते हैं, "भगवान हरि प्रत्येक युग में अव्यय ईश्वरी शरीर धारण करते हैं। वही भगवान कलियुग में मनुष्य का रूप धारण कर जीवों को चतुर्वर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष देते हैं। हे प्रिये, उन्हीं महाप्रभु के सब मन्त्र हम तुमसे कहते हैं। इन मन्त्रों के ग्रहण करने पर अन्य मन्त्रों की आवश्यकता नहीं रहती। प्रथम प्रणव कहकर तत्पश्चात् गौरांग कहना चाहिए। अर्थात् ॐ गौराय नमः। हमारे हृदय में स्थित यह षड़ाक्षर गौर मन्त्र बहुत फल देता है। यह मन्त्र माया आदि बीज युक्त भी जपा जाता है अर्थात् ह्रीं, श्रीं, क्लीं ऐं श्रीं गौरायनमः)। जिनको प्रणव जपने का अधिकार (स्त्री तथा शूद्र) नहीं है वह यह मन्त्र जप सकते हैं। एक और मन्त्र कहते हैं, ध्यान से सुनो। पहले माया बीज उच्चारण कर फिर गौर चन्द्र कहना चाहिए। (ह्रीं गौर चन्द्रायनमः अथवा ॐ ह्रीं गौराय नमः) यह सप्ताक्षर गौर मन्त्र जीव के सब अभिलाषाओं को पूर्ण करता है। गंगातीर पर, तीर्थ स्थान में अथवा मन्दिर में इस मन्त्र का जप करे। कृष्ण मन्त्र युक्त कर देने से अधिक फल होता है। स्नान कर, धुले हुए कपड़े पहिर कर, गोपी चन्दन का तिलक लगाकर तथा संध्या तर्पणादिकर भक्ति पूर्वक श्री गौरांग की पूजा करे।

अथ श्रीगौरांग कवचम्

महेश्वर उवाच

अधुना संप्रवक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिदं ।
सर्व रक्षाकरं गौर चन्द्रस्य कवचं प्रिये ॥
अज्ञात्वा कवचं ह्येतत् योऽर्चयेत् गौर सुन्दरं ।
तस्य पूजा वृथा देवि रोगशोक समप्रदा ॥
गौरांगकवचस्यास्य ऋषिरंगिरसः स्मृतः ।
त्रिष्टुपछंदो देवता च नररूपो महाप्रभुः ॥
द्रीं द्रीं बीजमस्य शक्तिः द्रीं लेखा कीलकं तथा ।
चतुर्वर्गार्थ संसिध्यौ विनियोगः प्रकीर्तितः ॥
प्राच्यां रक्षतु मां नित्यं ब्रह्मबीजमनुत्तमम् ।
गौरायेति तथा याम्यां प्रतीच्यान्तु नमः पदं ॥
सर्वमेतत् उत्तरास्यां नित्यं मां परिरक्षतु ।
मायाद्यो गौरचन्द्रो मां जले रक्षतु सर्वदा ॥
मायादिकस्तदन्तश्च रक्षेत् मां काननान्तरे ।
पापाद्रक्षतु मां नित्यं सर्वमंत्राः सनातनाः ॥
विवादेऽवतु मां गौरो दुःखशोके शचीसुतः ।
दारिद्रे गौरचन्द्रो मां दुःस्वप्ने गौरसुन्दरः ॥
हृदि हस्ते तथा नाभौ शिरोग्रीवे पदोः कटौ ।
गौरांगः सर्वदा पातु गौरचन्द्रो नखेषु च ॥
रक्षाविहीनं यत्स्थानं यद्वादुष्ट भयादिकं ।
तत् सर्व देव देवेशो गौरदेहः सदाऽवतु ॥
इत्येतं कवचं गौरचन्द्रस्य परिकीर्तितं ।
प्रत्यहं भक्तिभावेन पठितव्यं नरैः सदा ॥
न प्रकाश्यं पामरेभ्यौ नवाच्यं मत्स्यभोजिने ।
नैवमांसाशिने वाच्यं नैव योषिन्निषेविने ॥
प्रकाश्यं वैष्णवेष्वेव गौरांग कवचं प्रिये ।
त्रिसंध्यं प्रपठेत् योवै मानवौ वैष्णवाग्रणी ॥
मंत्रसिद्धिर्भवेत् तस्य अष्टैश्वर्य समन्विता ।
वादे विवादे विजयी युद्धे क्रोधेहुताशने ॥
सएवधन्या लोकेषु कवचं यः पठेत् सदा ।
तस्य दोषं न गणयेत स एव गौर सुन्दरः ॥
इत्येतं गौरचन्द्रस्य कवचं परिकीर्तितं ।
श्रुत्वा हृदि समास्थाय यथावत् विहरप्रिये ॥

॥ इति श्री ईशान संहितायां श्रीगौरांग कवचं समाप्तं । ॐ तत्सत् ॥

श्रीचैतन्य महाप्रभु के सिद्धान्त

आराध्यो भगवान व्रजेशतनयस्तद्धाम वृन्दावनं ।
रम्या काचिदुपासना व्रजवधू बर्गेन या कल्पिता ॥
शास्त्रं भागवतं पुराणममलं प्रेमा पुमर्थोमहान् ।
श्रीचैतन्य महाप्रभोर्मतमिदं तत्रादरो नापरः ॥

हमलोगों की आराध्य वस्तु भगवान श्रीव्रजेन्द्र नन्दन एवं उनका धाम श्रीवृन्दाबन है । जिस प्रकार श्रीव्रज की गोपियों ने श्रीकृष्ण की उपासना की वही सुन्दर उपासना सर्वश्रेष्ठ है । श्रीमद्‌भागवत ही प्रधान शास्त्र और प्रेम ही परमपुरुषार्थ है । श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु का यही मत है और यही उपासना हमलोगों के लिए आदरणीय है ॥

श्रीगौर गायत्री

ॐ क्लीं शचीनन्दनाय विद्महे विश्वम्भरायधीमहि तन्नोगौरः प्रचोदयात् ॥इति॥

क्लीं ककारादि सृजद्विश्वं इति प्राहुः श्रुते गिरः ।
लकारात् पृथ्वी जाता ककारात् जलसम्भवः ॥
इकारात् वह्निरुत्पन्नो नादाद्वायुरजायत ।
विन्दोराकाशसम्भूतिरिति भूतात्मको मनुरिति ॥ गौतमीय तंत्र

—:❀✱❀:—

॥ अथ श्री गौरांग देव स्तोत्रं ॥

: श्री ब्रह्मोवाच :

ॐ नमस्यामि शचीपुत्रं गौरचन्द्रं जगद्‌गुरुं । कलिपापविनाशार्थं हरिनामप्रदायकं ॥ १ ॥
कृष्णं कमलपत्राक्षं नवद्वीपनिवासिनं । शत्रौ मित्रष्युदासीने सर्वत्र समदर्शनं ॥ २ ॥
नमोस्तु गोकुलेशाय नमस्ते द्वारिकाप्रिय । गोपीनां हृदयाभीष्टदात्रे तुभ्यं नमो नमः ॥ ३ ॥
राधिकावल्लभं त्वांहि नमस्यामि कृताञ्जलिः । नंदगोप सुतश्चैव नमस्ये त्वां गदाग्रज ॥ ४ ॥
गोपिकावल्लभं वन्दे पूतनावध कारिने । बकासुराय हंत्रेच वृन्दावनविलासिने ॥ ५ ॥
मथुराप्रिया च नमो नमस्ते कंसनाशन । नमो वाराहरूपाय नृसिंहाय नमोनमः ॥ ६ ॥
नमो वामनरूपाय बलिनिग्रह कारिने । नमः परशुरामाय क्षत्रियान्तकराय च ॥ ७ ॥
नमस्ते राम रूपाय प्रलंबनिधनायच । नमस्ते रघुवर्याय रावणान्तकरायच ॥ ८ ॥
नमः कृष्णाय हरये राधिकासेवितायच । नमो बुद्धाय शुद्धाय हिंसावारयिताच यः ॥ ९ ॥
नमोस्तुते हृषीकेश कल्किरूपिन् नमोस्तुते । नमश्चैतन्यचन्द्राय पुरन्दर सुतायच ॥ १० ॥
वैष्णव प्राणदात्रेच गौरचन्द्रायते नमः । भक्ति प्रियाय गुरवे हरिनाम्नां प्रदायक ॥ ११ ॥
इति ते कथितं देवि यत्त्वयोक्तं मयिप्रिये । चैतन्यस्य स्तवं देवि तवभक्त्या प्रकाशये ॥ १२ ॥
नदेयं यस्य कस्यापि चैतन्यस्य महाप्रभोः । स्तोत्रं हरि बिरञ्च्यादि सेवितं शृणु पार्वती ॥ १३ ॥
वैष्णवाय विशुद्धाय भक्ताय सत्यवादिने । देवताभेदहीनाय गुरु पूजा परायच ॥ १४ ॥
दातव्यंहि सदाभक्त्या इतिते कथितं मया । प्रभाते स्नानकालेच सायांन्हे वापि वैष्णवः ॥ १५ ॥
यःपठेत् सततं भक्त्या तस्य वश्यो शचीसुतः । तस्य भक्ति परां दत्वा तत्रांत् स्थाने वसेत्प्रभुः ॥ १६ ॥

इति श्री ब्रह्मयामले चैतन्यकल्पे श्री चैतन्य देव स्तोत्रं समाप्त ।

महर्षि श्री वृन्दावन दास ठाकुर

श्री गौरांग-पदारविन्द-विगलन्माध्वीक- पानोन्मदम्।
नित्यानंद-गुणैक-निष्ठ-हृदयं नारायणी- नन्दनम्॥
लीलाम्भोधि-विकाशनेन जगति स्वानन्द विस्तारकम्।
तं वंदेऽखिललोक-पावनपरं दासाख्य-वृन्दावनम्॥

अर्थ— श्री गौरांग के चरणामृत रूपी अमृत रस का पान करने वाले, श्री नित्यानन्द के परम भक्त, नारायणी-नन्दन तथा भगवान की लीला का विकास कर जगत को पावन करने वाले ऐसे जो श्री वृन्दावन दास हैं उनकी हम वन्दना करते हैं।

प्रेमरूपी अमृत की मंदाकिनी तथा बंगभाषा की जननी तुल्य श्री चैतन्य-भागवत महाग्रंथ के रचयिता महर्षि श्री वृन्दावनदास ठाकुर बँगला भाषा के आदि कवि हैं। इनके पिता का नाम वैकुण्ठनाथ और माता का नाम नारायणी देवी है। नारायणी देवी श्रीवास पण्डित के बड़े भाई नलिन पण्डित की कन्या थीं। इनका जन्म सं० १५६० में हुआ था। श्री गौरांग के महा प्रकाश के समय यह चार वर्ष की थीं। श्री गौरांग के कहने से यह ऊँचे स्वर से 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण' कहते कहते रोने और लोटने लगीं। यह श्री गौरांग की बड़ी कृपापात्री थीं। श्री गौरांग का बचा हुआ महाप्रसाद इन्हीं को मिलता था। इनका विवाह कुमारहट्टबासी श्री वैकुण्ठनाथ से हुआ था। दुर्भाग्यवश जब श्री नारायणी देवी गर्भवती हुईं उसी समय इनके पति का देहान्त हो गया। श्रीवास पंडित गर्भवती पुत्री को अकेला देखकर उसको अपने घर पर लिवा लाए।

नवद्वीप में सं० १५८२ * में श्री वृन्दावन दास का जन्म हुआ। कुछ दिन बाद यह अपनी माता के साथ अपने देश कुमारहट्ट को चले गये। यहाँ पर इनकी माता का भी देहान्त हो गया। उसी समय श्री गौरांग की आज्ञा से श्री नित्यानन्द प्रभु बंगाल में हरिनाम प्रचार करते हुये घूम रहे थे। संयोग से अनाथ बालक को जगत के नाथ का दर्शन हुआ और बालक प्रभु के चरण पर गिर पड़ा। श्री नित्यानन्द ने बालक को गले से लगा लिया और उसको अपने साथ रख लिया। यह प्रभु के यहाँ शिक्षा पाने लगा। श्री नित्यानन्द प्रभु के पश्चात् यह जाह्नवी माता तथा वीरचन्द्र प्रभु के साथ रहने लगे।

देनुड़ ग्राम में श्री वृन्दावन दास ने श्री गौर निताई का विग्रह स्थापित किया और वहीं पर श्री चैतन्य-मंगल ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया। भक्तों के अनुरोध से इस ग्रंथ का नाम बदल कर श्री चैतन्य भागवत रखा गया। श्री वृन्दावन दास ठाकुर ने इस विशाल ग्रंथ की रचना कर सं० १६१२ में इसे श्री वृन्दावन भेज दिया। श्री कृष्णदास कविराज ने अपने ग्रंथ श्री चैतन्य चरितामृत में इस ग्रंथ का नाम श्री चैतन्य मंगल ही लिखा है। श्री चैतन्य-चरितामृत में इसकी बड़ी प्रशंसा की गई है। कविराज ने लिखा है कि श्री चैतन्य लीला के व्यास श्री वृन्दावनदास हैं। श्री वृन्दावन दास ने चैतन्य मंगल की रचना की है। इसके सुनने से सब अमंगल नाश होते हैं। इस ग्रन्थ में श्री गौर-निताई की महिमा तथा कृष्णभक्ति सिद्धान्त का पूर्ण वर्णन है। श्री भागवत् के भक्ति-सिद्धान्त का सार इस ग्रन्थ में वर्णित किया गया है। पाषंडी यवन भी यदि चैतन्य मंगल ग्रन्थ को सुने तो वह परम वैष्णव बन जाय। मनुष्य द्वारा रचा हुआ यह ग्रन्थ नहीं है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं श्री वृन्दावन दास द्वारा यह ग्रन्थ लिखा है। वृन्दावनदास के चरण में करोड़ों नमस्कार हैं जिन्होंने यह ग्रन्थ लिखकर संसार का कल्याण किया। श्री चैतन्य का महाप्रसाद खानेवाली नारायणी देवी के गर्भ से श्री वृन्दावनदास का जन्म हुआ है। (चै० च०)

श्री लोचनदास द्वारा रचित श्री चैतन्य मंगल जब श्री वृन्दावन पहुँचा तब श्री जीव गोस्वामी तथा भक्तों ने श्री वृन्दावन दास रचित श्री चैतन्य मंगल को महा ग्रन्थ समझ कर इसका नाम बदल कर श्री चैतन्य भागवत रख दिया। श्री नाद कवि कर्णपूर कृत गौरगणोद्देशदीपिका में श्री वृन्दावनदास को व्यास जी का अवतार कहा है। श्री व्यासजी द्वारा रचित श्री कृष्ण लीला ग्रन्थ का नाम श्री मद्भागवत है तदनुसार भक्तों ने विचार कर इनके द्वारा रचित श्री चैतन्य लीला ग्रन्थ का नाम श्री चैतन्य

भागवत ही रखना युक्तिसंगत समझा। श्री चैतन्य भागवत बंगला भाषा का आदि काव्य है।

श्री वृन्दावन दास ठाकुर के जन्म के समय में कुछ मतभेद है। कुछ लोग इनका जन्म बहुत पहले बतलाते हैं और कुछ लोग बाद। उन लोगों के मतों का विचार करते हुए तथा श्री चैतन्य भागवत आदि ग्रन्थों को देखते हुए इनका जन्म काल सं० १५८२ ही युक्तिसंगत बोध होता है। इस समय इनकी माता की अवस्था बाईस वर्ष की थी। यह बात ठीक मालूम होती है। श्री नित्यानन्द प्रभु ने इनको दीक्षा दी, श्री मद्भागवत पढ़ाया तथा श्री गौर चरित्र लिखने की आज्ञा दी। प्रभु के अप्रकट होने के समय इनकी आयु सोलह वर्ष की थी। यदि कोई अलौकिक बात होती तो श्री वृन्दावन दास जी अवश्य उसका वर्णन करते। श्री वृन्दावनदास ने कई ग्रन्थों की रचना की है। (१) श्री नित्यानन्द-चरितामृत (२) आनन्दलहरी। (३) तत्वसार। (४) तत्व विलास। (५) भक्ति-चिन्तामणि। (६) गोपिका-मोहन। (७) श्री नित्यानन्द प्रभोरैश्वर्यामृत स्तोत्र।

जब नित्यानन्द श्री गौरांग के दर्शन को जगदीश आए थे उस समय बालक वृन्दावन दास भी प्रभु के साथ थे। बालक ने महाप्रभु के चरण पर मस्तक रखा। श्री गौरांग ने बड़े प्रेम से इनके मस्तक पर अपना श्री चरण रखा और श्री नित्यानन्द की ओर संकेत करते हुए कहा कि इसको भक्ति शास्त्र की शिक्षा भली भाँति देना। श्री वृन्दावन दास श्री नित्यानन्द के श्री मुख से श्री गौर चरित बड़े प्रेम से सुनते थे। प्रभु इनको श्री-मद्भागवत भी पढ़ाते थे। श्री नित्यानन्द के संग से वृन्दावनदास श्रीगौरचरित तथा भक्ति शास्त्र के अच्छे ज्ञाता हो गए। श्री वृन्दावनदास एक अद्वितीय भक्त थे। ग्रन्थ लिखते समय यह प्रेम में विभोर हो जाते। इनकी प्रेमावस्था बढ़ने लगी और इसी कारण श्री चैतन्य भागवत ग्रंथ पूरा नहीं हो सका। इन्होंने बाललीला तथा नवद्वीप लीला बड़े विस्तार से लिखा। अन्त खण्ड में प्रभु की कुछ यात्राओं और लीलाओं का वर्णन किया। पुण्डरीक विद्यानिधि के चरित्र वर्णन के बाद यह ग्रन्थ समाप्त हो जाता है। महाप्रभु की विरह लीला अर्थात् गम्भीरा लीला अत्यन्त प्रभावावेश के कारण यह नहीं लिख सके। श्री गौरांग की तीव्र विरहावस्था का वर्णन लिखते समय यह स्वयं प्रेम में विभोर हो जाते। नेत्रों से जल बहने लगता, हाथ का पत्रा जल से भींग जाता और हा कृष्ण कहते यह मूर्छित हो जाते। बहुत प्रयत्न करने पर भी यह आगे नहीं लिख सके। धन्य, ठाकुर महाशय।

श्री नरोत्तमदास ठाकुर के सुप्रसिद्ध खेतरी महोत्सव में यह श्री जाह्नवी ईश्वर के साथ गए थे। वहाँ पर कीर्तन भजन में यह बड़े मग्न हो गए। कीर्तन के प्रारम्भ में यह प्रथा है कि पहले श्री गौर का 'एषो हे' कहकर आह्वान किया जाता है अर्थात् प्रभु को बुलाया जाता है। श्री नरोत्तमदास के आह्वान करने पर श्री गौरांग सपरिकर प्रत्यक्ष रूप में मंडप में प्रकट हो गए और कीर्तन करने लगे। बहुत से भक्त जो प्रभु के दर्शन से वंचित थे उनको दर्शन मिला। भक्त लोग बड़े उत्साह तथा प्रेम से कीर्तन करने लगे। कुछ समय बाद महाप्रभु अन्तर्ध्यान हो गए। भक्त लोग बड़े दुःखी हुए परन्तु कीर्तन करते रहे। श्री वृन्दावनदास की इच्छा पूरी हुई परन्तु इनकी विरहावस्था बहुत बढ़ गई। माता तथा भक्तों से आज्ञा लेकर यह सीधे वृन्दावन चले गए। श्री वृन्दावन में कुछ दिन रह कर यह सं० १६४८ में नित्य लीला में पधारे।

* जन्म संवत में मतभेद है। बंगला साहित्येतिहास में इनका जन्म वैशाख सन् १५३५ ई० में लिखा है पर साथ ही यह भी लिखा है कि यह श्रीगौरांग के अन्तर्ध्यान के समय दो वर्ष के थे। इस विचार से इनका जन्म सं० १५८८ आता है।

जैगौर

शुद्धि पत्र

शुद्ध	अशुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
सुनिकै	युनिकै	२	२४
मध्य	मज्य	३	२६
ब्रह्मजात	ब्रह्मजात	४	३५
चरित	चरिच	६	२२
विप्रवर	विव्रवर	६	३१
भक्तन	भक्तत	७	१
बाजत	बाचत	१६	१६
वनहि	वनति	३०	५
अग्रज	अग्रह	३०	२२
शंकरारराय	शंकराराय	३१	२६
विश्वरूप	विवश्रूप	३१	२७
छुअत	छुश्रत	३५	६
मर्म	मर्ग	३५	३६
पारा	षारा	४१	२४
ठाकुर	ठागुर	५१	१६
वल्लभ	वख्लभ	५२	३१
वैष्णव	वैष्णव	६१	४
यश	यह	६६	२३
जाइ दुःख	दुजाइ ख	७५	३१
दुखित	दुखिन	७८	१२
नित	निज	९१	१३
यवन सकल बोलत भए	यवन सकल बोलत	९२	१६
दीन्ह	दीन्द	१०८	३६
छाई	चाई	११६	३५
गावत	गातत	११६	१०
मँहू	सहँ	१२७	१२
बड़ो	बड़	१२७	२८
समुझई	समुझाई	१३७	६
पत्नी	पली	१३७	३२
(काट दे)	चल	१४७	१५
ठाढे	ठाढ़े	१५३	२४
वाञ्छा	वाञ्छा	१६२	३२
(१ अधिक छपा काट दे)	माता	१६५	१६
सो	प्रभु	२०८	१६

शुद्ध	अशुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
मधाई	जगाई	२०८	२६
दासा	दाता	२२७	२६
सर्व	सर्द	२४१	१०
बहुतहि	बदुतहि	२४१	३०
नाचत	नाचन	२५३	४
ब्रह्मा	ब्रम्मा	२५६	१२
अति	अनि	२६७	३१
जनही	जदही	२६८	३५
भावहि	भातऽई	२६८	३६
लखि	लहि	२७०	१४
कोउ	उको	२७६	१३
मँह	नहि	२८८	३२
भजन	भजत	२८८	३३
लेई	सोई	२६८	३१
सोई	लेई	२-६	३२
मृतक	मृषक	२६२	१६
रसगायहु	रसगाय	३००	२२
दुइ	हुई	३०२	२
मति	मनि	३०६	१६
आए	जाए	क	१६
हम	वह	ज	१
आजानु	आजामु	ज	१६

बृजभूषणदास द्वारा लिखित सम्पादित तथा अनुवादित पुस्तकें

१. श्री अद्वैत प्रकाश श्री गौरांग महाप्रभु का पूरा जीवन चरित्र तथा उनके सिद्धान्त सरल हि भाषा में लिखा गया है। अनुवाद सहित श्री चैतन्य सहस्त्र नाम तथा समय निर्घंट भी र में है। पृष्ठ २०० सचित्र मूल्य २-५० पैसा

२. श्री निमाइ संन्यास नाटक-अमृत बाजार पत्रिक के सम्पादक श्री शिशिर कुमार घोष द्वारा लिखित नाटक का हिन्दी अनुवाद

३. वैष्णवों का जीवन चरित्र-तीस गौर भक्तों का

४. रसिक विलास-श्री श्यामानन्द तथा रसिक मुरारी जी का चरित्र

५. ब्रह्मा संहिता-मूल तथा हिन्दी अनुवाद

६. श्री चैतन्य चरित सुधा-

७. श्री गौरांग स्तोत्ररत्नाकर-(संस्कृत)

८. श्री तुलसी उपनिषध-मूल तथा हिन्दी अनुवाद

९. श्री चैतन्य भागवत-श्री वृन्दावन दास द्वारा रचित ग्रंथ का हिन्दी भाषा में दोहा चौपाई में अनुवाद। सचित्र पृष्ठ ४०० सजिल्द बड़ा आकार श्री गौर लीला का अपूर्व ग्रंथ। मूल्य रु० १३-५० पैसा। डाक व्यय अलग

१०. श्री हरिभक्त विलास-संक्षिप्त श्री गोपालभट्ट गोस्वामी द्वारा रचित मूल तथा हिन्दी अनुवाद।

११. नित्यसेवा विधि-श्री गो० गल्लू जी महराज

१२. उत्सवमञ्जरी-लिखित श्री राधारमण जी की सेवा तथा उत्सव का वर्णन

१३. श्री चैतन्य शतक-श्री सार्वभौम भट्टाचार्य द्वारा रचित। हिन्दी अनुवाद सहित।

१४. श्री गौरांग की काशी यात्रा-काशी में श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु

१५. प्राचीन स्मृति संग्रह

१६. श्री गोस्वामी ग्रंथों की तालिका

१७. श्री गौरांग अवतार के विविध प्रमाण-

१८. स्फुट संग्रह

१९. प्रेमभक्ति चन्द्रिका, श्री नरोत्तमदास ठाकुर रचित, दोहा तथा भाषा में अनुवाद। मूल्य १ रु०

२०. नाम माहात्म्य भगवान के नाम माहत्म्य पर ३०० श्लोकों का अपूर्व संग्रह (श्री हरिभक्ति विलास से) अनुवाद सहित।

२१. श्री गौरांग सचित्र त्रैमासिक पत्रिका एक वर्ष के चार अंक मूल्य ५)

२२. श्री गौरांग (सं० १९६० से ६५) तक छः का एक साथ लेने से २५) डाक व्यय अलग बहुत थोड़ी कापी बची है। मूल्य पहले भेजना होगा। उपर लिखे सब ग्रंथ इसमें छपे हैं। केवल चैतन्य भागवत का अंतिम भाग तथा प्रेम भक्ति चन्द्रिका नहीं है।

प्राप्तिस्थान

व्रजभूषण दास

भूषण लौज, लंका, वाराणसी